निवेदन

सन् १९४२ ई० में पुलिस ने जेल में ठेलकर मुझे भी 'पाँचवाँ सवार' बना दिया। जेल से वापस आने पर पाँव की पुरानी चोट भयङ्कर रूप से उभर आई और 'कारबङ्कल' फोड़ा भी निकला। कई महीनों तक चारपाई पर पड़ा रहना पड़ा। चलना-फिरना बन्द हो गया। पड़े-पड़े कुछ पढ़ता ज़रूर रहता था। उर्दू-शायरी की भी कई किताबें पढ़ीं, जिन्होंने मुझे अपनी ओर बहुत आकर्षित किया। उस समय साहित्य-महारथी गुरुवर श्री पं० पद्मसिंह शर्मा का यह आदेश स्मरण आया—

'हरिशङ्करजी, तुम हिन्दी में एक ऐसी किताब लिखो, जिसमें उर्दू के लेखकों और कवियों का संक्षिप्त परिचय हो। इसकी बड़ी ज़रूरत है। किताब तैयार हो जाय तो छपाने से पहले मुझे भी दिखा लेना।'

गुरुवर के उक्त आदेश-पालन के लिए यह समय मुझे उपयुक्त जान पड़ा और इसीलिए मैंने इस पुस्तक के लिखने का इरादा किया। एक दिन आगरे के प्रसिद्ध पुस्तक-प्रकाशक और विक्रेता मेसर्स गयाप्रसाद एण्ड सन्स फ़र्म के श्री रामप्रसाद अग्रवाल, बी० ए०, एल-एल० बी० मुझे देखने आए। बातों ही बातों में इस पुस्तक का ज़िक्र हुआ। बाबू रामप्रसादजी ने बड़ा आग्रह किया कि अच्छा होने पर मैं उन्हीं के लिए यह किताब लिखूँ। मैंने उनकी बात मान ली और अच्छा होने के पहले ही, रोग-शैया पर पड़े-पड़े, पुस्तक लिखनी प्रारम्भ कर दी। लिखने में तबीअत भी बहली और काम भी होता गया। किताब अब लिखी गई, और गुरुदेव संसार से

बहुत पहले चल बसे! बुरी-भली जैसी भी पुस्तक लिखी जा सकी, पाठकों के सामने है।

उर्दू वाले हिन्दी की उपेक्षा करते हैं—करें। परन्तु हिन्दी वालों को उर्दू-साहित्य में दिलचस्पी लेनी चाहिये। शम्सुल उलमा मौलाना अल्ताफ़ हुसेन 'हाली' ने बिलकुल ठीक लिखा है कि उर्दू लेखकों को हिन्दी जाननी ज़रूरी है, और हिन्दी लेखकों को उर्दू। आचार्य-प्रवर पं० पद्मसिंह शर्मा भी यही कहा करते थे। मैं समझता हूँ, उर्दू-साहित्य के प्रति हिन्दी वालों की उत्सुकता और रुचि बढ़ाने में यह पुस्तक कुछ-न-कुछ सहायक तो होगी ही। यह उर्दू-साहित्य का इतिहास नहीं किन्तु उसका अति संक्षिप्त परिचय मात्र है। इस विषय पर उर्दू तथा अँगरेज़ी में अनेक प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे गए हैं। उनके आगे इस ज़रा-सी पुस्तक की बिसात ही क्या! फिर भी जो लोग केवल हिन्दी जानते हैं, उनको इससे उर्दू के सम्बन्ध में कुछ नई बातें अवश्य मालूम होंगी।

पुस्तक में मेरा कुछ नहीं है। जो कुछ है, वह दूसरे ग्रन्थों से लिया गया है। पुस्तक के अन्त में उर्दू के योरोपियन और इण्डो-योरोपियन शायरों और लेखकों का भी उल्लेख है। यह नई बात है जो सम्भवतः अन्य इतिहासों में नहीं है। इसके लिए हम प्रसिद्ध विद्वान् रायबहादुर डा० रामबाबू सक्सेना, एम० ए०, एल-एल० बी० के अत्यन्त कृतज्ञ और ऋणी हैं, जिनके 'दी योरोपियन एण्ड इण्डो-योरोपियन पोयट्स ऑफ़ उर्दू एण्ड पर्शियन' नामक वृहद् ग्रन्थ से यह सामग्री ली गई है। इतना ही नहीं, जिन ग्रन्थों या लेखों से इस पुस्तक के लिए कुछ भी मसाला लिया है, उनके लेखकों के प्रति भी बड़े आदर से कृतज्ञता प्रकट करना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

पुस्तक तैयार करने में गुरुवर पं० यज्ञदत्त शर्मा से बहुत सहायता मिली है। इसके लिए उन्हें धन्यवाद देना अपने को ही धन्यवाद देना है।

पुस्तक बहुत पहले प्रेस में दे दी गई थी, परन्तु युद्धजनित कागज़ की कठिनाइयों के कारण—और इसलिए भी कि प्रूफ़ इलाहाबाद से यहाँ आया—पुस्तक छपने में बहुत समय लगा। इतनी दूर से प्रूफ़-संशोधन होने के कारण पुस्तक में अनेक छापे की भूलें हो सकती हैं। कितनी ही त्रुटियाँ तो मेरी अल्पज्ञता के कारण भी रह गई होंगी। इन सबके लिए मैं बड़े विनीत भाव से क्षमा-प्रार्थी हूँ।

आगरा,
श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी
२००२ वि०

हरिशङ्कर शर्मा

विषय-सूची

संं० विषय पृष्ठ

सं०	विषय			पृष्ठ
१३—सोज़		...	...	१८३
१४—सौदा		...	...	१८४
१५—मीरहसन		...	...	१८५
१६—मीर तक़ी		...	...	१८८
१७—इंशा		...	...	१९०
१८—जुरअत		...	...	१९२
१९—मसहफ़ी		...	...	१९२
२०—रंगीन		...	...	१९४

[इंशा और मसहफ़ी-युग के १३ शायर]

१—'क़ायम'	...	...	१९५
२—'मिन्नत'	...	...	"
३—'ममनून'	...	...	"
४—'हसरत'	...	...	"
५—'क़ुदरत'	...	...	१९६
६—'बेदार'	...	...	"
७—'[illegible]'	...	...	"
८—'फ़िराक़'	...	...	"
९—'ज़दा'	...	...	१९७
१०—'वफ़ा'	...	...	"
११—'[illegible]'	...	...	"
१२—'बयान'	...	...	"
१३—'नासिख़'	...	...	"
२१—'ग़ालिब'	...	...	१९८

[ग़ालिब के ७ शिष्य]

१—'[illegible]'	...	...	२००

उर्दू-साहित्य-परिचय

परिचय

जो पाठक उर्दू नहीं जानते, उन्हीं के लिए यह छोटी-सी पुस्तक लिखी गई है। यह किताब उन्हें उर्दू-साहित्य का परिचय कराने में सहायता देगी। यह बताएगी कि उर्दू में कौन-कौन प्रसिद्ध कवि, लेखक, आलोचक, कहानीकार, उपन्यासकार, कोष-कार, इतिहासकार, हास्य-लेखक आदि हो चुके हैं। उर्दू की उत्पत्ति और उसके विकास की कथा क्या है; गद्य और पद्य की धाराएं किस प्रकार प्रवाहित हुईं; और उनके निर्माण में किन-किन महारथियों का हाथ रहा है; आधुनिक उर्दू साहित्य की सृष्टि किन विद्वानों के प्रशंसनीय प्रयत्न का सुपरिणाम है—इत्यादि। हम समझते हैं, विविध भाषाओं के साहित्यों का जितना ही अध्ययन किया जा सके, उतना ही अच्छा है। फिर उर्दू तो ऐसी भाषा है, जिसका हिन्दी से घनिष्ठ सम्बन्ध है, अतः इसके विषय में अनभिज्ञ रहना तो कभी उचित कहा ही नहीं जा सकता। देश के दो बड़े समुदायों में प्रेम और ऐक्य बढ़ाने तथा उन्हें एक दूसरे के समीप लाने के लिये, उर्दू और हिन्दी दोनों साहित्यों से परिचित होने की बड़ी आवश्यकता है। उर्दू वालों को हिन्दी-साहित्य का अध्ययन करना चाहिये और हिन्दी वालों को उर्दू अदब का। ऐसा करने से विदित होगा कि मुसलमानों ने हिन्दी की, और हिन्दुओं ने उर्दू की कितनी अमूल्य सेवाएं की हैं और किस प्रकार दोनों साहित्यों में अनेक स्थलों पर विचार-साम्य पाया जाता है। किसी साहित्य का सम्यक् ज्ञान तो उसके विस्तृत अध्ययन द्वारा ही हो सकता है। फिर भी परिचय कराने वाली ऐसी छोटी-छोटी पुस्तकें

भी इस दिशा में कुछ न कुछ सहायता दे ही सकती हैं। इसी दृष्टि से यह किताब लिखी गई है। जो लोग उर्दू नहीं जानते, या जिन्हें बड़े-बड़े पोथे पढ़ने का अवकाश नहीं है, वे इस लघु पुस्तिका से कुछ बातें जान सकेंगे; और आगे रुचि बढ़ी तो उर्दू-साहित्य की अन्य किताबों को भी पढ़ सकेंगे। न भी पढ़ें, तब भी इस पुस्तक द्वारा साधारण साहित्य-परिचय तो हो ही जायगा, और इस विषय में उर्दू वालों के आगे अनभिज्ञता प्रकट करने का अवसर न आयेगा।

उत्पत्ति और विकास

उर्दू की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम है। कुछ लोग उसका जन्म फ़ारसी से हुआ बताते हैं। कदाचित् इसलिए कि उसमें फ़ारसी-शब्द अधिक हैं, और फ़ारसी लिपि में ही वह लिखी जाती है। परन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो विदित होगा कि उर्दू फ़ारसी की बेटी नहीं, प्रत्युत हिन्दी का ही एक रूप है। वस्तुतः उर्दू उस हिन्दी की एक शाखा है, जो बरसों तक मेरठ, देहली तथा उनके समीपवर्ती स्थानों में प्रचलित रही है। शासन-सम्बन्धिनी परिस्थितियों के कारण हिन्दी का रूप तो कुछ बदल गया, परन्तु नाम उसका हिन्दी ही रहा, उर्दू नाम तो बहुत दिनों बाद पड़ा। प्रो० मुहम्मद हुसेन आज़ाद ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'आबेहयात' में उर्दू की उत्पत्ति 'ब्रजभाषा' से मानी है, जो भ्रम पूर्ण है। क्योंकि उर्दू कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं है, जिसका विकास खोजने की आवश्यकता हो। वस्तुतः हिन्दी का ही नाम उर्दू रख लिया गया है। प्रारम्भ में दो भाषाएँ थीं,—हिन्दी और ब्रजभाषा। जो भाषा मेरठ, देहली आदि में बोली जाती थी, उसे हिन्दी कहते थे, और जिसका ब्रज में प्रचार था, वह ब्रजभाषा कहलाती थी।

पहले पहल हिन्दी में फ़ारसी शब्दों का मिश्रण किया गया।

विविध प्रान्तों से आए हुए सैनिकों की बोलियों का भी उसमें प्रवेश हुआ, जिससे हिन्दी का रूप बदलने लगा और वह उर्दूपन की ओर जाने लगी। प्रारम्भ में जो उर्दू बनी उसमें अधिकतर हिन्दी शब्द थे, शैली भी हिन्दी थी और जो महावरे प्रयुक्त किये जाते थे, वे भी हिन्दी ही के थे। धीरे-धीरे उर्दू का प्रचार इतना बढ़ा कि वह देश की मुख्य भाषाओं में गिनी जाने लगी। इसका मूल कारण उस समय देश में मुसलमानी शासन और फ़ारसी का अत्यधिक प्रचार होना था। शाही शासन में, विभिन्न प्रान्तीय सैनिकों के एकत्र होने से, देहली तथा मेरठ की बोली में, बहुत से नए शब्द सम्मिलित हो गए, जिससे उसका कुछ रूप ही बदलने लगा। अर्थात् जिस भाषा में केवल हिन्दी शब्दों का प्रयोग होता था, उसमें फ़ारसी-शब्द भी घुस पड़े और वह उर्दू कही जाने लगी। उर्दू का अर्थ है 'लश्कर' अथवा लश्कर में बोली जाने वाली भाषा। इस प्रकार जब हिन्दी ने उर्दू का रूप धारण कर लिया तो उसे शासन का आश्रय प्राप्त हुआ और उसमें फ़ारसी के शब्द और भी अधिकता से प्रयुक्त होने लगे। उधर हिन्दी में संस्कृत-शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ, और वह बोलचाल की भाषा से हट कर साहित्यिकता की ओर बढ़ी। अभिप्राय यह कि मेरठ, देहली और इनके समीपवर्ती स्थानों में जो हिन्दी बोली जाती थी, कालक्रम से, उसी के दो रूप हो गए, एक फ़ारसी-प्रधान और दूसरा संस्कृत-मिश्रित। जब तक हिन्दी बोलचाल की भाषा रही, तब तक तो उसके समझने में किसी को कुछ भी कठिनाई न होती थी, परन्तु जब उसने फ़ारसी और संस्कृत मिश्रित होकर, साहित्यिक धज धारण की तो वह क्लिष्ट और दुरूह हो गई। फिर तो फ़ारसी और संस्कृत दोनों के समर्थकों ने, होड़ाहोड़ी से उसमें कठिन शब्दों का प्रयोग करना शुरू कर दिया।

भी इस दिशा में कुछ न कुछ सहायता दे ही सकती हैं। इसी दृष्टि से यह किताब लिखी गई है। जो लोग उर्दू नहीं जानते, या जिन्हें बड़े-बड़े पोथे पढ़ने का अवकाश नहीं है, वे इस लघु पुस्तिका से कुछ बातें जान सकेंगे; और आगे रुचि बढ़ी तो उर्दू-साहित्य की अन्य किताबों को भी पढ़ सकेंगे। न भी पढ़ें, तब भी इस पुस्तक द्वारा साधारण साहित्य-परिचय तो हो ही जायगा, और इस विषय में उर्दू वालों के आगे अनभिज्ञता प्रकट करने का अवसर न आवेगा।

उत्पत्ति और विकास

उर्दू की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम है। कुछ लोग उसका जन्म फ़ारसी से हुआ बताते हैं। कदाचित् इसलिए कि उसमें फ़ारसी-शब्द अधिक हैं, और फ़ारसी लिपि में ही वह लिखी जाती है। परन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो विदित होगा कि उर्दू फ़ारसी की बेटी नहीं, प्रत्युत हिन्दी का ही एक रूप है। वस्तुतः उर्दू उस हिन्दी की एक शाखा है, जो बरसों तक मेरठ, देहली तथा उनके समीपवर्ती स्थानों में प्रचलित रही है। शासन-सम्बन्धिनी परिस्थितियों के कारण हिन्दी का रूप तो कुछ बदल गया, परन्तु नाम उसका हिन्दी ही रहा, उर्दू नाम तो बहुत दिनों बाद पड़ा। प्रो० मुहम्मद हुसेन आज़ाद ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'आवेहयात' में उर्दू की उत्पत्ति 'व्रजभाषा' से मानी है, जो भ्रम पूर्ण है। क्योंकि उर्दू कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं है, जिसका विकास खोजने की आवश्यकता हो। वस्तुतः हिन्दी का ही नाम उर्दू रख लिया गया है। प्रारम्भ में दो भाषाएँ थीं,—हिन्दी और व्रजभाषा। जो भाषा मेरठ, देहली आदि में बोली जाती थी, उसे हिन्दी कहते थे, और जिसका व्रज में प्रचार था, वह व्रजभाषा कहलाती थी।

पहले पहल हिन्दी में फ़ारसी शब्दों का मिश्रण किया गया।

विविध प्रान्तों से आए हुए सैनिकों की बोलियों का भी उसमें प्रवेश हुआ, जिससे हिन्दी का रूप बदलने लगा और वह उर्दूपन की ओर जाने लगी। प्रारम्भ में जो उर्दू बनी उसमें अधिकतर हिन्दी शब्द थे, शैली भी हिन्दी थी और जो मुहावरे प्रयुक्त किये जाते थे, वे भी हिन्दी ही के थे। धीरे-धीरे उर्दू का प्रचार इतना बढ़ा कि वह देश की मुख्य भाषाओं में गिनी जाने लगी। इसका मूल कारण उस समय देश में मुसलमानी शासन और फ़ारसी का अत्यधिक प्रचार होना था। शाही शासन में, विभिन्न प्रान्तीय सैनिकों के एकत्र होने से, देहली तथा मेरठ की बोली में, बहुत से नए शब्द सम्मिलित हो गए, जिससे उसका कुछ रूप ही बदलने लगा। अर्थात् जिस भाषा में केवल हिन्दी शब्दों का प्रयोग होता था, उसमें फ़ारसी-शब्द भी घुस पड़े और वह उर्दू कही जाने लगी। उर्दू का अर्थ है 'लश्कर' अथवा लश्कर में बोली जाने वाली भाषा। इस प्रकार जब हिन्दी ने उर्दू का रूप धारण कर लिया तो उसे शासन का आश्रय प्राप्त हुआ और उसमें फ़ारसी के शब्द और भी अधिकता से प्रयुक्त होने लगे। उधर हिन्दी में संस्कृत-शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ, और वह बोलचाल की भाषा से हट कर साहित्यिकता की ओर बढ़ी। अभिप्राय यह कि मेरठ, देहली और इनके समीपवर्ती स्थानों में जो हिन्दी बोली जाती थी, कालक्रम से, उसी के दो रूप हो गए, एक फ़ारसी-प्रधान और दूसरा संस्कृत-मिश्रित। जब तक हिन्दी बोलचाल की भाषा रही, तब तक तो उसके समझने में किसी को कुछ भी कठिनाई न होती थी, परन्तु जब उसने फ़ारसी और संस्कृत मिश्रित होकर, साहित्यिक धज धारण की तो वह क्लिष्ट और दुरूह हो गई। फिर तो फ़ारसी और संस्कृत दोनों के समर्थकों ने, होड़ाहोड़ी से उसमे कठिन शब्दों का प्रयोग करना शुरू कर दिया।

भी इस दिशा में कुछ न कुछ सहायता दे ही सकती हैं। इसी दृष्टि से यह किताब लिखी गई है। जो लोग उर्दू नहीं जानते, या जिन्हें बड़े-बड़े पोथे पढ़ने का अवकाश नहीं है, वे इस लघु पुस्तिका से कुछ बातें जान सकेंगे; और आगे रुचि बढ़ी तो उर्दू-साहित्य की अन्य किताबों को भी पढ़ सकेंगे। न भी पढ़ें, तब भी इस पुस्तक द्वारा साधारण साहित्य-परिचय तो हो ही जायगा, और इस विषय में उर्दू वालों के आगे अनभिज्ञता प्रकट करने का अवसर न आवेगा।

उत्पत्ति और विकास

उर्दू की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम है। कुछ लोग उसका जन्म फ़ारसी से हुआ बताते हैं। कदाचित् इसलिए कि उसमें फ़ारसी-शब्द अधिक हैं, और फ़ारसी लिपि में ही वह लिखी जाती है। परन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो विदित होगा कि उर्दू फ़ारसी की बेटी नहीं, प्रत्युत हिन्दी का ही एक रूप है। वस्तुतः उर्दू उस हिन्दी की एक शाखा है, जो बरसों तक मेरठ, देहली तथा उनके समीपवर्ती स्थानों में प्रचलित रही है। शासन-सम्बन्धिनी परिस्थितियों के कारण हिन्दी का रूप तो कुछ बदल गया, परन्तु नाम उसका हिन्दी ही रहा, उर्दू नाम तो बहुत दिनों बाद पड़ा। प्रो० मुहम्मद हुसेन आज़ाद ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'आबेहयात' में उर्दू की उत्पत्ति 'व्रजभाषा' से मानी है, जो भ्रम पूर्ण है। क्योंकि उर्दू कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं है, जिसका विकास खोजने की आवश्यकता हो। वस्तुतः हिन्दी का ही नाम उर्दू रख लिया गया है। प्रारम्भ में दो भाषाएँ थीं,—हिन्दी और व्रजभाषा। जो भाषा मेरठ, देहली आदि में बोली जाती थी, उसे हिन्दी कहते थे, और जिसका व्रज में प्रचार था, वह व्रजभाषा कहलाती थी।

पहले पहल हिन्दी में फ़ारसी शब्दों का मिश्रण किया गया।

विविध प्रान्तों से आए हुए सैनिकों की बोलियों का भी उसमें प्रवेश हुआ, जिससे हिन्दी का रूप बदलने लगा और वह उर्दूपन की ओर जाने लगी। प्रारम्भ में जो उर्दू बनी उसमें अधिकतर हिन्दी शब्द थे, शैली भी हिन्दी थी और जो मुहावरे प्रयुक्त किये जाते थे, वे भी हिन्दी ही के थे। धीरे-धीरे उर्दू का प्रचार इतना बढ़ा कि वह देश की मुख्य भाषाओं में गिनी जाने लगी। इसका मूल कारण उस समय देश में मुसलमानी शासन और फ़ारसी का अत्यधिक प्रचार होना था। शाही शासन में, विभिन्न प्रान्तीय सैनिकों के एकत्र होने से, देहली तथा मेरठ की बोली में, बहुत से नए शब्द सम्मिलित हो गए, जिससे उसका कुछ रूप ही बदलने लगा। अर्थात् जिस भाषा में केवल हिन्दी शब्दों का प्रयोग होता था, उसमें फ़ारसी-शब्द भी घुस पड़े और वह उर्दू कही जाने लगी। उर्दू का अर्थ है 'लश्कर' अथवा लश्कर में बोली जाने वाली भाषा। इस प्रकार जब हिन्दी ने उर्दू का रूप धारण कर लिया तो उसे शासन का आश्रय प्राप्त हुआ और उसमें फ़ारसी के शब्द और भी अधिकता से प्रयुक्त होने लगे। उधर हिन्दी में संस्कृत-शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ, और वह बोलचाल की भाषा से हट कर साहित्यिकता की ओर बढ़ी। अभिप्राय यह कि मेरठ, देहली और इनके समीपवर्ती स्थानों में जो हिन्दी बोली जाती थी, कालक्रम से, उसी के दो रूप हो गए, एक फ़ारसी-प्रधान और दूसरा संस्कृत-मिश्रित। जब तक हिन्दी बोलचाल की भाषा रही, तब तक तो उसके समझने में किसी को कुछ भी कठिनाई न होती थी, परन्तु जब उसने फ़ारसी और संस्कृत मिश्रित होकर, साहित्यिक धज धारण की तो वह क्लिष्ट और दुरूह हो गई। फिर तो फ़ारसी और संस्कृत दोनों के समर्थकों ने, होड़ाहोड़ी से उसमें कठिन शब्दों का प्रयोग करना शुरू कर दिया।

जब हिन्दी ने उर्दू का रूप धारण किया और वह अन्धाधुन्ध फ़ारसी-शब्दों से भरी जाने लगी तो उसकी लिपि भी फ़ारसी बना दी गई, क्योंकि फ़ारसी-शब्दों के लिए वही अधिक उपयुक्त थी। इस प्रकार अनायास ही उर्दू का सम्बन्ध फ़ारसी से जोड़ दिया गया। परिणाम यह हुआ कि वह भ्रम-वश फ़ारसी से ही निकली समझी जाने लगी। फिर क्या था, फ़ारसी-प्रधान उर्दू पर, फ़ारसी साहित्य की अन्य बातों का भी प्रभाव पड़ा। उसकी छन्द-पद्धति, शैली; उपमा, उत्प्रेक्षा, लोकोक्तियाँ आदि भी फ़ारसी रंग में ही रँग दी गईं। शाही शासन में फ़ारसी-राजभाषा होने के कारण—हिन्दी वालों को भी पढ़नी पड़ती थी, इससे हिन्दी-लेखकों और कवियों की रच-नाओं में भी अरबी और फ़ारसी के शब्द आने लगे। प्रारम्भ में कुछ दिनों तक तो उर्दू-कवि हिन्दी और फ़ारसी शब्दों का मिलाजुला प्रयोग करते रहे, परन्तु पीछे हिन्दी का बिल्कुल बहिष्कार कर दिया गया। उर्दू पहले 'रेखता' नाम से बोली जाती थी, और मीर तथा मसहफ़ी के समय तक उसका नाम 'हिन्दी' रहा। सब से पहले 'शाहजहाँ' ने फ़ारसी-मिश्रित हिन्दी को 'उर्दू-ए-मोअल्ला' कहकर पुकारा और तभी से वह इस नाम से प्रसिद्ध हुई।

उर्दू-कविता का पिंगल भी अरबी और फ़ारसी के आधार पर है। इसमें ग़ज़ल, मसनवी, क़सीदे, मुख़म्मस, मुसद्दस, वासूख़, तारीख़, फ़र्द, मुस्तज़ाद, रुबाई, क़िते आदि फ़ारसी के सभी छन्द सम्मिलित हैं। हाँ, फ़ारसी-पन उर्दू-व्याकरण में नहीं घुसने पाया। वह अब भी हिन्दी के आधार पर ही चल रहा है। इससे भी सिद्ध है कि वर्त्तमान उर्दू हिन्दी का ही एक रूप है। उसके लिंग, वचन और विभक्तियों पर प्रायः हिन्दी-व्याकरण का ही प्रभाव है।

अन्य भाषाओं की भाँति, उर्दू में भी पहले कविताएँ ही लिखी

गयीं, गद्य का विकास पीछे से हुआ। अनुप्रास मानव-रुचि के अधिक अनुकूल है, अतएव मनुष्य अनुप्रासमयी भाषा में ही अपने भाव व्यक्त करना अधिक पसन्द करता है। फिर पद्य याद भी शीघ्रता से हो जाता है। कोई कथानक या प्रशंसा-प्रसंग, जितना पद्य में प्रभावशाली होता है, उतना गद्य में नहीं।

उर्दू के सब से पहले कवि अमीर ख़ुसरो माने जाते हैं। हिन्दी वाले भी इन्हें ही अपना आदि कवि मानते हैं। क्योंकि ख़ुसरो ने जो कविताएँ रची हैं, उनमें अधिकतर हिन्दी-शब्दों का ही प्रयोग किया है। उन्होंने हिन्दी का नाम हिन्दी ही लिखा, 'रेख़ता' या 'उर्दू' नहीं। फ़ारसी के शायर की हैसियत से तो ख़ुसरो विश्व-विख्यात हो गए हैं। इनकी लिखी पहेलियाँ, मुकरियाँ, अनमेलियाँ दुसुख़ने, दोहरे आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। ख़ुसरो की अधिकांश कविताएं ऐसी हैं, जिनमें हिन्दी-शब्द प्रयुक्त हुए और जो संस्कृत-छन्दों में लिखी गई हैं। खुसरो का जन्म १३ वीं ईस्वी में पटियाली (एटा) में हुआ था। ग़यासुद्दीन आदि देहली के प्रसिद्ध बादशाहों के दरबारों में वे अनेक ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित रहे थे। प्रसिद्ध सूफ़ी पीर हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के वे घनिष्ठ मित्र और अनन्य भक्त थे। पीर के देहान्त से खुसरो को इतना दुःख हुआ कि उनके मरने के कुछ ही दिनों पश्चात्—अर्थात् १३८२ ई० में ये भी चल बसे! इनकी लिखी पुस्तक 'ख़ालिक बारी' बहुत प्रसिद्ध है।

सम्राट् अकबर के समय में उर्दू की बहुत उन्नति हुई। वह हिन्दू-मुसलिम एकता के लिए सदैव उत्सुक रहता था। उसने अपने दरबारी शायरों द्वारा कितने ही संस्कृत-ग्रन्थ फ़ारसी में अनूदित कराये थे। फ़ैज़ी और अब्दुल रहीम ख़ानख़ाना अकबरी दरबार के रत्न थे। फ़ैज़ी ने कुछ दोहे भी लिखे हैं। ख़ानख़ाना तो हिन्दी का बहुत अच्छा कवि हो गया है। कभी-कभी अकबर स्वयम् भी हिन्दी में कविता करता था

और हिन्दी-कवियों को तो वह यथेष्ट आदर-दान देता था। अकबर के समय में फ़ारसी सीखना प्रत्येक राजकर्मचारी के लिए अनिवार्य था। इससे उर्दू और फ़ारसी की बहुत उन्नति हुई। शाहजहाँ के समय में तो उर्दू और भी उन्नत हो गई और उसने साहित्यिक भाषा का रूप धारण कर लिया। उधर उन्नति की उमंग में, देहली के शायरों ने भी अपनी कविताओं में, हिन्दी-शब्दों को बहुत कम स्थान दिया। इसी समय उर्दू का एक कोष भी तैयार किया गया। फ़ारसी की लोकोक्तियों और पदावलियों का प्रयोग भी प्रचुरता से हुआ। उस समय कविताओं में प्रायः सूफ़ियाना भावों की ही झलक पाई जाती थी। कवियों में सैनिक व्यवसाय से सम्बन्ध रखने वाले ही अधिक थे। कभी-कभी कविताओं में बड़े भद्दे और असाहित्यिक शब्दों का भी प्रयोग हो जाता था। कविता में प्रौढ़ता न आई थी। छन्दःशास्त्र सम्बन्धी नियमों का भी पूरी तरह निर्वाह न किया जाता था। शाह मुबारक, आरज़ू, आबरू, मज़मून, बेदिल, फ़िराक़, उम्मेद, हातिम, जानजाना, यकरंग, फ़ुग़ां आदि इस समय के मुख्य कवि थे।

इसके पश्चात् उर्दू का स्वर्णयुग आया। इस युग में उर्दू कविता-कामिनी अपने सम्पूर्ण शृङ्गार से सुसज्जित होकर संसार के सामने उपस्थित हुई। यों तो कविता के प्रत्येक क्षेत्र में कवि-प्रतिभा का चमत्कार दिखाई दिया; परन्तु इस युग में मसनवियों, ग़ज़लों और क़सीदों की खूब धूम रही। यह मीर और सौदा का युग था। मीर हसन की प्रसिद्ध मसनवी 'सहरुल बयान' इसी युग में लिखी गई। दर्द की ग़ज़लें अनुपम समझी गईं। सौदा के क़सीदों की तारीफ़ का ठिकाना न रहा। इन कवियों ने आनेवाले कवियों के लिए एक आदर्श स्थापित किया। आगे चलकर ज़ौक़, ग़ालिब, नासिख़, आतिश आदि महाकवियों ने भी सौदा और मीर की महत्ता को मुक्त-कण्ठ से सराहा और

उनका आचार्यत्व स्वीकार किया। इस समय उर्दू में फ़ारसी की .खूब भरमार हुई। कितनी ही कविताओं के रूप तो फ़ारसी से ढक गए। फ़ारसी कविताओं के उर्दू अनुवाद भी किये गए, जिनमें फ़ारसी पदावलियों की ही मुख्यता थी। फ़ारसी शब्द ही नहीं, फ़ारसी के महावरे भी उर्दू में प्रयुक्त किए गए। फ़ारसी के और भी नए-नए छन्दों का प्रचार हुआ। इसी युग में तज़किरे अर्थात् कवियों के संक्षिप्त परिचय भी लिखे गये। 'निकातुल शोअरा' और 'शोअरा-ए-उर्दू' नामक तज़किरे बहुत प्रसिद्ध हैं, जो क्रमशः मीर तक़ी और मीर हसन के लिखे हुए हैं। कवियों और कविता का इतिहास जानने के लिए इस प्रकार के तज़किरों की बड़ी आवश्यकता थी। सोज़ और नियाज़ भी इन्हीं दिनों हुए। इस युग में हिन्दी-शब्दों का बुरी तरह बहिष्कार किया गया। फ़ारसी की उपमाएं और उत्प्रेक्षाएं उर्दू में बहुतायत से सम्मिलित की गईं। इस युग के कवियों ने प्रेम और सौंदर्य का वर्णन करने तथा कविता को फ़ारसी के नए और कठिन शब्दों से सजाने में कमाल किया है। फ़ारसी में जो भाव बहुत दिनों से प्रचलित थे, उन्हीं की उर्दू में भी भरमार की गई। इन दिनों उर्दू में प्रौढ़ता आई और उसे साहित्यिक दृढ़ता प्राप्त हुई।

दरबारी कविता

इस के पश्चात् जो युग आया उसमें भी उर्दू की अच्छी उन्नति हुई। हिन्दी शब्दों का बहिष्कार और फ़ारसी शब्दों का प्रचार बराबर जारी रहा। यह इंशा और मसहफ़ी का युग था। इस युग में हिन्दी के वे शब्द भी निकाल दिये गए जो उर्दू-कविता में बहुत दिनों से व्यवहृत हो रहे थे, और जिनसे उसकी शोभा थी। इस युग में आशिक़-माशूक़ों की प्रेम-कथाएँ इतनी अधिक बढ़ीं कि उनसे लोगों के चरित्र पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा और नैतिकता नष्ट होने लगी। उर्दू-

कविता का शाही दरबारों से सम्बन्ध इसी समय हुआ। कवि लोग मासिक वृत्ति पाकर दरबारों में नौकर हो गए। फिर क्या था, वेतन-भोगी दरबारी कवि अपने संरक्षकों की प्रशंसा के गीत गाने लगे। जिन बातों से बादशाह प्रसन्न होते वे ही कविता में लिखी जातीं। आश्रयदाताओं को रिझाना ही इस युग की कविता का मुख्य उद्देश्य था। उस समय किसी दरबार का कवि बन जाना बड़े गौरव की बात समझी जाती थी। कवियों में प्रतिद्वन्द्विता भी खूब रहती थी। एक कवि दूसरे पर भद्दी से भद्दी फबतियाँ कसने में संकोच न करता था। इंशा और मसहफ़ी में भी बुरी तरह वाग्युद्ध होते रहते थे। कविता पर दरबारी प्रभाव पड़ने से उसकी मौलिकता और पवित्रता नष्ट हो गई। कवियों की प्रतिभा-प्रभा अवाञ्छनीय दिशाओं में चमकने लगी। आशिक़-माशूक़ों के बेढंगे वर्णन और विलासप्रियता की भोंड़ी भावना ने कविता-कामिनी के कलित कलेवर को कलुषित कर दिया। गन्दी कविताएं पुरस्कृत की जाने लगीं। यह था लखनऊ की कविता का हाल। जब तक दिल्ली कविता का केन्द्र रहा तब तक वहाँ उसकी ऐसी दुर्दशा न हुई थी। उस समय तक आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी भाव ही कविता में अधिक व्यक्त किये जाते थे। दिल्ली से जो कवि लखनऊ गए, वे कुछ दिनों तक तो वहाँ की गन्दगी से बचे रहे, परन्तु अन्त में उन्हें भी उसी मलिन मनोवृत्ति का शिकार बन जाना पड़ा। अशिष्ट और अश्लील कविताओं के लिए 'रेख़ती' का आविष्कार इसी युग में हुआ। 'रेख़ती' में ज़नानी बोली और विलास-प्रियता सम्बन्धी बातों के अतिरिक्त और कुछ न होता था। भावों की दृष्टि से इस समय की कविता बहुत ही हीन हो गई थी, परन्तु विविध छन्दों की रचना और भाषा की टीपटाप अच्छी थी। अभिप्राय यह है कि उस समय की कविता अपना कवित्व गुण छोड़कर धन-संग्रह तथा जीविकार्जन का साधन बनी हुई थी। बहुत-से कवि

तो भड़ौए और निन्दात्मक कविताएं लिखकर ही अपना निर्वाह करते थे, जिसके कारण प्रायः हाथापाई तथा मारपीट तक की नौबत आजाती थी। क़ायम, मिन्नत, ममनून, हसरत, क़ुदरत, बेदार, हिदायत, फ़िराक़, ज़िया, वफ़ा, हज़ीं, बयान, रासिख़ आदि इस युग के प्रसिद्ध कवि हैं।

दिल्ली पर भयंकर आक्रमण होने और घोर आपत्ति आने के कारण वहाँ का शासन-सूत्र बहुत ही ढीला पड़ गया। मुग़ल बादशाह नाम मात्र के बादशाह रह गए। उनमें कवियों को आश्रय देने की शक्ति न रही, प्रजजनों के जीवन भी संकट में पड़ गए। ऐसी दशा में बहुत-से कवि देहली से इधर-उधर भाग गए। कुछ कवियों ने लखनऊ में शरण ली, जिनमें मीर, सौदा, मीर हसन, इंशा आदि मुख्य थे। लखनऊ में इन नवागत कवियों का ख़ूब आदर-सत्कार हुआ। उनके प्रति पूरा प्रेम दिखाया गया। कितने ही कवियों को दरबार की ओर से जागीरें और वृत्तियाँ प्रदान की गईं, पुरस्कार और उपहार भी दिये गए। कुछ कवि नियमित रूप से 'दरबारी' बन गए। जीविका और आश्रय की दृष्टि से तो यह ठीक हुआ, परन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया, दरबार के प्रभाव से कविता में अस्वाभाविकता, अमौलिकता और अनैतिकता आदि दुर्गुण आगये।

आतिश और नासिख़ तो लखनऊ में थे ही, उधर देहली से अन्य कवियों के पहुँच जाने पर वहाँ कविता की धूम मच गई। रोज़ महफ़िलें जमने लगीं। मुशायरों की बाढ़ आ गई। कवि लोग बड़ी आज़ादी से चहकने लगे। उस समय देहली और लखनऊ के नाम पर कविता की दो शैलियाँ हो गयीं। लखनऊ-शैली के प्रवर्त्तक नासिख़ थे। इस शैली में भावों की अपेक्षा भाषा की सजावट पर ही अधिक ध्यान दिया जाता था। शब्द-सौंदर्य ही इस शैली का विशेष गुण था। यह शैली मस्तिष्क पर तो प्रभाव डालती थी, परन्तु हृदय को स्पर्श न करती थी।

देहली-शैली में भावों की प्रधानता और भाषा की अप्रधानता थी। देहली वाले शब्दाडम्बर की वेदी पर कविता की आत्मा का कभी बलिदान न करते थे। इसमें सन्देह नहीं कि लखनऊ-शैली के समर्थकों ने शब्दों और महावरों की खोज तथा छान-बीन का काम अच्छा किया। उक्त दोनों शैलियों के अनुयायियों में महावरे, शब्द-प्रयोग, लिंग तथा उच्चारण सम्बन्धी बातों को लेकर बहुत मतभेद रहता था। शैलियों के ये पुराने भेद अब भी चले आते हैं। आतिश ने लखनऊ की शैली का अनुसरण नहीं किया, इनकी कविताएँ पद-लालित्य और भावों की उच्चता दोनों ही के लिए प्रसिद्ध हैं। ये ग़ज़लों के आचार्य माने जाते हैं। इनकी कविता में माधुर्य और प्रभाव की प्रचुरता है। उर्दू को परिमार्जित करने में इन्होंने बड़ा काम किया। नासिख़ और आतिश में प्रायः साहित्यिक प्रतिद्वन्द्विता रहती थी। नासिख़, आतिश, नसीम (लखनवी) आदि इस समय के प्रसिद्ध कवि थे।

देहली उजड़ जाने के कारण जब कविता का केन्द्र लखनऊ हो गया तो वहाँ के नवाबों की इस ओर प्रवृत्ति हुई। देहली के बादशाहों की तरह उन्होंने भी कवियों को यथेष्ट आश्रय, सम्मान और प्रोत्साहन दिया, कविता-कला में रुचि दिखाई और स्वयं भी अच्छी-अच्छी कविताएँ लिखीं। इन नवाबों में आसिफ़ुद्दौला, वज़ीरअलीख़ाँ, सआदत अलीख़ाँ, गाज़ीउद्दीन हैदर, नसीरुद्दीन हैदर, वाजिदअलीशाह 'अख़्तर' आदि मुख्य थे। इनके दरबारी कवि असीर, अमानत, क़लक़, ज़क़ी, दरख़शाँ, मुहम्मद सादिक़ ख़ाँ आदि थे।

इन्हीं दिनों लखनऊ में मरसियों की भी बहुत उन्नति हुई। मरसिया वह कविता है जिसमें किसी मृत व्यक्ति की प्रशंसा की जाती है। मरसिया क़सीदे का उल्टा है, क्योंकि क़सीदे में जीवित व्यक्ति की प्रशंसा की जाती है। पहले-पहल मरसियों का जन्म अरब में हुआ। अरबी से ये फ़ारसी में आए और

फ़ारसी से उर्दू में। उर्दू में सबसे पहले दक्षिणवालों ने मरसिये लिखे। फिर दिल्ली में उनका प्रचार हुआ। मीर, सौदा और मीर हसन ने भी मरसिये लिखे हैं, परन्तु उनमें 'रस्म अदायगी' के सिवा कोई विशेषता नहीं है। प्रारंभ में, छोटे-छोटे मरसिये लिखे जाते थे, जिनमें मरने वाले के गुणों का वर्णन होता था। इन मरसियों में कला या कवित्व न होने के कारण, स्थायित्व भी न होता था। सबसे पहले लखनऊ में मरसियों को कला का रूप देकर उनका क्षेत्र व्यापक बनाया गया, और उनमें मृत व्यक्ति के स्वरूप, गुण, वंश, स्थान आदि का भी वर्णन किया गया। यदि मृत व्यक्ति धर्म-युद्ध में शहीद हुआ है, तो उसकी वीरता, घोड़े, तलवार तथा युद्ध-सामग्री की भी प्रसंशा की गई। फिर युद्ध के दृश्य, समय, ऋतु, धूप और गर्मी की उग्रता, क्षेत्र की विस्तीर्णता, प्राकृतिक दृश्य आदि की भी प्रशंसा होने लगी। इस प्रकार के वर्णनों से मरसिया साहित्य की स्थायी संपत्ति बन गए। पहले मरसिये चार चरणों में लिखे जाते थे, परन्तु सौदा ने उन्हें छह चरणों (मुसद्दस) में लिखना शुरू किया। सर्वप्रथम ज़मीर ने मरसियों को नया रूप दिया। फिर इस मार्ग पर अनीस और दबीर अग्रसर हुए। इन्होंने तो मरसियों को साक्षात् कला का ही रूप दे दिया। इन दोनों उस्तादों के पढ़ने का ढंग भी बड़ा आकर्षक और निराला था। श्रोतागण चित्र-लिखे-से रह जाते थे। मरसिया धार्मिक भावना से प्रेरित होकर लिखा जाता है, अतः उसमें अनुचित और अशिष्ट प्रसंग नहीं आने पाते। अनीस और दबीर ने चार-पाँच लाख मरसिये लिखे हैं, जो ऐतिहासिक वीर काव्य भी कहे जा सकते हैं। मरसिये को लेकर अनीस और दबीर में ख़ूब नोक-झोंक रहती थी। दोनों के नाम पर अलग-अलग दो दल बन गए थे, परन्तु इससे इन दोनों के पारस्परिक प्रेम और शिष्टाचार में किसी प्रकार का अन्तर न आया था। इनके अतिरिक्त मुनीस, नफ़ीस, आरिफ़,

उन्स, रशीद, इश्क़, साबिर, दिलगीर, फ़सीह, अफ़सुर्दा, सिकन्दर आदि कवियों ने भी मरसिया लिखने में अच्छी ख्याति प्राप्त की।

इसी युग में नज़ीर भी हुए, परन्तु इनकी शैली बिल्कुल निराली थी। उस पर किसी युग का प्रभाव न पड़ा था। अपनी शैली के ये स्वयं ही प्रवर्त्तक थे। ये मीर, सौदा, इंशा, जुरअत, नासिख़ आदि के सम-सामयिक थे। दीर्घजीवी होने के कारण इन्होंने कविता के कई युग देखे थे। इनकी कविता पर देहली या लखनऊ, दोनों में से किसी शैली का प्रभाव नहीं पड़ा। नज़ीर का जन्म उस समय हुआ जब उर्दू में अरबी और फ़ारसी शब्दों की भरमार की जा रही थी, परन्तु इन्होंने सरल शब्दों से ही काम चलाया। फ़ारसी के कठिन छन्दों या शब्दों से अपनी कविता को सर्वथा अछूता रक्खा। बोलचाल की भाषा और सीधे-सादे छन्दों में उच्च से उच्च भाव प्रकट किये। नज़ीर की कविता में हिन्दू-मुसलमानों के मेले-तमाशे, उत्सव, त्यौहार और रीति-रिवाजों का बड़ा सुन्दर और स्वाभाविक वर्णन है। पशु-पक्षी, समय, ऋतु और प्राकृतिक दृश्यों के भी उन्होंने बड़े आकर्षक शब्द-चित्र खींचे हैं। मानव-स्वभाव के तो ये प्रसिद्ध पारखी थे। इनकी कविता में ईश्वरीय भक्ति और सांसारिक विरक्ति के भाव प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इन्होंने बालकों के लिए भी बहुत-सी कविताएँ लिखी हैं। ये बड़े निरीह और निस्स्वार्थ थे। साम्प्रदायिक भेद-भाव तो उन्हें छू तक न गया था। भाँति-भाँति की संगतों में रहने के कारण इनका ज्ञान और अनुभव भी बहुत बढ़ गया था।

× × ×

कुछ काल पश्चात् देहली के उजड़े हुए काव्योद्यान में एक बार फिर बहार आई, अर्थात् ज़ौक़ और ग़ालिब के समय में, इस सुरम्य उपवन में फिर कवि-कोकिलों ने कूकना शुरू किया। इस समय भी उर्दू-कविता में अरबी-फ़ारसी-शब्दों की भरमार

की गई। उसमें से हिन्दी शब्द बीन-बीन कर निकाले गए । ग़ालिब और मोमिन की कविताएँ इतनी जटिल और क्लिष्ट हो गईं कि उनका समझना भी कठिन था । वे फ़ारसी की ही दूसरी शक्ल बन गई थीं। फिर भी इस युग में कविता-कला का अच्छा विकास हुआ । नए-नए भावों की सृष्टि हुई और नवीन छन्द गढ़े गए । मोमिन, शेफ़्ता, तस्कीन, नसीम (देहलवी), ज़हीर, अनवर, सालिक़, ज़की, रख़्शां, आज़ुर्दा आदि कवियों ने ज़ौक़ तथा ग़ालिब का अनुसरण किया और देहली की शैली पर कविता लिखकर अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त की।

अवध की अधोगति और देहली की दुर्दशा के समय वाजिदअली शाह और बहादुरशाह क़ैद करके क्रमशः मटिया-बुर्ज़ और रंगून भेज दिए गए। इससे उक्त दोनों स्थानों के कवि-गण निराश्रित होकर जीविका की खोज में इधर-उधर फिरने लगे । कितने ही कवि तो वाजिदअलीशाह के साथ मटिया-बुर्ज़ चले गए, जिनके कारण वहाँ ख़ूब चहल-पहल रही। इन कवियों में बर्क़, दरख़्शां, बहार, हुनर आदि मुख्य थे । उस समय बंगाल में उर्दू का बहुत प्रचार हुआ । वहाँ के स्थानीय कवियों में मौलवी अब्दुलगफ़ूर निस्साख़ (डिप्टी कलक्टर) बहुत प्रसिद्ध थे । इनकी लिखी कितनी ही काव्य पुस्तकें हैं। देहली के कवियों ने फ़र्रुख़ाबाद, फ़ैज़ाबाद, टाँडा, अज़ीमाबाद, मुर्शिदाबाद, हैदराबाद आदि स्थानों में शरण ली । कुछ कवि अलवर, जयपुर, भरतपुर, पटियाला, कपूर्थला, टोंक, मंगलौर, रामपुर आदि रियासतों में भी गए । रामपुर और हैदराबाद में बहु संख्यक कवियों को आश्रय दिया गया, क्योंकि ये रियासतें बहुत बड़ी थीं। रामपुर के नवाब यूसुफ़ अली ख़ाँ और नवाब कालिब अली ख़ाँ स्वयं अच्छे कवि और कवियों के क़द्रदान थे। इन्होंने उन्मुक्त हृदय होकर बाहर से आए हुए कवियों का सत्कार किया। रामपुर में लखनऊ और देहली के कवियों

का ख़ूब जमाव हुआ। मोमिन, ग़ालिब, अमीर, दाग़, जलाल, तसलीम आदि भी वहाँ पहुँचे। रामपुर में देहली और लखनऊ दोनों शैलियों के कवि एकत्र हो गए जिससे उर्दू कविता की एक नई शैली का जन्म हुआ।

हैदराबाद ने भी कवियों को खूब आश्रय दिया। यह रियासत साहित्य की उन्नति करने में सदैव अग्रसर रही है। बड़े-बड़े कवि और कलाकार यहाँ आश्रय प्राप्त करते रहे हैं। हिन्दुस्तान के ही नहीं, अरब, ईरान, बुख़ारा, समरक़न्द आदि के विद्वान् भी हैदराबाद में यथेष्ट सत्कार प्राप्त कर चुके हैं। यहाँ के शासक स्वयं कवि और कवियों के गुणग्राहक होते आए हैं। माननीय निज़ामों के अतिरिक्त महाराजा चन्दूलाल 'शादाँ', राजा गिरिधारी प्रसाद 'बाक़ी' महाराजा सर किशन-प्रसाद 'शाद' आदि हैदराबाद में प्रसिद्ध साहित्य-सेवी, विद्वान् और कवि हो गए हैं। वहाँ की 'अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू' और 'उस्मानिया यूनिवर्सिटी' ने भी उर्दू की उन्नति और उसके प्रचार के लिए प्रशंसनीय कार्य किया है। उस्मानिया यूनिवर्सिटी का 'दारुल तर्जुमा' (अनुवाद-विभाग) उर्दू में महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुवाद कर रहा है। कोर्स की किताबों के अतिरिक्त इस विभाग द्वारा और भी बहुत-सी मौलिक पुस्तकें तैयार हुई हैं। इतिहास, दर्शन, गणित, विज्ञान, शिक्षा, शिल्प, चिकित्सा आदि सभी विषयों पर पुस्तकें प्रकाशित की जा रही हैं।

× × ×

आशिक़-माशूक़, सागर-साक़ी, गुल-बुलबुल, प्रेम-सौन्दर्य आदि के वर्णन से उर्दू-कविता बुरी तरह भर गई थी। दरबारी प्रभाव ने तो उसे और भी गन्दा कर दिया था। कवियों की प्रतिभा धन के लोभ से अपने संरक्षकों की विरुदावली वर्णन करने में बुरी तरह से संलग्न हो गई थी। कविता में न मौलिकता रही थी न नवीनता। उसमें फ़ारसी की ही पुरानी बातें, और वैसे ही दक़ियानूसी

विचार भर गये थे। मानो उर्दू कविता का इस देश से कोई सम्बन्ध ही न रहा था। कवियों को हिन्दुस्तान की कोई उपमा पसन्द न आती थी। उपमाओं के लिए भी उन्हें फ़ारसी का ही मुंह ताकना पड़ता था। बादशाहों के शासन की प्रशंसा के लिए नौशेरवाँ, दानशीलता की तारीफ़ के लिए हातिम, प्रेमी और प्रेयसी के लिए लैला-मजनूं, सौन्दर्य की महिमा के लिए यूसुफ़ आदि के नाम लिए जाते थे। क़द को सर्व-शमशाद से, आँखों को नरगिस से और ज़ुल्फ़ को सम्बुल से उपमा दी जाती थी। कमल और कुमोद का भूल से भी स्मरण न आता था। जहाँ देखो 'गुल-बुलबुल' और साग़र-साक़ी। उर्दू कविता पढ़ने से ऐसा मालूम होता था मानो वह इस देश के कवियों द्वारा नहीं लिखी गई, उसके लिखने वाले वे कवि हैं, जिनका इस देश से कभी कोई सम्बन्ध हीनह रहा। फ़ारसी की 'फ़साहत' के फन्दे में फँसकर उर्दू-कवियों को इस देश को अच्छी से अच्छी वस्तुओं, बड़े से बड़े व्यक्तियों, और सुन्दर से सुन्दर दृश्यों में भी कोई आकर्षण न जान पड़ता था। उन्हें न अर्जुन में कोई गुण मिला और न भीम में किसी प्रकार का बल। न गंगा के प्रवाह में सौन्दर्य दिखाई दिया और न यमुना की धार में सुहावनापन। और तो और, उर्दू-कवियों को इस देश की ऋतु, फूल-पत्तियों, पहाड़-पहाड़ियों तक में कोई विशेषता न प्रतीत हुई। ऐसी कृत्रिम कविताओं में मौलिकता या नवीनता की खोज व्यर्थ थी। सच तो यह है कि उर्दू-कवि फ़ारसी का आश्रय लेकर 'लकीर के फ़क़ीर' बन गए थे। प्रायः सबने बँधा हुआ राग अलाप दिया था, मानो उसमें घटत-बढ़त हो ही नहीं सकती थी। फ़ारसी के अनुकरण से उर्दू-कविता में एक दोष यह भी आ गया था कि उसमें पुरुष का प्रेम पुरुष के साथ दिखाया गया, जो प्रकृति-विरुद्ध और अस्वाभाविक है। तत्कालीन उर्दू-कविता में प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन कठिनता से ही मिलेगा। लहलहाते खेतों, गाती हुई चिड़ियों

और कलकल नाद करती हुई नदियों के सौन्दर्य की ओर कदाचित् ही किसी ने ध्यान दिया हो। स्वाधीनता का राग अलापना या प्रेम के प्रकृत स्वरूप का चित्र अङ्कित करना तो कभी किसी को सूझा ही नहीं। अधिकांश उर्दू-कविताएं निराशा और दुःख से भरी हुई हैं। उनमें न आशा का सन्देश है और न आनन्द का आभास।

जहाँ तक समझ में आता है, इसका कारण उस समय की परिस्थिति है। जैसा समय देखा, कवि लोगों ने भी वैसा ही राग अलाप दिया। इन पंक्तियों का यह प्रयोजन नहीं कि उर्दू-कविता में कोई गुण ही नहीं अथवा वह हीन है। नहीं; जिस साहित्य-तरु को मीर, सौदा, ग़ालिब, ज़ौक़, दाग़, नज़ीर आदि ने अपने रक्त से सींचा हो उसकी गौरव-गरिमा काव्य की दृष्टि से कदापि न्यून नहीं हो सकती, उस पर कोई भी समृद्धि-शाली—उन्नत जाति उचित गर्व कर सकती है। हमने जिन बातों की ओर संकेत किया है, उनका सम्बन्ध उस समय की प्रवृत्ति और लोक-रुचि से है, जिसके प्रभाववश अधिकतर कवियों को भी वैसा बन जाना पड़ा था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि कुछ महाकवियों की कविताएं ऐसी भी हैं जो दार्शनिक, सादाचारिक आदि उपयोगी भावनाओं से ओत-प्रोत हैं और जिनमें बड़े सुन्दर और ऊँचे भाव व्यक्त किये गए हैं।

नवयुग

कविता की ऐसी स्थिति में आज़ाद और हाली ने नवयुग का संदेश सुनाया। उन्होंने कविता देवी को दक़ियानूसी दीवारों से बनी काली कोठरी से निकाल कर प्रकाश के सुविस्तीर्ण प्रांगण में ला खड़ा किया। नए और उपयोगी विषय चुने, 'मुसद्दस' और 'मसनवी' आदि सरल छन्दों का आश्रय लिया। अनुप्रास और छन्दों के विकट बंधन ढीले किये कृत्रिमता और अस्वाभाविकता दूर हुई। क़ित्ते और रुबाइयों पर ध्यान दिया गया। नदी, पर्वत,

दृश्य, ऋतु, प्राकृतिक सौन्दर्य आदि कविता के विषय बने। ऐतिहासिक, राष्ट्रिय, सादाचारिक, और शिक्षाप्रद कविताओं का प्रचार हुआ। वर्णनात्मक कविताएं भी लिखी जाने लगीं। ग़ज़लों को प्रेमी और प्रेयसी की प्रेम-चर्चा से मुक्त कर उपयोगी विषयों के लिए प्रयुक्त किया गया। उनमें मानव-हृदय के गंभीर भाव भरे जाने लगे। अँगरेज़ी कविताओं की तरह तुकहीन कविताएं भी लिखी गईं, परन्तु उनका प्रचार न हुआ। हाली की प्रसिद्ध पुस्तक 'मदोजज़् इस्लाम' (मुसद्दसे हाली) इसी समय लिखी गई। उर्दू-कविता में इस नई लहर के उठने का मुख्य कारण अंगरेज़ी शिक्षा और समय की माँग थी।

उर्दू-कविता ने इस नए युग में, नई भावनाओं तथा नवजीवन का संचार कर दिया। लोग आशिक़-माशूक़ों की सड़ी-बुसी दुनिया से निकलकर, नवीनता के प्रकाशमय संसार में आए। परन्तु आश्चर्य तो यह है कि इस समय भी कुछ लोग पुराने ढर्रे की कविता लिखने में ही अपनी शान समझते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें पश्चिमी साहित्य के अन्धानुसरण में ही सारे गुण दिखाई देते हैं। उन्हें इस देश की कोई भी बात अच्छी नहीं लगती। कुछ लोग बीच के हैं, जो देश की वर्त्तमान परिस्थिति के अनुसार उपयोगी और आवश्यक बातें ग्रहण करने में संकोच नहीं करते, चाहे ये बातें पुरानी हों चाहे नई। ऐसे कवियों में हाली, आज़ाद, मुहम्मद इस्माईल, अकबर, इक़बाल, हसरत, चकबस्त, सरूर, जोश, जिगर आदि हैं। हाली ने मुसलमानों के उद्धार के लिए कविताएं लिखीं, आज़ाद ने प्राकृतिक कविताओं की ओर ध्यान दिया। अकबर की कविता अपने ढङ्ग की अपूर्व और निराली हुई। उनके उत्कृष्ट व्यंग्य और हास्य ने पाठकों को स्वर्गीय आनन्द प्रदान किया। इक़बाल ने राष्ट्रिय और दार्शनिक भावनाएं उंडेल दीं। हसरत ने ग़ज़लों का नए रूप में उद्धार किया और उन्हें आशिक़-माशूक़ों से छुड़ाकर, उच्च भावों की साधना में लगाया। चकबस्त

ने सामयिक कविताएँ लिखने में कमाल किया, प्राकृतिक और धार्मिक वर्णन कर ख्याति प्राप्त की। सरूर अपनी शैली और उच्च भावनाओं के लिए प्रसिद्ध हुए। अब तो उर्दू कविता का प्रवाह ही बदल गया और ज्यों-ज्यों समय बीतता जायगा, वह उन्नति-पथ पर अग्रसर होती हुई, देश तथा समाज के हित-साधन में संलग्न रहेगी।

उर्दू में उस्ताद बनाने की प्रथा

उर्दू में उस्ताद बनाने और 'इस्लाह' लेने का रिवाज बड़ा अच्छा है। शिष्य अपने गुरु की मान-मर्यादा का पूरा ध्यान रखता है। गुरु भी सच्चे हृदय से शिष्य को सब बातें बताता है। शिष्य अपनी कविता का संशोधन कराने के पश्चात् ही उसे मुशायरे में पढ़ने या प्रकाशित कराने योग्य समझता है। 'काता और ले दौड़ी' की प्रथा उर्दू में नहीं है और न 'निगुरापन' है। गुरु बनाने या इस्लाह लेने में लाभ तो है ही, परन्तु एक हानि भी है। वह यह कि प्रायः कवि लोग अपने गुरु का आँखें मीच कर अनुसरण करने लगते हैं, जिससे उनकी कविता में नवीनता या मौलिकता नहीं आने पाती। ये लोग उस्ताद के रंग को छोड़ कर अपनी मौलिक कल्पना और सूझ-बूझ के अनुसार नवीन विषयों को छूना शिष्टाचार के विरुद्ध समझते हैं। हमारी सम्मति में ऐसा करना उचित नहीं है। अपनी ईश्वरदत्त स्वाभाविक प्रवृत्ति और प्रतिभा को दबोच कर, केवल अनुकरणशीलता में प्रवीणता प्राप्त करना, न तो उचित ही है और न आवश्यक। गुरु बनाने का मतलब तो यह है कि कविता में भाषा या छन्द सम्बन्धी कोई त्रुटि हो तो वह 'इस्लाह' द्वारा दूर हो जाये और शिष्य अपने भावों के व्यक्त करने का ढंग जान जाय, न कि गुरु के भावों का अनुकरण करने लगे।

उर्दू में जो छन्द इस्तेमाल किये जाते हैं, वे प्रायः फ़ारसी से

लिए गए हैं। कुछ छन्द ऐसे भी हैं जो हिन्दी छन्दःशास्त्र में मिलते हैं, और पिंगल के नियमानुसार लिखे जा सकते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि छन्द-सम्बन्ध में उर्दू पिंगल शास्त्र की ऋणी है। इन छन्दों के नाम उर्दू में कुछ भी हों, परन्तु हिन्दी में वे बहुत दिनों से प्रचलित हैं। संस्कृत की तो वे विभूति हैं हीं। जितना पुराना छन्दःशास्त्र है, उतने ही पुराने ये छन्द भी हैं। उर्दू में इस्तेमाल होने वाले कुछ छन्दों के नाम ये हैं—सुमेरु, विधाता, विहारी, शास्त्र, पीयूषवर्ष, भुजङ्ग प्रयात, खरारी, हरिगीतिका, आनन्दवर्द्धक, दिग्पाल, भुजंगी, चौपाई आदि।

उर्दू कवियों के मुशायरे बहुत सफल होते हैं। उनमें कवियों की उत्साह-वृद्धि के लिए साधुवाद भी ख़ूब दिए जाते हैं, परन्तु अशिष्टता और धाँधली नहीं होने पाती। शिष्टता, सभ्यता और छोटे-बड़े की मान-मर्यादा का पूरा ध्यान रक्खा जाता है। कविताएँ भी वही पढ़ी-पढ़ाई जाती हैं जो मननपूर्वक लिखी गई हों और जिन पर 'इस्लाह' भी ली जा चुकी हो। वास्तव में यह प्रथा बड़ी सुन्दर है, इससे मुशायरों की सफलता में बहुत सहायता मिलती है।

उर्दू कविता की परिभाषाएँ

उर्दू में निम्नलिखित विषयों पर कविताएँ लिखी जाती हैं—ग़ज़ल—में प्रेम सम्बन्धी या सूफ़ियाना विषय रहते है। इसमें साधारणतः दस-बारह शेर होते हैं। ग़ज़ल का अर्थ है स्त्रियों या उनके प्रेम-प्रसंग का वर्णन। क़सीदा—में किसी व्यक्ति की प्रशंसा या निन्दा की जाती है। शिक्षाप्रद और दार्शनिक विषयों की भी चर्चा हो सकती है। परन्तु ग़ज़लों और क़सीदों में शेरों की ऊपर दी हुई संख्या की पाबन्दी नहीं की जाती। क़िता—का अर्थ टुकड़ा है। इसे ग़ज़ल या क़सीदे का एक अंश समझना चाहिए। इसमें शेरों की संख्या कम से कम दो होती है, जिनमें प्रायः शिक्षाप्रद भाव

रक्खे जाते हैं। एक क़िता में ही उसका अभिप्राय पूरा हो जाना चाहिए। रुबाई—में दो शेर (बैत) होते हैं, इसलिए इसे 'दुबेती' भी कहते हैं। पहले, दूसरे और चौथे चरण का सानुप्रास होना आवश्यक है। चौथा चरण अधिक भावपूर्ण और ज़ोरदार होना चाहिए। इसमें भी प्रायः नीति और उपदेश की ही बातें कही जाती । मसनवी—में प्रत्येक शेर के दोनों मिसरों की तुक मिलनी चाहिए। रदीफ़ हो या न हो। शेरों की संख्या निश्चित नहीं है। मसनवी में युद्ध, उत्सव, प्रेम, सौन्दर्य, कहानी, उपन्यास आदि का वर्णन होता है। इसमें पाँच या सात तरह के छन्द प्रयुक्त होते हैं। मुस्तज़ाद—इसमें प्रत्येक चरण के अन्त में कुछ अधिक शब्द बढ़ाये जाते हैं। मुसल्लस—अर्थात् तिपदा या तिकड़ी—में तीनों मिसरे एक-सी तुक के होते हैं। मुरब्बा—चार चरणों की कविता को कहते हैं। चारों चरणों की तुकें मिलाई जाती हैं। मुख़म्मस—में पाँच चरण होते हैं। पाँचवें चरण की तुक टेक की तरह मिलती हुई रहती है। मुसद्दस—में छह चरण या तीन शेर होते हैं। इनमें पहले चार चरणों की तुक एक होनी चाहिए, शेष दो की भिन्न। वासोख़्त—में आशिक़ अपने माशूक़ की अविश्वस्तता, कठोरता या प्रतिद्वन्द्वी के साथ की गई अनुचित प्रीति की शिकायत करता है। विरह-व्यथा भी इसी में लिखी जाती है। तारीख़—में किसी घटना-काल या किसी के जन्म-संवत् को अङ्कों में न लिखकर, उर्दू-वर्णमाला के संकेत से लिखते हैं। मतला और मक़ता—ग़ज़ल या क़सीदे का पहला शेर 'मतला' और अन्तिम शेर 'मक़ता' कहलाता है। क़ाफ़िया—तुक को कहते हैं। रदीफ़—क़ाफ़िए के बाद आती है, और सब शेरों में ज्यों की त्यों बनी रहती है। जैसे—

> आतिशे इश्क़ वो है, जिसमें समुन्दर जल जाय,
>
> इक शरर जाय जो पत्थर में तो पत्थर जल जाय।

इसमें समुन्दर और पत्थर क़ाफ़िया तथा 'जल जाय' रदीफ़ है। बहुत

सी शेरों में काफ़िए ही होते हैं, रदीफ़ नहीं। तख़ल्लुस—उपनाम को कहते हैं, अर्थात् कवि लोग कविता के लिए अपना कोई छोटा नाम रख लेते हैं। जैसे दाग़, ग़ालिब, नसीम, हाली आदि। शेर—का अर्थ है ज्ञान, अर्थात् शब्दों का वह साँचा जिसमें विचार ढाले जायँ। मिसरा—शेर की एक कड़ी को कहते हैं, चरण और पंक्ति भी इसी का नाम है।

उर्दू कवियों ने फ़ारसी शायरों की तरह शराब का बहुत वर्णन किया है, शराब से उनका अभिप्राय प्रेम से होता है। जिन शायरों ने शराब नहीं पी, वे भी प्रेम के सम्बन्ध में शराब का उल्लेख किये बिना नहीं रहे। साक़ी (शराब पिलाने वाले) से माशूक़ का प्रयोजन लिया जाता है। उर्दू शायर सारी विपत्तियों का कारण आकाश को समझते हैं, इसलिए वे उसे ही अपनी कविता में धिक्कारते रहते हैं। इनके यहाँ आकाश घूमता-फिरता माना गया है। महशर या क़यामत के दिन वे आशिक़-माशूक़ के इन्साफ़ की आशा करते हैं; और इसी पर सब्र किये बैठे रहते हैं। किसी-किसी को ख़ुदा की रहमत (दयालुता) का भी भरोसा होता है। उर्दू कविता में इश्क़ (प्रेम) दो प्रकार का माना गया है—मजाज़ी और हक़ीक़ी। सांसारिक वस्तुओं के प्रेम को 'इश्क़ मजाज़ी और भगवद्भक्ति को 'इश्क हक़ीक़ी' कहा है। बुत या सनम से माशूक़ का अर्थ लिया जाता है। काफ़िर शब्द का प्रयोग भी माशूक़ के लिए ही होता है। 'वाइज़' या 'नासह' (उपदेशक) की खिल्ली प्रायः सबही शायरों ने उड़ाई है। इन शब्दों से दिखावटी भक्तों का अर्थ लिया जाता है। इसी प्रकार 'शेख़' और 'ज़ाहिद' को पाखण्ड-प्रिय मान कर उनका मज़ाक़ उड़ाया गया है। 'सूफ़ी' को अनुकरणीय माना है और 'रिन्द' को धार्मिक बातों से लापरवा। 'बिरहमन' से सौन्दर्योपासक या 'सूफ़ी' शब्द का अर्थ लिया जाता है। ईसा या मसीहा को माशूक़ माना गया है; जो आशिक़ के सारे दुःख दूर कर देता है। प्रेम-प्रसंग में शीरीं-फ़रहाद, लैला-

मजनूँ, यूसुफ़-ज़ुलेख़ा आदि का भी उर्दू शायरों ने ख़ूब वर्णन किया है। ख़िज्र के सम्बन्ध में मुसलमानों का विश्वास है कि वह अमर है और सबका पथ-प्रदर्शन करता रहता है। मन्सूर, आदम, हव्वा, शैतान आदि का भी उर्दू काव्य में ख़ूब उल्लेख मिलता है। मसीह मुर्दों को जिलाने वाला और रोगियों को अच्छा करने वाला माना गया है। इसीलिए उर्दू कवि माशूक़ को मसीहा भी कहते हैं। उर्दू कवियों ने माशूक़ की शक्ल को उपमा हूर, परी, चाँद, सूरज, गुल, बाग़ आदि से और आँख की नरगिस, आहू (हिरन), बादाम, जादूगर आदि से दी है। भौं की कमान से, चिबुक की कुआँ से; दाँत की मोती से; ओंठ की लाल, याकूत, पँखड़ी, अमृत आदि से मुँह की ग़ुंचे से; कमर की बाल से; क़द की सर्व, सनोवर, शमशाद आदि से, और चाल की बला, आफ़त, क़यामत आदि से उपमा दी है। उर्दू वालों के यहाँ शृङ्गार की चीज़ें दर्पण, हिना, सुर्मा, काजल, मिस्सी, पान, क़बा, चीरा, पगड़ी, बुर्क़ा, नक़ाब, चादर, चोटी आदि माने गए हैं।

उर्दू कविता में शीरीं-फ़रहाद, यूसुफ़-ज़ुलेख़ा, लैला-मजनूँ आदि का बहुत उल्लेख रहता है। ये कथा-प्रसंग इनके सम्बन्ध में भी यहाँ कुछ संकेत कर देना अनुचित न होगा। शीरीं—ईरान में अपने युग की सुप्रसिद्ध सुन्दरी थी, इस पर फ़रहाद नामक एक चीनी चित्रकार आसक्त था। शीरीं भी उस से बड़ा प्रेम करती थी। ईरान का बादशाह ख़ुसरो भी शीरीं का चाहने वाला था, पर वह उससे प्रेम न करती थी। उक्त बादशाह किसी प्रकार शीरीं को अपने यहाँ ले आया। शीरीं महलों में रहतीहुई भी फ़रहाद की ही याद में आँसू बहाने लगी। एक दिन बादशाह शीरीं की ऐसी प्रवृत्ति देखकर बोला—'शीरीं, तुम रात-दिन जिस फ़रहाद के लिए मरी जाती हो, उससे कहो कि अगर वह तुम्हारा सच्चा प्रेमी है तो पहाड़ से महलों तक एक नहर खोद दे। यदि उसने तुम्हारी बात मान कर ऐसा किया तो पुरस्कार में मैं तुम्हें ही उसे दे दूँगा।' शीरीं के कहने से

फ़रहाद ने नहर खोद डाली और वह उसे महलों तक ले आया। यह देख कर बादशाह ने झूठ मूँठ कहला भेजा—'शीरीं तो मर गई! क्या किया जाय! यह सुनते ही फ़रहाद ने प्राण त्याग दिए!! शीरीं ने अपने प्रेमी के मरने की ख़बर सुनी तो उसने भी तुरन्त आत्मघात कर लिया!

इसी प्रकार यूसुफ़-ज़ुलेख़ा का भी क़िस्सा है। किनान देश निवासी यूसुफ़ अत्यन्त सुन्दर था, उसे उसके घर वालों ने मिस्र के एक सौदागर को बेच दिया। सौदागर से मिस्र के राजा ने ख़रीद लिया। बादशाह की बेगम यूसुफ़ पर मुग्ध हो गई। उसने अनेक उपाय किए कि किसी प्रकार यूसुफ़ उस से प्रेम करने लगे। परन्तु बेगम की एक न चली। अन्त में वे .क़ैद कर बहुत सताए गए। बादशाह को जब असली हाल मालूम हुआ तो उसने यूसुफ़ को युवराज बनाया और अन्त में वही मिस्र का बादशाह हुआ। जब यूसुफ़ के अंधे पिता याक़ूब ने यह समाचार सुना तो, कहते हैं, उसकी आँखों में फिर ज्योति आगई।

लैला-मजनूँ की भी प्रेम-कथा है। लैला अरब की रहने वाली एक रमणी थी, और मजनूँ (जिसका असली नाम कैस था) भी अरब में ही रहता था। मजनूँ लैला पर बुरी तरह आसक्त था। वह उसके प्रेम में अपनी सुध-बुध तक बिसार चुका था। हर वक्त 'लैला' 'लैला' ही अलापा करता था।

आदम और हव्वा के बहिश्त से निकाले जाने की कथा प्रसिद्ध है। आदम और हव्वा का जोड़ा था। पहला पुरुष और दूसरी स्त्री। दोनों बहिश्त में रहते थे। .ख़ुदा ने इन्हें आदेश दे रखा था—'ख़बरदार, गेहूँ के पौदे का फल न खाना। परन्तु शैतान के बहकाने पर हव्वा ने अपने पति आदम से गेहूँ का फल खाने के लिए आग्रह किया। इस पर .ख़ुदा नाराज़ हो गया और दोनों को बहिश्त (स्वर्ग) से निकाल दिया।

इसी तरह आदम की पूजा न करने के कारण .खुदा के हुक्म से शैतान भी बहिश्त से निकाला गया, परन्तु उसे .खुदा ने क़यामत तक जीवित रहने का वरदान दिया। इस पर शैतान बोला—'ऐ .खुदा, इतनी लम्बी उम्र पाकर तो मैं तेरे बन्दों को बराबर बहकाता रहूँगा। बतला तू अब क्या करेगा?' .खुदा ने कहा—'शैतान, तू चाहे जितनी कोशिश करना परन्तु मेरे सच्चे भक्त तेरी बातों में कदापि न आवेंगे।'

उर्दू कविता और दक्षिण भारत

ऊपर उर्दू कविता की उत्पत्ति, उसके विकास, छन्द आदि के सम्बन्ध में कुछ पंक्तियाँ लिखी गई हैं। इनसे यह बात जानी जा सकेगी कि उत्तरी भारत में उर्दू की प्रगति किस प्रकार हुई। जिन लोगों का विचार है कि उर्दू का जन्म और विकास उत्तरी भारत में ही हुआ, उन्हें जानना चाहिए कि दक्षिणी भारत का भी इस कार्य में बहुत बड़ा हाथ रहा है। सच पूछा जाय तो उर्दू कविता के जन्म और विकास का सर्व प्रथम श्रेय दक्षिण भारत को ही प्राप्त है। दक्षिण में इसका सिलसिला हिजरी की आठवीं सदी में ही प्रारम्भ होगया था।

दक्षिण के मुसलमान जिस हिन्दी को बोलते या लिखते थे, उसका नाम था 'दखिनी।' यह भी फ़ारसी लिपि में लिखी जाती थी, परन्तु इसमें फ़ारसी शब्दों का अधिक प्रयोग न होता था। दखिनी पर हिन्दी, मराठी, तामिल आदि भाषाओं का प्रभाव था। उनके मुहावरे और बहुत-से शब्द इसमें सम्मिलित हो गए थे। हिन्दी शब्द तो उसमें रहते ही थे, और वह दखिनी हिन्दी कहलाती थी। दक्षिण के मुसलमान शासकों ने दखिनी भाषा में कविता लिखने वालों का .खूब आदर किया। उन्हें आश्रय दिया, जिससे उस समय कविता .खूब चमकी। इन आश्रयदाताओं में गोलकुण्डा, बीजापुर, अहमदनगर आदि के शासक मुख्य थे। ये लोग अपने दरबारों में कवियों की बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। स्वयम् भी इन्हें कविता का अच्छा

अभ्यास था। सुल्तान कुतुबशाह जिसने अपनी प्रेयसी भागमती के नाम से भाग्यनगर (हैदराबाद) बसाया, कविता का बड़ा प्रेमी और कवियों का आश्रयदाता था। वह स्वयम् बड़ा अच्छा कवि था। सबसे पहले इसी की कविता 'कुल्लियात' (संग्रह) के रूप में प्रकाशित हुई। सुल्तान की कविता में हिन्दी शब्दों, मुहावरों, उपमाओं और अलङ्कारों का प्रयोग ख़ूब हुआ है। हिन्दू शूरमाओं की वीरता का वर्णन भी उसने दिल खोलकर किया है।

दखिनी में ग़ज़ल, रुबाई और क़सीदे लिखने का ख़ूब रिवाज था। मरसियों का लिखना शेख़ शुजाउद्दीन नूरी बीजापुरी से प्रारम्भ हुआ। इसके पश्चात् हाशिम अली, काज़िम अली आदि ने भी अच्छे मरसिये लिखे। जब दक्षिण में कुतुबशाही, आदिलशाही और बहमनशाहियों का अधःपतन तथा मुग़लों का शासन हो गया, तब भी दखिनी कविता की उन्नति बराबर होती रही। मुग़ल शासकों ने भी दखिनी कवियों का अच्छा आदर किया और उन्हें ख़ूब प्रोत्साहन दिया। इनके युग में भी कितने ही अच्छे-अच्छे शायर पैदा हुए। इन शायरों में 'वली' का स्थान बहुत ऊँचा है। इनके कारण दखिनी कविता की बहुत उन्नति हुई। ये बड़ी सरल और सरस भाषा में कविता लिखते थे, हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग करते थे। इनकी कविताओं का असर अन्य कवियों पर भी हुआ। वे भी उनके अनुकरण में कविता करने लगे। वली का दीवान प्रकाशित होते ही उनकी कविता की धूम मच गई। उत्तरी भारत में भी यह दीवान बड़े आदर से देखा गया। शाह हातिम आदि ने वली को अपना गुरु माना और इनके समकालीन तथा परवर्ती कवियों ने भी इनकी बड़ी प्रतिष्ठा की। मुहम्मदशाह के समय में वली दक्षिण से देहली आए, और वहाँ कुछ दिनों ठहरे। इनकी कविताओं का देहली में बड़ा प्रभाव पड़ा। बहुत-से लोगों को कविता लिखने का प्रोत्साहन मिला, और सर्वत्र वली के अनुकरण में कविता की जाने लगी। जो शायर फ़ारसी में ही कविता लिखते थे, वली की कविता सुनकर उनकी भी दखिनी में

लिखने की प्रवृत्ति हो गई। आवरू, हातिम, नाजी, मज़मून, मज़हर, जानजाना आदि तत्कालीन कवि जो फ़ारसी में ही कविता करते थे, वली की शैली से बड़े प्रभावित हुए। इन्होंने भी रेखता (दखिनी) में कविताएँ लिखनी शुरू कीं। आगे चलकर इन्हीं के प्रयत्न से उर्दू कविता की उन्नति हुई और छन्द-सम्बन्धी नियम निश्चित किये गए।

उर्दू गद्य

प्रारम्भ काल में उर्दू कविता की भाषा तो बन चुकी थी, परन्तु उस समय गद्य फ़ारसी में ही लिखा जाता था, यहाँ तक कि उर्दू-कवियों के इतिहास (तज़किरे भी) फ़ारसी में ही लिखने की प्रथा थी। पुस्तकों की भूमिका, उपोद्घात, प्राक्कथन आदि भी फ़ारसी में ही लिखे जाते थे। चिट्ठी-पत्री या निमन्त्रणपत्रों की भाषा भी फ़ारसी ही होती थी। यदि कभी उर्दू गद्य लिखा भी जाता था तो वह सानुप्रास (मुक़फ़्फ़ा) भाषा में लिखा जाता था, जिसे अरबी और फ़ारसी शब्दों द्वारा अत्यन्त क्लिष्ट और दुरूह बना देते थे। उस समय कविता में ही कुछ लिखना बड़ी भारी योग्यता समझी जाती थी। दक्षिण भारत में दखिनी (उर्दू) गद्य का प्रारम्भ हिजरी की आठवीं सदी से हुआ। उस समय वहाँ अरबी और फ़ारसी की अनेक मज़हबी किताबें दखिनी में अनुवादित की गईं। 'जलतरंग', 'सबरस' आदि मौलिक पुस्तकें भी लिखी गईं। उत्तरी भारत में उर्दू गद्य का पता १८ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से चलता है जब देहली में, बादशाह मुहम्मद शाह के समय में फ़ज़ली की 'दह मजलिस', 'गुलज़ारे दानिश' 'नारंगा नादिरी' आदि पुस्तकें प्रकाशित हुईं। 'तहसीन' ने 'नौतर्ज़ मुरस्सा' आदि किताबों का फ़ारसी से अनुवाद किया। उन्हीं दिनों सौदा की कुल्लियात के प्रारम्भ में भी उर्दू गद्य लिखा गया था। उस समय के गद्य में जितनी भी त्रुटियाँ थीं, उनका नई भाषा में होना स्वाभाविक भी था। तत्कालीन गद्य और पद्य इतने जटिल

एवं अनुप्रासयुक्त थे कि उनमें कठिनता से ही भेद किया जा सकता था ।

उर्दू-प्रसार में शासन-साहाय्य

१९ वीं सदी के प्रारम्भ में, शासन की सुव्यवस्था के लिए, अंग्रेज़ अफ़सरों को देशी भाषाएँ सिखाने का निश्चय किया गया, जिससे शासक और प्रजावर्ग को परस्पर विचार-विनिमय करने में सुविधा हो, और वे एक दूसरे के अधिक समीप आ सकें। इसी विचार से १८०० ई० में फ़ोर्ट विलियम कालेज (कलकत्ता) की स्थापना की गई, जिसके प्रधान अध्यक्ष, डाक्टर जान गिलक्रिस्ट नियुक्त हुए। इस विद्यालय द्वारा अंग्रेज़ों के लिए, संस्कृत और फ़ारसी से सरल उर्दू में अनेक उपयोगी ग्रन्थ अनूदित कराए गए, मौलिक पुस्तकें भी लिखाई गईं। उर्दू के कोष और व्याकरण भी तैयार हुए। इस कार्य के लिए, उक्त कालिज में, जो विद्वान् नियुक्त किये गए, उनमें सैयद मुहम्मद हैदरवख़्श हैदरी, सैयद वशीर अली, वहादुर अली हुसैनी, अम्मन, अफ़सोस, हफ़ीज़ुद्दीन अहमद, मज़हर अली जवान, इकराम अली विला, अलीलुत्फ़, मुहम्मद मुनीर, लल्लूलाल, वेनीनरायन, निहालचन्द, मदारीलाल आदि मुख्य थे। इन लेखकों ने सरल और सरस उर्दू में पुस्तकें लिखीं। संस्कृत तथा फ़ारसी के अप्रचलित और कठिन शब्दों से उन्हें मुक्त रक्खा। कुछ काल तक इन पुस्तकों का ख़ूब प्रचार हुआ और उनसे उर्दू की उन्नति में अच्छी सहायता मिली। उस समय 'वाग़ो वहार', 'आराइशे महफ़िल', 'गुलशने हिन्द', 'दस्तूरे हिन्द' आदि किताबें बहुत लोकप्रिय हुईं। आधुनिक युग में उर्दू गद्य की जो उन्नति हो रही है, उसका मूलाधार उपर्युक्त विद्वानों का प्रशंसनीय प्रयत्न ही है। डा० गिलक्रिस्ट के इस उद्योग का यह परिणाम हुआ कि उर्दू सरकारी भाषा हो गई और १८३२ ई० में, उसे न्यायालयों में स्थान दे दिया गया। इसी समय इंशा और क़तील की 'दरियाए लताफ़त' नामक पुस्तक

प्रकाशित हुई। इसमें उस समय की प्रचलित भाषाओं और बोलियों का—जिनका प्रभाव उर्दू पर पड़ा था—बड़ा अच्छा वर्णन है। व्याकरण, महावरे और शैली से सम्बन्ध रखने वाली, अपने ढंग की यह पहली किताब है। इसमें तत्कालीन भाषाओं और बोलियों के नमूने दिये गए हैं, तथा परिभाषाएँ भी हैं। इंशा का लिखा 'क़वायद उर्दू' नामक व्याकरण भी बहुत अच्छा है, सम्भवतः उर्दू व्याकरण की यही सबसे पहली किताब है।

मिर्ज़ा ग़ालिब ने भी उर्दू गद्य की उन्नति में बड़ी सहायता दी। ये महाकवि तो थे ही, गद्य-लेखक की दृष्टि से भी ख़ूब प्रसिद्ध हुए। 'उर्दू-ए-मोअल्ला' और 'ऊदे-हिन्दी' ग़ालिब की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। इनमें उनके पत्रों का संग्रह है, जो उन्होंने समय-समय पर अपने मित्रों और शिष्यों को लिखे थे। इन पत्रों की भाषा अत्यन्त सरस, सरल और स्वाभाविक है। कहीं-कहीं हास्य के पुट ने भाषा के सौन्दर्य को और भी बढ़ा दिया है। ग़ालिब की इन पुस्तकों ने उर्दू-गद्य साहित्य में क्रान्ति कर दी। उनके परवर्ती लेखकों पर भी इसका प्रभाव पड़ा। उस समय की परिपाटी के अनुसार, ग़ालिब ने अपनी चिट्ठियों में, अनेक स्थलों पर अनुप्रासमयी भाषा का भी प्रयोग किया है। उस समय ईसाई मिशनरियों ने भी अपनी धर्म-पुस्तक बाइबिल तथा अन्य किताबों के उर्दू संस्करण प्रकाशित कर उर्दू-प्रचार में अच्छी सहायता दी।

नया युग

उर्दू गद्य की उन्नति का स्वर्ण युग १६ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से प्रारम्भ होता है, जब सर सैयद अहमदख़ाँ साहब और उनके मित्रों ने उर्दू लेखन-कला को नया रूप दिया। उस समय मुसलमानों ने धर्म-प्रचार के लिए जो पुस्तकें लिखीं उनकी भाषा शुद्ध और सरल थी। १८०३ ई० में क़ुरान शरीफ़ का सबसे पहला उर्दू अनुवाद प्रकाशित हुआ। शिक्षा, सदाचार, दर्शन, धर्म, इतिहास, राजनीति,

नागरिकता आदि विषयों पर सर सैयद ने स्वयम् अनेक किताबें लिखीं तथा अपने साथियों से भी लिखाईं। सैयद साहब के साथियों में मौलाना हाली, मौलाना शिबली, मौलवी ज़काउल्ला, मौ० नज़ीर अहमद, मौ० चराग़ अली, नवाब मुहसनुल मुल्क आदि मुख्य थे। इन्होंने उर्दू-साहित्य की अमूल्य सेवा की, जिसके कारण उर्दू-संसार उनका सदैव कृतज्ञ रहेगा। प्रो० मुहम्मद हुसैन आज़ाद भी सैयद साहब के ही साथी और मित्र थे। उनकी लेखनी में बड़ा आकर्षण, प्रभाव और रस है। आज़ाद की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'आबेहयात' उर्दू साहित्य की विभूति और ज्ञातव्य बातों का भण्डार है।

वर्त्तमान उर्दू-गद्य का सूत्रपात फ़ोर्ट विलियम कालिज कलकत्ता में हुआ। फिर उसकी उन्नति में लखनऊ ने भी ख़ूब भाग लिया। उस समय लखनऊ में 'कलीला दमना', 'गुलबकावली', 'गुलशने-नौबहार', 'गुले सनोबर', 'नौरतन' आदि पुस्तकें लिखी गईं। उर्दू के प्रसिद्ध उपन्यास 'फ़साने अजायब' की भी इसी समय रचना हुई। 'अलिफ़ लैला' के अनुवाद हुए। प्रेस की सुविधा होने से पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। उस समय उर्दू लिखने की कई शैलियाँ प्रचलित हुईं, परन्तु उनमें दो मुख्य रहीं। एक तो वह जिसमें अरबी तथा फ़ारसी के कठिन और अप्रचलित शब्दों द्वारा उर्दू को सजाने की चेष्टा की जाती है। इस शैली के अनुयायियों में अधिकतर मुल्ला-मौलवी आदि मज़हबी प्रचारक हैं। दूसरी वह शैली है, जिसके प्रेमी भाषा के सौन्दर्य पर विशेष ध्यान न देकर भावों को ही मुख्य समझते और सीधे-सादे सरल शब्दों में अपने विचार व्यक्त करते हैं।

उर्दू में कहानी-साहित्य

उर्दू में कहानियों का प्रारम्भ फ़ारसी और संस्कृत की कथाओं के अनुवाद से हुआ। सभी प्रकार की कहानियों के उर्दू तरजुमे किये गए। इस सम्बन्ध में निम्न लिखित दो पुस्तकें विशेष

रूप से उल्लेखनीय हैं। 'दास्ताने हमज़ा' फ़ारसी की एक विशालकाय पुस्तक है। इसके लेखक अबुलफ़ज़ल फैज़ी हैं। यह पुस्तक अकबर बादशाह के मनबहलाव के लिए लिखी गई थी। इसके कई दफ़्तर (खण्ड) हैं और यह १८,००० पृष्ठों में समाप्त हुई है। मीर मुहम्मद हुसैन जाह और अहमद हुसैन क़मर ने इसका उर्दू-अनुवाद किया है। पद्यानुवाद भी हो चुका है। 'नौशेरवां नामा' के नाम से शेख़ तसद्दुक़ हुसैन दास्ताँगो ने भी इस किताब का उर्दू तरजुमा किया है। उक्त पुस्तक में इसलाम धर्म से सम्बन्ध रखने वाली एक कल्पित कथा है। बीच-बीच में सैकड़ों अन्तर्कथाएँ भी आती गई हैं। 'बोस्ताने ख़याल' भी एक फ़ारसी-उपन्यास है। इसकी नौ जिल्दें हैं। इसके लेखक मीर तक़ी 'ख़याल' बताए जाते हैं। यह कहानी लगभग चार हज़ार पृष्ठों में समाप्त हुई है। मुहम्मद शाह रंगीले ने इसे बहुत पसन्द किया था और उन्हीं की प्रेरणा से यह लिखी गई थी। इसका उर्दू अनुवाद बदरुद्दीन और छोटे आग़ा ने किया है।

उपर्युक्त सब पुस्तकों की वर्णनशैली एक ही प्रकार की थी। उनमें पुनरुक्तियाँ बहुत होती थीं, अतः एक ही बात को, बार-बार पढ़ते-पढ़ते पाठक का जी ऊब जाता था। अधिकतर कहानियाँ प्रेम और सौन्दर्य से ही सम्बन्ध रखती थीं। अलिफ़लैला, क़िस्सा हातिम-ताई, बैताल पचीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि ऐसी ही प्रारम्भिक पुस्तकें हैं। सौदा ने भी मीर की मसनवी 'शौलए इश्क़' को गद्य में लिखकर उसे उपन्यास का रूप दिया था। मिर्ज़ा रजबअली बेग 'सरूर' रचित 'फ़साने अजायब' भी इसी समय का है। इसके पश्चात् और लोगों ने भी उपन्यास लिखे, जिनमें पंडित रतननाथ 'सरशार' का 'फ़साने आज़ाद' बहुत प्रसिद्ध हुआ। 'रुसवा' और 'शरर' ने भी इस क्षेत्र में अच्छी ख्याति प्राप्त की। उर्दू-उपन्यासों पर अँग्रेज़ी नाविलों का भी प्रभाव पड़ा। बहुत-से नाविलों का उर्दू में अनुवाद भी किया गया। अब तो उर्दू में अच्छे-अच्छे उपन्यास मौजूद हैं। औपन्यासिक सम्राट् स्वर्गीय प्रेमचन्दजी की रचनाओं के कारण

उर्दू बहुत समृद्धिशालिनी हुई है। उर्दू में छोटी-छोटी कहानियाँ भी लिखी जाने लगी हैं। प्रेमचन्द, नियाज़, सुदर्शन, हसननिज़ामी आदि की कहानियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं।

उर्दू में नाटक

नाटक लिखने का प्रचार उर्दू में बहुत पीछे से हुआ। सबसे पहला उर्दू-नाटक 'इन्द्रसभा' १८५३ ई० में लिखा गया। इसके लेखक 'नासिख़' के शिष्य 'अमानत' थे। इससे पूर्व १८०४ ई० में भी एक नाटक प्रकाशित हो चुका था, जो काज़िम अली 'जवान' ने संस्कृत नाटक 'शकुन्तला' के एक हिन्दी अनुवाद के आधार पर लिखा था। यह हिन्दी अनुवाद निवाज़ का किया बताया जाता है। कहते हैं, 'इन्द्र-सभा' नाटक लखनऊ के क़ैसर बाग़ में खेला जाता था और उसमें नवाब वाजिदअली शाह इन्द्र का पार्ट लेते थे। कुछ लोग इस बात को ठीक नहीं बताते। जो हो, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि 'इन्द्रसभा' नाटक उस समय ख़ूब लोकप्रिय हुआ, और कई प्रान्तीय भाषाओं में उसके अनुवाद भी किये गए। १८९२ ई० में लिपज़िग से उसका जर्मन अनुवाद भी प्रकाशित हुआ। पारसी नाटक कम्पनियों की स्था-पना के कारण उर्दू में अच्छे-अच्छे खेल (नाटक) लिखे गए। यद्यपि इन नाटकों में साहित्य की दृष्टि से स्थायित्व नहीं है, तथापि उन्होंने किसी अंश तक नाटक की कमी को पूरा किया है। उर्दू में साहित्यिक नाटकों की बहुत कमी थी, जो अब फ्रेंच, जर्मन, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के नाटकों के अनुवाद तथा कुछ मौलिक नाटकों की रचना द्वारा पूरी की जा रही है। ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनैतिक नाटक भी लिखे जा रहे हैं। कम्पनियों के लिए नाटक लिखने में, रौनक़, अहसन, नारायण प्रसाद बेताब, आग़ा हश्र आदि ने बहुत यश प्राप्त किया है। प्रो० आज़ाद ने 'अकबर' नाटक लिखकर उर्दू में अभिनव नाटक शैली का प्रारम्भ किया था, जिसके अनुकरण में अब तक अनेक नाटक लिखे जा चुके हैं। शेक्सपीयर और बंकिम

बाबू के नाटकों के अनुवादों से भी उर्दू साहित्य की श्रीवृद्धि हुई है। हाल ही में मूल संस्कृत से शकुन्तला नाटक का अनुवाद डा० सैयद अख़्तर हुसैन पीर रायपुरी ने बड़ी सुन्दरता और सफलता से किया है। बहुत दिन हुए कश्मीर के मुंशी मुहम्मद उमर और मुंशी नूरुइलाही ने उर्दू में 'नाटक-सागर' नामक एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी थी, जिसमें संसार-भर के नाटकों का विवेचनात्मक वर्णन किया गया था।

उर्दू में हास्य

उर्दू गद्य के हास्य सम्बन्धी साहित्य का प्रारम्भ मुंशी सज्जाद हुसैन द्वारा सम्पादित 'अवधपंच' अख़बार (लखनऊ) से हुआ। रतननाथ सरशार, मच्छूबेग, नवाब आज़ाद आदि उस समय के प्रसिद्ध हास्य-लेखक थे। पतरस, अज़ीमबेग चग़ताई, शौकत थानवी आदि की गणना वर्त्तमान युग के सुप्रसिद्ध और शिष्ट हास्य-लेखकों में है। चग़ताई साहब के हास्य सम्बन्धी लेख तो उर्दू और हिन्दी दोनों में बहुत लोकप्रिय हुए हैं। आपका कथानक बहुत सरल, सुन्दर और आकर्षक होता है। फ़रहतुल्ला बेग, मुल्ला रमूज़ी, रशीद सिद्दीक़ी आदि भी ख्याति-प्राप्त हास्य-लेखक हैं।

पत्रसंग्रह

उर्दू साहित्य में साहित्यकारों के 'पत्र (चिट्ठियाँ) संग्रह' की अच्छी प्रथा है। इन चिट्ठियों से लेखकों की शैली और जीवन सम्बन्धिनी आन्तरिक घटनाओं पर खूब प्रकाश पड़ता है। पत्र-लेखन कला पर उर्दू में अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। महाकवि ग़ालिब के पत्र उर्दू साहित्य की विभूति हैं। पहले वे फ़ारसी में ख़त लिखते थे, फिर उर्दू में लिखने लगे। ये चिट्ठियाँ संग्रह के रूप में प्रकाशित हो चुकी हैं। शेफ़्ता, मजरूह, सर सैयद, हाली, आज़ाद, नज़ीर अहमद, अमीर मीनाई आदि साहित्यकारों के पत्र-संग्रह बड़े शिक्षाप्रद और मनोरंजक हैं। काशी विश्वविद्यालय के फ़ारसी प्रोफ़ेसर

पंडित महेश प्रसाद ने विभिन्न साहित्यकारों के पत्रों का एक प्रामाणिक संग्रह हाल ही में प्रकाशित कराया है, जो बहुत सुन्दर और उपादेय है। इस दिशा में हिन्दी वालों को उर्दू का अनुकरण करने की आवश्यकता है।

विभिन्न विषय

उर्दू गद्य के प्रारम्भ काल में कोष और व्याकरण ग्रंथ भी तैयार किए गए। सबसे पहले १७१५ ई० में, एक अंग्रेज़ ने 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' तैयार की; उसके पश्चात् और भी कई विदेशियों ने उर्दू व्याकरण लिखे। फ़ोर्ट विलियम कालिज से भी 'क़वायद' सम्बन्धी अनेक पुस्तकें निकलीं। स्वयम् डॉ० गिलक्रिस्ट ने भी एक 'उर्दू-ग्रामर' लिखी। उर्दू व्याकरणों में इंशा और क़तील का 'दरियाए लताफ़त' नामक व्याकरण बहुत प्रामाणिक माना जाता है। उर्दू के लुग़ात (कोष) भी कितने ही लिखे गए, जिनके लेखक अंग्रेज़ भी हैं और हिन्दुस्तानी भी। फ़ोर्ट विलियम कालेज में कई 'हिन्दुस्तानी-अंग्रेज़ी' कोष तैयार हुए। डाक्टर गिलक्रिस्ट ने भी एक बड़ी अच्छी डिक्शनरी लिखी। मौलवी सैयद अहमद देहलवी की 'फ़रहंगे आसिफ़िया' का उर्दू-कोषों में बहुत ऊँचा स्थान है। यह चार खण्डों में समाप्त हुई है। नूरुल हसन नैयर की 'नूरुल लुग़ात' भी बहुत अच्छी है। अंजुमन तरक्क़ी उर्दू की ओर से Standard Urdu dictionary नाम का एक प्रामाणिक वृहत् कोष अभी पिछले दिनों ही प्रकाशित हुआ है। इसमें लगभग दो लाख अंग्रेज़ी शब्दों और मुहावरों की व्याख्या की गई है। वैज्ञानिक शब्दों की परिभाषाएँ भी दी हैं। अंग्रेज़ी के वे शब्द भी दिये गए हैं, जिनका प्रयोग प्राचीन साहित्यकारों ने किया है, और जो अब प्रचलित नहीं हैं। उर्दू की दो महत्त्वपूर्ण लुग़ात और हैं, परन्तु दुःख है कि वे पूरी नहीं हो सकीं। एक है, मौलवी अमीर अहमद की (अमीरुल लुग़ात) और दूसरी, शम्सुलउल्मा नवाब अज़ीज़ जंग बहादुर की। नवाब साहब के कोष

के सोलह खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं, परन्तु उनमें उर्दू वर्णमाला का चौथा अक्षर 'ते' भी पूरा नहीं हो पाया।

उर्दू में यात्रा-वर्णन सम्बन्धी पुस्तकें भी हैं। इनका प्रारम्भ विदेशी भाषाओं के यात्रा-वर्णनों के अनुवाद से हुआ है। हज करने वालों ने अपने यात्रा-वर्णन धार्मिक दृष्टि से लिखे हैं। सर सैयद की इंगलैंड-यात्रा का वर्णन इस प्रकार की पुस्तकों में अपना विशेष स्थान रखता है। इस वर्णन में कला का अच्छा विकास हुआ है। 'पैसा अख़बार' के सम्पादक मुंशी महबूब आलम का 'योरोप-यात्रा-वर्णन' भी प्रसिद्ध है। 'तसलीम' ने नवाब रामपुर की विलायत-यात्रा पर कविता में सुन्दर ग्रन्थ लिखा है। 'शेफ़्ता' ने भी एक यात्रा-वर्णन लिखा था।

इतिहास और जीवनियाँ

उर्दू में ऐतिहासिक पुस्तकों की भी कमी नहीं है। प्रारम्भ में, अधिकतर अरबी फ़ारसी से धार्मिक इतिहासों का अनुवाद किया गया था। फिर फ़ोर्ट विलियम कालिज और देहली कालिज ने भी इस कार्य में अच्छी सहायता दी। सबसे पहले १८०८ ई० में मीर शेर अली 'अफ़सोस' की 'आराइशे महफ़िल' नामक ऐतिहासिक पुस्तक प्रकाशित हुई। यह एक प्रसिद्ध फ़ारसी इतिहास का अनुवाद है। फिर देहली कालिज द्वारा १८४१ से १८४५ तक कितने ही ऐतिहासिक ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ। इनमें हिन्दुस्तान, ईरान, इसलाम, मुग़ल जाति आदि के इतिहास भी हैं। सर सैयद के समय में भी उर्दू के महत्त्वपूर्ण इतिहास-ग्रन्थ प्रकाशित हुए। अब हैदराबाद के दारुल तर्जुमा (अनुवाद विभाग) की ओर से, अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

उर्दू में जीवन-चरित लेखन-कला का भी पर्याप्त विकास हुआ है। प्रारम्भ में इस्लाम के धार्मिक महापुरुषों और नेताओं की जीवनियाँ ही लिखी जाती थीं, फिर बादशाहों और वीर सैनिकों के जीवनचरित लिखे गए। आधुनिक उर्दू साहित्य में, मौलाना हाली ने

सर सैयद की जीवनी 'हयाते जावेद' लिखकर महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इस जीवनी ने भावी लेखकों के आगे चरित-लेखन-कला का एक नया आदर्श रख दिया है। धार्मिक जीवनियाँ लिखने में, मौलाना शिवली की ख़ूब ख्याति हुई। अब तो उर्दू में जीवनियाँ लिखने का काम बड़ी सफलता से हो रहा है, यहाँ तक कि आत्मचरित लिखने की भी प्रथा प्रचलित हो गई है। महात्मा गांधी और पं० जवाहरलाल नेहरू के आत्मचरितों के उर्दू अनुवाद हो चुके हैं। अन्य भाषाओं से और भी पचासों जीवनियाँ अनूदित हुई हैं। तज़किरे अर्थात् कवियों की संक्षिप्त जीवनियाँ और उनकी कविताओं के नमूने लिखने की प्रथा उर्दू में बहुत पहले से है। फ़ारसी में तो तज़किरे लिखे ही जाते थे, उन्हीं का अनुकरण उर्दू में भी हुआ। सबसे पहला तज़किरा—'तज़किरे बेजिगर' बताया जाता है। डा० गिलक्रिस्ट ने भी अपने व्याकरण के प्रारम्भ में, उर्दू-इतिहास पर गम्भीर दृष्टि डाली है। मीर तकी और मीर हसन के तज़किरे, 'आबे हयात' 'जलवए ख़िज्र' 'ख़मख़ानए जावेद' तज़किरे गुलेरैना' 'शैरुल हिन्द' 'शैरुल मुसन्निफ़ीन' 'तारीख़े अदब उर्दू' आदि तज़किरे उर्दू में बहुत प्रसिद्ध हैं।

आलोचना और निबन्ध

'आबेहयात' और 'तारीख़े अदब उर्दू' में उर्दू साहित्य पर बड़ी सुन्दर रीति से आलोचनात्मक दृष्टि डाली गई है। मौलाना हाली का मुक़द्दमा 'शेरो शायरी' उर्दू में आलोचना साहित्य का सम्भवतः पहला ग्रन्थ है। मौलाना शिवली, सैयद सुलेमान नदवी और मौलाना अब्दुलहक़ ने अपनी विद्वत्तापूर्ण कृतियों द्वारा आलोचनाकला को बहुत ही विकसित कर दिया है। 'शेफ़्ता' भी बड़े अच्छे आलोचक थे। उनकी आलोचनाओं की 'ग़ालिब' भी क़द्र करते थे। डाक्टर ज़ोर ने आलोचना-पद्धति की कलात्मकता पर बड़ा गम्भीर विवेचन किया है। और इस विषय पर एक पाण्डित्यपूर्ण निबन्ध भी लिखा

है। उर्दू में निबन्ध-लेखन-कला का प्रचार सर सैयद के समय से हुआ। उस समय उन्होंने तथा उनके सम-सामयिक विद्वानों ने तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं के लिए बड़े सुन्दर और सारगर्भित निबन्ध लिखे। इनमें से कितने ही निबन्ध तो पुस्तक रूप में प्रकाशित होकर साहित्य की स्थायी सम्पत्ति बन चुके हैं। काव्यात्मक और भावात्मक निबन्ध लिखने में मौलाना शरर ने अच्छी ख्याति प्राप्त की। उनका 'दिलगुदाज़' नामक मासिक पत्र इस प्रकार के लेखों का केन्द्र बना हुआ था। शरर के इन सब निबन्धों का संग्रह 'नैरंगे ख़याल' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। पं० ब्रजनरायन चकबस्त ने भी अनेक महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक निबन्ध लिखे, जिनकी उर्दू-संसार में ख़ूब ख्याति हुई।

उर्दू में पत्र-पत्रिकाएँ

उर्दू में पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन का युग १८३८ ई० से प्रारम्भ होता है, जब प्रो० मुहम्मद हुसैन आज़ाद के पिता मौलवी बाक़र हुसैन ने देहली से 'उर्दू अख़बार' जारी किया था। इसमें अधिकतर साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी लेख रहते थे। ज़ौक़, ग़ालिब, मोमिन आदि प्रसिद्ध कवियों की कविताएँ भी इसमें प्रकाशित होती रहती थीं। साहित्य सम्बन्धी समस्याओं पर बड़ी गम्भीरता से विचार किया जाता था। इसके पश्चात् १८५० ई० में लाहौर से मुंशी हरसुखराय ने 'कोहनूर' नामक पत्र निकाला। यह अख़बार सप्ताह में तीन बार निकलता था। बड़ा लोकप्रिय हुआ। इसमें मुंशी नवलकिशोर भी काम कर चुके थे। इसके पश्चात् १८५८ ई० में मुंशीजी ने लखनऊ में अपना सुप्रसिद्ध नवलकिशोर प्रेस खोलकर अच्छी ख्याति और विपुल धनराशि का अर्जन किया। उसी समय उन्होंने अपने प्रेस से 'अवध अख़बार' निकाला, जो अब तक चल रहा है। इस बीच में पंजाब, संयुक्त प्रान्त, मदरास आदि से और भी उर्दू पत्र निकले। लाहौर से 'अख़बार आम' पं० मुकुन्दराम

ने निकाला। ये भी 'कोहनूर' में काम कर चुके थे। 'अवध पंच' (लखनऊ) १८७७ ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें अधिकतर हास्य-विनोद के लेख रहते थे। 'हिन्दुस्तानी' (लखनऊ) का प्रारम्भ १८८३ ई० में हुआ। यह राजनैतिक विषयों और सामयिक घटनाओं पर बड़ी मार्मिक टीका-टिप्पनी करता था। 'पैसा अख़बार' (लाहौर) १८८७ में निकला। साहित्यिक पत्रों में शरर का 'दिल-गुदाज़' बहुत प्रसिद्ध हुआ। 'ज़माना' (कानपुर) उर्दू साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रहा है। इलाहाबाद से 'अदीब' भी अच्छा निकला था। 'अलनाज़िर', 'हुमायूं', 'शबाब', 'निगार', 'मुआरिफ़', 'उर्दू', 'मख़ज़न', 'अकबर', 'मुरक्क़ा', 'शायर' आदि भी प्रसिद्ध साहित्यिक पत्र हैं। 'हज़ारदास्तां' कहानियों का परचा है। 'सहेली' भी अपने ढंग का अच्छा पत्र रहा। मौलाना हसरत मुहानी का 'उर्दू-ए-मुअल्ला' ख्यातिप्राप्त पत्र था, परन्तु बन्द हो गया। उर्दू-पत्रों और पत्रकारों के सम्बन्ध में, 'अख़बार नवीसों के हालात' नाम की एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई है, जिससे इस विषय की बहुत-सी बातें विदित हो सकती हैं।

लेखों के नमूने

नीचे नमूने के तौर पर कुछ लेखकों के निबन्धों से कतिपय पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं। इनसे पाठकों को, उनकी विभिन्न लेखन-शैलियों का कुछ आभास मिल सकेगा। स्थानाभाव से पूरे निबन्धों का प्रकाशित करना कठिन है।

एक रोज़ उस गुम्बद के नीचे रोशनदान से एक फूल अचम्भे का नज़र पड़ा कि देखते-देखते बड़ा होता जाता था, मैंने चाहा कि हाथ से पकड़ लूँ। ज्यों-ज्यों मैं हाथ लम्बा करता था, वह ऊँचा हो जाता था। मैं हैरान होकर उसे तक रहा था। वहीं एक आवाज़ क़हक़हे की मेरे कान में आई। मैंने उसके देखने को गर्दन उठाई। × × × हासिल यह है कि मैं तो क्या हूँ किसूने यह आलम

न देखा होगा, न सुना होगा। इस मज़े में ख़ातिरजमा से हम दोनों बैठे थे।

—मीर अम्मन

शहज़ादे से कहा कि अगर मेरी बात का तोता साफ़ जवाब न देगा तो इस निगोड़े की गर्दन मरोड़, अपने तलवों से उसकी आँखें मलूँगी, जब दाना-पानी खाऊँ-पीऊँगी। जान आलम ने कहा—कुछ हाल तो कहो। तोते ने गुज़ारिश किया, हुज़ूर यह मुक़द्दमा ग़ुलाम से सुनिए—आज शहज़ादी साहिब अपनी दानिस्त में, बहुत निखर देख आइने को कहती थीं कि 'अलारी मैं!' फिर फ़रमाया मुझ से तूने ऐसी सूरत कभी देखी थी। मुझ अजल रसीदा के मुंह से निकला—ऐसा ही हो।

—मिर्ज़ा रजबअली बेग 'सरूर'

ऐ आसमानों की रोशनी और ऐ नाउम्मेद दिलों की तसल्ली उम्मेद। तेरे ही शादाब और सरसब्ज़ बाग़ से हर एक मेहनत का फल मिलता है। तेरे ही पास हर दर्द की दवा है। तुझी से हर एक रंज में आसूदगी है। अक़्ल के वीरान जंगलों में भटकते-भटकते थका हुआ मुसाफ़िर तेरे ही घने बाग़ के सरसब्ज़ दरख़्तों के साये को ढूँढता है। वहाँ की ठंडी हवा, ख़ुश इलहान जानवरों के राग, बहती नहरों की लहरें उसके दिल को राहत देती हैं, उसके मरे हुए ख़यालात को फिर ज़िन्दा करती हैं। तमाम फ़िकरें दिल से दूर होती हैं और दूर दराज़ ज़माने की ख़याली ख़ुशियाँ सब आ मौजूद होती हैं।

—सर सैयद अहमद ख़ाँ

जिस तरह कोई ज़मीन अपनी क़ाबलियत के मुआफ़िक़ बे [illegible] दरख़्तों के नहीं रह सकती, इसी तरह कोई ज़बान [illegible] इन्सान की [illegible] के मुआफ़िक़ नज़्म से ख़ाली नहीं रह सकती। पर जिस तरह से दरख़्तों की रंगीनी और शादाबी

अपनी सर ज़मीन की ख़ासियत को ज़ाहिर करती है, उसी तरह से ज़वानों के सिलसिले में हर एक नज़्म अपनी ज़वान और अहले ज़वान की शायस्तगी और तहज़ीव आला के साथ लताफ़ते तवअ के दरजे दिखाती है।

—मौ० आज़ाद

मिर्ज़ा ग़ालिव अपने शिष्य मुंशी हरगोपाल 'तुफ़्ता' को लिखते हैं—

वन्दा परवर, तुमको पहले यह लिखा जाता है कि मेरे दोस्त क़दीम मीर मुकर्रिम हुसेन साहव की ख़िदमत में मेरा सलाम कहना और यह कहना अव तक जीता हूँ, और इससे ज़्यादा मेरा हाल मुझको भी नहीं मालूम। × × × और भाई, यह जो तुम्हारी सख़ुन गस्तरी है, उसकी शोहरत में मेरी भी तो नाम आवरी है। मेरा हाल इस फ़न में अव यह है कि शेर कहने की रविश और अगले कहे हुए अशआर सव भूल गया। मगर हाँ, अपने हिन्दी कलाम में से डेढ़ शेर यानी एक मक़्ता और एक मिसरा याद रह गया है, सो गाह-गाह, जव दिल उलटने लगता है, तव दस-पाँच वार यह मक़्ता ज़वान पर आ जाता है—

ज़िन्दगी अपनी इसी ढव से जो गुज़री ग़ालिव—
हम भी क्या याद करेंगे कि ख़ुदा रखते थे।

फिर जव सख़्त घवराता हूँ और तंग आता हूँ तो यह मिसरा पढ़ कर चुप हो जाता हूँ—ऐ मर्गे नागहाँ तुझे क्या इन्त-ज़ार है। × × ×

—मिर्ज़ा ग़ालिव

अगरचे मिर्ज़ा (ग़ालिव) की आमदनी क़लील थी, मगर हौसला फ़राख़ था। साइल उनके दरवाज़े से ख़ाली हाथ वहुत कम जाता था। उनके मकान के आगे अन्धे, लँगड़े, लूले और अपाहिज मर्द व औरत हर वक़्त पड़े रहते थे। ग़दर के वाद उनकी आमदनी

कुछ ऊपर डेढ़ सौ रुपया माहवार की हो गई थी, और खाने-पहनने का ख़र्च भी कुछ लम्बा-चौड़ा न था, मगर वह ग़रीबों और मोहताजों की मदद अपनी बिसात से ज़्यादा करते थे, इसलिए अक्सर तङ्ग रहते थे। ग़दर के बाद एक बार मैंने ख़ुद देखा कि नवाब लेफ़्टिनेण्ट गवर्नर के दरबार में, इनको हस्ब मामूल सात पारचे का ख़िलअत मय तीन रक़ूम जवाहिर के मिला था। लेफ़्टेन्टी के चपरासी और जमादार क़ायदे के मुआफ़िक़ इनाम लेने को आए। मिर्ज़ा साहब को पहले ही मालूम था कि इनाम देना होगा, इसलिए उन्होंने दरबार से आते ही ख़िलअत और रक़ूम जवाहिर बाज़ार में फ़रोख़्त करने के लिए भेज दी थी। चपरासियों को अलग मकान में बिठा दिया और जब बाज़ार से ख़िलअत की क़ीमत आई तब उनको इनाम देकर रुख़सत किया।

—मौ० हाली

तारीख़ और शेर का फ़र्क़ एक मिसाल के ज़रिए अच्छी तरह समझ में आ सकता है। एक शख़्स जंगल में जा रहा है, किसी कोने से एक मुहीब शेर डकारता हुआ निकला, उसकी पुररौब गूँज, भयानक चेहरा, ग़ज़बगीं आँखों ने इस शख़्स के दिल को लरज़ा दिया। यह शख़्स किसी के सामने शेर का हुलिया और शक्लो-सूरत जिन मोअस्सर लफ़्ज़ों में बयान करेगा वह शेर है।

इल्मुल हैवानात का आलिम किसी अजायबख़ाने में जाता है, जहाँ एक शेर कटहरे में बन्द है। वह आलिम शेर के एक-एक अङ्ग को इल्मी हैसियत से देखता है, और इल्मी तरीक़े से किसी जमाअत के सामने शेर पर लेक्चर देता है, यह मानिन्द तारीख़ या वाक़ा-निगारी है।

वहलाती होगी, या घर के चक्की-चूल्हे में पड़ी होगी, या उपलियाँ प्यारी-प्यारी बनाती होगी। मगर यहाँ सूख-सूखकर इश्क़ की धूप में हम कण्डा हुए जाते हैं। तुमको क्या नाम कि जानना चाहिए हम बनवा कण्डे जिसकी आँच ऐसी तेज़ होती है कि पाताल जन्तर में अर्क और तेल उसी से निकल सकता है।

—मुंशी सज्जाद हुसैन

इतने में मल्लाहों ने कहा—अब बम्बई सामने से नज़र आती है, सुनते ही ख़ोजी की बाछें खिल गईं, चिल्लाकर कहा—यारो ज़रा देखना बी शिताब जान साहब की फ़िनस तो नहीं आई है। करम-बख़्श नामी महरी साथ होगी। अतलस का छटका है और कहारों की पगड़ियाँ, वरदी रंगी हुई हैं। मछलियाँ ज़रूर लटक रही होंगी—'बी शिताब जान होत !!!' × × × लोगों ने समझाया—साहब, अभी बन्दरगाह तो आने दीजिए बी शिताब जान और करमबख़्श यहाँ क्योंकर सुन लेंगी। कहा—अजी हटो भी, तुम क्या जानो, कभी किसी पर दिल आया हो तो समझो। अरे नादान इश्क के कान दो कोस तक की ख़बर लाते हैं और कौन कोस? कड़ी मंज़िल के कोस।

—पं० रतननाथ 'सरशार'

भले आदमी सीधा-सादा मिज़ाज रखते हैं, जो ख़ुदा ने दिया उस पर राज़ी रहते हैं। दुनिया की ख़्वाहिशों से आज़ाद हो जाते हैं, हर हाल में ख़ुश मिज़ाज रहते हैं। फ़ैयाज़ी के कान होते हैं। पराये दुख देखकर दुखी होते हैं और दूसरे के सुख जानकर सुखी। तन, मन, धन से वह पराया भला करते हैं, उनका ख़्वाह कोई दोस्त हो या दुश्मन, वे सबके साथ मुहब्बत उल्फ़त और शफ़क़त के साथ पेश आते हैं। वे किसी से दुश्मनी नहीं रखते, उन्हें ग़रूर और घमण्ड नहीं होता। वह ग़रीबों पर मेहरबानी करते हैं। अपनी ताज़ीम की परवा नहीं करते। मगर और सब की ताज़ीम ख़ुद करते

हैं। आजिज़ी और तवाज़ुअ से पेश आते हैं। किसी से ऐसी बात नहीं कहते जो उसे कड़वी मालूम दे। अपने क़ौल और फ़ेल में सच्चे होते हैं। ऐसे ही आदमियों को .ख़ुदा रसीदा कहते हैं।

—मौ० ज़काउल्ला

अगर ग़ौर करें तो बोलना और बात करना इतना ज़रूरी नहीं जितना कि हम लोग रात-दिन बिला ज़रूरत व बेहाजत बका करते हैं। पस बेज़रूरत बात करना अक़्लमन्दों का शेवा नहीं। कोई पूछे तो जवाब दो, तुमको .ख़ुद हाजत हो तो बोलो। इससे ज़्यादा बोलना बेफ़ायदा है। गुफ़्तगू में चुग़ली और ग़ीबत यानी पीठ पीछे किसी को बुरा कहना या बदी के साथ उसका तज़किरा करना, और झूठ बोलना या .फ़ुहश यानी गाली बकना परले दर्जे के ऐब हैं। बहुत एहतियात करो कि तुम्हारी गुफ़्तगू इन ऐबों से पाक हो। वरना ऐसे आदमी को बदज़बान और बेहूदा कहते हैं। जो बात करो नर्मी और आहिस्तगी के साथ करो। सख़्त बात करना या चिल्लाकर बोलना हरगिज़ नहीं चाहिए। अगर तुमको किसी पर .ग़ुस्सा भी आये तो भी बदज़बानी न करो। जो लोग तुमसे कुछ कम दर्जे के हैं यहाँ तक कि अपने ख़िदमतगार और नौकरों से भी 'भाई' 'मियाँ' और जी से बात करनी चाहिए, ताकि सब लोग तुमको जी से प्यार करें।

—मौलवी नज़ीर अहमद

जब नूरजहाँ जवान हुई तो अकबर ने उसकी शादी एक ईरानी नौजवान शेर अफ़गन से कर दी और उसको बर्दवान का हाकिम मुक़र्रर कर दिया। मगर जहाँगीर के अहद में .ख़ुद बादशाह के हाथों से शेर अफ़गन मारा गया और उसकी बेवा शाही महल में दाख़िल होकर, बादशाह की माँ की मुसाहिब मुक़र्रर हुई। कुछ मुद्दत के बाद बादशाह के निकाह में आई और मल्लिका नूरजहाँ कहलाई। हुस्न और शक्ल की .ख़ूबियों के अलावा निहायत आक़िल, होशियार और मिज़ाजदान औरत थी। इसने बादशाह के मिज़ाज को बहुत

इसलाह की। तुन्द.खूही और .गुस्से को धीमा किया। शराव कम करा दी। सल्तनत के कारोवार को .खुद सँभाल लिया। रुपये और अशर्फ़ी के सिक्के में वादशाह के नाम के साथ इसका नाम भी शामिल था। ज़ेवर, लिवास और खानों में नयी-नयी ईजादें कीं। वह भी वड़ी शायरा, लतीफ़ासंज और हाज़िर जवाव थी। घोड़े की सवारी और फ़नून सिपहगीरी में भी उसको .खूव महारत थी।

—मुहम्मद इस्माईल

फ़ारसी ग़ज़ल का वेहतरीन नमूना हाफ़िज़ का कलाम है, मगर इसको हर साहवे नज़र महसूस करता होगा कि हाफ़िज़ के ख़यालात में नैरंगी नहीं, तर्ज़े वयान नैरंगी है। वही चन्द वँधे हुए ख़याल हैं, जो हाफ़िज़ की हर ग़ज़ल में जाहिर होते हैं। मगर हर ग़ज़ल अपने तरीक़े इज़हार और तर्ज़े तावीर में अलग है, एक ही ख़याल सौ-सौ तरह उसमें है, और होता है। मगर हर जगह उसकी शान निराली और तर्ज़ नई है। यही हाल ख़य्याम की रुवाइयों का है। चन्द ख़यालात हैं, जो हर दफ़ा नया क़ालिव वदल कर और नई शक्ल में जलवादार होकर सामने आते हैं। वात यह है कि यह वह शायर हैं जो अलफ़ाज़ व तराकीव के हुस्न के वावजूद, सिर्फ़ उन चीज़ों को कमाल नहीं जानते वल्कि उनके अन्दर चन्द हक़ीक़तें मरकूज़ रहती हैं, वही रह-रहकर उभरती और नालए मौज की सूरत अख़्तियार करती हैं।

—सैयद सुलेमान नदवी

मेरी सव कितावों को चाट गया, वड़ा मूज़ी था, .खुदा ने पर्दा ढक लिया। उफ़, जव मैं उसकी लम्वी-लम्वी दो मूँछों का ख़याल करता हूँ, जो वह मुझको दिखलाकर, हिलाया करता था, तो आज उसकी लाश देखकर वड़ी .खुशी होती है। एक दिन उसको मैंने देखा कि किताव की जिल्द में छिपा वैठा है। मैंने कहा—क्यों रे शेर! तू यहाँ क्यों आया? उछल कर वोला, ज़रा इसका मुताला करता

था। सुभान अल्लाह! तुम क्या ख़ाक मुताला करते थे, भाई यह तो इन इन्सानों का हिस्सा है। बोला—वाह! लोग किताबें पढ़ लेते हैं, मगर न उनको समझते हैं, और न उनपर अमल करते हैं। लिहाज़ा यह बोझा उठाने वाले गधे हैं, जिन पर किताबों का बोझ लदा हुआ है। इन्सान मिस्ल एक झींगुर के है, जो किताबें चाट लेता है, समझना-बूझना ख़ाक नहीं। झींगुर की यह बात सुनकर मुझको ग़ुस्सा आया और मैंने ज़ोर से किताब पर हाथ मारा। झींगुर फुदक कर दूसरी किताब पर जा बैठा और क़हक़हा मार कर हँसने लगा—वाह! ख़फ़ा हो गये, बिगड़ गये, लाजवाब होकर लोग ऐसा ही करते हैं, लियाक़त तो यह थी कुछ जवाब देते, लेकिन नाराज़ हुए।

हाय! कल तो यह तमाशा देखा था, आज ग़ुस्लख़ाने में वज़ू करने गया तो देखा बेचारे झींगुर की लाश काली चींटियों के हाथों पर रक्खी है और उसको दीवार पर खींचे वे लिये चली जाती हैं।

—ख़्वाजा हसन निज़ामी

शायर वतनियत और आज़ादी के दिलदादा हैं, हिन्दुस्तान को अपना वतन समझते हैं, और अपने पुरख़ुलूस नग़मों और पुरजोश नज़्मों में अपने अहले वतन को हर क़िस्म की क़ुरबानी करने और आज़ादी हासिल करने की तरग़ीब देते हैं। इनका कलाम फ़िरक़ा-बन्दी के लौस से बिल्कुल पाक है, वह मज़हबी मिलाप का मुतलक़ [illegible] करते, हिन्दुस्तान इनका वतन है, और अहले हिन्द इनके [illegible] हैं। शायर ने [illegible] के मनाज़िर, क़ुदरत के जलवे, जज़्बात की [illegible], [illegible] आफ़रीनियाँ मुख़्तलिफ़ और [illegible] नज़्मों में [illegible] से बयान की हैं। इनके कलाम की [illegible] [illegible] और [illegible] है। दूसरी बात [illegible] है, जिससे शायर का [illegible] और उसकी [illegible] का पता मिलता है।

उपर्युक्त पंक्तियों से पाठकों को इस बात का कुछ न कुछ परिचय प्राप्त हो सकेगा कि प्रारम्भ में उर्दू-गद्य की क्या अवस्था थी और अब वह किस ओर जा रहा है। साहित्य के प्रायः सभी अंगों की पूर्ति के लिए उर्दू वाले बड़ी दृढ़ता से प्रयत्न कर रहे हैं। उर्दू पर नई परिस्थिति का ख़ूब प्रभाव पड़ा है और संसार की भिन्न-भिन्न भाषाओं के साहित्य से उसका भाण्डार भरने की कोशिश की जा रही है। हैदराबाद के वर्त्तमान निज़ाम साहब उर्दू-प्रचार के लिए जिस प्रकार मुक्तहस्त होकर प्रचुर धन-राशि व्यय कर रहे हैं वह हिन्दी-हितचिन्तक नरेशों और श्रीमानों के लिए पूर्ण रूप से अनुकरणीय है।

आश्रयदाता दरबार

उर्दू का दक्षिण में अच्छा विकास हुआ, कुतुबशाहों ने इसकी उन्नति में प्रशंसनीय प्रयत्न किया। गोलकुण्डा, बीजापुर और औरंगाबाद दरबारों द्वारा सैकड़ों कवियों और कलाकारों को आश्रय तथा आदरदान दिया गया। इनके अतिरिक्त देहली, लखनऊ, रामपुर और हैदराबाद ये चार ऐसे मुख्य स्थान थे, जो उर्दू कविता के केन्द्र बने और जहाँ कवियों का ख़ूब जमाव रहा। इन स्थानों के शासक कवियों और कलाकारों का ख़ूब आदर करते थे और स्वयम् भी बड़े अच्छे कवि तथा काव्य-मर्मज्ञ थे। जब देहली और लखनऊ पर आपत्ति आई, तब वहाँ से भागे हुए कवियों को हैदराबाद और रामपुर के दरबारों ने दिल खोलकर आश्रय दिया। उस समय फर्रुख़ाबाद, अज़ीमाबाद, मुर्शिदाबाद, टाँडा, टोंक, मँगलौर, भूपाल,

अलवर, भरतपुर आदि में जो कवि पहुँचे उनको भी वहाँ के शासकों ने अच्छी सहायता की। आश्रयदाता मुख्य दरबारों का संक्षिप्त वर्णन नीचे किया जाता है—

गोलकुण्डा और बीजापुर

सुल्तान मुहम्मद क़ुली क़ुतुबशाह—ये गोलकुण्डा तथा बीजापुर के बादशाह और इब्राहीम क़ुतुबशाह के बेटे थे। बाप के मरने पर १२ वर्ष की आयु में गद्दी पर बैठे। इन्होंने अपनी प्रेयसी भागमती के नाम से भागनगर बसाया, जो पीछे हैदराबाद हो गया। ये बड़े कवि तथा काव्यमर्मज्ञ थे। कलाकारों का ख़ूब आदर करते थे। इन्होंने दक्खिनी में (जो हिन्दी का ही रूपान्तर था) बहुत कविताएँ की हैं। पचास हज़ार से अधिक शेर लिखे हैं। फ़ारसी में भी कविता करते थे। फ़ारसी में उपनाम 'क़ुतुबशाह' था और दक्खिनी में 'मानी'। इनकी कविताओं में प्रकृति-वर्णन अच्छा हुआ है। ऋतुओं और हिन्दू-मुसलमानों के त्यौहारों पर भी ख़ूब लिखा है। सबसे प्रथम इन्हीं की कविताओं का दीवान प्रकाशित हुआ था। इनकी कविताओं में फ़ारसीपन कम और हिन्दीपन अधिक है। हिन्दू धर्मों की प्रशंसा में भी इन्होंने अनेक कविताएँ लिखी हैं। उर्दू कविताओं की आधार-शिला इन्होंने ही रखी।

सुल्तान मुहम्मद क़ुतुबशाह—ये मुहम्मद क़ुली क़ुतुबशाह के भतीजे और दामाद थे। १५९३ ई० में पैदा हुए और क़ुली क़ुतुबशाह के बाद गोलकुण्डा के तख़्त पर बैठे। बड़े कवि और कला-प्रेमी थे। उर्दू गद्य-पद्य दोनों बड़ी सफलता से लिखते थे। इनके दो दीवान हैं, एक फ़ारसी में और एक उर्दू में। इनका उपनाम भी 'क़ुतुबशाह' था। इनके दोनों दीवान हैदराबाद के सालारजंग पुस्तकालय में सुरक्षित हैं।

सुल्तान अब्दुल्ला क़ुतुबशाह—ये सुल्तान मुहम्मद क़ुतुबशाह के बेटे थे। १६२६ ई० में गद्दी पर बैठे। इनके दरबार में फ़ाज़िल और

अरब से आए हुए विद्वान् रहते थे। इन्होंने 'लुग़ात फ़ारसी' नाम का एक शब्द-कोष तैयार कराया था। उर्दू में इनका एक दीवान भी है। ये फ़ारसी में भी कविता करते थे।

अबुल हसन क़ुतुबशाह—ये गोलकुण्डा के अन्तिम शासक थे। कवियों की ख़ूब क़द्र करते थे, स्वयम् भी कवि थे। 'नूरी' फ़ायज़, 'शाही', 'मिर्ज़ा' आदि इनके दरबारी कवि थे।

गोलकुण्डा के शासकों को भाँति बीजापुर के शासकों की भी कविता में बड़ी रुचि थी। इन्होंने स्वयम् दखिनी में कविताएँ कीं तथा अन्य कवियों को भी आश्रय दिया। कुछ शासकों का परिचय—

इब्राहीम आदिलशाह—ये बीजापुर के शासक थे, फ़ारसी का प्रसिद्ध कवि 'ज़हूरी' इन्हीं का दरबारी कवि था। इन्होंने दखिनी कविता में, संगोत पर 'नौरस' नाम की एक सुन्दर पुस्तक लिखी है। इनके यहाँ हज़ारों कवियों और गायकों का जमाव रहता था।

अली आदिलशाह (द्वितीय)—ये शिवाजी के आक्रमण के समय बीजापुर के शासक थे। सुप्रसिद्ध मुहम्मद नसरत 'नसरती' इनका दरबारी कवि था। और भी अनेक कवि तथा कलाकार दरबार के आश्रय थे। इनमें अमीन, मलिक, हाशिम, मोमिन, मिर्ज़ा आदि मुख्य हैं।

गोलकुण्डा और बीजापुर पर मुग़लों का अधिकार हुआ तो उन्होंने भी कवियों को आश्रय देने में किसी प्रकार की कमी नहीं की। औरंगज़ेब दक्षिण का सूबेदार नियुक्त हुआ और उसनें अपने नाम पर औरंगाबाद बसाया। कवि जन बीजापुर, गोलकुण्डा, हैदराबाद आदि की तबाही से त्रस्त होकर औरंगाबाद पहुँचे तो वहाँ उन्हें यथोचित आश्रय तथा साहाय्य प्राप्त हुआ।

दक्षिण के कुछ प्राचीन कवि

आजिज़—इनका नाम मुहम्मदअली था। 'क़िस्सा फ़ीरोज़-

बाग़', 'क़िस्सा लालो गौहर' और 'क़िस्सा मलिका मिस्र' ये तीन पुस्तकें इन्होंने लिखी हैं।

बहरी—इनका नाम क़ाज़ी महमूद था। इन्होंने पचास हज़ार शेर लिखे थे, जो बीजापुर की तबाही के समय नष्ट हो गए। इनकी 'मन लगन' नामक मसनवी बहुत प्रसिद्ध है। इसमें ईश्वर-भक्ति का वर्णन है।

अमीन—इनका नाम शेख़ मुहम्मद था। इन्होंने 'यूसुफ़ ज़ुलेख़ा' के क़िस्से का दक्खिनी कविता में अनुवाद किया है।

वली (दक्खिनी)—इनका नाम सैयद मुहम्मद फ़ैयाज़ था। इन्होंने 'रतन पदम' नाम की मसनवी लिखी है। एक और धार्मिक मसनवी और मुनाजात भी लिखी है।

दाऊद—इनका नाम मिर्ज़ा दाऊद था। इन्होंने एक दीवान लिखा है। ये वली के समकालीन थे। ११५७ हि० में देहान्त हुआ।

सिराज—इनका नाम सैयद सिराजुद्दीन था। औरंगाबाद के रहने वाले थे। इन्होंने एक दीवान रेख़्ता में लिखा है, जिसमें पाँच हज़ार शेर हैं। 'बोस्ताने ख़याल' नाम की एक मसनवी भी लिखी है। इनकी कविता बड़ी सीधी-सादी है। ये बड़े ईश्वर-भक्त थे। ११७७ हि० में इनका देहान्त हुआ।

'सवरस' नाम की पुस्तक गद्य में लिखी है। यह एक क्रमबद्ध कहानी है। पुराने गद्य-पद्य के नमूने भी दिए हैं।

तहसीनुद्दीन—इन्होंने 'कामरूपकला' नाम की एक मसनवी लिखी है, इसके 'हीरो' और 'हीरोइन' क्रमशः अवधेश-कुमार कामरूप और लंकेश-सुता कला हैं। कहानी के सभी पात्र हिन्दू हैं। कहते हैं कि जर्मनी के मशहूर शायर गेटे ने इस मसनवी का जर्मन अनुवाद कराया था।

रस्मी—इनका नाम कमाल ख़ाँ था। ये बीजापुर के दरबारी कवि थे। इन्होंने 'ख़ादिरनामा' नामक फ़ारसी पुस्तक का दखिनी कविता में अनुवाद किया।

नसरती—इनका नाम शेख़ नसरत था। बीजापुर के रहने वाले थे। इन्हें अली आदिलशाह (द्वितीय) के दरबार से 'अलीनामा' लिखने पर मलिकुल शुअरा (कवि-सम्राट्) की उपाधि मिली थी। 'अलीनामा' मसनवी में इन्होंने अपने आश्रयदाता अली आदिलशाह की जीवनी के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। इनकी दूसरी पुस्तक 'गुलशने इश्क़' है, इसमें कुँवर मनोहर और मधुमालती का प्रेम-प्रसंग वर्णन किया गया है। उपमा और अलंकारों की ख़ूब छटा है। 'गुलदस्तए इश्क' यह नसरती की तीसरी मसनवी है। इनकी लिखी 'मैराजनामा' नामक एक पुस्तक और भी बताई जाती है।

हाशमी—इनका नाम सैयद मीराँ था। ये बीजापुर के रहने वाले थे। जन्मान्ध थे, परन्तु बड़े प्रतिभाशाली थे। दखिनी में बड़ी सुन्दर कविता करते थे। इन्होंने 'यूसुफ़-ज़ुलेख़ा' नाम की एक मसनवी लिखी है, जिसमें छह हज़ार से अधिक शेर हैं। इनकी कविताओं का एक दीवान भी था जो मिलता नहीं। ये अपनी कविता में प्राचीन हिन्दी शब्दों का ख़ूब प्रयोग करते थे, और उसी शैली पर लिखते थे।

दौलत—ये भी दखिनी कवि थे, इन्होंने १६४० ई० में एक 'शाह बहरामो बानुए हुस्न' नाम की मसनवी लिखी थी। इसमें शाह बहराम का बानू नाम की परी से प्रेम-प्रसंग वर्णित है।

शाह मलिक—ये बीजापुर के रहने वाले थे। अली आदिल शाह के समय में हुए थे। इन्होंने 'अहकामुल सलवत' नाम से दखिनी में एक कविता-पुस्तक लिखी थी।

अली—इनका नाम शेख़ अमीनउद्दीन था। ये बीजापुर के रहने वाले थे। १०८६ हिजरी में इनका देहान्त हुआ। ये हर वक़्त कविता में लीन रहते थे, फ़क़ीर थे। इनकी कविताओं का संग्रह 'जवाहिरुल इसरार' नाम से प्रसिद्ध है।

मुल्ला कुतुबी—इन्होंने १०४८ हिजरी में 'तुहफ़तुल नसाइह' नाम की एक फ़ारसी पुस्तक का दखिनी कविता में अनुवाद किया। इन्होंने एक क़सीदा भी लिखा।

मसीही—इन्होंने दखिनी में 'माह पैकर' नामक एक मसनवी लिखी।

तबई—ये गोलकुण्डा के रहने वाले थे, सुल्तान अब्दुल्ला कुतुब शाह के समय में हुए। इनकी लिखी 'बहरामो गुल अन्दाम' नामक एक मसनवी है जिसमें [illegible] के शेर हैं। प्रारम्भ में [illegible] इसकी भूमिका भी है।

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त दक्षिण में अन्य अनेक शायर हुए। उनमें से कुछ के नाम नीचे दिए जाते हैं—

हाजी, उजलत, महरम, रंगीन, अज़ीज़, सारँग, महर, तवाह, रज़्ज़ाक, महताव, शराफ़त, शहीद, ज़मा, काज़िम, हमदम, दर्द, हशमत, हाजी, क़ादिर, फ़रुख़ आदि।

देहली-दरवार

अकवर शाह (द्वितीय)—अवुनस्र मुईनुद्दीन अकवर शाह (द्वितीय) देहली सम्राट शाह आलम (द्वि०) के दूसरे वेटे थे। १८०६ ई० में तख़्त पर वैठे और १८३७ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये स्वयम् तो कविता कम लिखते थे, परन्तु कवियों का सत्कार वड़े प्रेम से करते थे। इनके दरवार के आश्रित कितने ही कवि थे।

वहादुरशाह (द्वितीय)—दिल्ली के अन्तिम मुग़ल-सम्राट् वहादुर शाह 'ज़फ़र' अकवर शाह (द्वि०) के वेटे थे। १७७५ ई० में पैदा हुए। १८३७ ई० में तख़्त पर वैठे। १८५८ ई० में इनको व्रह्मा में देश-निकाला दिया गया और १८६२ ई० में वहीं इनका देहान्त हुआ। ये शायरी के वड़े शौक़ीन थे और अपना अधिक समय इसी में लगाते थे। ये अपनी कविता ज़ौक और ग़ालिव को दिखाया करते थे। कुछ दिनों नसीर से भी इसलाह ली थी। संगीत में भी ये वड़े दक्ष थे। इनकी ठुमरियाँ वहुत प्रसिद्ध हैं। इन्होंने गुलिस्ताँ की एक शरह (व्याख्या) लिखी है। इनकी कविताओं के चार वड़े-वड़े दिवान हैं, जो वहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। इनकी ग़ज़लें वहुत लोकप्रिय हुई हैं, जो नाच-रंग आदि के समय गाई जाती हैं। ज़फ़र की वहुत-सी ग़ज़लों में उनके उस्ताद ज़ौक और गालिव का रंग है। कुछ लोगों का ख़याल है कि ये ग़ज़लें इन्हीं उस्तादों की लिखी हुई हैं। जो हो, जफ़र के शायर होने में सन्देह नहीं। वहुत-सी उच्च कोटि की उनकी ऐसी भी कविताएँ हैं; जो उन्होंने अपने ही रंग में

लिखी हैं। इनकी कविताएँ स्पष्ट और सरल हैं। उनमें उनके कष्टों का बड़ा ही करुण वर्णन किया गया है। कितनी ही कविताएँ तो उच्चभावों से पूर्ण हैं। उनमें बड़ा प्रभाव है। वे हृदय पर अधिकार कर लेती हैं। नमूने देखिए—

× × × ×

पसे मर्ग मेरे मज़ार पर जो दिया किसी ने जला दिया
उसे आह दामने बाद ने सरे शाम ही से बुझा दिया
मेरी आँख झपकी थी एक पल यों ही दिल ने कहा कहीं उठके चल
दिले बेक़रार ने आन कर मुझे चुटकी लेके जगा दिया
पसे मग़फ़िरत मेरे पे 'ज़फ़र' पढ़े फ़ातहा कोई आनकर
वो जो टूटी क़ब्र का थां निशाँ उसे ठोकरों से मिटा दिया

× × × ×

यार था गुलज़ार था, मै थी फ़िज़ा थी मैं न था
लायक़े पाबोसे जानाँ क्या हिना थी मैं न था
मैंने पूछा आपका था क्या हुआ हुस्ने शबाब
हँस के बोला वह सनम शाने ख़ुदा थी मैं न था
[illegible] मरता नहीं [illegible] यार तक
[illegible] जिसने [illegible] थी मैं न था
[illegible] गोया [illegible] मुआफ़
[illegible] थी मैं न था

अक़्दस' नाम की मसनवी प्रसिद्ध है। २४४ पृष्ठों का इनका एक उर्दू दीवान भी है। फ़ारसी शायरी का भी दीवान है। इनका एक क़सीदा तो बड़ा ही करुणापूर्ण है, उसमें ग़ुलाम क़ादिर के अत्याचार और अपनी आँखें निकाले जाने का हृदय-विदारक वर्णन किया है। सौदा, मीर, नसीर, इन्शा, आज़म, ज़ार, एहसान आदि शायर इनके दरबार द्वारा सम्मानित होते थे।

मिर्ज़ा सुलेमान शिकोह—ये शाह आलम (द्वि०) के तीसरे बेटे थे। ग़ुलाम क़ादिर के विद्रोह के पश्चात् ये देहली से लखनऊ चले गए। नवाब आसफ़ुद्दौला इन्हें छह हज़ार रुपये मासिक देते थे। अन्त में ये आगरा चले आए और १८३७ ई० में इनका देहान्त हुआ। सिकन्दरे में दफ़न किये गए। ये शायरों को बड़ी सहायता देते थे। स्वयम् भी अच्छी कविता करते थे। प्रारम्भ में शाह हातिम के शिष्य हुए, फिर मसहफ़ी और इन्शा से भी इसलाह लेते रहे। मसहफ़ी, क़तील, इन्शा, मीर हसन आदि को इनके यहाँ से अच्छा पुरस्कार मिलता था।

लखनऊ-दरबार

आसिफ़ुद्दौला—नवाब असिफ़ुद्दौला 'आसिफ़' शायरों की बड़ी क़द्र करते थे। उनकी उदारता प्रसिद्ध है। ये नवाब शुजाउद्दौला के पुत्र थे, २७ वर्ष की आयु में, फ़ैज़ाबाद में, तख़्तनशीन हुए। जब राजधानी लखनऊ आई तो इन्होंने कितनी ही प्रसिद्ध इमारतें बनवाईं जो अब तक मौजूद हैं। ये प्रत्येक प्रकार के कलाकारों का आदर करते थे, स्वयम् भी बड़े अच्छे कवि थे। मीर सोज़ से इसलाह लेते थे। इनकी कविता सरस और सरल है। उसमें शब्दाडम्बर, और कृत्रिमता नहीं है। इनका लिखा एक दीवान भी है, जिसमें ग़ज़लें, रुबाइयाँ, मुख़म्मस, मसनवी आदि हैं। इन्हीं के शासन-काल में सौदा, मीर सोज़ आदि महाकवि देहली से लखनऊ गए थे, जिनको इन्होंने सादर आश्रय

अरमान बहुत रखते थे, हम दिल के चमन में
बैठे न ख़ुशी से कभी साए के तले हम
हम वह न क़लम थे, किसी माली के लगाए
नरगिस के निहालों में थे, आसिफ़ के पले हम
ज़िन्दाने मुसीबत में भला किसको बुलाएँ
रहते हैं वज़ीरी ही से दिन रात मिले हम

नवाब सआदत अलीखाँ—ये नवाब आसिफ़ुद्दौला के सौतेले भाई थे, काव्य-कला के बड़े प्रेमी और शायरों की क़द्र करने वाले थे। कभी-कभी स्वयम् भी कविता लिखते थे। मसहफ़ी और इन्शा की नोक-झोंक इन्हीं के समय में हुआ करती थी। इन्शा इनके दरबारी कवि थे। इनकी लिखी कोई पुस्तक नहीं मिलती।

ग़ाज़ीउद्दीन हैदर—ये नवाब सआदतअलीख़ाँ के बेटे थे, १८१६ ई० में तख़्त पर बैठे। बहुत साधारण कविता करते थे। इनके तख़्त पर बैठने के समय जवाहरात लुटाए गए थे।

नसीरुद्दीन हैदर—ये ग़ाज़ीउद्दीन हैदर के बेटे थे, १८२७ ई० से १८३७ ई० तक तख़्तनशीन रहे। ये भी अच्छी कविता करते थे, 'बादशाह' उपनाम था। इनकी कविता का नमूना—

ये किस मस्त के आने की आरज़ू है
कि साक़ी लिए साग़रे मश्क़ बू है
समाया है जब से तू नज़रों में मेरी
जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है
जताऊँ मैं क्या अपना हाले परेशाँ
अयाँ ज़ुल्फ़े दिलदार से मू ब मू है
चलो क़ब्रे फ़रहाद पर फ़ातहा को
मगर आबे शीरीं से लाज़िम वज़ू है

शफ़क़ बन के रोता है, गर्दूं में ग़ालिब
ये किस कुश्तये बेगुनाह का लहू है
गुलिस्तां में जाकर हर एक गुल को देखा
न तेरी-सी रंगत न तेरी-सी बू है
रहे साया यज़दान 'बादशाह' पर
ख़ुदावन्द आलम निगहबान तू है

मुहम्मदअली शाह—ये नसीरुद्दीन हैदर के चचा थे, जो हैदर के बाद तख़्त पर बैठे और फिर इनके बेटे अमजदअलीशाह बैठे। ये लोग कवियों की अच्छी प्रतिष्ठा तथा सहायता करते थे, इनाम-इकराम भी ख़ूब देते थे।

वाजिदअली शाह—ये अवध के अन्तिम बादशाह थे। 'अख़्तर' उपनाम था। अमजदअली शाह के बेटे थे। १८४७ ई० में, बीस साल की उम्र में तख़्त पर बैठे। लखनऊ का कैसर बाग़ इन्हीं का बनवाया है, इसके बनवाने में उस समय दो करोड़ रुपये लगे थे। ये बड़ी सुरुचि के शासक थे, परन्तु धूर्त दरबारियों के कुसंग ने इन्हें अत्यन्त विलास-प्रिय बना दिया था। रात-दिन भोग-विलास में ही लिप्त रहते थे। शासन-सूत्र ढीला हो गया था, फलतः ये १८५६ ई० की २१ जनवरी को तख़्त से उतार कर कलकत्ता में क़ैद कर दिए गए थे। डेढ़ साल क़िले में और फिर मटिया-बुर्ज में नज़रबन्द रक्खे गए। लखनऊ से जाते समय इन्होंने कहा था—

दरो दीवार पर हसरत की नज़र करते हैं,
रुख़सत ऐ अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं।

इन्होंने अपने लखनऊ से कलकत्ता तक जाने का बड़ा ही कारुणिक वर्णन 'हुज़्न अख़्तरी' नामक एक मसनवी में किया है। ये उर्दू के अलावा हिन्दी में भी कविता करते थे। इनकी ठुमरियाँ प्रसिद्ध हैं। हिन्दी में 'जान आलम पिया' उनका नाम था। १८८७ ई० में, कलकत्ता

में ही इनका देहान्त हुआ। इनके दरबार में कवि, कलाकार, गुणी और संगीतज्ञ रहते थे। इन्हें चिड़ियों का भी बड़ा शौक़ था। इनकी लिखी चालीस पुस्तकें हैं—६ दीवान, ७ मसनवियाँ, उर्दू-फ़ारसी के क़सीदे, इश्क़नामा, दफ़्तरे परेशाँ इत्यादि। ये 'वर्क़' और 'असीर' से इसलाह लेते थे। इनकी भाषा-शैली लखनऊ के अनुसार थी। अर्थात् भावों की अपेक्षा शब्दों की सजावट पर अधिक ध्यान देते थे। इनकी लिखी चिट्ठियाँ भी बड़ी मज़ेदार हैं। इन्होंने .क़ैद की हालत में भी अपना काव्य-प्रेम नहीं छोड़ा। शायरों की बराबर क़द्र करते रहे और मुशायरे भी कराते रहे। कई शायर तो लखनऊ से ही इनके साथ कलकत्ता गए थे।

अख़्तर की कविता के नमूने—

इस इश्क़ ने रुसवा किया मैं क्या बताऊँ क्या किया,
आह दिल नाशाद ने और आस्माँ पैदा किया,
क़मर धोका, दहन उक़दा, गिज़ाल आँखें परी चहरा,
शिक्म हीरा, बदन .ख़ुशबू, जबीं दरिया ज़बाँ ईसा,
बराये सैर मुझ-सा रिन्द मैख़ाने में गर आये,
गिरें साग़र लुँढे शीशा, हँसे साक़ी, बहे दरिया।

× × ×

यही तशवीश शबो रोज़ है बंगाले में,
लखनऊ फिर भी दिखायेगा मुक़द्दर मेरा।

× × ×

यह तमन्ना न रहे ज़ीस्त में ऐ बारे .ख़ुदा
फिर मुझे लखनऊ दुनिया में दिखाये .ग़ुरबत
हाँ वतन देखूँ तो शादाँ हो दिले ज़ार मेरा
यह भी मुमकिन है कि रोते को हँसाये .ग़ुरबत
वुसअते .ख़ुल्द से बढ़ कर है कहाँ हुब्बे वतन
तंगीये ग़ोर से बदतर है फ़िज़ाये .ग़ुरबत

यों तो शाहाने जहाँ पर है पड़ा वक़्त मगर
ख़त्म है 'अख़तरे' बेकस पै जफ़ाए ग़ुर्बत

× × ×

सल्तनत छोड़ दी दरवेशों की सोहबत के लिए
ज़ोफ़ये इश्क़ में है कोई न हमसर अपना

× × ×

क़ैद होने से कहां छूटे रियासत आयगी,
लाख गर्दिश आस्माँ को हो ज़मीं होना नहीं

× × ×

ज़ईफ़ी में भी लिपटी है बलाये शायरी हमसे
न छूटेगी कभी 'अख़तर' क़लम से मश्क़े तिफ़लाना

× × ×

मैं लखनऊ में जैसा अज़ा करता था,
और गिरियए अन्दोह से बुका करता था,
वैसा ही मेरा हाल है कलकत्ते में
पर याद नहीं कि ऐश क्या करता था

× × ×

ग़ुरूरो मयपरस्ती ख़ूयेबद, रंज
ये इन्साँ के लिए हैं चार दोज़ख़

× × ×

फ़क़ीरी फ़ख़्रे शाहाँ है य क़ौल अहमद का है ऐ दिल
बड़ा है तख़्ते सुल्ताँ से कहीं पाया तवक्कुल का

असीर—सैयद मुज़फ़्फ़रअली ख़ाँ 'असीर' अमेठी के रहनेवाले थे। ये सैयद इमदादअली के बेटे, मसहफ़ी के शिष्य और वाजिदअली

शाह के दरबारी कवि थे। कभी-कभी बादशाह की कविताएँ भी संशोधन करते थे। इनकी क़द्र रामपुर में भी .ख़ूब हुई थी, छह महीने लखनऊ और छह महीने रामपुर में रहते थे। वाजिदअली शाह इन्हें अपने साथ कलकत्ता ले जाना चाहते थे, परन्तु ये गए नहीं। यह बात बादशाह को पसन्द नहीं आई। १८८१ ई० में लखनऊ में, ८१ बरस की उम्र में इनका देहान्त हुआ। इनके लिखे उर्दू के छह दीवान हैं, जिनमें से चार छप चुके हैं। एक दीवान फ़ारसी का भी है। छन्द :-शास्त्र पर भी इन्होंने एक पुस्तक लिखी है। ये मरसिये और क़सीदे भी .ख़ूब लिखते थे। जब लखनऊ का रंग छोड़ कर कुछ लिखते थे, तो वह बहुत अच्छा होता था। इनके शिष्यों की बहुत बड़ी संख्या है, अमीर मीनाई उनमें मुख्य हैं। असीर के बेटे हकीम और अफ़ज़ल भी अच्छे कवि हो गए हैं। इनकी कविता का नमूना—

कहने को यों जहाँ में हज़ारों हैं यार-दोस्त
मुशकिल के वक़्त एक है, परवरदिगार दोस्त
किससे कहूँ तलव्वुने इबनाये रोज़गार
दुश्मन थे लाख बार हुए, लाख बार दोस्त

× × ×

ज़िंद से जितना है यहाँ काफ़िरो दीदार में फ़र्क़
ज़ाहिद उतना तो नहीं सज्जओ .ज़ुन्नार में फ़र्क़
ज़ंजीर तअल्लुक़ मेरे पाँवों से तो निकले
है फ़ासला दो गाम का हस्ती से अदम तक।

अमानत--इनका नाम सैयद आग़ा हसन और उपनाम 'अमानत' था। मीर आग़ा रिज़अब के बेटे थे। लखनऊ में पैदा हुए। २० बरस की उम्र में गूँगे हो गए थे,' परन्तु ९ वर्ष बाद फिर बोलने लगे। 'दिलगीर' से अपनी कविताओं में इसलाह लेते थे। पहले मरसिये लिखे, फिर ग़ज़लें शुरू कीं। इनकी पुस्तकों में से कुछ के

इनको उर्दू, फ़ारसी, अरबी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं पर अधिकार प्राप्त था। सैनिक शिक्षा भी यहाँ अच्छी मिली थी। इनकी विद्वत्ता, साहित्यिकता, काव्य-मर्मज्ञता और गुण-ग्राहकता के कारण बड़े-बड़े कवि और साहित्यकार हैदराबाद में एकत्र होगए थे। मौलवी सैयद अहमद देहलवी का प्रसिद्ध उर्दू कोष, 'फ़रहंगे आसिफ़िया' इन्हीं के समय में तैयार हुआ था। और भी अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए। .

ये दाग़ के शिष्य थे, और उन्हीं की शैली पर कविता करते थे। इनके लिखे दो दीवान हैं, जिनकी कविता बड़ी उत्कृष्ट है। उसमें शब्द-सौन्दर्य और भाव-गाम्भीर्य ख़ूब है। इनके समय में उर्दू कवियों का बड़ा सत्कार होता था। उन्हें वृत्तियाँ, सहायता, ख़िलअत, उपाधियाँ आदि सब कुछ प्रदान की जाती थीं। लखनऊ, देहली, रामपुर आदि स्थानों के कवि और साहित्यकार हैदराबाद में ही जमा हो गए थे। दाग़ की जितनी प्रसिद्धि हैदराबाद आने पर हुई उतनी कहीं नहीं हुई।

सर उस्मान अली ख़ाँ—हिज़ एक्सालटेड सर उस्मान अली-ख़ाँ बहादुर वर्त्तमान निज़ाम हैं। गुणियों और कलाकारों के बड़े क़द्रदान हैं। काव्य-मर्मज्ञ और काव्य-आलोचक हैं। इनके दरबार में भी साहित्य-वेत्ताओं, कवियों और कलाकारों की धूम रहती है। इनके समय में उस्मानिया यूनिवर्सिटी स्थापित हुई, जिससे उर्दू की बहुत उन्नति हुई है। अंजुमन तरक़्क़ी-ए-उर्दू के अनुवाद विभाग द्वारा विदेशी भाषाओं के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का उर्दू में अनुवाद किया गया है। इनका उपनाम उस्मान है। इनकी ग़ज़लों का एक दीवान भी प्रकाशित हुआ है। कविता अत्यन्त सरस, सरल, शुद्ध और स्वाभाविक होती है। ये अरबी और फ़ारसी के भी विद्वान् हैं। कभी-कभी इन भाषाओं में भी लिखते हैं।

महाराज चंदूलाल 'शादाँ'—इनका जन्म एक प्रतिष्ठित खत्री वंश

में हुआ। बहुत दिनों तक हैदराबाद में प्रधान मन्त्री रहे। स्वयम् कलाकार और कलाकारों की कद्र करने वाले थे। इनकी गुण-ग्राहकता के कारण बड़े-बड़े गुणी हैदराबाद में एकत्र हो गए थे। इनके महलों में प्रायः नित्य मुशायरे होते थे। ये हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध उर्दू कवियों को निमन्त्रण देकर बुलाते और उदारतापूर्वक उनका आदर-सत्कार करते थे। ये उर्दू और फ़ारसी दोनों भाषाओं में कविता करते थे। इनके दो दीवान उर्दू में और एक फ़ारसी में हैं। कहते हैं, इनके समय में तीन सौ से अधिक शायर हैदराबाद में रहते थे। इन शायरों का वेतन सौ रुपये से हज़ार रुपये मासिक तक था। शादाँ साहब ने अपना आत्म-चरित भी लिखा है। इनका समय १७६६ से १८४५ ई० तक है।

राजा गिरिधारी प्रसाद 'बाक़ी' [१८४०-१६००] इनका जन्म एक प्रतिष्ठित कायस्थ-कुल में हुआ था। ये उर्दू फ़ारसी और संस्कृत के विद्वान् थे। अरबी में भी इनकी अच्छी गति थी। ये भी कवि और काव्य-प्रेमी थे। 'बाक़ी' उपनाम था। इन्होंने भी कवियों को आश्रय दिया और उन्हें उदारतापूर्वक यथेष्ट सहायता पहुँचाई। हैदराबाद पहुँचने पर दाग़ की इन्होंने बड़ी प्रतिष्ठा की। इनकी नीचे लिखी पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध हैं। 'भगवद्गीता' (फ़ारसी-पद्यानुवाद) 'केशवनामा' 'कुल्लियाते बाक़ी' 'कसायद बाक़ी' 'प्रिसनामा' 'वकाए बाक़ी' 'सियाक बाक़ी', 'पैराया उरूज़', 'आईनए सख़ुन' इत्यादि। इनकी कविता में भक्ति-भाव अधिक है, दर्शन और धर्म्म में भी इनकी बड़ी रुचि थी। ये विरक्त का-सा जीवन बिताते थे। इनकी रुबाइयाँ बड़ी आकर्षक और प्रभावशालिनी हैं।

महाराज सर किशन प्रसाद—इनके पिता का नाम राजा हरिकृष्ण प्रसाद बहादुर था। १८६४ ई० में इनका जन्म हुआ। ये हैदराबाद के प्रधान मन्त्री थे। इनके दादा महाराज नरेन्द्र प्रसाद हैदराबाद की कौंसिल आव् रीजेन्सी में स्तम्भ स्वरूप थे। यह 'रीजेन्सी-कौंसिल' नवाब

महबूब अली ख़ाँ बहादुर की नाबालिग़ी में क़ायम हुई थी। महाराज चन्दू लाल और ये एक ही परिवार के थे। उर्दू, फ़ारसी, अरबी, तैलगू, मरहटी, अँग्रेज़ी आदि भाषाओं के विद्वान् थे। अरबी, फ़ारसी और उर्दू में बड़ी सुन्दर और स्वाभाविक रचना करते थे। उपनाम 'शाद' था। स्वर्गीय नवाब महबूब अलीख़ाँ के शिष्य थे। 'दबदबए आसफ़िया' और 'महबूबुल कलाम' नामक पत्रों के आनरेरी सम्पादक भी रहे। इनके विचार सूफ़ियाना थे। उर्दू और फ़ारसी में इनके दीवान प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी लिखी चालीस पुस्तकें हैं। कविता आकर्षक, प्रभावशालिनी, सुरुचिपूर्ण, स्वाभाविक और सरस है। इन्होंने फ़ारसी और अरबी कविताओं का उर्दू पद्यानुवाद किया है, जो बड़ा उत्कृष्ट है। कविता में शब्दों की सुन्दरता भी है, और भावगाम्भीर्य भी। इनकी पुस्तकों के नाम—'बज़्मे-ख़याल' (तीन जिल्दों में) 'रुबाइयात शाद', 'फ़रयादे शाद', 'मतलए-ख़ुरशीद' 'ईमाने शाद', 'ख़ुमारे शाद', 'नगमए शाद' 'मसनवी आईनए वजूद' इत्यादि।

देहली और कलकत्ता-कालिज

डाक्टर जान गिलक्रिस्ट—डाक्टर जान गिलक्रिस्ट १७५९ ईसवी में (स्काटलैंड) एडिनबरा में पैदा हुए। पढ़-लिखकर १७८३ ईसवी में ईस्ट इण्डिया कम्पनी में नौकर हो गए। उन्हें 'हिन्दुस्तानी' की उन्नति का बड़ा ध्यान था। ये प्रारंभ से ही अंग-रेज़ी अफ़सरों को 'हिन्दुस्तानी' सिखाने के प्रयत्न में रहे, जिससे

अँगरेज़ों और हिन्दुस्तानियों को परस्पर वार्त्तालाप करने में कुछ कठिनाई न हो। कहते हैं, गिलक्रिस्ट साहब भारतीय वेश में ऐसे स्थानों में बहुत आया-जाया करते थे, जहाँ शुद्ध हिन्दुस्तानी बोली जाती थी। इनकी ऐसी धुन देखकर कंपनी के अन्य अंग्रेज़ अफ़सर भी हिन्दुस्तानी सीखने लगे। डाक्टर साहब के उद्योग का यह परिणाम निकला कि अँगरेज़ों को देशी भाषा सिखाने के लिए सन् १८०० ईसवी में 'फ़ोर्ट विलियम कालेज' की स्थापना हुई। डाक्टर साहब ही उसके अध्यक्ष नियुक्त किए गए, परन्तु अस्वस्थता के कारण वे १८०४ ईसवी में त्यागपत्र देकर स्वदेश चले गए। वहाँ जाकर भी डाक्टर साहब 'हिन्दुस्तानी' के लिए प्रयत्नशील रहे और लंदन में सिविल सर्विस के विद्यार्थियों को प्राइवेट रूप से देशी भाषाओं की शिक्षा देने लगे। १८१८ ईसवी में ये "ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट" में उर्दू के प्रोफ़ेसर नियुक्त किये गए। परन्तु यह इन्स्टीट्यूट थोड़े ही दिनों बाद बन्द हो गया। १८४५ ई० में ८२ वर्ष की आयु में पेरिस में इनका देहान्त हुआ। डाक्टर गिलक्रिस्ट ने हिन्दुस्तानी भाषा से संबंध रखने वाली बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। 'अंगरेज़ी हिन्दुस्तानी डिक्शनरी,' 'हिन्दुस्तानी ग्रामर,' 'हिन्दुस्तानी फ़िलालोजी,' 'ओरिएण्टल लिंग्विस्ट' इत्यादि। डाक्टर साहब के उद्योग से उर्दू की बहुत उन्नति हुई और इन्होंने फ़ोर्ट विलियम कालिज में बहुत-से विद्वानों को आश्रय देकर अनेक ग्रन्थों का संपादन, प्रणयन और अनुवाद कराया। उक्त कालिज की ओर से एक प्रेस भी खोला गया था, जिसमें स्वयं डाक्टर साहब तथा अन्य विद्वानों की लिखी पुस्तकें छपकर प्रकाशित होती थीं। इससे उर्दू को नया जीवन मिला। और १८३२ ईसवी में वह फ़ारसी के स्थान पर सरकारी ज़बान मानली गई। डाक्टर गिलक्रिस्ट को अपने इस उद्देश्य की पूर्त्ति में कप्तान टेलर, डा० हैदर और मि० ब्रेक आदि से भी बहुत सहायता मिली। डाक्टर साहब के समय में फ़ोर्ट विलियम कालिज में जो विद्वान् एकत्र हुए थे उनमें अम्मन, अफ़सोस, हुसेनी, लतीफ़, हैदरी,

जवान, लल्लूलाल, निहालचन्द, इकराम अली, विला, मुहम्मद मुनीर, वशीर अली, मदारी लाल गुजराती आदि मुख्य थे।

मीर अम्मन—मीर अम्मन 'लुत्फ़' देहली के रहने वाले थे। देहली पर आपत्ति आने के कारण पटना गए, फिर वहाँ से कलकत्ता पहुँचे; और वहाँ नवाब दिलावर जंग के अनुज मीर मुहम्मद काज़िम ख़ाँ को पढ़ाने लगे। इसी बीच में उनका परिचय डाक्टर गिलक्रिस्ट से हो गया। इनकी प्रेरणा से उन्होंने फ़ोर्ट विलियम कालिज में रह कर 'क़िस्सा चहार दरवेश' उर्दू में 'बाग़ो-बहार' के नाम से लिखा। 'क़िस्सा चहार दरवेश' फ़ारसी की किताब है, जिसे अमीर ख़ुसरो ने हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया की बीमारी में, उनके दिल बहलाने के लिए लिखा था। मीर अम्मन ने इसी क़िस्से को उर्दू गद्य में लिखा है। इस पुस्तक के अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुके हैं। उर्दू में 'तहसीन' ने भी तरजुमा किया था, परन्तु उसमें अप्रचलित अरबी-फ़ारसी के शब्द अधिक थे। मीर अम्मन का अनुवाद बोल-चाल की सरल उर्दू में है। 'बाग़ो बहार' अँग्रेज़ों में बहुत लोकप्रिय हुआ। यहाँ तक कि वह उनकी परीक्षाओं में सम्मिलित कर लिया गया। इसके अतिरिक्त मीर अम्मन की 'गंजीनये ख़ूबी' नाम की एक और किताब है जो १८०२ ई० में लिखी गई थी। अम्मन कविता भी करते थे। इनका लिखा एक दीवान भी बताया जाता है। अम्मन की भाषा बड़ी बामुहावरे, सरल, सरस और स्वाभाविक है। पाठकों को बलात् अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। 'क़िस्सा चहार दरवेश' में पूर्वीय लोगों के रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार, रहन-सहन आदि का बड़ा सुन्दर और आकर्षक चित्र खींचा है।

'अफ़सोस'—मीर शेरअली देहलवी, 'अफ़सोस' मीर अली मंज़र ख़ाँ के बेटे थे। देहली में पैदा हुए थे। अपने पिता के साथ पटना गए और फिर लखनऊ पहुँचे। वहाँ उनकी प्रतिभा का अच्छा विकास हुआ, कविता भी ख़ूब चमकी। वहीं इनका कर्नल स्काउट से परिचय

हुआ। वे इनकी योग्यता से बहुत प्रभावित हुए और इन्हें २००) मासिक पर कलकत्ता के फ़ोर्ट विलियम कालिज में, भेज दिया। वहाँ 'अफ़सोस' ने कई किताबें लिखीं। इनका 'गुलिस्ताँ' का उर्दू अनुवाद 'बाग़े उर्दू' के नाम से, १८०२ ई० में प्रकाशित हुआ। 'आरायशे महफ़िल' जो एक ऐतिहासिक पुस्तक है प्रकाशित हुई। अफ़सोस ने और भी कई किताबें लिखने में सहायता दी, जिनमें 'नसरे बेनज़ीर', 'मज़हबे इश्क़', 'बहार दानिश' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'कुल्लियाते सौदा' के सम्पादन में भी इनका हाथ रहा। इनका एक दीवान भी है। इनकी मृत्यु १८०६ ई० में हुई।

मीर बहादुर अली हुसैनी—ये फ़ोर्ट विलियम कालिज में मीर मुन्शी थे। इनका विशेष विवरण उपलब्ध नहीं है। इनकी लिखी किताबें—'अख़लाक़ हिन्दी' संस्कृत की प्रसिद्ध पुस्तक 'हितोपदेश' के 'मुफ़र्रहउलक़लूब' नामक फ़ारसी तरजुमे का उर्दू अनुवाद है, जो १८०२ ई० में किया गया था। 'रिसाला गिलक्रिस्ट' अर्थात् गिलक्रिस्ट साहब की ग्रामर का ख़ुलासा। 'तरजुमा तारीख़ आसाम'। इन्होंने 'मसनवी मीरहसन' की कथा सरस और सरल उर्दू गद्य में लिखी है, और भी कई पुस्तकों के लिखने में सहायता दी है।

हैदरबख़्श हैदरी—सैयद हैदरबख़्श हैदरी सैयद अबुलहसन के बेटे थे। दिल्ली में पैदा हुए, परन्तु पीछे अपने पिता के साथ बनारस चले गए, वहाँ पढ़े-लिखे। इन्होंने 'क़िस्सए महरोमाह' नामक एक किताब लिखकर फ़ोर्ट विलियम कालिज भेजी जिसे गिलक्रिस्ट साहब ने बहुत पसन्द किया और उन्हें कालिज की नौकरी के लिए बुला लिया। इन्होंने अधिकतर फ़ारसी किताबों के उर्दू अनुवाद किये हैं। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—'क़िस्सा लैला-मजनूँ'—अमीर ख़ुसरो की फ़ारसी मसनवी का उर्दू अनुवाद। 'तोता कहानी'—सैयद मुहम्मद क़ादरी की फ़ारसी किताब 'तूतीनामा' का उर्दू तरजुमा। 'आरायश महफ़िल' क़िस्सा हातिमताई का अनुवाद। इनके अतिरिक्त

उन्होंने और भी कितनी ही किताबों के अनुवाद किये हैं। इनकी कविताओं का एक दीवान भी है। 'मजमुआ सद हिकायात, नाम की एक किताब और है। १८२३ ई० में इनका देहान्त हुआ।

मिर्ज़ा काज़िमअली 'जवान'—ये देहली के रहनेवाले थे, परन्तु लखनऊ में जा बसे थे। कर्नल स्काउट ने इन्हें १८०० ई० में मुन्शीगिरी के पद पर, फ़ोर्ट विलियम कालिज कलकत्ता भेजा था। इन्होंने महाकवि कालिदास के सुप्रसिद्ध शकुन्तला नाटक का उर्दू अनुवाद किया। इसकी भूमिका में लिखा है कि यह अनुवाद 'शकुन्तला' के एक ब्रजभाषा अनुवाद के आधार पर किया गया है। श्रीलल्लूलालजी ने छपने से पूर्व इस अनुवाद को देखा और १८०२ ई० में यह कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। इनकी लिखी कुछ किताबें—क़ुरान का उर्दू तरजुमा। उर्दू तरजुमा तारीख़ फ़रिश्ता, सिंहासन बत्तीसी (इसके लिखने में श्रीलल्लूलालजी भी सम्मिलित थे।); बारहमासा—(दस्तूर हिन्द) इसमें भारत की भिन्न-भिन्न ऋतुओं, फ़सलों और हिन्दू-मुसलमानों के त्योहारों का वर्णन है। जवान ने मीर और सौदा की चुनी हुई कविताओं के संग्रह भी प्रकाशित किये थे।

निहालचन्द लाहौरी—ये देहली में पैदा हुए थे, परन्तु लाहौर में अधिक रहने के कारण लाहौरी कहलाए। १२१७ हिजरी में कलकत्ता गए और फ़ोर्ट विलियम कालिज में नौकर हो गए। इन्होंने फ़ारसी क़िस्सा 'गुलबकावली' और क़िस्सा 'ताजुलमुलूक' का उर्दू में अनुवाद किया।

मज़हरअली ख़ाँ विला—ये सुलेमानअलीख़ाँ के बेटे थे, दिल्ली में पैदा हुए। मसहफ़ी के शागिर्द थे। ये भी कलकत्ता कालिज में मुन्शी थे। इन्होंने भी अधिकतर अनुवाद का काम किया। इनकी कुछ पुस्तकें—सादी के पंदनामा का उर्दू पद्यानुवाद। 'हफ़्त गुलशन'

का अनुवाद—इसमें नैतिक उपदेशों पर निबन्ध हैं। मूल पुस्तक के लेखक नासिरअलीख़ाँ बिलग्रामी हैं। 'क़िस्सा माधोनल व कामकन्दला'—मोतीराम की लिखी एक व्रजभाषा पुस्तक का उर्दू अनुवाद है। सूरत कवीश्वर की 'बेताल पचीसी' का उर्दू अनुवाद—इसके अनुवाद में श्री लल्लूलालजी ने भी सहायता दी थी। फ़ारसी 'तारीख़ शेरशाही' का उर्दू अनुवाद। एक साढ़े तीन सौ पृष्ठों का दीवान।

हफ़ीज़ुद्दीन अहमद—इन्होंने अबुलफ़ज़ल की फ़ारसी पुस्तक 'अय्यार दानिश' का उर्दू तरजुमा किया। 'अय्यार दानिश' 'अनवार सुहेली' के आधार पर लिखी गई है। अनवार सुहेली की कथा संस्कृत के आधार पर है। इसके अनेक अनुवाद हो चुके हैं।

मौलवी इकरामअली—इन्होंने अरबी की प्रसिद्ध नीति-पुस्तक 'अख़वानुल सफ़ा' के उस भाग का उर्दू अनुवाद किया है, जिसमें पशु-संसार की श्रेष्ठता का वर्णन है। पशुओं ने अपनी उपयोगिता का वर्णन करते हुए, स्रष्टा से अपने ऊपर किये गये मानवीय अत्याचारों की शिकायत की है। इस पुस्तक का अँग्रेज़ी अनुवाद भी हो गया है। मौलवी इकरामअली कलकत्ता कालिज में मुन्शी थे और १८१४ ई० में मुहाफ़िज़ दफ़्तर नियत हो गए थे।

श्री लल्लूलालजी—आगरा (गोकुलपुरा) के निवासी गुजराती ब्राह्मण थे। संस्कृत और हिन्दी के विद्वान् थे। उर्दू भी बहुत अच्छी जानते थे। इन्होंने 'शकुन्तला' 'सिंहासन बत्तीसी' 'बेताल पच्चीसी' 'क़िस्सा माधवानल' आदि के उर्दू अनुवादकों को अच्छी सहायता दी। स्वयम् हिन्दी में अनेक पुस्तकें लिखीं हैं।

बेनीनरायन—इनका उपनाम 'जहाँ' था। इन्होंने 'दीवान जहाँ' नामक पुस्तक लिखी है। इस दीवान में हिन्दुस्तानी शायरों का एक तज़किरा भी सम्मिलित है। 'चार-गुलशन' के नाम से इन्होंने एक

फ़ारसी क़िस्से का उर्दू में अनुवाद किया है। और भी कई अनुवाद किये हैं।

मिर्ज़ा अली लुत्फ़—ये काज़िमबेगख़ाँ के बेटे थे। देहली में रहते थे। फ़ारसी और उर्दू में कविता करते थे। जीविका की खोज में कलकत्ता पहुँचे और फ़ोर्ट विलियम कालिज में नौकर हो गए। यहाँ 'गुलशने हिन्द' नामक प्रसिद्ध तज़्किरा लिखा, जो अब 'तरक़्क़ीए अंजुमन उर्दू' द्वारा बड़ी सुन्दरता से प्रकाशित हुआ है।

मौलवी अमानतुल्ला—इनका उपनाम शैदा था। इन्होंने १८०५ ई० में 'अख़लाक जलाली' का अनुवाद 'जामा अख़लाक' के नाम से किया है। 'हिदायत-उल-इसलाम' नामक पुस्तक अरबी और उर्दू में लिखी, जिसका अँग्रेज़ी अनुवाद स्वयम् गिलक्रिस्ट साहब ने किया है। इनकी 'सर्फ़ उर्दू' नामक एक और पुस्तक प्रसिद्ध है।

अन्य लेखक—इस समय के उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त नीचे लिखे लेखकों के नाम भी उल्लेखनीय हैं—सैय्यद ज़फ़रअली ख़ाँ (लखनऊ), इफ़्तख़ारुद्दीन शुहरत, अब्दुलकरीम ख़ाँ 'करीम' देहली, मिर्ज़ा हाशिमअली 'अयाँ,' मिर्ज़ा क़ासिमअली 'मुमताज़', मीरअब्दुल्ला 'मिसकीन', मिर्ज़ा जान 'तपिश', मौलवी ख़लीलअलीख़ाँ 'अश्क', मिर्ज़ा मुहम्मद फितरत इत्यादि। 'अश्क' ने १८०६ ई० में 'अकबर नामा' का 'वाक़आत अकबर' के नाम से उर्दू अनुवाद किया था। 'तपिश' ने एक किताब उर्दू मुहावरों पर लिखी और १८११ ई० में 'बहार दानिश' नामक एक बड़ी मसनवी की रचना की। मौलाना शाह रफ़ीउद्दीन ने क़ुरान का सबसे पहला उर्दू अनुवाद किया। इनके भाई शाह अब्दुल क़ादिर ने १२३० हिजरी में क़ुरान का दूसरा उर्दू तरजुमा किया, जो बड़ा शुद्ध और सरल है। यह अनुवाद बहुत लोकप्रिय हुआ। इसके पश्चात् तो अन्य अनेक अनुवाद प्रकाशित हुए।

देहली कालिज—उर्दू प्रचार के लिए देहली में देहली कालिज

के नाम से एक संस्था स्थापित थी। इसमें अरबी, फ़ारसी और गणित की शिक्षा दी जाती थी। १८२७ ई० अँगरेज़ी पढ़ाने की भी व्यवस्था हो गई और सैकड़ों विद्यार्थी अँगरेज़ी पढ़ने लगे। रसायन और भौतिक विज्ञान के क्रियात्मक प्रयोग भी दिखाए जाने लगे, जिससे विद्यार्थियों की विज्ञान की ओर रुचि बढ़ी। प्रो० रामचन्द्र इस कालिज में गणित के अध्यापक थे जो पीछे ईसाई हो गए थे। इन्होंने गणित के कितने ही नये सिद्धान्त स्थिर किये जिससे विलायत तक इनकी तारीफ़ हो गई। प्रो० रामचन्द्र की 'तज़किर-उल्-कामिलीन' नामक पुस्तक १८४९ ई० में प्रकाशित हुई थी। इसमें संसार के प्रसिद्ध पुरुषों और मशहूर शायरों के वर्णन हैं। इन्हीं दिनों उन्होंने 'अजायब रोज़गार' और 'उसूले इल्म हय्यत' नाम की पुस्तकें लिखीं। इनकी भाषा सरल और शुद्ध होती थी। दिल्ली कालिज के पढ़े हुओं में नीचे लिखे विद्वानों के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं—

मौलवी नज़ीर अहमद, मास्टर प्यारेलाल 'आशोब,' मौलाना आज़ाद, मौलाना हाली, मौलवी ज़काउल्ला आदि। आगरा के सुप्रसिद्ध डाक्टर मुकुन्दलाल ने भी इसी कालिज में शिक्षा प्राप्त की थी।

दिल्ली कालिज की ओर से विविध विषयों पर उर्दू में कितनी ही पुस्तकें प्रकाशित हुईं। अभिप्राय यह कि इस संस्था ने भी उर्दू-प्रचार के लिए बड़ा काम किया। मौलवी इमाम बख़्श सहबाई दिल्ली कालिज में फ़ारसी और अरबी के प्रोफ़ेसर थे। इन्होंने उर्दू में कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं। ये कविता भी करते थे तथा उर्दू पिंगल के अच्छे ज्ञाता थे। गदर के दिनों में इनका वध हुआ। 'देहली कालिज' का इतिहास भी प्रकाशित हो चुका है, जिसके लेखक मौलवी अब्दुलहक़ साहब हैं। विस्तार के लिए उसी को देखना चाहिए।

साहित्यकारों के संक्षिप्त परिचय

उर्दू की उत्पत्ति और उसके विकास के सम्बन्ध में, पिछले पृष्ठों में संक्षिप्त रूप से विचार किया जा चुका है। वर्त्तमान रूप में आने से पहले उर्दू गद्य अपने कई युगों को देख चुका है। वस्तुतः डाक्टर गिलक्रिस्ट के समय से उर्दू गद्य की उन्नति प्रारम्भ हुई। उस समय जिन विद्वानों ने कार्य किया, उनका अति संक्षेप से उल्लेख किया जा चुका है। उर्दू के सब लेखकों का पूरा परिचय देना इस छोटी-सी पुस्तक में सम्भव नहीं है। फिर भी, नीचे मुख्य-मुख्य लेखकों और साहित्यकारों का परिचय कराया जाता है। उर्दू के उन्नायक और प्राणदाता सर सैयद अहमदख़ाँ के समय में, जिन विद्वानों ने अपनी लेखनी द्वारा साहित्य-सेवा की, उनमें प्रो० आज़ाद, मौलाना हाली, मौलाना नज़ीर अहमद, मौलवी ज़काउल्ला, मौलवी सैयद अहमद, मौलाना शिवली निमानी, डाक्टर मौलवी सैयद विलग्रामी आदि मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त सैयद मुहम्मद मीर लखनवी, शाह मुहम्मद क़ासिम दानापुरी, मुफ़्ती इकराम उल्ला सिद्दीक़ी, हकीम कुतुबुद्दीन 'वातिन' अकबराबादी, नियाज़ अली 'परेशान' अकबराबादी, मौलाना अब्दुल हक़ ख़ैराबादी, मुन्शी देवी प्रसाद बदायूँनी, मौलवी मुहम्मदरज़ा लखनवी, मौलवी मुहम्मद अली तहसीलदार, मुफ़्ती अमीर अहमद 'मीनाई', 'प० गिरिराज किशोर दत्त आदि ने भी उर्दू की अच्छी सेवा की। पहले पहल उर्दू में धार्मिक साहित्य भी ख़ूब लिखा गया। इसलाम सम्बन्धी अनेक किताबों की रचना हुई। इस प्रकार के लेखकों में मौलाना अबुल-कलाम आज़ाद, मौलवी अशरफ़ अली साहब 'थानवी', शम्सुल उलमा मौलवी अब्दुल हक़ 'हक़ानी' देहलवी, मौलवी अब्दुल इलाही फ़ारुक़ी, अलामा अब्दुल्ला यूसुफ़अली, मौलवी फ़तह मुहम्मद ख़ाँ जालन्धरी,

मौलाना शाह वलीउल्ला, मौलाना शाह अब्दुल अज़ीज़, मौलाना शाह रफ़ीउद्दीन, मौलाना शाह अब्दुल क़ादिर आदि प्रसिद्ध हैं। मौलवी सैयद अम्मार अली, मौलवी सैयद मक़बूल अहमद आदि ने भी धार्मिक साहित्य-वृद्धि में अच्छी सहायता दी। उर्दू में इसलाम धर्म सम्बन्धी साहित्य ही नहीं लिखा गया, और भी अनेक धर्मों पर सैकड़ों किताबों की रचना हुई है। हिन्दू धर्म के प्रसिद्ध ग्रन्थ श्रीमद्भागवत का उर्दू अनुवाद मुन्शी रघुवरदयालु ने किया। वाल्मीकि रामायण, महाभारत (पद्यानुवाद), भक्तमाल, योगवाशिष्ठ, श्रीमद्भगवद्गीता, देवी भागवत आदि के उर्दू अनुवाद क्रमशः मुन्शी परमेश्वरदयालु, मुन्शी तोताराम 'शायाँ,' मुन्शी तुलसीराम, मौलाना अबुल हसन, पं० प्रभुदयालु मिश्र, पं० प्यारेलाल आदि के द्वारा हो चुके हैं। महाभारत (गद्यानुवाद), एवं आत्मपुराण, मनुस्मृति आदि पुस्तकों के अनुवाद भी उर्दू में मौजूद हैं। रामायण का मुसद्दसों में अनुवाद मुन्शी रामजीमल ने किया है। मुन्शी सूरजनरायन 'महर', बाबू शिवव्रत लाल वर्मन आदि के किये हुए उपनिषदों के अनुवाद प्रसिद्ध हैं। नीचे कतिपय उन विद्वान् लेखकों का परिचय दिया जाता है, जिन्होंने उर्दू में समालोचना, जीवनियाँ, दर्शन, विज्ञान, शिक्षा, व्याकरण, कोष, नागरिक शास्त्र, यात्रा-वर्णन आदि विषयों पर ग्रन्थ या निबन्ध लिखे हैं।

सर सैयद अहमद ख़ाँ—सैयद साहब का जन्म १७ अक्टूबर १८१७ ई० को देहली के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। इनके पूर्वज शाहजहाँ के समय में अरब से हिन्दुस्तान आकर ऊँचे-ऊँचे पदों पर नियुक्त हुए थे। सैयद साहब के पिता सैयद मुहम्मद तकी ख़ाँ बड़े त्यागी, सन्तोषी और धार्मिक पुरुष थे। इन्होंने कोई भी ऊँचा ओहदा लेने से इन्कार कर दिया था। सर सैयद की माता भी बड़ी बुद्धिमती और कुशल स्त्री थीं। उन्होंने अपने पुत्र को अरबी, फ़ारसी और उर्दू की शिक्षा दी। मिर्ज़ा ग़ालिब और सैयद साहब में बड़ी

घनिष्ठता थी। ये उन्हें चचा कहते थे। १८३८ ई० में सैयद साहब देहली में सरिश्तेदार नियुक्त हुए, फिर कुछ दिनों बाद आगरा कमिश्नरी में, नायब मीर मुन्शी हुए। तदनन्तर १८४१ ई० में मुन्सिफ़ी की परीक्षा पास कर मैनपुरी में मुन्सिफ़ हो गए, और १८५४ ई० तक वहीं रहे। इन्हीं दिनों सैयद साहब ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'आसारुल सनादेद' लिखी। इसमें दिल्ली के प्रसिद्ध स्थानों, प्रतिष्ठित पुरुषों, कवियों, लेखकों आदि का वर्णन है। इस पुस्तक का अँगरेज़ी और फ्रेंच अनुवाद हुआ है। इस समय सैयद साहब ने 'जलालुल कुलब' नामक इसलाम धर्म सम्बन्धी एक और पुस्तक लिखी। इन्होंने अपनी 'सिलसिल मूलूक हिन्द' नामक पुस्तक में राजा युधिष्ठिर से लेकर दिल्ली के अन्तिम बादशाह तक का संक्षिप्त वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त सैयद साहब ने और भी कितनी ही धार्मिक पुस्तकें लिखीं तथा कई के अनुवाद भी किये। १८५५ ई० में इनका तबादला बिजनौर को हो गया, वहाँ इन्होंने उर्दू में बिजनौर का इतिहास लिखा। इन्हीं दिनों 'वफ़ादार मुसलमान' नामक पुस्तक भी लिखी। बिजनौर से सैयद साहब की बदली मुरादाबाद को हुई। वहाँ १८५६ ई० में 'असबाबे बग़ावत हिन्द' नाम का रिसाला प्रकाशित किया। मुरादाबाद से बदलकर ये ग़ाज़ीपुर गए। ग़ाज़ीपुर में इन्होंने 'साइंटिफ़िक सोसाइटी' (विज्ञान-समिति) की स्थापना की। इस सोसाइटी का मुख्य उद्देश्य अँगरेज़ी पुस्तकों का उर्दू अनुवाद करना-कराना था। सोसाइटी द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ तैयार कराए गए। इस संस्था के संरक्षक भारतसचिव और उपसंरक्षक बंगाल तथा पंजाब के लाट महोदय थे। सोसाइटी के सदस्यों में देश के बड़े-बड़े लोग सम्मिलित थे। १८६४ ई० में सैयद साहब अलीगढ़ आए तो इनके साथ उपर्युक्त सोसाइटी का कार्यालय भी वहाँ आगया। सैयद साहब ने मुरादाबाद और ग़ाज़ीपुर में अंग्रेज़ी का एक स्कूल भी स्थापित किया था। वे अँग्रेज़ी शासन और अंग्रेज़ी भाषा के बड़े भक्त थे। इन विषयों पर व्याख्यान देते और लेख लिखते थे। १८६६ ई० में इन्होंने

'ब्रिटिश इण्डियन एसोसिएशन' नामक सभा की स्थापना की, और साइण्टिफ़िक सोसाइटी की ओर से 'अलीगढ़ इन्स्टीट्यूट गज़ट' निकाला। १८६७ ई० में, सैयद साहब की बदली बनारस को हो गई और १८६९ ई० में वे अपने पुत्र मिस्टर महमूद के साथ विलायत गए। विलायत में इन्होंने वहाँ के आचार-विचार, रहन-सहन, शिक्षा-पद्धति आदि का बड़ी गहराई से अध्ययन किया। १८६८ ई० में इन्हें 'सी० एस० आई०' की उपाधि मिली। १८७० ई० में ये विलायत से हिन्दुस्तान वापस आगए और २४ मई १८७५ ई० को, अलीगढ़ में, 'मुहमडन कालिज' की आधार-शिला रक्खी। इसी समय 'तहज़ीबुल अख़लाक' नामक पत्र भी प्रकाशित किया।

सर सैयद के उद्योग से हिन्दुस्तान के मुसलमानों की विचार-धारा में एकदम परिवर्त्तन हो गया वे पश्चिमी शिक्षा की ओर प्रवृत्त हुए। उनके पुराने वहमों तथा मिथ्या विश्वासों में शिथिलता आने लगी और वे शिक्षा की नवीन ज्योति की ओर झुके। इसी समय सैयद साहब ने क़ुरान का भाष्य भी किया, 'जिसके केवल छह खण्ड प्रकाशित हो सके। इस भाष्य में क़ुरान और बायबिल का समन्वय करने की चेष्टा की गई है। सैयद साहब का यह प्रयत्न पुराने ढर्रे के मुसलमानों को पसन्द नहीं आया, अतः वे उनके विरोधी बनकर न जाने क्या-क्या कहने लगे। परन्तु सैयद साहब ने अपनी लगन के आगे किसी की परवा न की। १८७८ ई० में इन्होंने सरकारी सेवा से अवकाश ग्रहण कर, शेष आयु शिक्षा-प्रसार और राजनीति में व्यतीत की। २४ मार्च १८९८ ई० को इनका देहान्त हुआ, और कालिज की मस्जिद के समीप ही इनकी क़ब्र बनाई गई।

सैयद साहब की लेखन-शैली सुस्पष्ट, सरल, स्वाभाविक और ओजस्विनी है। वे अपने लेखों में भावों को जितनी प्रधानता देते हैं, उतनी व्याकरण के जकड़बन्दों को नहीं। उन्होंने बड़े-बड़े गम्भीर विचार बड़ी सरल और स्वाभाविक भाषा में व्यक्त किए हैं। यही

उनकी शैली की विशेषता है। सैयद साहब के समकालीन लेखक और कवियों में भी उनकी-सी ही कार्यशक्ति, विचार-धारा और भावना थी। इन लेखकों में नवाब मुहसनुल मुल्क, नवाब वक़ारुल मुल्क, मौलवी चिराग़ अली, मौलवी ज़काउल्ला, ख़्वाजा अल्ताफ़ हुसैन हाली, प्रो० मुहम्मद हुसेन आज़ाद, मौलना शिवली निमानी आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन सब विद्वानों ने एक दिल होकर मुसलमानों की उन्नति और उर्दू के प्रचार तथा सुधार के लिए बड़े उत्साह से पूर्ण प्रयत्न किया। सैयद साहब इस आन्दोलन के सूत्र-संचालक थे, और इन्हीं की भावना सब साथियों में जागरूक रहती थी। वर्त्तमान काल में उर्दू गद्य और पद्य में जो जीवन दिखाई देता है, उसका मूल कारण सैयद साहब ही थे। सैयद साहब की लिखी अथवा उनसे सम्बन्ध रखने वाली कुछ पुस्तकों के नाम—

'तफ़सीरुल .क़ुरान'—.क़ुरान का भाष्य। '.ख़ुतबात अहमदिया' यह वह पुस्तक है जो सर विलियम म्योर की 'लाइफ़ आव् मुहम्मद' के जवाब में लिखी गई है। 'तहज़ीबुल अख़लाक़'—सैयद साहब के महत्त्वपूर्ण निबन्धों का संग्रह। 'ख़तूत सर सैयद'—इसमें सैयद साहब की वे चिट्ठियाँ संगृहीत हैं, जो उन्होंने समय-समय पर 'हाली', 'आज़ाद', 'मुहसनुल मुल्क', 'वक़ारुल मुल्क' आदि को लिखी थीं। इस पुस्तक का सम्पादन सर रास मसऊद ने किया है। 'इन्तख़ाब मज़ामीन'—इसमें सैयद साहब के चुने हुए कुछ लेखों का संग्रह है। सैयद साहब के भाषणों और व्याख्यानों का भी संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इनकी लिखी इसलाम सम्बन्धी और भी अनेक किताबें हैं।

महाकवि ग़ालिब—महाकवि होने के अतिरिक्त ये गद्यकार भी बड़े ऊँचे दर्जे के थे। इनका परिचय कवियों में दिया गया है। ग़ालिब फ़ारसी और उर्दू दोनों में सुन्दर गद्य लिखते थे। इनकी चिट्ठियाँ साहित्य की विभूति हैं। उन्होंने पुस्तकों की आलोचनाएँ और भूमिकाएँ भी बड़े सुन्दर ढंग से लिखी हैं। 'लतायफ़ ग़ैबी', 'तेग़ तेज़'

और 'नामए ग़ालिब' ये तीन छोटी पुस्तकें भी ग़ालिब ने लिखी हैं। परन्तु ग़ालिब की सुन्दर गद्य-शैली का परिचय उनकी लिखी चिट्ठियों, भूमिकाओं और आलोचनाओं से प्राप्त होता है। इन सब में ग़ालिब की जादू बयानी का विशेष रूप से आभास मिलता है। १८५० ई० तक मिर्ज़ा ग़ालिब फ़ारसी में ही ख़त लिखते थे, फिर उर्दू में भी लिखने लगे। इनके आगे भावों का समुद्र सदैव हिलोर लेता रहता था। लिखने के लिए उन्हें कुछ सोचना न पड़ता था। उनकी साधारण-सी चिट्ठियों में भी साहित्य की सुन्दर छटा दिखाई देती है। प्रत्येक वाक्य में चमत्कार और कुछ न कुछ विशेषता है। ग़ालिब के ख़त पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है, मानो वे पास बैठे बात-चीत कर रहे हैं। उन्होंने अपनी चिट्ठियों में, आडम्बरपूर्ण व्यर्थ बातें नहीं लिखीं। पत्र में संक्षिप्त और साधारण सम्बोधन के पश्चात् ही वे अपना प्रयोजन प्रारम्भ कर देते थे। कभी-कभी वे अपनी चिट्ठियाँ 'प्रश्नोत्तर'-रूप में भी लिखते थे। चिट्ठियों में कहीं-कहीं विशुद्ध और उत्कृष्ट हास्य का पुट भी मिलता है। ग़ालिब की कितनी ही चिट्ठियों में, उनकी जीवन-सम्बन्धिनी घटनाओं का भी उल्लेख है, जिससे उनके निजी और साहित्यिक जीवन पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। उर्दू गद्य की शुष्कता दूर कर उसे सरसता के क्षेत्र में लाने वाले ग़ालिब ही हैं। ग़ालिब ने कुछ पुस्तकों की आलोचनाएँ करने में, पुराने ढंग का भी अनुसरण किया है, क्योंकि उस समय इसी प्रकार की शैली का अधिक प्रचार था। ग़ालिब की समीचीन और सरल-स्वाभाविक शैली, उनके अनेक समकालीन विद्वानों को रुचिकर न हुई, परन्तु पीछे इसी शैली का सबसे अधिक प्रचार और आदर हुआ। मिर्ज़ा ग़ालिब के ख़तों में से कुछ पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं, इनसे उनकी पत्र-लेखन-शैली का कुछ आभास मिल सकेगा। ये चिट्ठियाँ उन्होंने अपने शिष्यों, मित्रों, भक्तों और संरक्षकों (नवाब रामपुर आदि) को लिखी थीं।

पीर मुर्शिद, बारह बजे थे, मैं नंगा अपने पलँग पर लेटा हुआ हुक्का पी रहा था कि आदमी ने आकर ख़त दिया। मैंने खोला,

हुए, मगर कहे बग़ैर नहीं बनती—दो सौ पचास की हुण्डी उस ख़त में मलफ़ूफ़ अता हुआ करती थी। यह रस्म बुरी नहीं है, अगर जारी रहे तो बहतर है………।

× × ×

हुज़ूर मुल्को माल जिसको जिस क़दर चाहें अता कर सकते हैं। मैं आपसे सिर्फ़ राहत माँगता हूँ और राहत मुनहसिर इसमें है कि क़र्ज़ बाक़ी माँदा अदा हो जावे और आइन्दा क़र्ज़ लेने की हाजत न पड़े……।

× × ×

………मुहम्मद अली बेग उधर निकला। भई मुहम्मद अली बेग, लुहारू की सवारियाँ रवाना हो गईं ? हज़रत, अभी नहीं। क्या आज न जायँगी ? आज ज़रूर जायँगी, तैयारी हो रही है………।

× × ×

कहो साहब, "आज इजाज़त है, मीर महदी को ख़त का जवाब लिखने की ?" हुज़ूर, "मैं क्या मना करता हूँ, मगर मैं अपने हर ख़त में आपकी तरफ़ से दुआ लिख देता हूँ, फिर आप क्यों तकलीफ़ करें।" "नहीं, मीरन साहब, उसके ख़त को आये बहुत दिन हुए हैं, वह ख़फ़ा होगा। जवाब लिखना ज़रूर है।" हज़रत, "वह आपके फ़रज़न्द हैं, आपसे ख़फ़ा क्या होंगे।" भाई, "आख़िर कोई वजह तो बतलाओ कि तुम मुझे ख़त लिखने से क्यों बाज़ रखते हो।" "सुबहान अल्ला ! ये लो, हज़रत आप तो ख़त नहीं लिखते, और मुझे फ़रमाते हैं, कि तू बाज़ रखता है।" "अच्छा, तुम बाज़ नहीं रखते, मगर यह कहो कि तुम क्यों नहीं चाहते कि मैं मीर महदी को ख़त लिखूँ।" क्या अर्ज़ करूँ ? सच तो यह है कि जब आपका ख़त जाता और वह पढ़ा जाता तो मैं सुनता और हज़ उठाता………।

प्रो० आज़ाद—प्रो० मुहम्मद हुसैन आज़ाद का परिचय उर्दू

शायरों में कराया गया है। ये पद्य की अपेक्षा गद्य को अधिक महत्त्व देते थे। इसीलिए इनका गद्य-लेखकों में बहुत ऊँचा पद माना गया है। इनकी लिखी "आबे हयात" नामक पुस्तक बहुत प्रसिद्ध है। इसमें इन्होंने प्रसिद्ध कवियों की संक्षिप्त जीवनियों के साथ उनकी कविताओं के उदाहरण भी दिये हैं। "आबेहयात" में, उर्दू के इतिहास और उसमें समय-समय पर होने वाले परिवर्तनों का भी उल्लेख है। यह अपने ढंग की निराली पुस्तक है। इसकी शैली क्रमबद्ध और मर्यादा के अन्तर्गत है। भाषा बड़ी आकर्षक, सरस और हृदय-हारिणी है। पढ़ते-पढ़ते पाठक की तबियत नहीं भरती। उर्दू में आलोचना-पद्धति का श्रीगणेश इसी पुस्तक से होता है।

प्रो० आज़ाद ने और भी अनेक पुस्तकें लिखी हैं, इनकी रीडरों की धूम है। एक किताब में इन्होंने हिन्दुस्तान की मुख्य-मुख्य घटनाओं का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। इनकी लिखी एक पुस्तक "नैरंगे ख़याल" भी है। इसमें कल्पित कथाओं के आधार पर बड़ी अच्छी नैतिक शिक्षा दी गई है। यह पुस्तक १८८० ई० में लिखी गई थी। लेखन-शैली आकर्षक और प्रभावशालिनी है। "सुख़नदाने फ़ारसी" भी प्रो० आज़ाद की प्रसिद्ध पुस्तक है। इसमें फ़ारसी साहित्य और ईरानी लोगों के रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार आदि का वर्णन है। "क़न्द पारसी" और "नसीहत का करनफूल" भी अच्छी किताबें हैं। "क़न्द पारसी" में प्रो० आज़ाद की ईरान-यात्रा का वर्णन है। "नसीहत का करनफूल" स्त्रियों और बालकों के लिए है। दोनों पुस्तकों की भाषा सुस्पष्ट और सरल है।

प्रो० आज़ाद ने अपने उस्ताद ज़ौक की कविताओं को प्रकाशित कराने के लिए जो महान प्रयत्न और परिश्रम किया है, उसके लिए उर्दू संसार सदैव उनका ऋणी रहेगा। सच तो यह है कि यदि "आज़ाद" इस कार्य में इतना उद्योग न करते तो आज "ज़ौक़" की शायरी संसार के सामने न होती। आज़ाद की "दरबारे अकबरी" नामक पुस्तक भी बहुत प्रसिद्ध है। इसमें अकबर के शासन का सुन्दर

वर्णन है। अन्तिम समय में प्रोफ़ेसर साहब का मस्तिष्क कुछ विकृत-सा हो गया था। इस अवस्था में भी जब कभी उनकी तबियत ठीक होती थी, तो वे साहित्य-सेवा ही करते थे। इस समय इन्होंने "जान-वरिस्तान' नामक पुस्तक लिखी थी। इसमें विविध जीव-जन्तुओं का वर्णन है। आज़ाद के मरने के बाद उनकी "निगारिस्तान" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई है, जिसमें ईरान के फ़ारसी कवियों का वर्णन है।

प्रो० आज़ाद नवीन शैली के प्रवर्त्तक थे। इन्होंने उर्दू को नया रूप दिया, उसे कृत्रिमता की संकुचित गली से निकाल कर, स्वाभाविकता और सरसता के सुविस्तीर्ण क्षेत्र में खड़ा किया। वे समालोचक भी बड़े उत्कृष्ट थे। उर्दू में आलोचना का मार्ग उन्होंने ही दिखलाया। इनकी भाषा में उर्दू और फ़ारसी के अप्रचलित या क्लिष्ट शब्दों तथा बेढंगे महावरों को स्थान नहीं दिया गया। प्रो० आज़ाद की कृतियाँ उनके जीवन में ही लोकप्रिय हो गई थीं। बड़े-बड़े विद्वानों ने मुक्तकंठ से उनकी सराहना की थी। 'हाली', 'शिबली', 'ज़काउल्लाख़ाँ,' सर सैयद आदि इनके बड़े प्रशंसक थे।

मौ० हाली—मौलाना अलताफ़ हुसेन 'हाली' का परिचय कवियों में कराया गया है। ये महाकवि तो थे ही, साथ ही गद्यकार भी ऊँचे दरजे के थे। इनकी लेखन-शैली बड़ी प्रभावशालिनी और आकर्षक है। उसमें बनावट को स्थान नहीं दिया गया। स्वाभाविकता और सरसता शैली की विशेषताएं हैं। इनकी कुछ पुस्तकों का परिचय नीचे दिया जाता है। 'तिरयाक—मसमूम' यह पुस्तक इसलाम धर्म से सम्बन्ध रखती है। 'तबक़ातुल अरज़'—यह एक अरबी किताब का अनुवाद है। 'मजलिसुल निसाय'—स्त्री-शिक्षा सम्बन्धी पुस्तक है। 'हयाते सादी'—यह शेख़ सादी की जीवनी है। इस पुस्तक से हाली की ख़ूब ख्याति हुई थी। 'मुक़दमा शेरो शायरी'—कविता के आदर्श पर बड़ा ही विद्वत्ता-पूर्ण विवेचनात्मक निबन्ध है। इसमें पुरानी शैली

के शायरों के लिए, आधुनिक शैली और उच्च आदर्श की ओर संकेत किया गया है।

'यादगारे ग़ालिब'—यह मिर्ज़ा ग़ालिब की जीवनी है। इसमें उनकी कविता की भी मार्मिक आलोचना की गई है। आवश्यकता होने पर कविताओं का स्पष्टीकरण भी किया है। कितनी ही घटनाएं तो ऐसी वर्णन की गई हैं, जिन्हें मौ० हाली ने स्वयम् देखा था। इस महत्त्वपूर्ण जीवनी को लिखकर, मौलाना ने अपने गुरु मिर्जा ग़ालिब का ऋण उतारने की चेष्टा की है। इस पुस्तक की ख़ूब तारीफ़ हुई, और साहित्य-संसार ने उसे बड़े आदर से अपनाया। 'हयाते जावेद' सर सैयद अहमद ख़ाँ की जीवनी है। इस पुस्तक ने सैयद साहब और हाली दोनों को अमर कर दिया। 'मज़ामीन हाली'—इसमें मौ० हाली के उन लेखों का संग्रह है, जो उन्होंने समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में लिखे थे। निःसंदेह हाली आधुनिक उर्दू के निर्माताओं में से हैं, उन्होंने उर्दू साहित्य की ऐसी अमूल्य सेवा की है, जिसके कारण वह सदैव उनका ऋणी रहेगा।

मौ० नज़ीर अहमद—मौ० हाफ़िज़ नज़ीर अहमद १८३१ ई० में, नगीना (बिजनौर) में पैदा हुए। ये मौ० सआदत अली के बेटे थे। साधारण शिक्षा घर पर प्राप्त की, फिर देहली आकर 'देहली कालिज' में दाख़िल हो गए। अरबी, गणित, दर्शन आदि विषयों का अध्ययन किया। 'हाली' 'आज़ाद' ज़काउल्ला, प्यारेलाल 'आशोब', करीमुद्दीन आदि इनके सहपाठी थे। मौलाना ने प्रारम्भ में पंजाब के किसी साधारण मदरसे की मामूली मुदर्रिसी की, फिर कानपुर में शिक्षा-विभाग के डिपुटी इन्सपेक्टर हो गए। वहाँ से इनकी बदली इलाहाबाद को हुई। वहाँ इन्होंने अँग्रेज़ी सीखी और 'इंडियन पीनल कोड' का उर्दू अनुवाद 'मजमूआ ताज़ीरात हिन्द' के नाम से किया। यह अनुवाद बहुत पसन्द किया गया। इससे इनकी ख़ूब ख्याति हुई। इसी समय ये मदरसों के डिपुटी से जिले के डिपुटी

कलक्टर और हाकिम बन्दोबस्त बना दिए गए। इस समय इन्होंने एक ज्योतिष सम्बन्धी पुस्तक का भी उर्दू अनुवाद किया।

धीरे-धीरे मौलाना की प्रशंसा हैदराबाद तक पहुँची, और सर सालार जंग ने इन्हें वहाँ बुलाकर, आठ सौ रुपए मासिक पर, एक बड़े पद पर नियुक्त किया। फिर तरक्की करते-करते वे १७००) मासिक पर मेम्बर माल हो गए। इस पद पर बड़ी सफलता से निज़ाम सरकार की सेवा कर इन्होंने अवकाश ग्रहण किया। ३ मई १९१२ ई० को देहली में इनका देहान्त हुआ। मौलाना नज़ीर अहमद ने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। कुछ उपन्यास के ढँग की पुस्तकें हैं। कुछ अनुवाद हैं। इसलाम धर्म से सम्बन्ध रखने वाली भी कितनी ही किताबें लिखी हैं। इनका किया .कुरान का अनुवाद बहुत लोकप्रिय और प्रसिद्ध है। इसकी भाषा सरल, सुस्पष्ट और आधुनिक ढंग की है। विद्यार्थियों के लिए भी इन्होंने कई किताबें लिखीं जो बहुत उपयोगी सिद्ध हुईं। ये बड़ी शीघ्रता सेलिखते और बहुत अच्छा लिखते थे। इन्होंने 'एवीडेन्स एक्ट' (क़ानून शहादत) का भी बड़ा अच्छा अनुवाद किया है। इनका 'अफ़सानए ग़दर' एक अँग्रेज़ी किताब का तर्जुमा है। इन्होंने 'मुराह-उल-अरूस' नामक एक सामाजिक उपन्यास भी लिखा है। इसे स्त्रियाँ बड़ी रुचि से पढ़ती हैं। भाषा बड़ी सरस और सरल है। स्त्रियों की बोली लिखने में मौलाना ने कमाल किया है। 'नवातुल नाश' नामक पुस्तक में भी स्त्री शिक्षा सम्बन्धी बातें हैं। इनके लिखे और भी कई शिक्षाप्रद उपन्यास हैं। एक पुस्तक में इन्होंने विधवाओं की दुर्दशा का करुण चित्र अंकित कर विधवा-विवाह का बड़े बलपूर्वक समर्थन किया है। इनकी लिखी धार्मिक पुस्तकों की तो बहुत बड़ी संख्या है।

मौलाना नज़ीर अहमद व्याख्याता भी बड़े अच्छे थे। अपने भाषण से श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध-सा कर देते थे। इनके व्याख्यानों का संग्रह भी प्रकाशित हो गया है। ये कविता भी करते थे। कविताओं का संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। परन्तु इस दिशा में

उनकी विशेष ख्याति नहीं हुई। सर सैयद अहमद ख़ाँ से इनकी घनिष्ठ मित्रता थी। इन्होंने अलीगढ़ कालिज की सेवा बड़ी तन्मयता से की। १८९८ ई० में मौलाना को 'शम्सुल उलमा' और 'ख़ान बहादुर' के ख़िताब मिले। एडिनबरा यूनिवर्सिटी ने डी० ओ० एल० (Doctor of Oriental Languages) की आनरेरी डिग्री दी।

मौलाना की लेखन-शैली सरल और सुस्पष्ट है। कहीं-कहीं ये अरबी और फ़ारसी के कठिन और अप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी कर गए हैं, जिससे भाषा में अस्वाभाविकता आगई है। इनकी रचनाओं में हास्य का बड़ा सुन्दर, शिष्ट और सूक्ष्म पुट पाया जाता है। अपने जीवन में ये बहुत विख्यात हुए।

मौ० ज़काउल्ला ख़ाँ—मौ० मुहम्मद ज़काउल्लाख़ाँ १८३२ ई० में, देहली में पैदा हुए। ये हाफ़िज़ सनाउल्लाख़ाँ के बेटे थे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई, फ़िर 'देहली कालिज' में पढ़े। मौलवी नज़ीर अहमद और प्रो० आज़ाद इनके सहपाठी थे। इन तीनों की जन्म-भर मित्रता रही। पढ़ाई समाप्त कर मौ० ज़का-उल्ला 'देहली कालिज' में ही गणित के अध्यापक हो गये, फिर आगरा कालिज में फ़ारसी और उर्दू के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए। आठ-दस साल अध्यापन-कार्य करने के पश्चात् ये १८५५ ई० में मदरसों के डिपुटी इन्सपेक्टर हुए, फिर १८६९ ई० में देहली नारमल स्कूल के हेडमास्टर बनाए गये। १८७२ ई० में ये म्योर सेण्ट्रल कालिज इलाहाबाद में अरबी-फ़ारसी के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए। नौकरी से अवकाश ग्रहण कर, लगभग पच्चीस वर्षों तक पेन्शन ली। १९१० ई० में इनका देहान्त हुआ।

मौलवी ज़काउल्ला ने बहुत-सी पुस्तकें रची हैं। गणित, इतिहास, भूगोल, साहित्य, सदाचार, विज्ञान, रसायन, राजनीति आदि विषयों पर इन्होंने कुछ न कुछ लिखा है। इनकी प्रकाशित और

अप्रकाशित पुस्तकों की संख्या डेढ़ सौ से कम नहीं है। अधिकतर किताबें शिक्षा-विभाग सम्बन्धी हैं, अतएव वे सरल और सुबोध भाषा में लिखी गई हैं। उनमें अलङ्कार या भाषा सम्बन्धिनी छटा दिखाई नहीं देती। मौलवी साहब के मुख्य विषय गणित और इतिहास थे। ये अनुवाद भी बड़ी सफलता से करते थे। इन्होंने भारतवर्ष का इतिहास दश खण्डों में लिखा है, जो बहुत प्रसिद्ध है। इनकी लिखी 'मुहिमात अज़ीम' नामक पुस्तक में उन बड़ी लड़ाइयों का वर्णन है, जो महरानी विक्टोरिया के शासन में हुई थीं। मौलवी साहब ने एक किताब और लिखी है, जिसमें उक्त महारानी के शासन का विस्तृत वर्णन है। मौ० समीउल्लाख़ाँ की जीवनी भी इन्होंने लिखी है। अपने अन्तिम समय में, मौलाना इसलाम धर्म का इतिहास लिख रहे थे। वे पत्र-पत्रिकाओं में नियमित रूप से लिखते रहते थे। सरकार ने इनकी विद्वत्ता और योग्यता के कारण, इन्हें 'ख़ान-बहादुर' और 'शम्सुल उलमा' की उपाधियाँ प्रदान की थीं। मौलवी ज़काउल्ला ख़ाँ सर सैयद के घनिष्ठ मित्र थे, और उनके शिक्षा सम्बन्धी कार्यों में यथेष्ट सहायता देते थे।

मौ० सैयद अहमद—ये १८४६ ई० में, देहली में पैदा हुए। हाफ़िज़ सैयद अब्दुल रहमान के बेटे थे। इन्हें बचपन से ही साहित्य-सेवा की लगन थी। इन्होंने अपनी विद्यार्थि अवस्था में ही 'नज़्म तिफ़्ली नामा' तथा और भी कई किताबें लिखी थीं। शिक्षा-विभाग के इन्सपेक्टर फ़ैलन साहब को 'फ़ैलन डिक्शनरी' लिखने में इन्होंने अच्छी सहायता दी। उनके साथ सात साल तक काम किया। अलवर-नरेश का 'सफ़रनामा' सम्पादित किया। पंजाब के सरकारी बुक डिपो में सहायक अनुवादक भी रहे। मौलवी साहब की लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'तकमील-उल-कलाम'—इस में पेशेवरों की परिभाषाएँ हैं। 'तहक़ीक़-उल-कलाम'—इस में हिन्दी दोहे, पहेलियाँ और गीत हैं। 'रीत बखान'—इस में हिन्दू लोगों के रीति-रिवाजों

का वर्णन है। 'नारी-कथा'—यह हिन्दू स्त्रियों की बोली में लिखी गई है। इसके अतिरिक्त इन्होंने स्त्री-उपयोगी और भी कुछ पुस्तकें लिखी हैं, जिन्हें पढ़कर स्त्रियों को गृहस्थ के काम-काज और बालकों के लालन-पोषण की अच्छी शिक्षा मिल सकती है। मौलवी साहब का सबसे प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'फ़रहंगे आसिफ़िया' है। उर्दू कोषों में इसका बहुत ऊँचा स्थान है। यह कोष बड़े परिश्रम से सुदीर्घ काल में समाप्त हुआ था। इसके प्रकाशन में निज़ाम सरकार ने पूरी सहायता दी और लेखक को आजन्म पचास रुपए मासिक वृत्ति प्रदान की थी।

मौलाना शिबली निमानी—मौलाना मुहम्मद शिबली निमानी १८५७ ई० में बन्दौल (आज़मगढ़ ज़िले) में पैदा हुए। ये शेख़ हबीबुल्ला वकील के बेटे थे। प्रारम्भ में इन्होंने अरबी-फ़ारसी की शिक्षा आज़मगढ़ में पाई, फिर रामपुर, लाहौर, सहारनपुर आदि में रहकर प्रसिद्ध विद्वानों से अरबी पढ़ी और इसलाम धर्म के गहन ग्रन्थों का अध्ययन किया। १९ वर्ष की आयु में ये हज गये। हज से आज़मगढ़ आये और अपना अध्ययन निरन्तर जारी रखा। ये पुस्तक-विक्रेताओं की दूकान पर बैठ जाते और रोज़ कई किताबें समाप्त कर उठते थे। इन्होंने वकालत भी पास की थी और कुछ दिनों सरकारी नौकर भी रहे थे। इनका सारा जीवन धर्म और साहित्य-सेवा में ही व्यतीत हुआ। पुस्तकें लिखने का काम इन्होंने बहुत ही थोड़ी आयु में प्रारम्भ कर दिया था।

१८८२ ई० में ये अलीगढ़ कालिज में, फ़ारसी के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए। सर सैयद की इन पर बड़ी कृपा रहती थी। कालिज में उन्हें सत्संग और स्वाध्याय का अवसर भी ख़ूब मिला। मौलाना हाली आदि इनके मित्र बन गये और सैयद साहब के विशाल पुस्तकालय से इन्होंने बड़ा लाभ उठाया। यहाँ प्रो० अरनल्ड से भी मौलाना शिबली की मुलाक़ात हुई। मौलाना ने प्रो० साहब को अरबी

पढ़ाई और स्वयम् उनसे फ्रेंच पढ़ी। इन दोनों विद्वानों में ख़ूब विचार-विनिमय होता रहता था। इन्हीं दिनों, १८८४ ई० में, मौलाना ने "सुबह उम्मेद" नामक मसनवी लिखी, जिस में इसलाम का गत गौरव दिखाकर मुसलमानों की वर्तमान स्थिति का दिग्दर्शन कराया और उन्हें ऊँचा उठने के लिए प्रोत्साहन दिया। इस पुस्तक की ख़ूब धूम रही। दूसरी किताब इन्होंने "मुसलमानों की गुज़िश्ता तालीम" नामक लिखी। यह ऐतिहासिक निबन्ध है, जो एक "शिक्षा-सम्मेलन" में भाषण के रूप में पढ़ा गया था।

१८९२ ई० में मौलाना रूम और शाम की यात्रा के लिए गये। प्रो० अरनल्ड भी साथ थे। इस यात्रा का वर्णन "सफ़रनामा रूमो मिस्रो शाम" के नाम से बड़ी ही सुन्दर भाषा में किया गया है। १८९८ ई० में सर सैयद की मृत्यु हो जाने पर, मौलाना कालिज छोड़ कर आज़मगढ़ चले गये और वहाँ "अलफ़ारूक" नामक पुस्तक लिखी। इस में इसलाम धर्म के बड़े-बड़े विद्वानों और महापुरुषों का वर्णन है। मौलाना शिबली चार बरस हैदराबाद में शिक्षा-विभाग के अफ़सर रहे थे। इन दिनों भी इन्होंने कई पुस्तकें लिखीं और "मशरक़ी यूनिवर्सिटी" की स्थापना के लिए योजना बनाई। हैदराबाद से आकर मौलाना ने मुसलमानों की प्रसिद्ध संस्था "नदवहा-उल-उलमा" लखनऊ की उन्नति में अपना समय लगाया, बहुत बड़ा पुस्तकालय खोला और एक पत्र भी निकाला। इस संस्था ने प्राचीनता-पोषक मुसलमान विद्वानों में, समय की आवश्यकतानुसार, पर्याप्त जागृति पैदा कर दी। इसकी पाठ-पद्धति में, अँग्रेज़ी को भी स्थान दिया गया। मौलाना ने आज़मगढ़ में "दारुल मुसन्निफ़ीन" नाम की एक संस्था स्थापित की। इसका उद्देश्य उर्दू लेखकों और ग्रन्थकारों को एक सूत्र में पिरोना था। १८९२ ई० में, टर्की के सुलतान ने, मौ० शिबली को उनकी योग्यता के उपलक्ष्य में एक प्रतिष्ठा-सूचक पदक प्रदान किया और भारत सरकार ने उन्हें "शम्सुल उलमा" की उपाधि दी। १९१४ ई० में मौलाना का देहान्त हुआ। उस समय वे "सीरतुल नबी"

नामक पुस्तक लिख रहे थे, जिसमें हज़रत मुहम्मद की महत्त्वपूर्ण जीवन-घटनाएँ हैं।

मौलाना शिवली ने अधिकतर इसलाम-धर्म की उन्नति के लिए ही अपनी लेखनी और वाणी का उपयोग किया। इनकी लिखी बहुत पुस्तकें हैं, जिनमें से कुछ के नाम नीचे दिये जाते हैं—"सीरतुल नवी" 'दो खण्ड', "शैरुल अर्ज़" (पाँच भाग), "अलफ़ारूक", "अलमामून", "सवानह मौलाना रूम", "सफ़रनामा रूमो मिस्रो शाम", "औरंगज़ेव आलमगीर", "हयात ख़ुसरौ", "मक़ालात शिवली", "मक़ातिव शिवली", "कुल्लियात शिवली" आदि। कविता में भी इन्होंने पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें "दीवान शिवली", "दस्तएगुल", "मसनवी सुवह उम्मेद", "मजमुआ नज़्म उर्दू" आदि प्रसिद्ध हैं। मौ० शिवली समालोचक भी बड़े अच्छे थे। इनकी सम्मति सुस्पष्ट और निष्पक्ष होती थी। लेखन-शैली में विशेष प्रकार का चमत्कार है। ये लखनऊ और देहली दोनों शैलियों के प्रतिनिधि थे। इनकी भाषा में कृत्रिमता बहुत कम है। ये अपना भाव बड़ी सुन्दर, सरल और स्वाभाविक रीति से व्यक्त करते हैं। इनमें दार्शनिक, साहित्यिक, इतिहासकार, शिक्षा-विशेषज्ञ, अध्यापक, वक्ता, सुधारक, कवि आदि के गुणों का सुन्दर समावेश था। इन्होंने इसलाम धर्म की उन्नति के लिए प्रशंसनीय प्रयत्न किया। सर सैयद इनको योग्यताओं पर मुग्ध थे।

मौलवी अब्दुल हक़—मौलवी साहव हापुड़ के रहनेवाले हैं, "मुहमडन कालिज" अलीगढ़ से इन्होंने वी० ए० पास किया। ये इस कालिज के प्रारम्भिक ग्रेजुएटों में से हैं। लेख लिखने की ओर इनकी प्रवृत्ति छात्रावस्था से ही रही। शिक्षा समाप्त कर ये हैदरावाद गये और वहाँ स्कूलों के इन्सपेक्टर नियुक्त हो गये। कुछ दिनों औरंगावाद उस्मानिया कालिज के प्रिंसिपल भी रहे। उसी समय ये प्रसिद्ध साहित्य-संस्था "अंजुमन तरक्क़ी उर्दू" के सेक्रेटरी चुने गये। इनके प्रशंसनीय प्रयत्न से इस "अंजुमन" की ख़ूब उन्नति हुई। इस संस्था

ने उर्दू के प्रचार और प्रसार के लिए जो ठोस कार्य किया है, उसका अधिकतर श्रेय मौलवी अब्दुलहक़ साहब को ही है। मौलवी साहब अंजुमन के मुख पत्र "उर्दू" के सम्पादक भी हैं। इस संस्था की ओर से विविध भाषाओं की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के सुन्दर अनुवाद प्रकाशित हो रहे हैं। मौलिक ग्रन्थ भी निकले हैं। मौलवी साहब के सदुद्योग द्वारा कितने ही हस्तलिखित ग्रन्थों का उद्धार हुआ है, अनेक दुर्लभ और अप्राप्य पोथियाँ सुलभ और प्राप्य हैं।

मौलवी साहब वर्त्तमान युग के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, आलोचक, निबन्ध-लेखक और विद्वान् हैं। ग्रन्थों का सम्पादन करने में आप बड़े सिद्ध हस्त हैं। इनके लिखे उपोद्‌घात (मुक़दमे) बड़े विद्वत्तापूर्ण और आदरणीय हैं। इनके निबन्ध ज्ञातव्य बातों से भरे होते हैं। आलोचनाएँ गम्भीर, विद्वत्तापूर्ण और निष्पक्ष होती हैं। इनकी लेखन-शैली प्रौढ़, सरल और सुस्पष्ट है, उसमें स्वाभाविकता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं। सरसता भी पद-पद पर पाई जाती है। ये अपने लेखों में कहीं-कहीं हिन्दी शब्दों का प्रयोग बड़ी सुन्दरता से करते हैं। निःसन्देह उर्दू-साहित्यकारों में इनका पद बहुत ऊँचा है। ये बड़े संकोचशील, शान्त और गम्भीर स्वभाव के साधक एवम् प्रकाण्ड विद्वान् हैं। इन्होंने अपना सारा जीवन साहित्य-सेवा में समर्पित कर दिया है। मौलवी साहब के लिखे उपोद्‌घात (मुक़दमे) पुस्तकाकार में भी प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी लिखी कुछ पुस्तकें— 'उर्दू के इब्तदाई नश्वोनुमा में 'सूफ़ियाए अकराम' अर्थात् उर्दू के विकास और विस्तार में सूफ़ी लोगों का प्रयत्न। 'मराठी ज़बान पर फ़ारसी का असर', 'क़वायद उर्दू', 'तनक़ीदात अब्दुल हक़'— मौलवी साहब द्वारा लिखी गई आलोचनाओं का संग्रह। मौलवी साहब ने देहली कालिज का इतिहास भी लिखा है, जो 'मरहूमा देहली कालिज' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। 'चन्द हमअसर' नामक आपकी एक और पुस्तक प्रकाशित हुई है। इसमें उन लेखों का संग्रह है, जो मौलवी साहब ने अपने कुछ मित्रों के देहान्त पर लिखे हैं।

मौलवी साहब ने 'स्टैण्डर्ड अंग्रेज़ी-उर्दू डिक्शनरी' का सम्पादन कर उर्दू साहित्य की महती सेवा की है। इस बृहत् कोष के तैयार होजाने से उर्दू की एक बहुत बड़ी कमी पूरी होगई। कोष में सैकड़ों-सहस्रों पारिभाषिक शब्द भी आए हैं, जो उर्दू संसार में प्रचलित भी होने लगे हैं। इस कोष के कारण मौलवी साहब की कीर्ति चिरस्थायिनी रहेगी। मौलवी साहब अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू के सेक्रेटरी क्या सर्वस्व और प्राण हैं। इनकी निःस्वार्थ सेवाएँ उर्दू संसार में एक क्षण के लिए भी नहीं भुलाई जा सकतीं। इनकी साहित्य-कृतियाँ सैकड़ों-सहस्रों पाठकों को अहर्निश अनुप्राणित करती रहती हैं। वे उर्दू के लिए आधुनिक युग में वरदान-स्वरूप हैं।

नवाब वक़ारुल मुल्क—नवाब वक़ारुल मुल्क मौलवी मुश्ताक़ हुसैन, शेख़ फ़ज़ल हुसैन के बेटे थे। अमरोहा (मुरादाबाद) के निकट किसी ग्राम में पैदा हुए थे। पहले ये साधारण शिक्षक रहे, फिर सरिश्तेदार और मुन्सरिम होगए। सर सैयद की सिफ़ारिश से ये हैदराबाद पहुँचे और वहाँ नाज़िम (दीवानी) मुक़र्रर होगए, परन्तु पीछे किसी कारण-वश नौकरी छोड़ कर घर चले आए। थोड़े दिनों बाद फिर बुलाए गए। इस बार भी इन्होंने राजकीय सेवाएँ बड़ी उत्तमता से कीं। सर्वत्र ख्याति होगई और निज़ाम दरबार ने इन्हें 'वक़ारुल दौला' तथा 'वक़ारुल मुल्क' की उपाधियाँ प्रदान कीं। पेन्शन लेकर नवाब साहब ने अपनी सारी आयु अलीगढ़ कालिज की सेवा में व्यतीत की। अपने महत्त्वपूर्ण लेखों द्वारा इन्होंने उर्दू की बहुमूल्य सेवा की है। 'फ्रेंच रिवौल्यूशन एण्ड नेपोलियन' नामक अंग्रेज़ी किताब का उर्दू अनुवाद भी किया है। इनका समय १८३६ से १९१७ ई० तक है।

नवाब मुहसनुल मुल्क—नवाब मुहसनुल मुल्क सैयद महदी अलीखाँ बहादुर १८३७ ई० में, इटावा में पैदा हुए। साधारण शिक्षा के पश्चात् ईस्ट इण्डिया कम्पनी में, १०) मासिक पर क्लर्की

शुरू की, फिर क्रमशः अहलमद, सरिश्तेदार और तहसीलदार होगए। इसी समय इन्होंने माल और फ़ौजदारी से सम्बन्ध रखने वाली दो क़ानूनी किताबें उर्दू में लिखीं। इससे इनकी बहुत प्रसिद्धि हुई। १८६३ ई० में ये मिर्ज़ापुर के डिपुटी कलक्टर होगए। इनकी ख्याति तो ख़ूब थी ही, अतः इन्हें सर सालार जंग (प्रथम) ने हैदराबाद बुलाया और १८७४ ई० में ये वहाँ मालियात के इन्सपेक्टर जनरल नियुक्त किये गए। वहाँ इन्होंने फ़ारसी के स्थान में उर्दू को अदालती भाषा घोषित कराया। हैदराबाद में इनके कामों की बड़ी प्रशंसा हुई और ओहदा भी ख़ूब बढ़ा। निज़ाम बहादुर ने इन्हें 'मुहसनुद्दौला' 'मुहसनुलमुल्क' आदि ऊँचे ख़िताब दिए। इन्हीं दिनों इन्होंने विलायत-यात्रा भी की। अन्त को इन्होंने पेन्शन लेकर अपना शेष सारा जीवन अलीगढ़ कालिज की सेवा में बिताया।

नवाब साहब ने उर्दू को सजीव और समुन्नत बनाने में बड़ा प्रयत्न किया। सैकड़ों लेख लिखे। इनकी भाषा बड़ी प्रभावशालिनी और सुस्पष्ट है। ये अपना भाव सरल शब्दों में बड़ी सुन्दरता से प्रकट करते हैं। कहीं-कहीं इन्होंने आलङ्कारिक भाषा भी लिखी है, परन्तु इससे भावों की स्पष्टता में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आने पाया। इनकी लिखी कोई ख़ास किताब नहीं बताई जाती, इन्होंने उर्दू की जो कुछ सेवा की है, वह लेखों के रूप में ही है। यदि इनके सब लेख संगृहीत किये जायँ, तो उनसे एक अच्छा ग्रन्थ तैयार हो सकता है। इनकी लिखी दो-एक मज़हबी किताबें भी हैं। नवाब साहब का देहान्त १६०७ ई० में, अलीगढ़ में हुआ, और सर सैयद की क़ब्र के समीप ही समाधिस्थ किये गए। सैयद साहब से इनकी बड़ी पुरानी और घनिष्ठ मित्रता थी।

नवाब आज़म मौलवी चिराग़ अली—नवाब आज़म यार जंग मौ० चिराग़ अली १८४४ ई० में पैदा हुए। ये मौ० मुहम्मद बख़्श के बेटे थे। पढ़ाई-लिखाई समाप्त करके २०) मासिक के क्लर्क हुए, फिर

मुन्सरिम और तहसीलदार होगए। १८७२ ई० में सर सैयद की सिफ़ारिश से ये हैदराबाद गए और तरक्क़ी करते-करते १५००) मासिक वेतन के पद पर पहुँचे। १८९८ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये बड़े प्रतिभाशाली और अध्ययन-शील थे। इनकी लिखी हुई उर्दू में अनेक पुस्तकें हैं जो इसलाम धर्म्म से सम्बन्ध रखती हैं। यों तो इनकी भाषा सरल और मुहावरेदार है, परन्तु साहित्यकपन उसमें अधिक नहीं है।

मौ० सैयद सुलेमान नदवी—इनका जन्म अज़ीमाबाद (पटना) में, १३०३ हिजरी में हुआ। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् हैं। उर्दू में भी बड़ा सुन्दर भाषण देते हैं। अरबी और फ़ारसी के अध्यापक भी रहे हैं। इन्होंने मौ० शिबली द्वारा संस्थापित 'दारुल मुसन्निफ़ीन' नामक संस्था का संचालन बड़ी योग्यता से किया है। 'मुअर्रिफ़' नामक पत्र भी निकाला। ये अरबी और फ़ारसी के कितने ही ग्रन्थों के अनुवादक हैं। इसलाम से सम्बन्ध रखने वाली इन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। मौ० शिबली की 'सीरतुल नबी' नामक अपूर्ण पुस्तक को इन्होंने ही पूरा किया है। सब मिलाकर इस पुस्तक के पाँच खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इन्होंने 'उमर ख़य्याम' की जीवनी भी बड़ी अच्छी लिखी है। 'अरब और हिन्द के ताल्लुक़ात' नामक वृहद् ग्रन्थ इनकी सुन्दर कृति है। ये अरब आदि देशों की यात्रा भी कर चुके हैं। मौ० शिबली के सुयोग्य स्थानापन्न कहे जाते हैं।

मौ० अज़ीज़ मिर्ज़ा—ये आधुनिक युग के श्रेष्ठ साहित्य-कारों में गिने जाते हैं। १८८५ ई० में अलीगढ़ कालिज से बी० ए० पास करके हैदराबाद चले गए। वहाँ विविध पदों पर काम करके 'होम-सेक्रेटरी' के ऊँचे पद पर पहुँचे। नौकरी से समय निकाल कर निरन्तर साहित्य-सेवा करते रहे। इनकी लिखी ये पुस्तकें प्रसिद्ध हैं—'गुल-गश्त फ़रंग' यह एक अंग्रेज़ी किताब का अनुवाद है। 'सीरतुल मह-मूद'—जीवन-चरित। प्रसिद्ध संस्कृत नाटक 'विक्रमोर्वशी' का उर्दू

अनुवाद भी इन्होंने किया है। इन्हें पुराने सिक्के संग्रह करने का बड़ा शौक़ था। इनकी लेखन-शैली सरल और आकर्षक है। अनावश्यक विस्तार और व्यर्थ के शब्दाडम्बर से इनकी कृतियाँ सर्वथा मुक्त हैं। ये अपने समय के प्रसिद्ध लेखक हो गए हैं, १९२१ ई० में इनका देहान्त हुआ।

सैयद मौ० वहीदुद्दीन सलीम—इनका जन्म १८६५ ई० में पानीपत में हुआ। ये अरबी और फ़ारसी के बहुत बड़े विद्वान् थे। इन्होंने अधिकतर अध्यापन-कार्य्य किया। कुछ दिनों पानीपत में चिकित्सा-कार्य्य भी करते रहे। इसके पश्चात् मौ० हाली की सिफ़ारिश से ये सर सैयद के प्राइवेट सेक्रेटरी होगए, और उन्हें साहित्यिक कार्य्यों में भी सहायता देने लगे। सैयद साहब की मृत्यु के पश्चात् ये 'मुआरिफ़' और 'अलीगढ़ इंस्टीट्यूट गज़ट' के सम्पादक हुए। 'ज़मीदार', मुसलिम गज़ट, आदि पत्रों का भी सम्पादन किया। इसके बाद हैदराबाद चले गए और वहाँ 'अनुवाद-विभाग' में काम करने लगे। प्रसिद्ध पुस्तक 'वज़अ इस्तलाहात इलमिया' लिखी। 'उस्मानिया यूनिवर्सिटी' स्थापित होने पर ये उसमें उर्दू के अध्यापक नियुक्त हुए। १९२८ ई० में इनका देहान्त हुआ। मौलवी साहब की लेखन-शैली बड़ी प्रभावपूर्ण और सरल है। कहीं-कहीं तो ये भावों का चित्रण बड़ी ही सुन्दर रीति से करते हैं। इनके लिखे 'तुलसीदास की शायरी,' 'उर्दू देव माला,' और 'अरब की शायरी' शीर्षक निबन्ध बहुत प्रसिद्ध हैं। ये अपनी रचनाओं में अरबी-फ़ारसी के कठिन और अप्रचलित शब्दों की भरमार नहीं करते, बल्कि आवश्यकता होने पर, हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग करते हैं। इनकी लिखी उपर्युक्त 'वज़अ इस्तलाहात इलमिया' नामक पुस्तक बहुत प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण है। इससे उनके गम्भीर अध्ययन और विस्तृत अनुसन्धान का पता चलता है। उर्दू में पारिभाषिक शब्दों की रचना करने के लिए, इस किताब से बड़ी मदद मिली है। मौलवी साहब कविता भी बड़ी सुन्दर करते थे।

'अफ़कारे सलीम' में इनकी कविताएं संगृहीत हैं। इनके निवन्धों का संग्रह भी प्रकाशित होगया है।

शेख़ अब्दुल क़ादिर—शेख़ साहब उर्दू साहित्य के वड़े विद्वान् और उत्कृष्ट लेखक हैं। इनका जन्म लुधियाना में हुआ। १८९४ ई० में बी० ए० पास कर पंजाब के एक अँग्रेज़ी अख़बार के सहायक सम्पादक हुए। इसके बाद बैरिस्टरी पास करने विलायत चले गए। उस समय अन्य देशों की भी यात्रा की, जिससे इनके ज्ञान और अनुभव में पर्याप्त वृद्धि हुई। स्वदेश लौटने पर इन्होंने लाहौर में बैरिस्टरी की। १९२१ ई० में कुछ दिनों हाईकोर्ट के अस्थायी जज भी रहे। १९२३ ई० में पंजाब लेजिस्लेटिव कौंसिल के डिपुटी प्रेसीडेण्ट और प्रेसीडेण्ट चुने गए। १९२५ ई० में पंजाब के शिक्षा-मन्त्री नियुक्त हुए। १९२६ ई० में अन्तर्राष्ट्रिय कानफ़्रेन्स जनेवा में हिन्दुस्तान के प्रतिनिधि के रूप से सम्मिलित हुए। शेख़ साहब को उर्दू साहित्य से बड़ा प्रेम है। इन्होंने अपनी छात्रावस्था में ही उर्दू कवियों और लेखकों पर अँग्रेज़ी में महत्त्वपूर्ण लेख लिखे थे, जो पुस्तकाकार भी प्रकाशित हो चुके हैं। ये कई वर्षों तक सुप्रसिद्ध उर्दू मासिक पत्र 'मख़ज़न' के आनरेरी एडीटर रहे। १९१७ ई० में इन्होंने उर्दू कानफ़्रेन्स (कलकत्ता अधिवेशन) के अध्यक्ष का पद सुशोभित किया था।

पं० मनोहरलाल ज़ुतशी—इनका जन्म १८७६ ई० में फ़ैज़ाबाद में हुआ। ये पं० कन्हैयालाल ज़ुतशी के पुत्र हैं। १८९४ ई० में इन्होंने बी० ए० किया। फिर ट्रेनिङ्ग पास कर अध्यापकी का काम करने लगे। इसके पश्चात् एम० ए० करके ट्रेनिङ्ग कालिज इलाहाबाद में प्रोफ़ेसर हो गए। नौकरी की हालत में ये अँग्रेज़ी और उर्दू में लेख लिख कर प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं को भेजते रहते थे। १९१६ ई० में ये स्कूलों के इन्स्पेक्टर हुए। कुछ दिनों ट्रेनिङ्ग कालिज के प्रिंसिपल और हिन्दू यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार भी रहे। १९१९ ई० में लोकल गवर्नमेण्ट के अण्डर सेक्रेटरी और संयुक्त प्रान्तीय

शिक्षा-विभाग के असिस्टेन्ट डाइरेक्टर आदि पदों पर भी काम किया। ये जुबिली कालिज लखनऊ के भी प्रिंसिपल रहे। इनकी लिखी 'गुलदस्तए अदब' और 'एज्यूकेशन इन ब्रिटिश इण्डिया', 'हिन्दू 'प्रोटेस्टेण्टिज़्म' नामक पुस्तकें प्रसिद्ध हैं। इन्होंने 'ग़ालिब' और 'चकबस्त' पर विद्वत्तापूर्ण निबन्ध लिखे हैं। ये बहुत उच्च कोटि के आलोचक हैं। इनकी आलोचना-पद्धति बड़ी गम्भीर और पक्षपात-शून्य है। इनके लेखों का संग्रह पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है।

मुन्शी दयानरायन निगम—मुन्शीजी १८८४ ई० में कानपुर के एक प्रतिष्ठित कायस्थ-कुल में पैदा हुए। इनके दादा मुन्शी शिव-सहाय कानपुर के विख्यात वकील और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के वायस-चेयरमैन थे। निगम साहब ने १९०३ ई० में बी० ए० पास किया और इसी साल "ज़माना" नामक प्रसिद्ध उर्दू मासिकपत्र निकाला। १९२० ई० में "आज़ाद" नामक एक साप्ताहिक पत्र भी प्रकाशित किया, जो कुछ दिनों बाद दैनिक हो गया। १९१५ ई० में मुन्शी दयानरायन आनरेरी मजिस्ट्रेट हुए। इन्होंने राजनीति, साहित्य, शिक्षा-प्रसार आदि अनेक आन्दोलनों में भाग लिया। ये पक्के समाज-सुधारक हैं। पत्रकार की दृष्टि से तो इनका स्थान बहुत ही ऊँचा है। इन्होंने "ज़माना" को एक उत्कृष्ट कोटि का पत्र बना दिया है। इसमें हिन्दू और मुसलमान सभी प्रसिद्ध लेखक बिना किसी भेद-भाव के लेख लिखते रहते हैं। स्वयम् मुन्शी दयानरायन के लेख भी बड़े गम्भीर और महत्त्वपूर्ण होते हैं। ये 'हिन्दुस्तानी एकाडमी' के भी सदस्य हैं।

लाला श्रीराम एम० ए०—लालाजी १८७५ ई० में देहली के एक प्रतिष्ठित परिवार में पैदा हुए। इनके पिता आनरेबुल रायबहादुर मदनगोपाल, एम० ए०, बैरिस्टर-एट-ला बड़े प्रतिष्ठित नागरिक थे। रायबहादुर मास्टर प्यारेलाल 'आशोब' लालाजी के चाचा थे। १८९८ ई० में लाला श्रीराम ने एम० ए० और मुंसिफ़ी की परीक्षाएँ

पास कीं। लाहोर, अमृतसर, देहली आदि में इन्होंने मुंसिफ़-पद पर काम किया। परन्तु स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण, १९०७ ई० में नौकरी छोड़ दी। फिर ये अपनी रियासत के प्रबन्ध और साहित्य-सेवा में संलग्न हो गये। लालाजी विद्वान् लेखक होने के अतिरिक्त वक्ता भी बड़े अच्छे थे। इनकी मिलनसारी और निरभिमानता प्रसिद्ध थी। ये सुप्रसिद्ध राजा टोडरमल के वंशज थे। इन्होंने 'तज़किरा हज़ार दास्तान' नामक वृहत् ग्रन्थ लिखा है। इसका दूसरा नाम 'खुम-ख़ानए जावेद' भी है। इस ग्रन्थ के चार ही खण्ड प्रकाशित हो पाये। खेद है कि पुस्तक पूर्ण होने के पूर्व ही लालाजी का जीवन पूर्ण हो गया ! 'खुम-ख़ानए जावेद' उर्दू कवियों के वर्णन का भाण्डार है। इसमें कवियों की जीवनियों के साथ-साथ, उनकी कविताओं के चुने हुए नमूने भी दिये गये हैं। बहुत-से लुप्त प्रायः कवियों को प्रकाश में लाया गया है। इस ग्रन्थ की तैयारी में बड़ा समय और धन लगाया गया था। बड़े परिश्रम और अनुसन्धान से काम लिया गया था। इसकी भाषा बड़ी आकर्षक, सुबोध और सरस है। इस तज़किरे में कविताओं की बड़ी शिष्ट, सारगर्भित, गम्भीर और निष्पक्ष आलोचनाएँ की गई हैं। लालाजी ने 'दीवान अनवार', 'महताब दाग़' और ज़मीमा 'यादगारे दाग़' आदि पुस्तकों का बड़ी योग्यता से सम्पादन किया है। इनके विशाल ग्रन्थागार में दुर्लभ हस्त-लिखित पुस्तकों और दुष्प्राप्य चित्रों का अच्छा संग्रह है।

मौ० अब्दुल सलाम नदवी—ये बड़े विद्वान् और अनेक ग्रन्थों के लेखक हैं। मौलाना शिबली की जीवनी भी इन्होंने लिखी है। इनकी लिखी 'शेरुल हिन्द' नामक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। इसे उर्दू कविता का इतिहास कहना चाहिए।

मौ० अब्दुल माजिद दरियाबादी—ये मौ० अब्दुल क़ादिर साहब डिपुटी कलक्टर के पुत्र हैं। १८९२ ई० में पैदा हुए। फ़ारसी और अरबी के विद्वान् हैं। अँग्रेज़ी में बी० ए० किया है। साहित्य-सेवा

में बड़ी तन्मयता से लगे रहते हैं। उस्मानिया यूनिवर्सिटी के अनुवाद-विभाग में काम कर चुके हैं। दर्शन और राजनीति इनके प्रिय विषय हैं। 'सच' नामक पत्र के सम्पादक रह चुके हैं। इनकी लिखी कुछ पुस्तकें इस प्रकार हैं—'फ़िलस्फ़ाए जज़बात', 'फ़िलस्फ़ा अजतमाअ', 'तारीख़ अख़लाक यूरोप', 'मक़ालात वरकले' अर्थात् बरकले की प्रसिद्ध पुस्तक 'डायलागज़' का उर्दू अनुवाद। 'पयामे अमन', 'ज़ूद पशेमाँ' (नाटक), 'साइकोलोजी आव् लीडरशिप' (अँग्रेज़ी), 'फ़िलसफ़ाना मज़ामीन' इत्यादि। अँग्रेज़ी से उर्दू अनुवाद करने में ये बड़े दक्ष हैं। इन्होंने 'मसहफ़ी' की मसनवी 'बहरुल मुहब्बत' बड़े परिश्रम से प्रकाशित कराई है। उसके प्रारम्भ में इन्होंने एक विद्वत्तापूर्ण उपोद्‌घात भी लिखा है। ये कभी-कभी सूफ़ियाना विषयों पर कविता भी करते हैं। अँग्रेज़ी और उर्दू के प्रसिद्ध पत्रों में महत्त्वपूर्ण लेख लिखते रहते हैं। इनकी विवेचना-शक्ति प्रशंसनीय है। किसी विषय की मीमांसा बड़ी सुन्दर रीति से करते हैं। इनकी लेखनी से उर्दू साहित्य को बहुत लाभ पहुँचा है।

मौ० ग़ुलाम इमाम 'शहीद'—ये अमेठी (लखनऊ) के रहनेवाले थे, शाह ग़ुलाम मुहम्मद के बेटे थे। कविता भी अच्छी करते थे। फ़ारसी के विद्वान् थे। इन्हें प्रायः लोग 'आशिक़ रसूल' कहा करते थे। ये अपनी कविताओं में 'क़तील' और 'मसहफ़ी' से इसलाह लेते थे। रामपुर और हैदराबाद में इनकी अच्छी प्रतिष्ठा हुई थी। 'मजमुआ मीलाद शरीफ़', 'इन्शाए बहार बेख़िज़ाँ' इत्यादि इनकी लिखी पुस्तकें प्रसिद्ध हैं। इन्होंने पुरानी शैली पर ताजगंज (आगरा) का वर्णन बड़ी सुन्दर रीति से किया है।

ख़्वाजा ग़ुलाम ग़ौस 'बेख़बर'—इनका जन्म १८२४ ई० में नेपाल में हुआ। ये ख़्वाजा ज़हूर अल्ला कश्मीरी के बेटे थे। नेपाल से बनारस आए और वहीं पढ़-लिखकर सरकारी नौकर हो गये। 'ख़ान बहादुर' का ख़िताब मिला। इनाम और ख़िलअत भी पाये। १८८५ ई०

में पेन्शन ली। ये मिर्ज़ा ग़ालिब के घनिष्ठ मित्र थे। इनके नाम उनके कितने ही पत्र हैं, जो प्रकाशित भी हो चुके हैं। 'फुग़ाने बेख़बर' और 'ख़ून नाबहजिगर', 'रश्क लालो गौहर' इनकी लिखी पुस्तकें हैं। १९०५ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये आलोचक भी अच्छे थे। 'बहारे बेख़िज़ाँ' पर इन्होंने मार्मिक आलोचना लिखी है। इनके लिखने का ढंग सरल और स्पष्ट है, परन्तु आलोचना लिखने में पुरानी शैली का आश्रय लिया है, अर्थात् फ़ारसी की तरह अनुप्रास-युक्त उर्दू लिखी है।

मौ० अबुलकलाम आज़ाद—मौलाना के जन्म का नाम मुहीउद्दीन है। इनके पूर्वज देहली के रहनेवाले थे। इनके परिवार में बड़े-बड़े विद्वान् होते आये हैं। मौ० आज़ाद के पिता मौ० ख़ैरुद्दीन साहब प्रकाण्ड विद्वान् थे। वे १८५८ ई० के ग़दर से तंग आकर, हज चले गये और १८८८ ई० में मक्का में मौ० आज़ाद का जन्म हुआ। इनकी शिक्षा हजाज़ और मिस्र में हुई। १५ वर्ष की अल्पायु में ही ये बहुत बड़े विद्वान् हो गये। ये अरब से हिन्दुस्तान आये और कलकत्ता से 'अलहिलाल' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला। इस पत्र की विशेष लेखन-शैली ने उर्दू-साहित्य में क्रान्ति कर दी। अन्त को सरकार ने उसे बन्द कर दिया। मौलाना ने तुरन्त ही 'अल बलाग़' नामक दूसरा पत्र निकाला। गत योरोपीय महायुद्ध के समय मौलाना आज़ाद राँची में नज़रबन्द कर दिये गये थे। नज़रबन्दी समाप्त होते ही ये खिलाफ़त-आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। फिर तो इनका जीवन राजनैतिक हो गया और ये कई बार जेल गये। मौलाना बड़े विद्वान्, व्याख्याता, साहित्यकार और पत्रकार हैं। इनके लिखे अधिकतर ग्रन्थ इसलाम धर्म सम्बन्धी हैं। इन्होंने .कुरान की आयतों का बड़ा स्पष्ट और सरल अनुवाद किया है। 'तरजमुल .कुरान' नामक इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इनकी भाषण-शैली में बड़ा रस और आकर्षण है। साधारण वार्त्तालाप में भी रस बरसता रहता है। ये देश के प्रसिद्ध राजनैतिक नेता हैं। कांग्रेस के राष्ट्रपति रह चुके हैं।

मौ० मुहम्मद अली—ये देश के प्रसिद्ध राजनैतिक नेता और ऊँचे दरजे के साहित्यकार थे। कविता में भी अच्छी गति थी। 'जौहर' उपनाम था। १८७८ ई० में रामपुर में पैदा हुए, १८९८ ई० में अलीगढ़ से बी०ए० पास किया। फिर 'आई० सी० एस०'-परीक्षा के लिए विलायत गए, परन्तु उसमें सफलता न मिली। उस समय आक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय से इन्होंने बी० ए० (आनर्स) पास किया। विलायत से आने पर मौलाना रियासत रामपुर में चीफ़ एजुकेशनल आफ़िसर नियुक्त हुए। इसके बाद बड़ोदा राज्य में नौकरी की। इस प्रकार १९१० ई० तक ये मुलाज़िमत करते रहे। फिर १९११ ई० में इन्होंने 'कामरेड' और 'हमदर्द' नामक पत्र निकाले। १९२० ई० में मुसलिम डेपूटेशन के साथ लन्दन गए। असहयोग-आन्दोलन में भाग लिया। कराँची-कांग्रेस के प्रेसीडेण्ट हुए। कई बार जेल-यात्रा की। १९३१ ई० में लन्दन में इनका देहान्त हुआ। मौलाना की ग़ज़लों का एक छोटा-सा संग्रह प्रकाशित हो गया है। इनकी लेखन-शैली बड़ी आकर्षक और भाषा ओजस्विनी है। ये बड़े प्रभावशाली व्याख्याता थे। राजनीति में पड़ जाने के कारण साहित्य की अधिक सेवा नहीं कर सके।

सर रास मसऊद—नवाब मसऊद जंगबहादुर डाक्टर सर रास मसऊद का जन्म १८८९ ई० में हुआ। अलीगढ़ और आक्सफ़ोर्ड में शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने हैदराबाद रियासत में शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर का काम बड़ी योग्यता से किया। वहाँ की सुप्रसिद्ध उस्मानिया यूनिवर्सिटी इन्हीं के शुभ विचार का सुपरिणाम है। ये अलीगढ़ मुसलिम यूनिवर्सिटी के वायस चान्सलर पद पर भी प्रतिष्ठित रहे। फिर भूपाल के शिक्षा-सचिव का कार्य्य किया। १९३८ ई० में इनका देहान्त हुआ। इन्होंने जापान में रहकर वहाँ के रहन-सहन, आचार-विचार, शिक्षा-दीक्षा आदि पर अंग्रेज़ी में एक मौलिक पुस्तक लिखी है। इसका उर्दू अनुवाद भी हो चुका है। इन्होंने 'इन्तख़ाबे ज़र्रीं'

नामक एक कविता-संग्रह भी सम्पादित किया है। 'ख़तूत सर सैयद' नामक पुस्तक भी इन्हीं के द्वारा संकलित हुई है।

ख़्वाजा ग़ुलाम सईदीन—ये १६०३ ई० में पैदा हुए। महाकवि हाली के धेवते हैं। अलीगढ़ कालिज और विलायत में शिक्षा हुई। ईडन (इंग्लैण्ड) यूनिवर्सिटी से एम० ए० पास किया। १६२७ ई० में अलीगढ़ ट्रेनिंग कालिज के प्रिंसिपल हुए और अब काश्मीर के शिक्षा-मन्त्री हैं। ये सुप्रसिद्ध शिक्षा-विशेषज्ञ हैं। इन्होंने शिक्षा से सम्बन्ध रखने वाले अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं। इनकी नीचे लिखी पुस्तकें अधिक प्रसिद्ध हैं। 'इक़बाल की एजुकेशनल फ़िलासफ़ी', 'दी मैसेज आव् न्यू एजुकेशन', 'एजुकेशन आव् ट्रूमारो' (अंग्रेज़ी) 'रूहे तहज़ीब' इत्यादि।

मौ० ज़ाकिर हुसेन—इनका जन्म १८६६ ई० में हुआ। अलीगढ़ कालिज से एम० ए० पास किया। बरलिन से पी-एच० डी० की डिगरी ली। १६२६ ई० में 'जामा मिल्लिया' के प्रिंसिपल हुए। ठोस विद्वान्, विख्यात व्याख्याता और प्रभावशाली लेखक हैं। इनके कारण 'जामा मिल्लिया' ने बड़ी उन्नति की है। इनकी गणना देश के प्रसिद्ध शिक्षा-विशेषज्ञों में है। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम— 'मुआशियात,' 'मबादी मुआशियात' 'रियासत', 'दयानत' (नाटक)।

मौ० बरनी, एम० ए०—मौ० मुहम्मद अलियास बरनी, एम० ए० ने सामाजिक जीवन (मुआशियात) पर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। ये इस विषय के प्रसिद्ध विद्वान् समझे जाते हैं। बड़ी शान्ति और संलग्नता से साहित्य-सेवा करते रहते हैं। इनकी लेखनी से साहित्य-वृद्धि की बहुत बड़ी आशा है। मौलाना की लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'इल्मुल मुआशियात', 'मुआशियात हिन्द', 'उसूल मुआशियात', 'मुक़दमा मुआशियात', 'बरतानवी हुकूमत हिन्द', 'जज़बाते फ़ितरत', (कविता-संग्रह) इत्यादि।

मौ० हाशिमी—मौ० नसीरुद्दीन हाशिमी का जन्म १८९५ ई० में हैदराबाद में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा के पश्चात् इन्होंने हैदराबाद के 'दारुल उलूम' में अध्ययन कर मुन्शी फ़ाज़िल की उपाधि प्राप्त की। ये निज़ाम सरकार की ओर से यूरोप भी भेजे गए थे। वहाँ इन्होंने उर्दू साहित्य के सम्बन्ध में अनेक अन्वेषण किए, जिनसे उर्दू को बहुत लाभ पहुँचा। आजकल ये हैदराबाद में नायब नाज़िम के पद पर प्रतिष्ठित हैं। साहित्य-सेवा की लगन बराबर बनी हुई है। इनकी लिखी कुछ किताबों का परिचय इस प्रकार है—'यूरोप में दकिनी मख़तूतात'—इस पुस्तक में दक्षिण से सम्बन्ध रखने वाले उन दुर्लभ ग्रन्थों का उल्लेख है जो इंगलिस्तान और फ्रांस के पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। इसमें उक्त ग्रन्थों के रचयिताओं के जीवन-चरित और उनकी रचनाओं के उदाहरण भी दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त 'हज़रत अजमद की शायरी', 'मकतूबात अजमद', 'ख़वातीन अहदे उस्मानी', 'रहबरे सफ़र यूरोप', 'सुलातीन दकिन की उर्दू शायरी' आदि पुस्तकें भी इनकी लिखी या सम्पादित की हुई हैं।

डा० क़ादरी—डाक्टर सैयद मुहीउद्दीन क़ादरी 'ज़ोर' का जन्म १३२२ हिजरी में हैदराबाद में हुआ। उस्मानिया यूनिवर्सिटी से इन्होंने बी० ए० पास किया। वहीं से १९२७ ई० में एम० ए० की डिगरी ली और सर्वप्रथम आए। फिर सरकार की ओर से विशेष शिक्षा प्राप्त करने के लिए विलायत भेजे गए। वहाँ उर्दू साहित्य सम्बन्धी अनुसन्धान करने के उपलक्ष्य में, लन्दन यूनिवर्सिटी से इन्हें पी०-एच० डी० की उपाधि मिली। १९३१ ई० में ये यूरोप से वापस आए और उस्मानिया यूनिवर्सिटी में उर्दू के अध्यापक होगए। वर्त्तमान युग में, ये ऊंचे दरजे के साहित्यिक और उत्कृष्ट आलोचक माने जाते हैं। ये उपन्यास-लेखक और कवि भी हैं। कितनी ही किताबें लिख चुके हैं, जिनमें से कुछ के नाम नीचे दिए जाते हैं—'रुहे तनक़ीद'-आलोचना-सिद्धान्त पर यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। इसका

दूसरा भाग 'तनक़ीदी मक़ालात' के नाम से प्रकाशित हुआ है। इसमें उर्दू साहित्य सम्बन्धी कई ऊँचे दरजे के आलोचनात्मक निबन्ध हैं। 'उर्दू शहपारे'—इसमें उर्दू के गद्य-पद्य साहित्य का अन्वेषणात्मक वर्णन है। कुछ कवियों की कविताओं के नमूने भी दिए हैं। 'उर्दू के असालीब बयान'—इसमें उर्दू गद्य की उत्पत्ति और विकास का वर्णन है। साहित्यकारों की लेखन-शैलियों और उनकी विशेषताओं पर विशेष रूप से विचार किया गया है। 'फ़ने इन्शा परदाज़ी'—इसमें सुन्दर निबन्ध-रचना की सफल विधि बताई गई है। 'महमूद ग़ज़नवी की बज़्मे अदब'—इसमें ग़ज़नी के फ़ारसी शायरों और वहाँ की साहित्यिक प्रगति का वर्णन है। 'सैरे गोल कुण्डा'—यह पुस्तक उपन्यास के ढंग पर लिखी गई है। इसमें गोलकुंडा का सजीव और सचित्र वर्णन है। 'मुरक्क़ा सख़ुन'—इसमें दक्षिण के पच्चीस कवियों का वर्णन है। 'फ़ैज़े सख़ुन'—इसमें मीर शमसुद्दीन नामक शायर की शायरी है।

प्रो० अब्दुल क़ादिर 'सरूरी'—इनका जन्म १३२१ हिजरी में हैदराबाद (दक्षिण) में हुआ। १३३८ हिजरी में एम० ए० और एल-एल० बी०परीक्षाएँ पास कीं। १३४५ हि० से उस्मानिया यूनिवर्सिटी में अध्यापक नियुक्त हैं। ये बहुत छोटी आयु में ही लेख लिखने लगे थे। आलोचनात्मक लेख लिखने से इनकी बहुत ख्याति हुई। प्रोफ़ेसर साहब की नवीन शैली की कविताएँ बहुत पसन्द की जाती हैं। इनकी कुछ किताबों के नाम नीचे दिए जाते हैं—'जदीद उर्दू शायरी' में मौलाना हाली के समय से लेकर अब तक की कविता-शैलियों का बड़ा सुन्दर इतिहास दिया गया है। कवियों की जीवनियाँ और चित्र भी हैं। 'दुनियाए अफ़साना'—इसमें उपन्यास-रचना के सिद्धान्त और उर्दू उपन्यासकारों की संक्षिप्त जीवनियाँ हैं। 'हैदराबाद की तालीमी तरक्क़ी'—इसका विषय नाम ही से प्रकट

इसके अतिरिक्त इन्होंने 'क़दीम अफ़साने', 'चीनी और जापानी

अफ़साने', 'अंगरेज़ी अफ़साने', 'फ्राँसीसी अफ़साने' आदि किताबें भी लिखी हैं। कितनी ही पुस्तकों का सम्पादन भी किया है। इनमें 'मसनवी क़िस्सा बेनज़ीर' 'मसनवी चन्द्रबदन' आदि मुख्य हैं।

पं० ब्रजमोहन दत्तात्रेय 'कैफ़ी'—कैफ़ी साहब के पूर्वज शाही ज़माने में काश्मीर से आकर देहली में बसे थे। ये पं० कन्हैयालाल के पुत्र हैं। इनका जन्म १८६६ ई० में देहली में हुआ। उर्दू, फ़ारसी तथा अरबी इन्होंने अपने नाना से पढ़ी और अँगरेज़ी का अध्ययन सेण्ट स्टीफ़िन्स कालिज में किया। इनके माता-पिता इन्हें बहुत छोटी उम्र में छोड़कर स्वर्गवासी हो गए थे। कविता में इनकी रुचि विद्यार्थी-अवस्था से ही है। पहले ग़ज़लें लिखा करते थे, परन्तु समय की गति देखकर ग़ज़लें लिखना छोड़ दिया। इनके ऊपर मौलाना हाली और प्रो० मोहम्मद हुसेन आज़ाद का प्रभाव पड़ा। कैफ़ी साहब फ़ारसी और अंगरेज़ी के बड़े विद्वान् हैं। संस्कृत, अरबी और हिन्दी भी ख़ूब जानते हैं। व्याख्याता बड़े अच्छे हैं। १९०० ई० में इन्होंने हैदराबाद की उस्मानिया यूनिवर्सिटी में लालित्य की अभिव्यक्ति पर एक विद्वत्तापूर्ण और सार-गर्भित व्याख्यान दिया था। १९१५-१६ में कैफ़ी साहब ने यूरोप-यात्रा की। इसमें इनका बहुत-से विदेशी साहित्यिकों से परिचय हुआ। ये काश्मीर-दरबार में एक उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे, मजिस्ट्रेट भी रहे थे।

कैफ़ी साहब गद्य और पद्य दोनों बड़ी सफलता से लिखते हैं। इनके आलोचनात्मक निबन्धों का उर्दू संसार में बड़ा मान है। इन्होंने उर्दू साहित्य की सेवा बड़ी संलग्नता से की है। इन्हें हिन्दू-मुसलिम-एकता का प्रतीक कहना चाहिए। इनकी कुछ पुस्तकों का परिचय इस प्रकार है:—'मनसूरात'—इसमें कैफ़ी साहब के साहित्यिक भाषणों और लेखों का संग्रह है। 'निहत्था राणा'—यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। 'मुरारीदाद'—एक सामाजिक नाटक है। इसमें बालक-बालिकाओं को दी जाने वाली शिक्षा का विवेचन है। 'प्रेम-

तरंगिनी'—यह एक मसनवी है। इसमें विशुद्ध प्रेम की मार्मिक मीमांसा की गई है। 'जगवीती'—यह भी एक नये ढंग की मसनवी है।

प्रो० मुहम्मद सज्जाद मिर्ज़ा वेग—इनका जन्म १८७६ ई० में देहली में हुआ। पढ़-लिखकर ये हैदराबाद गये और वहाँ निज़ाम कालिज में प्रोफ़ेसर नियुक्त हो गये। ये उर्दू साहित्य की प्रशंसनीय-सेवा कर गये हैं। अपना अधिकांश समय पुस्तक-प्रणयन में लगाते थे। निज़ाम सरकार ने साहित्य-सेवा के लिए इनको अच्छी वृत्ति प्रदान की थी। १९२७ ई० में प्रोफ़ेसर साहव का देहान्त हुआ। इनकी लिखी अधिकतर पुस्तकें दार्शनिक विषयों से सम्बन्ध रखती हैं। कुछ पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—'फ़िलसुफ़ा जमाल', 'फ़िलसुफ़ा नफ़्स', 'मसायल फ़िलसुफ़ा', 'तारीख़ फ़िलसुफ़ा', 'उसूल फ़िलसुफ़ा हिनूद', 'उसूल नफ़सियात', 'नफ़सियात तरग़ीब' इत्यादि।

मौ० अब्दुल माजिद—ये अब्दुल क़ादिर साहव डिपुटी कलक्टर के पुत्र हैं। १८९२ ई० में इनका जन्म हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर हुई, फिर लखनऊ कैनिंग कालिज से वी० ए० पास किया और लखनऊ में ही साहित्य-सेवा का कार्य प्रारम्भ कर दिया। १९१७ ई० में इनका हैदराबाद के 'अनुवाद-विभाग' से सम्बन्ध हो गया, परन्तु पीछे यह नौकरी छोड़ दी। अब भी ये उस्मानिया यूनिवर्सिटी की साहित्य-सेवा करते रहते हैं। राजनीति-शास्त्र में इनकी वड़ी गति है। इनकी सम्पादकता में दरियावाद (वारावंकी) से 'सिद्क़' नाम का एक साप्ताहिक पत्र प्रकाशित होता है। मौलाना का मुख्य विषय दर्शन है। अतः इसीसे सम्बन्ध रखनेवाले लेख और ग्रन्थ ये अधिक लिखते हैं। उर्दू में इन्होंने कितने ही मौलिक दार्शनिक ग्रन्थ लिखे हैं, और कितने ही दार्शनिक ग्रन्थों का अनुवाद भी किया है। इस दिशा में इनकी सेवाएँ वड़ी मूल्यवान समझी जाती हैं। मौलाना की रची कुछ किताबों के नाम ये हैं—'मुवादी फ़िलसुफ़ा' (दो भाग) यह मौलाना के दार्शनिक लेखों का संग्रह है।

असग़र अली बेग था। १७८७ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् तथा संगीत के विशेषज्ञ थे। कविता भी अच्छी करते थे। 'नवाज़िश' के शिष्य थे। १८१४ से १८३७ ई० तक ये कानपुर रहे। कहा जाता है कि ग़ाज़ी उद्दीन हैदर की आज्ञा से इन्हें देश-निकाला दे दिया गया था। जो हो, कानपुर इन्हें ज़रा भी पसन्द नहीं आया, परन्तु फिर भी वहीं रहना पड़ा। १८२४ ई० में इन्होंने अपना प्रसिद्ध उपन्यास 'फ़साने अजायब' कानपुर में ही लिखा। लखनऊ का वर्णन करते हुए 'सरूर' ने इस उपन्यास में एक ग़ज़ल लिखी है, जिसका मतला इस प्रकार है—

ता अबद क़ायम रहे फ़रमा रवाए लखनऊ,
यह नसीरुद्दीन हैदर बादशाहे लखनऊ।

१८४७ ई० में 'सरूर' वाजिदअली शाह के दरबारी कवि नियुक्त हुए। उन दिनों इन्होंने कितने ही क़सीदे और क़िस्से लिखे। लखनऊ पर आपत्ति आई तो ये जीविकाहीन होगए और बड़े कष्ट में रहे। अन्त को काशी-नरेश श्री ईश्वरीनारायण सिंह ने इन्हें अपने यहाँ आश्रय दिया। काशी में रहकर इन्होंने छोटी-छोटी किताबें लिखीं, जिनमें 'शिगूफ़ए मुहब्बत', 'गुलज़ारे सरूर', 'शबस्ताने सरूर' आदि उल्लेखनीय हैं। इनको महाराज अलवर और महाराज पटियाला ने भी पुरस्कृत किया था। 'सरूर' एक बार आँखों के इलाज के सिलसिले में कलकत्ता गए थे, और वहाँ वाजिदअली शाह से भी मिले थे। अनेक स्थानों में घूम-फिर कर अन्त को ये लखनऊ हो आगए। वहाँ कुछ दिनों रह कर फिर बनारस गए और १८६७ ई० में बनारस में ही इनका देहान्त हुआ। सरूर के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में लोगों में मतभेद है। कुछ इनकी जन्मभूमि आगरा बताते हैं, और कहते हैं कि लखनऊ में तो इनकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। जो हो, परन्तु इतना निश्चित है कि लखनऊ से इनको बड़ा प्रेम था और ये उसे ही अपनी जन्म-भूमि समझते थे।

सरूर ने कितनी ही किताबें लिखीं, पर उनमें 'फ़साने अजायब' नामक उपन्यास बहुत प्रसिद्ध हुआ। यदि यह कहा जाय कि इनकी प्रसिद्धि का मुख्य कारण 'फ़साने अजायब' ही है, तो कुछ अनुचित न होगा। यह उपन्यास एक कल्पित प्रेम-कथा के आधार पर लिखा गया है। इसे नवयुवक लोग बहुत पसन्द करते हैं। इस क़िस्से की भाषा में—जैसा कि उस समय रिवाज था—कृत्रिमता अधिक है। मानव-हृदय का चित्रण बहुत ही कम हुआ है। लखनऊ के रीति-रिवाज और वहाँ की तत्कालीन चहल-पहल का वर्णन ख़ूब है। भाषा में स्वाभाविकता नहीं है। वह बेमुहावरे और कठिन है। इसका कारण शायद उसका अनुप्रास-युक्त होना है। वैसे उसमें आकर्षण है। इस उपन्यास को पढ़ते समय लखनऊ का सजीव चित्र आँखों के आगे अङ्कित हो जाता है। जिस चीज़ का वर्णन किया है, कमाल कर दिया है। स्थान-स्थान पर दीगई उपयुक्त कविताओं ने पुस्तक की शोभा को और भी बढ़ा दिया है। उस समय ऐसी पुस्तक का लिखा जाना साधारण बात न थी। इसने उर्दू में कहानी-कला का द्वार खोल दिया। पुराने ढंग के उर्दू गद्य-लेखकों में सरूर का स्थान बहुत ऊँचा है। इनकी लेखन-शैली अनुपम है। एक युग था, जब सरूर की लेखनी की धाक थी। इन्होंने प्रायः अपनी सब ही चीज़ों में लखनऊ का वर्णन किया है। वहाँ की सोसाइटी का सजीव चित्र खींचा है। ये कविता भी करते थे। मिर्ज़ा ग़ालिब से इनका ख़ूब मेल-जोल और पत्र-व्यवहार था। ग़ालिब ने इनके 'फ़साने अजायब' की प्रशंसा की है। सरूर की चिट्ठियाँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें उनकी विशेष शैली की छाप है।

मुंशी सज्जाद हुसेन—ये १८५६ ई० में काकोरी में पैदा हुए। मुंशी मंसूरअली डिपुटी कलक्टर के बेटे थे। शिक्षा-दीक्षा के अनन्तर इन्होंने १८७७ ई० में अपना हास्य-रस प्रधान पत्र 'अवध पञ्च' निकाला, जो बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुआ। उर्दू में इस विषय का यह पहला ही पत्र था। इस पत्र से जहाँ उर्दू की बहुत बड़ी सेवा हुई,

मसनवी भी ख़ूब लोक-प्रिय हुई। 'शौक़' का एक दीवान भी प्रकाशित हो गया है। अपने अन्तिम समय में इन्हें रामपुर-दरवार का ाश्र य प्राप्त था।

पं० रतननाथ 'सरशार'—इनका जन्म १८४६ या १८४७ ई० में लखनऊ के एक प्रतिष्ठित काश्मीरी परिवार में हुआ। अरबी, फ़ारसी और अँगरेज़ी भाषाओं के अच्छे ज्ञाता । आरम्भ में स्कूल के अध्यापक हुए, उसी समय 'अवध पञ्च' आदि में ख लिखने लगे। अनुवाद करने में भी इनकी अच्छी गति थी। इन्होंने एक अँगरेज़ी किताव का अनुवाद 'शम्सुल जहाँ' नाम से किया। इसी समय ये 'अवध अख़बार' के एडीटर नियुक्त हुए। इन्होंने अपने सुप्रसिद्ध उपन्यास 'फ़साने आज़ाद' का प्रारम्भ इसी अख़बार से किया था। 'अवध पञ्च' में यह उपन्यास निरन्तर धारावाही रूप से निकलता रहा, फिर १८८० ई० में यह पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुआ और बहुत पसन्द किया गया। इनकी पुस्तकों में 'सैरे कुहसार', 'जामे सरशार', 'कामिनी और ख़ुदाई फ़ौजदार' आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। 'कड़मधम', 'विछुड़ी दुलहिन', तूफ़ाने वेतमीज़ी', 'पी कहाँ', 'रँगे स्यार' आदि उपन्यास भी अच्छे हैं। 'सरशार' ने कई अँगरेज़ी किताबों के अनुवाद किये हैं। ये कुछ दिनों इलाहावाद हाईकोर्ट में अनुवादक भी रहे थे। १८९५ ई० में हैदरावाद वुलाये गये और वहाँ महाराज सर किशनप्रसाद ने अपनी रचनाओं के संशोधन का कार्य इनको सौंपा। इन्होंने 'काश्मीरी दर्पण' में हैदरावाद-वर्णन वड़ी सुन्दरता से किया है। सरशार, को मासिक वृत्ति तो मिलती ही थी, साथ ही इनकी शेरें पसन्द आने पर दरवार की ओर से फ़ी शेर एक अशरफ़ी भी दी जाती थी। कुछ दिनों इन्होंने 'दवदवे आसिफ़िया' का सम्पादन भी किया था। हैदरावाद में इन्होंने 'चञ्चल' और 'गोरे ग़रीवाँ' नामक उपन्यास लिखे। ये मदिरापान वहुत करते थे, जिससे इनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ा और १९०२ ई० में इनका हैदरावाद में ही देहान्त हो गया।

उर्दू में अँगरेज़ी ढंग पर उपन्यास लिखने का कार्य 'सरशार' ने प्रारम्भ किया था। ये उपन्यासकार के अतिरिक्त शायर भी बड़े अच्छे थे। 'अमीर' के शिष्य थे। इनका एक क़सीदा है और 'तुहफ़ए सरशार' नामक एक मसनवी भी। ये बड़े मस्त मौला थे। साम्प्रदायिकता इनके पास भी न फटकती थी। इनकी बातचीत में बड़ा रस था। हास्य के फ़व्वारे छोड़ते रहते थे। कभी किसी की चापलूसी न करते थे। ये पत्रकार, ग्रन्थकार, कवि, भाषा-शास्त्री और हास्य-लेखक थे। 'सरशार' लिखते समय सोचते-विचारते कम थे, जो मन में आया लिखना प्रारम्भ कर दिया। ये अपने लिखे को दुबारा शायद पढ़ते भी न थे। इसीलिए इनकी रचनाओं में कहीं-कहीं विशृङ्खलता और शिथिलता पाई जाती है।

'सरशार' की प्रसिद्ध पुस्तक 'फ़साने आज़ाद' के सम्बन्ध में स्वर्गीय पं० विशननरायन 'दर' ने लिखा है—"क़िस्से का प्लाट तो बहुत सादा है, बल्कि हद दरजे बेमज़ा है, मगर ढाई हज़ार गुंजान सफ़े पढ़ते चले जाइए, ज़रा बदमज़ा नहीं हूजियेगा; बल्कि सतर-सतर पर इश्तियाक़ (औत्सुक्य) बढ़ता जायगा। महज़ इस वजह से कि इबारत आराई ग़ज़ब की है। तर्ज़े अदा निहायत बेतकल्लुफ़ और आसान, ताज़ा और नेचुरल, तमसीली और वाज़ह। फिर उसके साथ जाबजा पुरलुत्फ़ ज़राफ़त (हास्य), फड़कते हुए फ़िक़रे, मज़ेदार शोख़ियाँ, तुर्की-ब-तुर्की जवाब, हिमाक़त आमेज़ मज़हक़ बातें जिनको पढ़ कर हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। × × ×।" असली क़िस्से को एक खूँटी समझना चाहिए, जिस पर हज़ारों घटनाएँ टँगी हुई हैं। और इन्हीं भिन्न-भिन्न घटनाओं को पढ़ने में सारा लुत्फ़ आता है। 'फ़साने आज़ाद' में लखनऊ के सामाजिक जीवन का चित्र खींचा जाता है। मुसलमान औरतों की घरेलू बोलियाँ लिखने में कमाल किया है। पेशेवरों की परिभाषाएँ बड़ी ख़ूबी से प्रयुक्त की गई है। न जाने इन सब बातों का इतना ज्ञान सरशार को कैसे प्राप्त हुआ। 'फ़साने आज़ाद' में एक दिलचस्प क़िस्से द्वारा हिन्दुस्तान के विविध वर्गों

और सम्प्रदायों का वर्णन ऐसी सुन्दरता से किया है कि पाठक की तबीअत फड़क उठती है। इसमें शृङ्गार, हास्य, रौद्र, करुण, वीर, भयानक, वीभत्स आदि सब ही रसों का समावेश है। 'जामए सरशार' में अपव्ययिता के दुष्परिणाम दिखाये गये हैं। इन्होंने 'अलिफ़ लैला' के क़िस्से को उपन्यास के ढंग पर लिखा है। 'सैरे दरबार' में नवाबों की अय्यारी का मार्मिक चित्र अङ्कित किया गया है। 'कामिनी' शृङ्गार प्रधान उपन्यास है।

मौलवी अब्दुल हलीम 'शरर'—इनका जन्म १८६० ई० में, लखनऊ में हुआ। इनके नाना अवध के शाही दरबार से सम्बन्ध रखते थे। नाना के कारण ये भी शाही परिवार के साथ मटियाबुर्ज कलकत्ते में रहे। वहाँ अरबी, फ़ारसी, अँगरेज़ी और चिकित्सा-शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। १६ साल की उम्र में ये कलकत्ते से लखनऊ आए, यहाँ भी पढ़ना-लिखना जारी रक्खा। फिर देहली जाकर अध्ययन किया। विशेष रूप से अरबी और अँगरेज़ी पढ़ी। इन्हीं दिनों इन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने शुरू किये। 'अवध अख़बार' में भी बहुत कुछ लिखा, जिससे इन्हें १८८१ ई० में इस अख़बार के सम्पादकीय विभाग में स्थान मिल गया। 'अवध अख़बार' में पहुँचकर इनकी प्रतिभा का अच्छा विकास हुआ। ऐसे लेख लिखे जिनकी ख़ूब तारीफ़ हुई और हैदराबाद तथा अन्य रियासतों से इनके लिए निमन्त्रण आए। 'रूह' शीर्षक इनका लिखा लेख सर सैयद साहब को बहुत पसन्द आया। इन्हीं दिनों इन्होंने अपने एक मित्र के नाम से 'महशर' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला, जिसकी ख़ूब धूम मची। इस पत्र की उर्दू टकसाली होती थी, लोग उसे बहुत पसन्द करते थे। अख़बारी उर्दू पर अब तक उसका प्रभाव है। फिर 'शरर' ने 'अवध अख़बार' से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया और 'दिलचस्प' नामक एक सामाजिक उपन्यास (दो भागों में) लिखा। इसमें समय और दृश्यों का बड़ा ही सुन्दर और स्वाभाविक वर्णन है। इसके कुछ काल पश्चात्

'शरर' ने 'दुर्गेश नन्दिनी' नामक नाटक का उर्दू अनुवाद किया। १८८७ ई० में इन्होंने अपना 'दिल गुदाज़' नामक मासिक पत्र निकाला। इस पत्र की भी ख़ूब धूम मची और वह बहुत लोक-प्रिय सिद्ध हुआ। इस पत्र में कितने ही उपन्यास धारावाही रूप से निकाले गए, जो पीछे पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुए। अब तक इनके अनेक संस्करण हो चुके हैं। 'शरर' के नाविलों में इतिहास विशेष कर इसलामी इतिहास का वर्णन है। 'फ़रदोसवरीं' भी इनका ऐसा ही उपन्यास है। इन्होंने 'मुहज्ज़िब' नाम का भी एक अख़बार निकाला था। फिर 'गुदाज़' और 'मुहज्ज़िब' दोनों को बन्द कर ये हैदराबाद चले गए। १८९५ ई० में ये इङ्गलैण्ड गये और चौदह महीने वहीं रहे। इन दिनों इन्होंने फ़्रेंच का भी अभ्यास किया। १९०४ ई० में लखनऊ वापस आकर 'गुदाज़' का पुनः प्रकाशन प्रारम्भ किया। 'शरर' की लेखन-शैली अपना एक विशेष स्थान रखती है। इन्होंने अँगरेज़ी साहित्य की विशेषताओं और सुन्दरताओं को उर्दू में दाख़िल किया है, परन्तु उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं में फ़ारसीपन ही निवाहा है। इनकी लिखी १०२ पुस्तकें हैं, जिनमें कुछ पुस्तकों के नाम ये हैं—'मंसूर मोहना', 'शौक़ीन मलिका', 'मुक़द्दस नाज़नीन', 'मीनाबाज़ार', 'नेकी का फल', 'हुस्न का डाकू', 'खौफ़नाक मुहब्बत', 'ज़वाले बग़दाद', 'शहीदे वफ़ा', 'अय्यामे अरब', 'फ़तेह अन्दलस' इत्यादि। इनके अतिरिक्त इन्होंने दो बड़े इतिहास-ग्रन्थ भी लिखे हैं—'तारीख़ सिन्ध' और 'तारीख़ अली मुक़द्दस'। ये दोनों किताबें इसलाम से सम्बन्ध रखती हैं। 'शरर' रूढ़िवाद के कट्टर विरोधी थे। स्त्रियों के परदे के विरुद्ध इन्होंने बड़ा आन्दोलन किया था। 'परदए इसमत' नाम का एक पत्र भी निकाला था। हिन्दू-मुसलमानों में एकता पैदा करने के लिए, इन्होंने १९०४ ई० में 'इत्तहाद' नामक पाक्षिक पत्र भी प्रकाशित किया। 'ज़रीफ़' और 'दिल अफ़रोज़' का सम्पादन भी किया। 'मज़ामीन शरर' के नाम से इनके फुटकर लेखों का एक बड़ा संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। १९२४ ई० में इनका देहान्त हुआ।

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'रुसवा'—रुसवा का जन्म १८५८ ई० में, लखनऊ में हुआ था। ये अरबी, फ़ारसी आदि भाषाओं पर अच्छा अधिकार रखते थे। अंग्रेज़ी में बी० ए० पास किया था। दर्शन-शास्त्र में पी० एच० डी० की उपाधि ली थी। ये बड़े साहित्यकार और प्रसिद्ध कवि थे। इनकी लेखन-शैली बड़ी सरस, सरल और स्वभाविक है। कविता में 'रुसवा' मिर्ज़ा 'ज़ौक़' के शिष्य थे। ये पहले तो 'ग़ालिब' की शैली पर कविता करते थे, किन्तु फिर ढंग बदल दिया और बड़ी सरल पद्धति का अनुसरण किया। इनका लिखा 'उमराव जान अदा' नामक उपन्यास बहुत प्रसिद्ध है। इसकी कहानी सुसंघटित और घटनाएँ क्रमबद्ध हैं। इससे पूर्व उर्दू उपन्यासों में ऐसा प्रायः कम होता था। 'उमराव जान अदा' में भावों और घटनाओं का चित्रण बड़ी स्वाभाविक रीति से हुआ है। लखनऊ के सामाजिक जीवन का सुन्दर और सजीव चित्र खींचा गया है। मिर्ज़ा ने मानव-स्वभाव का ख़ूब अध्ययन किया था। ये भावों के चतुर चितेरे थे। इनकी ख्याति मुख्यतः उपन्यासों के कारण ही हुई। ये उस्मानिया यूनिवर्सिटी के अनुवाद-विभाग में भी काम कर चुके थे। १९३१ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों का संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जाता है—

'उमराव जान अदा' यह लखनऊ की एक पढ़ी-लिखी वेश्या का आत्म-चरित है। भाषा बोलचाल की है। इसमें लखनऊ के रहन-सहन का बड़ा अच्छा वर्णन किया गया है। 'बहराम की रिहाई'—एक आशिक़ाना नाविल है। 'लैला मजनूँ'—यह एक नाटक है। 'ख़ूनी भेद', 'ख़ूनी शाहज़ादा', 'ख़व्ती बेगम' और 'ज़ात शरीफ़'—सामाजिक उपन्यास हैं। इनकी लिखी 'मसनवी नौ बहार', 'सुबह उम्मेद' आदि पुस्तकें भी बहुत अच्छी हैं।

हकीम मुहम्मद अली—इन्होंने पं० रतननाथ 'सरशार' की शैली पर उपन्यास लिखने की चेष्टा की है। ये अपने समय के

प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक थे। 'तबीब' उपनाम था। इनके लिखे कुछ उपन्यासों के नाम नीचे दिये जाते हैं—'गोरा', 'इबरत', 'अख़्तरी-हसीना', 'नील का साँप' (अंग्रेज़ी उपन्यास का अनुवाद), 'हुस्ने रुरूर,' 'राम प्यारी ', 'देवल देवी' इत्यादि।

मौ० बशीरुद्दीन अहमद—इनका जन्म १८६१ ई० में देहली में हुआ। ये सुप्रसिद्ध विद्वान् मौलाना नज़ीर अहमद के पुत्र थे। इन्होंने अरबी, फ़ारसी और उर्दू की शिक्षा घर पर ही प्राप्त की। पढ़-लिखकर हैदराबाद में नौकरी की। वहाँ से पेन्शन लेकर देहली चले आए। ये सामाजिक विषयों को कहानी या उपन्यास का रूप देने में सिद्धहस्त थे। इनके उपन्यासों का अच्छा आदर हुआ। इतिहास में भी इन्हें बड़ी रुचि थी। स्त्री-शिक्षा के भी ये बड़े समर्थक थे। इस विषय पर 'इक़बाले दुलहन' और 'हुस्ने मुआशरत' आदि पुस्तकें भी लिखी हैं। देहली और बीजापुर के शासन से सम्बन्ध रखने वाले महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना की है। ये कविता भी अच्छी करते थे। १६२७ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'लख़्ते जिगर', 'निशाते उम्र', 'शम-ए-हिदायत', 'बच्चियों से दो-दो बातें', 'दीवान बशीर', 'असाए पीरीं' (बृद्धों के लिए), 'मसनवी दर्दे दिल', 'हरजे तिफ़लाँ', 'हिकायाते लतीफ़ा', 'लतायफ़ अजीबा', 'वाक़आत दारुल हुकूमत', 'फ़रामीन सुलातीन' (बादशाहों के फ़रमानों की नक़लें), 'वाक़आत मुमलकत बीजापुर', 'इन्शाए बशीर' इत्यादि।

अलामा राशिदुल ख़ैरी—इनका जन्म १८७० ई० में देहली में हुआ। ये उर्दू, फ़ारसी और अरबी के उद्भट विद्वान् थे। अँगरेज़ी भी अच्छी जानते थे। इन्होंने कुछ दिनों सरकारी नौकरी भी की। इनकी रचनाओं में करुण रस प्रधान पुस्तकें अधिक हैं। स्त्रियों पर होने वाले अत्याचारों का इन्होंने बड़ा ही कारुणिक वर्णन किया है। ये पत्रकार, साहित्यकार और प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक थे। इनकी अनेक पुस्तकें हैं,

जो वहुत लोकप्रिय हुई हैं। १९३२ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम ये हैं—'हयातेसालह', 'सुवह ज़िन्दगी', 'शाम ज़िन्दगी', 'नौहा ज़िन्दगी', 'अरूस करवला', 'ज़हरा मग़रव', 'सतवन्ती', 'जौहरे क़दामत', 'तमग़ए शैतानी', 'वेले में भेला', 'तफ़सील इसमत', 'अँगूठी का राज़' इत्यादि। अलामा साहब की अधिकांश पुस्तकें उपन्यास या कहानी-क़िस्सों के रूप में हैं। उनमें नीति, साहित्य, इतिहास, समाज-सुधार आदि सभी विषयों का समावेश है। ये 'मुसव्वरे ग़म' अर्थात् करुण रस के आचार्य कहे जाते हैं। इनकी लिखी धर्म सम्बन्धी भी अनेक किताबें हैं। 'दादा लालबुझक्कड़' आदि पुस्तकें पढ़ने से इनकी हास्य-प्रियता प्रकट होती है।

नियाज़ फ़तेहपुरी—नियाज़ साहब १८८७ ई० में फ़तेहपुर (यू० पी०) में पैदा हुए। इनके पिता अमीर ख़ाँ अपने समय के अच्छे कवि थे। नियाज़ अरवी और फ़ारसी के प्रसिद्ध विद्वान् थे। अँगरेज़ी और तुर्की भी जानते थे। इन्होंने वहुत दिनों तक कितने ही दैनिक पत्रों में काम किया, फिर 'निगार' नामक उर्दू का उत्कृष्ट साहित्यिक पत्र निकाला, जो प्रारम्भ में भूपाल से और फिर लखनऊ से प्रकाशित हुआ। इनकी लेखन-शैली निराली है। ये पद्य के ढंग का गद्य अधिक पसन्द करते हैं। इन्होंने पुराने ढर्रे को छोड़कर एक नयी शैली का अनुकरण किया है। इनके उपन्यास और क़िस्से वहुत लोक-प्रिय हुए हैं। ये कविता भी वड़ी सुन्दर करते हैं। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—

'गहवारए तमद्दुन' में राजनैतिक विकास में नारी ने कितना भाग लिया, इस वात को ऐतिहासिक आधार पर सिद्ध किया है। 'सहावियात'—इसमें ५८ स्त्रियों की जीवनियाँ हैं। 'जज़वाते भाषा'—इसमें चुनी हुई हिन्दी कविताओं का संग्रह है। 'अलसलकुल शरिया'—मुस्तफ़ा कमाल पाशा की एक प्रसिद्ध पुस्तक का अनुवाद है। 'मजमूआ इस्तफ़सारो ज़वाल' (दो खण्डों में)—इसमें साहित्यिक और ऐतिहासिक सैकड़ों समस्याओं का विवेचन है।

उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त 'निगारिस्तान', 'जमालिस्तान', 'शहाब की सर गुज़िश्ता' आदि में नियाज़ की कहानियाँ संगृहीत हैं। 'मक्तूबाते नियाज़' में इनके साहित्यिक पत्रों का संग्रह है। इनके सिवा इनकी लिखी 'शायर का अंजाम', 'मज़ाकरात नियाज़' आदि पुस्तकें भी हैं। नियाज़ ने महाकवि रवीन्द्रनाथ की विश्व-विख्यात पुस्तक 'गीताञ्जलि' का भी उर्दू में बड़ा सुन्दर अनुवाद किया है।

ख़्वाजा हसन निज़ामी—ख़्वाजा साहब का जन्म २५ दिसम्बर १८७८ ई० को देहली में हुआ। ये अरबी, फ़ारसी तथा उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान् हैं। पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने की इनकी प्रवृत्ति बचपन से ही है। ये अब तक लगभग १५० पुस्तकें लिख तथा सम्पादित कर चुके हैं। इनकी लेखनी की विशेषता यह है कि उसके द्वारा साधारण-सी बातें भी बड़ी आकर्षक और प्रभावपूर्ण बन जाती हैं। निज़ामी साहब की भाषा अत्यन्त रोचक, सरस, सरल और ओजस्विनी होती है। इन्होंने कितने ही नये शब्द भी घड़े हैं। लेखों में अधिकतर ये सरल शब्दों और छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग करते हैं। इनकी भाषा देहली की टकसाली भाषा है। इन्होंने सबसे प्रथम देश की दरिद्रता को लक्ष्य में रखकर 'मुफ़लिसी का मुजर्रब इलाज' नामक पुस्तक लिखी थी। ये हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध सूफ़ी हैं, मुसलमानों पर बड़ा प्रभाव रखते हैं। इन्होंने ग़दर के सम्बन्ध में बारह पुस्तकों की एक सीरीज़ भी लिखी है, जिसमें उन दिनों के संकटों का बड़ा ही करुण और शिक्षाप्रद वर्णन है। इनकी निम्नलिखित पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध हैं—

'बीबी की तालीम', 'औलाद की शादी', 'जगबीती कहानियाँ', 'कॅम टू मौत' (मृत्यु की मीमांसा), 'चुटकियाँ गुदगुदियाँ' (हास्यपूर्ण लेखों का संग्रह), 'कृष्ण बीती' (श्रीकृष्ण की जीवनी), 'आप बीती' (ख़्वाजा साहब का आत्म-चरित), 'बच्चों की कहानियाँ', 'सैरे देहली', 'सफ़रनामा', 'हिन्दुस्तान' इत्यादि। इनके अतिरिक्त इसलाम धर्म से सम्बन्ध रखने वाली इनकी पचासों पुस्तकें हैं।

मुन्शी प्रेमचन्द—मुन्शीजी का जन्म १८८० ई० में, बनारस के निकट पाँडेपुर ग्राम में हुआ। ये मुंशी अजायबलाल के पुत्र थे। इनका जन्म का नाम धनपतराय था, परन्तु अपने साहित्यिक नाम 'प्रेमचन्द' से ही प्रसिद्ध हुए। प्रारम्भ में इन्होंने फ़ारसी पढ़कर अँगरेज़ी पढ़ी और एण्ट्रेंस पास कर अध्यापक हो गए। फिर धीरे-धीरे बी० ए० पास कर लिया। ये मदरसों के सब-डिपुटी इन्सपेक्टर भी रहे। प्रेमचन्दज का साहित्यिक जीवन १६०१ ई० से प्रारम्भ हुआ। पहले-पहल इन्होंने 'ज़माना' (कानपुर) में लिखना शुरू किया। १६०४ ई० में 'प्रेमा' नामक उपन्यास लिखा। १६१२ ई० में 'जलवए ईसार' और १६१८ ई० में 'बा ज़ारे हुस्न' नामक उपन्यास लिखे। इनका 'करबला' 'ज़माना' में लगातार निकलता रहा। पहले ये उर्दू में ही लिखते थे, फिर हिन्दी में भी लिखने लगे और इनकी बड़ी ख्याति हुई। छोटी-छोटी कहानियाँ लिखने में ये बड़े कुशल थे। ग्राम-जीवन का इन्होंने बड़ा ही गहरा अध्ययन किया था। अपनी रचनाओं में इन्होंने किसानों की अवस्था का बड़ा स्वाभाविक और मार्मिक चित्र खींचा है। अतिशयोक्तियाँ इन्हें पसन्द न थीं। घटनाओं को बढ़ा-चढ़ा कर भी नहीं लिखते थे। लेखन-शैली बड़ी आकर्षक और प्रभावपूर्ण है। इनकी उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ भाषा को और भी अधिक सजीव बना देती हैं। ये बड़े कलाकार और मानव-स्वभाव के चतुर चितेरे थे। इनकी रचनाओं में वीर करुण, हास्य आदि रसों का बड़ा सुन्दर परिपाक हुआ है। कहानियों के पात्रों की सजीवता और सरसता पाठक पर प्रभाव डाले बिना नहीं रहती। प्रेमचन्दजी ने अपनी सूक्ष्म प्रतिभा द्वारा देश की ग्राम-समस्याओं को सुलझाने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया है, व्यर्थ आकाश-पाताल के कुलाबे नहीं भिड़ाए। हिन्दुस्तान के ही नहीं, संसार के उपन्यासकारों में इनका ऊँचा स्थान है। हिन्दी और उर्दू दोनों पर इनका समान अधिकार रहा है। जब से इन्होंने हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया, तब से ये उपन्यास-क्षेत्र के सम्राट् बन गए। इनकी हिन्दी-कहानियों की धूम है। प्रान्तीय भाषाओं में भी

इनकी कहानियों के अनुवाद हो चुके हैं। अँग्रेज़ी और रूसी भाषाओं में भी तरजुमे हुए हैं। प्रेमचन्दजी ने राजनीति, समाज-सुधार, ग्राम्य-जीवन आदि सब ही विषयों पर सफलतापूर्वक लिखा है। ये हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रबल पोषक थे। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम ये हैं—'ज़ादराह', 'वारदात' 'आख़िरी तोहफ़ा', 'ख़्वाबे ख़याल', 'प्रेम-चालीसी', 'प्रेम-बत्तीसी', 'प्रेम-पचीसी', 'ख़ाक परवाना', 'रूहानी शादी', 'दूध की क़ीमत', 'मैदाने अमल', 'बेवा', 'पर्दए मिज़ाज', 'चौगान', 'हस्ती', 'ग़बन', 'फ़रदोस ख़याल', 'निर्मला', 'गोशए आफ़ियत', 'वाकमालों के दर्शन', 'फ़रऊन बस्ती में', 'हिन्दुस्तानी तहज़ीब', 'राम-चर्चा' इत्यादि।

हिन्दी पाठकों में प्रेमचन्दजी बहुत प्रसिद्ध हैं, अतः उनकी हिन्दी पुस्तकों के नाम यहाँ नहीं दिये गए। इनका देहान्त १६३६ ई० में बनारस में हुआ।

श्री सुदर्शन—पं० बदरीनाथ सुदर्शन का जन्म पञ्जाब में हुआ। ये हिन्दी, उर्दू और फ़ारसी के विद्वान् हैं। संस्कृत और अँग्रेज़ी की भी बहुत अच्छी योग्यता रखते हैं। कहानी, उपन्यास और नाटक लिखने में सिद्धहस्त हैं। इनकी कहानियों का कथानक बड़ा ही सुन्दर और आकर्षक होता है। पाठक की रुचि उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। ये भाषा भी बड़ी सरस और सरल लिखते हैं। भावों का चित्रण अत्यन्त सुन्दर और स्वाभाविक होता है। इनकी कहानियाँ विविध विषयों से सम्बन्ध रखती हैं। उनसे मनोरंजन तो होता ही है, शिक्षा भी ख़ूब मिलती है। ये उर्दू और हिन्दी दोनों में समान सफलता से लिखते हैं। इनका सारा जीवन कहानी-कला की उन्नति और अभिवृद्धि में ही लगा हुआ है। ये सफल और यशस्वी पत्रकार भी रहे हैं। कविता भी सुन्दर करते हैं और व्याख्याता भी बड़े अच्छे हैं। सुदर्शनजी की ख्याति हिन्दी कहानीकार की हैसियत से भी बहुत है। ये हिन्दी के गिने-चुने प्रसिद्ध कलाकारों में

समझे जाते हैं। इनको कहानी-कला पर पूरा अधिकार प्राप्त है। ये बड़े मिलनसार और हँस मुख हैं। सिनेमा-संसार में इनकी कहानियों की बड़ी धूम है। आयु ५० वर्ष के लगभग होगी।

मिर्ज़ा मुहम्मद सईद—इनका जन्म १८८६ ई० में देहली में हुआ। एम० ए०. पास कर शिक्षा-विभाग के उच्च अफ़सर (आई० ई० एस०) हुए। उस समय इस पद तक बहुत कम हिन्दुस्तानी पहुँचते थे। साहित्य-सेवा की लगन इनको छात्रावस्था से ही थी। पत्र-पत्रिकाओं में बराबर लिखते रहते थे। 'अख़्तर देहलवी' के नाम से इन्होंने बहुत लेख लिखे हैं। इनकी लेखन-शैली बड़ी सरस और स्वाभाविक है। इन्होंने अनेक उपन्यास भी लिखे हैं, जिनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। इनकी किताबों के नाम—'ख़्वाबे हस्ती', 'यासमीन', 'मज़हब और बातनी तालीम' इत्यादि।

मौ० ज़फ़र उमर—ये थाना भवन (मुज़फ़्फ़रनगर) के रहने वाले हैं। बड़ौत में भी बहुत दिनों रहे हैं। १९०२ ई० में अलीगढ़ से बी० ए० पास किया। नवाब मुहसनुल मुल्क के पर्सनल असिस्टेंट और भूपाल की सुलतान जहाँ बेगम के सेक्रेटरी रहे। १९०८ ई० में पुलिस के डिपुटी सुपरिण्टेण्डेण्ट हुए। १९२१ से १९२५ तक यू० पी० सरकार के 'पबलिसिटी आफ़िसर' रहे। १९३८ में पेन्शन लेकर अलीगढ़ रहने लगे। इनकी 'पुलिसमैन' नामक पुस्तक विविध प्रान्तों में प्रचलित है। इनके कुछ उपन्यासों के नाम ये हैं—'नीली छतरी',—इसके आठ-दस संस्करण हो चुके हैं। 'बहराम की गिरफ़्तारी', 'चोरों का क्लब, 'लाल खटारे', 'लाल छतरी'—इसके लिखने के कारण इनकी ख़ूब ख्याति हुई।

मौ० एम० असलम साहब—ये १८९३ ई० के लगभग लाहौर के एक प्रतिष्ठित परिवार में पैदा हुए। इनके पूर्वज काश्मीर के रहने वाले थे। इन्होंने उर्दू और फ़ारसी के अतिरिक्त अँगरेज़ी में भी अच्छी

योग्यता प्राप्त की। कुछ काल तक नहर-विभाग में ज़िलेदार रहे, फिर स्वास्थ्य ख़राब होने के कारण यह नौकरी छोड़ दी और साहित्य-सेवा में संलग्न हो गए। पञ्जाब में नवयुवक लेखकों में इनका अच्छा स्थान है। इनकी लिखी ५० से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इन्होंने साहित्य के प्रत्येक अङ्ग पर कुछ न कुछ लिखा है। 'मिर्ज़ाजी' नामक इनकी हास्य-रस की पुस्तक बहुत लोकप्रिय हुई है। इनकी कुछ किताबों के नाम ये हैं—'तफ़सीरे हयात' (कहानी-संग्रह), 'कारज़ोर हयात' (कहानी-संग्रह), 'मिर्ज़ाजी' (हास्यरस की कहानियाँ), 'मज़ामीन असलम' (निबन्ध-संग्रह), 'आशोब ज़माना', 'सरावे हस्ती'—(इसमें धर्म और प्रेम का युद्ध है), 'नाज़िमों की आप बीती' (एक सामाजिक कहानी), 'पैमाने वफ़ा', 'महदी' इत्यादि।

फ़ैयाज़ अली साहब—इनका जन्म फ़ैज़ाबाद के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। ये मुंशी इम्तियाज़अली एडवोकेट के बेटे हैं। इनकी शिक्षा अलीगढ़ में हुई और बी० ए०, एल-एल० बी० की परीक्षाएँ पास कीं। अँग्रेज़ी और उर्दू पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने की ओर इनको रुचि प्रारम्भ से ही है। इनका 'शमीम' नामक सामाजिक उपन्यास बहुत प्रसिद्ध है। इसमें आधुनिक रहन-सहन और मानव-हृदय का बड़ा सुन्दर चित्रण किया गया है। 'अनवर' नामक उपन्यास भी बहुत सुन्दर है।

सुल्तान हैदर साहब 'जोश'—जनाब सुल्तान हैदर साहब 'जोश' पुराने साहित्यकार हैं। हिन्दुस्तानियों को पश्चिमी अन्धानुसरण से बचाने का पूरा प्रयत्न करते रहते हैं। इसी उद्देश्य को दृष्टि-पथ में रख कर इन्होंने अनेक उपन्यास, कहानियाँ और निबन्ध लिखे हैं। कहीं-कहीं बड़े सुन्दर और शिष्ट व्यंग्य भी किये हैं। इनकी शैली बड़ी सरल, सुस्पष्ट, प्रौढ़ और आकर्षक है। दार्शनिक तथा गम्भीर विषयों पर भी इन्होंने अनेक विद्वत्तापूर्ण निबन्ध लिखें हैं। इनकी कुछ रच-

नाएँ तो बड़ी ही महत्त्वपूर्ण, मौलिक और मार्मिक हैं। ये डिपुटी कलक्टर हैं। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'फ़साना जोश'—जोश की कहानियों का संग्रह। 'जोश फ़िक्र'—लेखों का संग्रह। 'नवाब मज़ोद', 'सब्र की देवी', 'मसावात', 'इत्तफ़ाक़ात ज़माना' इत्यादि।

सैयद नासिर नज़ीर 'फ़िराक़'—हकीम ख़्वाजा सैयद नासिर नज़ोर 'फ़िराक' का जन्म १८६५ ई० में देहली में हुआ। ये मौलाना मीर मुहसन के बेटे थे। इनकी शिक्षा घर पर ही हुई। उर्दू, फ़ारसी और अरबी का सम्यक् रीति से अध्ययन, कया। चिकित्सा-शास्त्र भी पढ़ा। इनके साहित्य-गुरु प्रो० मुहम्मदहुसेन 'आज़ाद' थे। फ़िराक़ की गद्य-पद्यात्मक रचनाओं की ख़ूब धूम रही। बहुत दिनों तक ये नवाब धरमपुर के पुत्रों के शिक्षक और पारिवारिक चिकित्सक भी रहे। १९३३ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये उर्दू के प्रसिद्ध साहित्य-कार थे। इनकी रचनाओं के प्रेमी दूसरे देशों में भी मौजूद हैं। मुग़ल-सभ्यता पर इन्होंने कई अच्छी कितावें लिखी हैं। इनको कुछ कितावों का परिचयः—'मैख़ाना दर्द'—इसमें मीर 'दर्द' का वर्णन है। 'दिल्ली का आख़िरी दीदार'—इस उपन्यास में मुग़ल-शासनकालीन सामाजिक जीवन का चित्र खींचा गया है। 'दिल्ली का उजड़ा हुआ लाल क़िला'—इसमें दिल्ली के अन्तिम बादशाह 'ज़फ़र' के पुत्र मिर्ज़ाशाह के शिकार का वर्णन है। 'मज़ामीन फ़िराक़'—इसमें फ़िराक़ के लिखे निवन्ध संगृहीत हैं। 'लाल क़िले की एक झलक'—इसमें मुग़ल-शासन-सम्बन्धी बातों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। 'सात तला-क़िनों की कहानियाँ'—इसमें सात पति-परित्यक्ताओं ने अपनी-अपनी रामकहानी वर्णन की है। 'बेगमों की छेड़-छाड़'—इसमें विवाह की एक महफ़िल का शब्द-चित्र खींचा गया है। 'दीवान की परी'—एक मनोरञ्जक उपन्यास है। 'चार चाँद'—'फ़िराक़' के लेखों का संग्रह है। इनके अतिरिक्त इन्होंने और भी कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें से कुछ अप्रकाशित हैं।

क़ाज़ी अब्दुल ग़फ़्फ़ार साहब—ये रुहेलखण्ड (यू० पी०) के प्रसिद्ध रईस ख़ानबहादुर क़ाज़ी इबरार अहमद साहब के सुपुत्र हैं। इनकी शिक्षा अलीगढ़-कालिज में हुई। लेख लिखने की ओर इनकी छुटपन से ही प्रवृत्ति है। पढ़-लिख कर सरकारी नौकरी की, परन्तु पीछे उसे छोड़ कर साहित्य-सेवा में संलग्न होगए। ये मौलाना मुहम्मदअली के 'हमदर्द' और 'कामरेड' नामक पत्रों के सहायक सम्पादक भी रहे। इन्होंने कलकत्ता में 'जम्हूर' नामक अख़बार निकाला। इसी बीच में ये नज़रबन्द कर लिए गए। इसके पश्चात् देहली से 'सुबाह' नामक अख़बार निकाला। ख़िलाफ़त के डेपूटेशन के साथ विलायत भी गए। विलायत से आकर हैदराबाद रहे और वहाँ से 'पयाम' नामक पत्र प्रकाशित किया। इन्होंने कई किताबें भी लिखीं। इनकी सब से बड़ी किताब 'तज़किरा' जमालुद्दीन अफ़ग़ानी' है। क़ाज़ी साहब की कहानियों में आदर्श की रक्षा हुई है। इनकी रचानाएँ उर्दू साहित्य के लिए एक अद्भुत देन हैं। इनकी कुछ पुस्तकों का परिचय:—'लैला के ख़तूत'—इसमें एक अपराधिन की ओर से सौभाग्यशालिनो और निर्दोष स्त्रियों के नाम पत्र हैं। 'उसने कहा'—इसमें कहानी के रूप में प्रेम, आनन्द, सम्पत्ति आदि की व्याख्या की गई है। 'मजनूँ की डायरी'—एक शिक्षित नवयुवक के कल्पित जीवन का वर्णन है। 'अजीब'—इसमें अजीब क्लब के अजीब मेम्बरों के अजीब हालात वर्णित हैं। 'तीन पैसे की छोकरी'—आदर्श-युक्त सामाजिक कहानी है। 'सेब का दरख़्त'—गाल्स वर्दी के एक प्रसिद्ध उपन्यास का अनुवाद है। 'नक़्शे फ़रंग'—योरोप-यात्रा का वर्णन है।

सैयद सज्जाद हैदर—ये नहटौर (विजनौर) के रहने वाले हैं। १८८० ई० में इनका जन्म हुआ। उर्दू, फ़ारसी और अरबी पढ़ने के पश्चात् इन्होंने अलीगढ़ कालिज से बी० ए० पास किया। तीन साल तक बग़दाद में रहे। वहाँ से वापस आने पर डिपुटी

कलक्टर के पद पर नियुक्त हुए। डिप्टी कलक्टरी से अवकाश ग्रहण कर इन्होंने मुस्लिम यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार का कार्य भी किया। इन सब कामों को करते हुए भी ये साहित्य-सेवा में सदैव संलग्न रहे। इन्होंने कितनी ही पुस्तकें लिखीं। इस्लामी देशों की भी ख़ूब यात्रा की है। ये टर्की कई बार गए हैं, साथ ही तुर्की साहित्य को उर्दू में लाने के लिए बहुत प्रयत्नशील रहते हैं। इनकी कुछ किताबों के नाम— 'ख़यालिस्तान'—छोटी-छोटी शिक्षाप्रद कहानियों का संग्रह। 'हिकायात व अहतसासात'—इसमें भी कहानियाँ हैं। 'सालिस बिल ख़ैर'-यह एक तुर्की उपन्यास का अनुवाद है। 'ज़हरा'—यह भी तुर्की भाषा के एक उपन्यास का तर्जुमा है। इसमें तुर्क लोगों के रहन-सहन और रीति-रिवाजों का बड़ा अच्छा वर्णन है। 'पराना ख़्वाब'—यह एक तुर्की नाटक है। 'जंगो जदाल'—सामाजिक उपन्यास है। 'जलालुद्दीन ख़्वारज़मशाह'—यह भी तुर्की भाषा के एक प्रसिद्ध नाटक का अनुवाद है।

सैयद लतीफ़ुद्दीन अहमद—इनका जन्म १८८८ ई० में आगरा में हुआ। ये उर्दू और फ़ारसी के विद्वान् हैं। अंग्रेज़ी भी अच्छी जानते हैं। अपने व्यापार के सम्बन्ध में विदेश-यात्रा भी कर चुके हैं। इनकी कहानियाँ, 'मुहब्बत का फ़साना' नाम से प्रकाशित हुई हैं। इन्होंने 'टामस मूर' की एक प्रसिद्ध पुस्तक का अनुवाद 'लाल रुख़' के नाम से किया है। जीवन की साधारण-सी बातों को ये बड़ी सुन्दरतापूर्वक औपन्यासिक ढंग से लिखते हैं। इन्होंने कितनी ही अंग्रेज़ी कहानियों के अनुवाद किये हैं, जो अभी प्रकाशित नहीं हुए। इनकी पुस्तकों में 'इन्शाए लतीफ़' (कहानी-संग्रह) अधिक प्रसिद्ध है। 'नग़मात' में भी कहानियाँ संगृहीत हैं।

सैयद अली अब्बास हुसैनी—इनका जन्म १८९६ ई० में ग़ाज़ीपुर ज़िले में हुआ। अरबी और फ़ारसी अध्ययन करने के अनन्तर इन्होंने अँगरेज़ी पढ़ी और १९२४ ई० में कैनिंग कालिज

लखनऊ से इतिहास में एम० ए० पास किया। इस समय ये लखनऊ के गवर्नमेंएट जुबिली कालिज में अध्यापक हैं। इन्होंने 'सर सैयद अहमद पाशा' नामक बड़ा सुन्दर उपन्यास लिखा है। इनका सबसे पहला उपन्यास 'जज़वाते कामिल' 'ज़माना' नामक अख़बार में धारावाही रूप से प्रकाशित हुआ था। इनके 'रफ़ीक़ तनहाई' नामक कहानी-संग्रह पर 'हिन्दुस्तानी एकाडेमी' ने १९३२ ई० में इन्हें पाँच सौ रुपये का पुरस्कार प्रदान किया था। इनकी कहानियों के संग्रह 'आई० सी०एस०' और 'बासी फूल' नाम से प्रकाशित हुए हैं। सैयद साहब की कहानियों में अन्य साहित्यिक गुणों के अतिरिक्त सरलता और स्वभाविकता ख़ूब है। ये सिद्धहस्त कहानी-लेखक हैं। इनकी लेखन-शैली आकर्षक और प्रभावपूर्ण है। इनकी अधिकांश कहानियाँ वास्तविक घटनाओं के आधार पर लिखी गई हैं। ये साधारण से साधारण घटना में अपनी कलाकारी द्वारा जान डाल देते हैं।

'मजनूँ' गोरखपुरी—हज़रत अहमद सिद्दीक़ 'मजनूँ' का जन्म १९०२ ई० में बस्ती ज़िले में हुआ। ये बहुत दिनों तक अपनी ननसाल गोरखपुर में रहे। इसीलिये 'मजनूँ' गोरखपुरी के नाम से प्रसिद्ध हैं। उर्दू-फ़ारसी पढ़ने के अतिरिक्त इन्होंने दो विषयों में एम० ए० किया है। इस समय ये इएटरमीडिएट कालिज गोरखपुर में प्रोफ़ेसर हैं। इनकी लेखन-शैली ओजस्विनी और एक विशेष प्रकार की है। उस पर पश्चिमीय प्रभाव के चिह्न स्पष्ट दिखाई देते हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में जीवन-मृत्यु की समस्याओं पर ख़ूब प्रकाश डाला है। सदाचार और प्रेम आदि विषयों की भी गम्भीर मीमांसा की है। ये गम्भीर भावों को बड़ी सुन्दरता और सरलता से व्यक्त करते हैं। इनकी कहानियाँ तो बहुतही सफल हुई हैं। उनमें मानव-समाज का चित्रण बड़ी ख़ूबी से किया गया है। कहानी-कला पर 'मजनूँ' का अच्छा अधिकार है। इनकी कुछ

किताबों के नाम—'मजनूँ के अफ़साने', 'ख़्वाबो ख़याल', 'समन पोश', इन तीनों पुस्तकों में मजनूँ की कहानियाँ संगृहीत हैं। 'समन पोश' में आध्यात्मिक (रूहानी) कहानियाँ हैं। 'अफ़साना'—इसमें कहानी-कला का विशद विवेचन है। 'शोपनहार'—इसमें जर्मन महाकवि शोपनहार की जीवनी तथा उनकी दार्शनिकता का उल्लेख है।

मिसेज़ हिजाब इम्तयाज़ अली—मिसेज़ हिजाब इम्तयाज़-अली की लेखनी में कहानी लिखने की अद्भुत शक्ति है। उर्दू-कहानीकारों में ये अच्छा स्थान रखती हैं। ये प्रतिष्ठित उर्दू-पत्र-पत्रिकाओं में बहुत दिनों से लेख लिख रही हैं। 'अशयार मन्सूर' और 'नग़माते मौत' शीर्षक इनकी रचनाएँ बहुत लोक-प्रिय हुई हैं। इनकी गणना उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकारों में है। 'सनोवर के साये', 'मेरी नातमाम मुहब्बत', 'लाश', 'काउण्ट अलीयास की मौत', 'नग़माते मौत', 'अद्बे जरीं' इत्यादि पुस्तकों में मिसेज़ इम्तयाज़ अली की लिखी उत्कृष्ट कहानियाँ संगृहीत हैं। इन कहानियों में भावों के शब्द-चित्र बड़ी सुन्दरता से अङ्कित किये गए हैं। मानव-स्वभाव की बड़ी ख़ूबी से अभिव्यक्ति हुई है। इनमें करुण, भयानक, रौद्र, वीर, शृंगार आदि अनेक रसों का आस्वादन होता है। मिसेज़ हिजाब स्वयं प्रसिद्ध लेखिका हैं और सुप्रसिद्ध उर्दू-साहित्यकार मौ० इम्तयाज़ अली साहब की पत्नी हैं।

मिर्ज़ा फ़रहत उल्ला बेग—ये १८८६ ई० में पैदा हुए। इन्होंने मिशन कालिज देहली से बी० ए० पास कर हैदराबाद (दक्षिण) में नौकरी की, और अब वहाँ सेशन जज के पद पर प्रतिष्ठित हैं। पहले ये गम्भीर विषयों पर लेख लिखते थे। फिर इन्हें उर्दू में हास्य रस की रचनाओं का अभाव खटका, अतः इन्होंने इसी ओर अपनी प्रवृत्ति की। इन्होंने हास्य रस सम्बन्धी अनेक लेख लिखे, जो बहुत पसन्द किये गए। इन लेखों का संग्रह 'मज़ामीन फ़रहत' नाम से (पाँच भागों में) प्रकाशित हुआ है। इनकी कविताओं का

संग्रह 'मेरी शायरी' के नाम से निकला है। उर्दू के हास्य रस-लेखकों में मिर्ज़ा साहब का बहुत ऊँचा स्थान है। इन्होंने साहित्य के गम्भीर विषयों पर भी बहुत लिखा है, परन्तु हास्य रस की झलक वहाँ भी आगई है, जो बहुत ही सुन्दर और स्वाभाविक मालूम देती है। मिर्ज़ा साहब ने अपनी रचनाओं में अनेक स्थलों पर दिल्ली की बोल-चाल की भाषा का प्रयोग किया है।

पतरस—सैयद अहमद शाह 'पतरस', बुख़ारी का जन्म १ अक्टूबर १८९८ ई० को पेशावर में हुआ। साहित्य-सेवा की ओर इनकी प्रवृत्ति बचपन से ही है। ये लाहौर के सेण्ट्रल ट्रेनिङ्ग कालिज और गवर्नमेण्ट कालिज के प्रोफ़ेसर रहे, फिर देहली ब्राडकास्टिंग स्टेशन के डिपुटी कण्ट्रोलर हो गए। इन्होंने कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से अंग्रेज़ी में 'आनर्स' की ऊँची उपाधि प्राप्त की है। ये अँग्रेज़ी साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् हैं। उर्दू से भी बड़ा प्रेम रखते हैं। उत्कृष्ट और शिष्ट हास्य लिखने में सिद्धहस्त हैं। इनका व्यंग्य बड़ा चुटीला और सूक्ष्म होता है। ये निरुद्देश्य हास्य कभी नहीं लिखते। सार्थकता पर पूरा ध्यान रखते हैं। इनके हास्य रस सम्बन्धी लेखों से समाज के सुधार और उद्धार में बड़ी सहायता मिली है। इन्होंने अपने लेखों में पश्चिमीय चाल-ढाल, रहन-सहन और रीति-रिवाज का ख़ूब वर्णन किया है। 'पतरस' के हास्य रस सम्बन्धी लेखों का संग्रह 'पतरस के मज़ामीन' नाम से प्रकाशित हुआ है।

मिर्ज़ा अज़ीम बेग चग़ताई—मिर्ज़ा अज़ीम बेग चग़ताई, ख़ान बहादुर मिर्ज़ा क़ासिम बेग चग़ताई डिपुटी कलक्टर के पुत्र थे। आगरा के रहने वाले थे। अलीगढ़ से बी० ए०, एल-एल० बी० की परीक्षा पास की। इनकी शिक्षा नवाब मुहम्मद मजमल उल्लाह ख़ाँ साहब की संरक्षता में हुई। पढ़-लिखकर इन्होंने जोधपुर में वकालत शुरू की, फिर वहाँ जज नियुक्त हो गए। अस्वस्थता के

कारण इन्हें यह नौकरी छोड़नी पड़ी और युवावस्था में ही इनका देहान्त हो गया। कहानियाँ लिखने में इनकी छुटपन से ही रुचि थी। पत्र-पत्रिकाओं में बराबर लेख लिखते रहते थे। इनकी हास्य रस की कहानियों की ख़ूब धूम मच गई थी, और पाठक उनके लिए बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करते रहते थे। ये प्रतिभाशाली स्वभाव-सिद्ध लेखक थे। इनका हास्य सुधार का उद्देश्य लिए होता था। जो कुछ लिखते, उद्देश्य विशेष को लक्ष्य में रखकर लिखते थे। हास्य रस के लेखकों में चग़ताई साहब का स्थान बहुत ऊँचा है। हिन्दी में भी इनकी कहानियों के अनुवाद हुए, जो बहुत पसन्द किये गए। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—'कोलतार', 'रूहेज़राफ़त', 'रूहेलताफ़त', 'ख़ानम', 'कमज़ोरी', 'ख़तूत की सितम ज़रीफ़ी', 'देखा जायगा', 'क़द्रदान', 'चीनी की अँगूठी', 'शहज़ादो', 'शरीर बीबी', 'फुलबूट', 'जिन्नत का भूत', 'खुरपा बहादुर' इत्यादि।

चग़ताई-परिवार में अनेक साहित्यिक हो गए हैं। इनके चचेरे भाई मिर्ज़ा फ़हीम बेग चग़ताई भी बड़े अच्छे कहानी-लेखक हैं।

सै० शौकत थानवी—ये थाना भवन (मुज़फ्फ़र नगर) के निवासी हैं। आयु ४० साल के लगभग है। इसमें हास्य की बड़ी सुन्दर प्रतिभा है। नित्य प्रति की व्यावहारिक बातों पर ही प्रायः लिखा करते हैं। इनके हास्य में जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं की आलोचना होती है। ये सामाजिक दूषणों और कुप्रथाओं की ख़ूब मीमांसा करते हैं। लेखन-शैली स्वाभाविक, सुन्दर और आकर्षक है। भाषा विषय के अनुरूप होती है। सरल शब्दों में बड़ी महत्त्वपूर्ण बातें कहते हैं। गम्भीर से गम्भीर पाठक भी इनकी रचनाओं को पढ़कर मुस्कराने लगते हैं। ये लखनऊ से 'सरपञ्च' नामक एक साप्ताहिक पत्र भी निकालते हैं। इनकी कितनी ही पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिन में कुछ तो बहुत ही लोकप्रिय हुई हैं। इन्होंने उपन्यास भी लिखे हैं। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—'दुनियाए तवस्सुम', 'स्वदेशी रेल',

'मौजे तवस्सुम', 'बहरे तवस्सुम', 'सैलाबे तवस्सुम', 'तूफ़ाने तवस्सुम'। उपर्युक्त पुस्तकों में हास्य रस सम्बन्धी लेखों और कहानियों का संग्रह है। 'दिल फेंक', 'सौतिया डाह', 'ख़ानमख़ाँ' इत्यादि इनके हास्य रस सम्बन्धी उपन्यास हैं।

मुल्ला रमूज़ी—इनका जन्म १३१२ हिजरी में हुआ। इनके पूर्वज अफ़ग़ानिस्तान के रहने वाले थे। पश्तो इनकी मातृभाषा है। ये शाह मुहम्मद सालह के बेटे हैं। कानपुर में इन्होंने अरबी, फ़ारसी और उर्दू की शिक्षा प्राप्त की। १९२१ ई० में पहली किताब 'गुलाबी उर्दू, नामक लिखी थी। इन्होंने बहुत दिनों तक अध्यापकी की, फिर ये भूपाल चले गए। इन्हें समाज-संशोधन और धर्म की उन्नति का बड़ा ध्यान रहता है। ये बड़े स्पष्टवादी हैं। जो कुछ कहना होता है, निर्भयतापूर्वक कह डालते हैं। इनके लेखों में व्यंग्य की मीठी चुटकियाँ ख़ूब रहती हैं। जीवन के प्रायः सभी पहलुओं पर व्यंग्य होते हैं। इनकी कुछ किताबों के नाम—'सुबह लताफ़त', (हास्य प्रद लेखों का संग्रह), 'ज़िन्दगी' (कहानियों का संग्रह), 'औरत ज़ात', 'शादी', 'लाठी और भैंस', 'सवानह रमूज़ी', 'दीवान रमूज़ी', 'शफ़ाख़ाना', 'नुक़ात रमूज़ी' (दो भाग)।

मौलाना अकबरशाहख़ाँ—इनका जन्म १८७५ ई० में नजीबाबाद में हुआ। पढ़-लिखकर कई स्कूलों में अध्यापकी की, फिर लाहौर के दयालसिंह कालेज और लोकल केम्ब्रिज कालेज में प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए। 'पैग़ाम सुलह', 'ज़मीदार', 'मंसूर' आदि अख़बारों के सम्पादक रहे। १९२३ ई० में नजीबाबाद से 'इबरत' नामक पत्र निकाला। इसी समय पुस्तक-प्रणयन व प्रकाशन का काम प्रारम्भ किया। लगभग २५ किताबें लिखीं। १९३८ ई० में इनका देहान्त हुआ। मौलाना की अधिकतर किताबें इसलाम के इतिहास से सम्बन्ध रखती हैं। कुछ किताबों के नाम—'आइने हक़ीक़तनुमा', 'मुक़दमा

तारीखे हिन्द क़दीम', 'निज़ामे सल्तनत', 'तारीखे इसलाम', 'गाय और उसकी तारीखी अज़मत', 'अहक़ाक़ हक़', 'जंगे अंगोरा' इत्यादि।

मौलाना मुहम्मद असलम—इनका जन्म जैराजपुर (आज़मगढ़) में हुआ। इनके पिता मौ० सलामत उल्ला भूपाल रियासत में शिक्षा-विभाग के अधिकारी थे, अतः इनकी शिक्षा भी भूपाल में ही हुई। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे। पढ़-लिखकर इन्होंने कुछ दिनों लाहौर के 'पैसा अख़बार' में काम किया, फिर ये अलीगढ़ कालिजएट स्कूल में अध्यापक हुए। कुछ दिनों तक कालिज की लाइब्रेरी का काम भी किया। इसके पश्चात् अलीगढ़ कालिज में अरबी और फ़ारसी के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए। तदनंतर १९२१ ई० के असहयोग-आन्दोलन के समय ये कालिज छोड़कर जामिया मिल्लिया में चले गए। इनकी लिखी हुई कुछ पुस्तकों के नाम—'तारीखुल क़ुरान', 'हयाते जामी', 'हयाते हाफ़िज़', 'तारीख़ नज्द', 'तालीमात क़ुरान'।

मुंशी ज्वालाप्रसाद 'वर्क़'—ये कवि और लेखक दोनों थे। १८६२ ई० में सीतापुर में पैदा हुए। बी० ए०, एल-एल० बी० पास कर १८८५ तक इन्होंने वकालत की, फिर मुन्सिफ़ हो गए, और तरक़्क़ी करते-करते डिस्ट्रिक्ट सेशन जज के पद तक पहुँचे। १९११ ई० में इनका देहान्त हुआ। 'फ़साना आज़ाद' के ढंग पर इन्होंने बहुत कुछ लिखा है। यह शैली इन्हें बहुत पसन्द थी। 'मसनवी बहार' नामक इनकी पुस्तक बहुत प्रसिद्ध है। शायर और लेखक होने के अतिरिक्त ये अनुवादक भी बहुत अच्छे थे। इन्होंने श्रीयुत बंकिमचन्द्र चटर्जी के कई उपन्यासों का बड़ा सुन्दर अनुवाद किया है। यथा—'बंगाली दुलहिन', 'प्रताप रोहिणी', 'मृणालिनी', 'मारे आस्तीन' इत्यादि। मुंशी जी के अनुवादों में मूल पुस्तक का-सा आनन्द आता है। इन्होंने शेक्सपीयर के भी कुछ नाटकों के अनुवाद किये हैं।

मौ० सैयद हाशमी—हाशमी साहब का जन्म फ़रीदाबाद के

एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। इनके पिता सैयद अहमद शफ़ी अच्छे कवि थे। इनकी माता नवाब लुहारू की बेटी थीं। सैयद साहब ने अलीगढ़ कालिज से बी० ए० पास किया। इन्हें इतिहास में विशेष रुचि है। ये बहुत दिनों तक हैदराबाद के अनुवादविभाग में काम करते रहे, और फिर उसी विभाग के उपाध्यक्ष हो गए। ये पुराने साहित्य-सेवी हैं, हिन्दुस्तान और यूरोप के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाली इन्होंने पन्द्रह-सोलह पुस्तकें लिखी हैं। इनकी कुछ किताबें अनूदित और कुछ मौलिक हैं। साहित्य-सेवा से इनकी ख़ूब ख्याति हुई है। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'तारीख़े हिन्द', 'योरप का असरे जदीद', 'तारीख़ यूनान', 'तारीख़ सल्तनत रूमा', 'इसलामी फ़ने तामीर हिन्दुस्तान में', 'मआशी हालाते हिन्द अज़ अकबर ता औरंगज़ेब'।

सैयद हुसेन बिलग्रामी—नवाब सैयद हुसेन बिलग्रामी सी० आई० ई०, 'शम्सुल उलमा', सैयद अली बिलग्रामी के बड़े भाई थे। ये निज़ाम सरकार के अनेक ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित रहकर भारत-सचिव की कौंसिल में चले गए थे। इनके लेखों और अभिभाषणों का संग्रह 'रसायल अमादुल मुल्क' के नाम से प्रकाशित हुआ है जो उर्दू-साहित्य में बड़े आदर से देखा जाता है। इस संग्रह में कई वैज्ञानिक निबन्ध भी हैं, जो बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। इन्होंने क़ुरान का अँग्रेज़ी अनुवाद करना शुरू किया था, परन्तु वह पूरा न हो सका। इनकी अनुवाद-शैली बड़ी सुन्दर है। ये अनुवाद में मूल पुस्तक की भाव-रक्षा बड़ी ख़ूबी से करते हैं।

मौ० सैयद अली बिलग्रामी—ये १० नवम्बर १८५१ ई० को बिलग्राम के एक प्रतिष्ठित परिवार में पैदा हुए। इनके पिता सैयद ज़ैनुद्दीन ख़ाँ डिपुटी कलक्टर अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध विद्वान् थे। उर्दू और फ़ारसी की प्रारम्भिक शिक्षा के पश्चात् सैयद साहब ने अँग्रेज़ी पढ़ी और संस्कृत लेकर १८७४ ई० में बी० ए० पास किया, फिर

क़ानून, विज्ञान और इंजीनियरी का अध्ययन किया। इसके पश्चात् हैदराबाद के प्रधान मन्त्री सर सालार जंग बहादुर के साथ विलायत गए और वहाँ कई विषयों का अध्ययन किया। जर्मन और फ्रेंच भाषाएं पढ़ीं। योरोप की अन्य भाषाएं भी सीखीं। विलायत से वापस आने पर ये हैदराबाद में ऊँचे-ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित हुए। शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर और होम सेक्रेटरी भी रहे। बिलग्रामी साहब लैटिन, अँग्रेज़ी, जर्मन, फ्रेंच, अरबी, फ़ारसी, उर्दू, संस्कृत, बँगला, हिन्दी, तैलंगी, मरहठी, गुजराती आदि भाषाओं के ज्ञाता थे। संस्कृत में बड़ी सरलता और सरसता से वार्त्तालाप करते थे। मद्रास विश्वविद्यालय की संस्कृत परीक्षाओं के परीक्षक कई वर्षों तक रहे। १८९२ ई० में सरकार ने इन्हें 'शमसुलउलमा' की उपाधि प्रदान की। १९०१ ई० में पेन्शन लेकर ये विलायत चले गए और वहाँ कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में मरहठी भाषा के अध्यापक हो गए। इसी समय इन्हें इण्डिया आफ़िस की अरबी-फ़ारसी हस्तलिखित पुस्तकों की सूची तैयार करने का काम सौंपा गया। इन्होंने अधिकतर अनुवाद किए हैं, मौलिक पुस्तकें भी कई लिखीं। उर्दू में महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के अनुवाद बहुत कम थे, इस कमी की पूर्ति करने के लिए बिलग्रामी साहब ने सब से पूर्व पग बढ़ाया। इनके किए हुए कुछ अनुवादों के नाम—'असूल क़ानूने तिब'—यह 'मेडीकल जूरीसप्रूडेन्स' का अनुवाद है। इसमें अंग्रेज़ी पारिभाषिक शब्दों का बड़ा सुन्दर अनुवाद किया है। 'रिसाला दर तहक़ीक़ तालीफ़', 'किताब कलीला व दमना'—यह एक विद्वत्ता पूर्ण निबन्ध है, जो इण्डियन मुहमडन एज्यूकेशनल कानफ्रेंस में पढ़ा गया था। 'तमद्दुन अरब'—एक फ्रेंच पुस्तक का अनुवाद है। 'तमद्दुन हिन्द'—यह भी एक फ्रेंच किताब का तरजुमा है। इन्होंने एक पुस्तक 'फ़ारसी की तालीमी क़द्र बमुक़ाबले संस्कृत' नामक भी लिखी है। बिलग्रामी साहब ने अरबी में एक पत्र भी प्रकाशित किया था। इनका पुस्तकालय विशाल था, इसमें अनेक दुर्लभ और बहुमूल्य पुस्तकें संगृहीत की गई थीं।

सैयद आबिद हुसेन—इनका जन्म १८९९ ई० में हुआ। इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से बी० ए० पास किया और यूनिवर्सिटी-भर में प्रथम रहे। १९२५ ई० में बर्लिन (जर्मनी) से एम० ए०, पी०—एच० डी० की डिगरी प्राप्त की। योरोप से आकर देहली के 'जामए मिल्लिया' में दर्शन शास्त्र के अध्यापक नियुक्त हो गए। 'उर्दू एकाडमी' के सेक्रेटरी और 'जामा' के सम्पादक भी रहे। डाक्टर साहब ने अनुवादों द्वारा उर्दू की बड़ी सेवा की है। ये जर्मन भाषा बहुत अच्छी जानते हैं। इन्होंने जर्मन भाषा से भी कितनी ही किताबों के अनुवाद किये हैं। इनके अनुवाद शुद्ध सुन्दर और मुहावरेदार होते हैं। सैयद साहब की लिखी कुछ किताबों के नाम—'तारीख़ फ़िलसफ़ा इसलाम' (जर्मन भाषा से अनुवादित)। 'खुतबात ख़ालिदा ख़ानम'—इसमें प्रसिद्ध तुर्की महिला ख़ालिदा अदीब ख़ानम के आठ महत्त्वपूर्ण भाषणों का अनुवाद है। 'फ़ाउस्ट'—प्रसिद्ध जर्मन नाटक का अनुवाद है। 'क़ौम की आवाज़'—गोलमेज़ कानफ़्रेंस में दिये गए महात्मा गान्धी के भाषणों का अनुवाद। 'ज़ब्त नफ़्स'—महात्मा गाँधी की एक किताब का अनुवाद। 'तलाशे हक़'—गाँधीजी के आत्मचरित का अनुवाद (दो खण्डों में)।

मौलाना इनायतुल्लाख़ाँ—इनका जन्म १८६९ ई० में देहली में हुआ। इनके पिता शम्सुल उलमा मौलवी ज़काउल्ला थे। शिक्षा देहली, इलाहाबाद और अलीगढ़ में हुई। ये अनुवाद करने में प्रारम्भ से ही बड़ी रुचि रखते हैं। अँगरेज़ी पुस्तकों के सरल, शुद्ध और मुहावरेदार अनुवाद करने में इन्होंने अच्छी ख्याति प्राप्त की है। ये हैदराबाद में अनुवाद-विभाग के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। इन्होंने इस्लाम सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों और शेक्सपीयर के नाटकों के बड़े सुन्दर अनुवाद किये हैं। इनकी कुछ किताबों के नाम—'यूनानी शहंशाही'—'ग्रीक इम्पीरियलिज़्म' का अनुवाद है। 'पैरक और अथेन्स का दौरे इक़बाल'—अँगरेज़ी पुस्तक का अनुवाद है। 'अन्दलस का तारीख़ी

जुग़राफ़िया'। 'कुस्तुन्तीन आज़म'—अँगरेज़ी पुस्तक 'कौंस्टेण्टाइन' का अनुवाद। 'चंगेज़ खाँ'—अँगरेज़ी पुस्तक का अनुवाद। 'जापान और उसका तालीमी नज्मोनिस्क'—सर रास मसऊद की एक अँगरेज़ी पुस्तक का अनुवाद, जो उन्होंने जापान में रहकर लिखी थी। 'नानीस' फ्रेञ्च लेखक अनातोल की एक पुस्तक का अनुवाद। 'हेमलेट' और 'डांटे का जहन्नुम'—प्रसिद्ध पुस्तकों के अनुवाद। ख़्वाबे परेशाँ, (उपन्यास), 'इशाअते इसलाम' अनुवाद।

मिर्ज़ा मुहम्मद अस्करी बी० ए०—ये बहुत दिनों तक इलाहाबाद हाईकोर्ट के मुख्य अनुवादक रह चुके हैं। अँगरेज़ी, उर्दू और फ़ारसी पर अच्छा अधिकार रखते हैं। इन्होंने कितनी ही किताबों के अनुवाद किये हैं, जिनमें से कई प्रकाशित भी हो चुके हैं। राय बहादुर श्री रामबाबू सकसेना की प्रसिद्ध पुस्तक 'हिस्ट्री आफ़् उर्दू लिटरेचर' का 'तारीख़े अदब उर्दू' के नाम से उत्कृष्ट अनुवाद इन्हीं का किया हुआ है। 'मिर्ज़ा ग़ालिब की शायरी' नामक पुस्तक भी इन्होंने ही सम्पादन कर प्रकाशित कराई है। 'तारीख़े अदब उर्दू' तो उर्दू साहित्य का इतना व्यापक और महत्त्वपूर्ण इतिहास है कि उससे उर्दू सम्बन्धी सभी बातें अच्छी तरह विदित हो जाती हैं। यह बृहत् ग्रन्थ तो उर्दू साहित्य का स्थायी निधि है।

मौलाना अब्दुल मजीद 'सालिक'—इनका जन्म १८६७ ई० में बटाला ज़िला गुरुदास पुर (पंजाब) में हुआ। इनके पिता और पितामह बड़े प्रतिष्ठित विद्वान् थे। इन्होंने बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त की। कई वर्षों तक 'तहज़ीबे निसवाँ' और 'फूल' के सम्पादक रहे। 'ज़मींदार' की भी एडीटरी की। फिर 'इनक़लाब' नामक पत्र निकाला, जो अब तक चल रहा है। मौलाना ने विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की भी कुछ पुस्तकों के अनुवाद किये हैं। बच्चों के लिए भी अनेक किताबें लिखी हैं। ये कविता भी अच्छी करते हैं। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—'नया चाँद' और 'चित्रा'—रवीन्द्रनाथ की पुस्तकों

के अनुवाद। 'ख़ुदकुशी की अंजुमन' और 'राजा का हीरा'—अँग्रेजी उपन्यासों के अनुवाद। 'चम्पा'—कहानियों का संग्रह।

मौलवी ख़लीलुल रहमान—ये सलावा (मेरठ) के रहने वाले हैं। १८६८ ई० में पैदा हुए। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर पाई। लेख लिखने का शौक़ इन्हें विद्यार्थी अवस्था से ही रहा है। १८८६ ई० में ये लाहोर के चीफ़ कोर्ट में नौकर हो गए। वहाँ प्रोफ़ेसर मुहम्मद हुसेन 'आज़ाद' और सैयद मुमताज़ अली के सत्सङ्ग से बहुत लाभ उठाया। उस समय इन्होंने कितनी ही किताबों के अनुवाद किये। अब अपनी नौकरी से अवकाश पाकर इलाहाबाद में उर्दू-साहित्य-सेवा कर रहे हैं। इनकी लिखी कुछ किताबें—'अखबारुल अन्दलस'—यह 'हिस्ट्री आफ़ मोर्स एम्पायर इन यूरोप' का अनुवाद है, जो तीन खण्डों में समाप्त हुआ है। 'मुबल्लदीन'—मिस्टर हेनरी चार्ल्स की स्पेन सम्बन्धी एक अँग्रेज़ी पुस्तक का अनुवाद। उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त 'तारीख़ उल ख़िलफा', 'नफ़ह उल तईब' 'अज़रा' आदि भी अच्छे अनुवाद हैं। 'अज़रा' में मिस्र की पुरानी सभ्यता का वर्णन औपन्यासिक ढंग से किया गया है। मौलवी साहब ने इस्लाम का विस्तृत इतिहास भी निकाला है।

क़ाज़ी तलम्मुज़ हुसेन—ये गोरखपुर के रहने वाले हैं। १९०८ ई० में इन्होंने अलीगढ़ कालिज से एम० एल० पास किया। कई शिक्षा-संस्थाओं में ये प्रोफ़ेसरी और हेड मास्टरी कर चुके हैं। १९१७ ई० में हैदराबाद की 'उस्मानिया यूनिवर्सिटी' में राजनैतिक विषयों के अनुवादक नियुक्त हुए। ये लगभग एक कोड़ी किताबों के अनुवादक हैं। इन्होंने मौलाना रूम की मसनवी का सम्पादन कर उसका बढ़ा सुन्दर संस्करण प्रकाशित कराया है। 'रियाज़' ख़ैराबादी का दीवान 'रियाज़ रिज़वाँ' के नाम से सम्पादित किया है। इनकी कुछ किताबों का परिचय—'नज़रियासल्तनत'—'दी एलीमेण्टस आव् पोलीटिकल साइंस' का अनुवाद। 'हुकूमत हाय यूरोप'—'दी गवर्नमेण्टस

आव् यूरोप' के प्रथम भाग का अनुवाद। 'तक़रीबुल सिआसियात'—'एन इण्ट्रोडक्शन टू पोलीटिकल साइंस' का अनुवाद। इर्तकाए नज़्म हुकूमत'—'दी डवलपमेण्ट आव् यूरोपियन पालिसी' का अनुवाद। 'दस्तूरुल सल्तनत इंगलिशिया'—'दी इंगलिश कौंस्टीट्यूशन' का अनुवाद। 'तारीख़ अहले इंगलिस्तान'—'ए शार्ट-आव् दी इंगलिश पीपिल' का अनुवाद (पाँच भागों में)। 'यूरोप का अस्रे जदीद'—'हिस्ट्री आव् मौडर्न यूरोप' का अनुवाद (तीन खण्डों में)। 'तारीख़ यूरोप'—'ए जनरल हिस्ट्री आव् यूरोप' का अनुवाद (दो खण्डों में)।

तीरथराज और रामस्वरूप—मुंशी तीरथराज फ़ीरोज़पुरी और प्रोफ़ेसर रामस्वरूप 'कौसल' ने भी अनुवादों द्वारा उर्दू साहित्य की अच्छी सेवा की है। इन्होंने अँगरेज़ी आदि भाषाओं से अनेक उपयोगी किताबों के तर्जुमें किये हैं। दोनों की कुछ पुस्तकों के नाम नीचे दिये जाते हैं—

मुंशी तीरथराम—'दग़ा का पुतला'—मार्स लेवलांग के प्रसिद्ध अँगरेज़ी उपन्यास का अनुवाद। 'गरदिशे आफ़ाक़' (२८ भागों में। 'सितम होश रुबा', 'नाज़ुक कटार', 'करनी का फल', 'शाही ख़ज़ाना', 'सुनहरी लाश', 'गुमनाम मुसाफ़िर', 'अनमोल हीरा', 'हीरों का बादशाह, 'आज़ादी', 'नौलखा हार', 'मिसरी जादूगर', 'इन्साफ़', 'तवदील क़िस्मत' आदि।

प्रोफ़ेसर रामस्वरूप 'कौसल'—'बदनसीब'—फ्रांस के प्रसिद्ध उपन्यासकार विक्टर ह्यूगो के एक मशहूर उपन्यास का अनुवाद है। 'अन्नपूरना का मन्दिर'—एक बँगला उपन्यास का अनुवाद है। 'कीड़े-मकोड़े', 'नटखट पाँड़े', 'गधे की आप बीती' इत्यादि।

नाटक

उर्दू का सबसे पहला नाटक 'इन्द्र सभा' है, जिसे १८५३ ई० में 'नासिख़' के शिष्य 'अमानत' ने लिखा था। इसका अभिनय करने के लिए लखनऊ के क़ैसर बाग़ में एक स्टेज तैयार किया गया था। कुछ लोग कहते हैं कि इस खेल में स्वयम् वाजिदअली शाह इन्द्र का पार्ट करते थे और परियों का पार्ट सुन्दरियाँ करती थीं। यह खेल बिलकुल 'प्राइवेट' होता था। कोई बाहरी आदमी उसे न देख पाता था। परन्तु लखनऊ यूनिवर्सिटी के उर्दू-अध्यापक सैयद मसऊद हसन रिज़वी, एम० ए० ने अपने एक खोजपूर्ण लेख द्वारा इस धारणा का खण्डन करते हुए, सिद्ध किया है कि न इन्द्र-सभा का नाटक कभी क़ैसर बाग़ में खेला गया और न बादशाह उसमें शामिल हुए। जो हो, इन्द्र-सभा की कथा-वस्तु बहुत साधारण है, परन्तु इसका प्रचार ख़ूब हुआ। उस समय यह नाटक और विशेष कर इसके गाने बहुत लोक-प्रिय सिद्ध हुए। इन्द्र-सभा का अनुवाद हिन्दी, गुजराती, गुरुमुखी आदि भाषाओं में हुआ। यहाँ तक कि १८९२ ई० में इसका जर्मन भाषा में भी अनुवाद हुआ और वह जर्मनी से ही प्रकाशित किया गया। इस नाटक की इतनी लोकप्रियता देखकर मुंशी मदारी-लाल नामक एक लेखक ने भी 'इन्द्र सभा' नाटक लिखा, परन्तु वह जनता में अधिक पसन्द नहीं किया गया। इसके पश्चात् नाटक कम्पनियाँ खुलीं, जिनसे उर्दू-नाटकों का ख़ूब प्रचार हुआ। इस प्रकार की कम्पनियों में सेठ पिस्टनजी फ़रामजी की ओरिजिनल थिएट्रिकल कम्पनी सर्व प्रथम उल्लेखनीय है। इस समय के उर्दू-नाटककारों में 'रौनक़' बनारसी और मियाँ हुसेनी 'ज़रीफ़' अधिक प्रसिद्ध हैं। ये अंगरेज़ी तमाशों के उर्दू अनुवाद भी करते थे। अनुवाद की भाषा बोलचाल की होती थी, जो आसानी से समझी जा सके। 'ज़रीफ़' ने उस समय 'असमत', 'ख़ुदा दोस्त', 'चाँद बीबी', 'बुलबुल', 'बीमार'

आदि नाटक लिखे, जो बहुत प्रसिद्ध हुए। 'तालिब', 'अहसन', 'बेताब', 'आग़ा हश्र' आदि भी उर्दू नाटक लिखने में ख़ूब ख्याति प्राप्त कर चुके हैं।

'तालिब' बनारसी—मुंशी विनायक प्रसाद 'तालिब' बनारसी ने पारसी नाटक कम्पनियों के लिए कितने ही नाटक लिखे। ये शायरी भी करते थे, 'रासिख़ देहलवी' के शिष्य थे। इन्होंने नाटक-कला की उन्नति के साथ-साथ नाटकों की भाषा का भी परिमार्जन किया। इनका एक नाटक 'लैलो निहार' है, जो किसी अँगरेज़ी ड्रामा का तरजुमा है। 'विक्रम-विलास', 'दिलेर दिल शेर', 'नाज़ाँ', 'निगाहे ग़फ़लत', 'हरिश्चन्द्र', 'गोपीचन्द' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। १९१४ ई० में इनका देहान्त हुआ।

'अहसन' लखनवी—सैयद मेंहदी हसन 'अहसन' लखनऊ के रहने वाले थे। ये 'ज़हरे इश्क़' और 'बहारे इश्क़' नामक नाटकों के लेखक हकीम नवाब मिर्ज़ा 'शौक़' के भेवते थे। 'अहसन' साहब नाटककार ही नहीं, बड़े अच्छे कवि और संगीतज्ञ भी थे। इनके नाटकों की भाषा बड़ी सरस और मुहावरेदार है। इनकी एक किताब 'वाक़आत अनीस' है, जिसमें मीर अनीस की जीवन-घटनाएँ बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गई हैं। ये एलफ़्रेड कम्पनी के सबसे पहले नाटककार थे। इन्होंने इस कम्पनी को कितने ही अच्छे-अच्छे नाटक लिखकर दिये, जिनमें 'फ़ारोज़ गुलनार', 'चन्द्रावली', 'दिल फ़रोश', 'भूल भुलैयां', 'बकावली', 'चलता पुरज़ा' आदि प्रसिद्ध हैं।

बेताब—पं० नारायण प्रसाद 'बेताब' ने एलफ़्रेड कम्पनी में नाटक लिखने का काम किया। ये औरंगाबाद ज़िला बुलन्दशहर के रहने वाले हैं। सं० १९२९ वि० में पैदा हुए। आप पं० द्वारिकाप्रसाद के पुत्र हैं। हिन्दी और उर्दू दोनों पर आपका समान अधिकार है। कविता भी दोनों भाषाओं में बड़ी सफलता से करते हैं और नाटक

भी ख़ूब लिखते हैं। हिन्दी के पिंगलशास्त्र और उर्दू के 'फ़ने उरूज़' के बड़े विद्वान् हैं। 'क़तले नज़ीर', 'ज़हरी साँप', 'फ़रेब मुहब्बत', 'गोरख धन्धा', 'पत्नी प्रताप', 'कृष्ण-सुदामा', 'महाभारत' आदि इनके लिखे नाटक हैं। 'क़तले नज़ीर' पहला खेल है, जो बेताबजी ने कम्पनी के लिए तैयार किया था। इनका लिखा 'महाभारत' खेल बहुत लोकप्रिय हुआ है। सारे देश में उसकी धूम मच गई थी। रामायण की भी अच्छी ख्याति हुई। बेताबजी ने नाटकीय संसार में एक अद्भुत क्रान्ति करदी है। सम्भवतः सबसे पूर्व इन्होंने ही वर्त्तमान नाटक कम्पनियों में धार्मिक तथा शिक्षाप्रद खेल प्रचलित किये। 'महाभारत', 'रामायण' और 'कृष्ण-सुदामा' इनकी कला के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। ये धार्मिक प्रसंगों या कथानकों को नाटक का रूप देकर उसे बड़ा ही आकर्षक और रोचक बना देते हैं। वस्तुतः इनके लिखे धार्मिक खेल हिन्दी के हैं, उर्दू के नहीं, परन्तु उनकी भाषा मिली-जुली है, जिसे उर्दू और हिन्दी वाले दोनों आसानी से समझ सकते हैं। इन नाटकों के गान बड़े भावपूर्ण, सुन्दर और छन्दः शास्त्र की दृष्टि से शुद्ध हैं। नाटकों की भाषा प्रायः अनुप्रास युक्त (मुक़फ़्फ़ा) है। निस्सन्देह बेताबजी ने उर्दू-नाटकों की दिशा में पर्याप्त उन्नति की है और इस कला को विकसित करने में ये बहुत आगे बढ़े हैं। सिनेमा के लिए भी इन्होंने बड़ी अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। इनकी लिखी उर्दू-कविताएँ साहित्य की दृष्टि से बड़े आदर के साथ देखी जाती हैं। हिन्दी में 'नारायण-शतक' नाम से इन्होंने बड़े चमत्कारी दोहे लिखे हैं। इनका स्वभाव बड़ा सरल है। ये सदैव प्रसन्नचित्त रहते हैं। इन्होंने सारी आयु नाटक और कहानियाँ लिखने में ही गुज़ारी। इनकी कला पर उर्दू और हिन्दी दोनों ही उचित गर्व कर सकती हैं।

आग़ा हश्र कश्मीरी—इनका पूरा नाम आग़ा मुहम्मद 'हश्र' कश्मीरी है। ये अमृतसर में पैदा हुए थे। बम्बई में इन्होंने नाटक लिखने का काम शुरू किया और एलफ़्रेड कम्पनी के लिए कितने ही

खेल तैयार किये। इन्होंने अपने तमाशों के कथानक प्रायः विदेशी नाटकों से लिए हैं। कुछ नाटक मौलिक भी हैं। इन्होंने एक नाटक-कम्पनी भी क़ायम की थी, जो चल न सकी। बम्बई से ये कलकत्ता गए और वहाँ 'मैडन' के लिए नाटक लिखे। इनके नाटकों की संवाद-पद्धति बड़ी सुन्दर है। १९२५ ई० में लाहौर में इनका शरीरान्त हुआ। ये साहित्यिक और नाटककार होने के अतिरिक्त कवि भी बड़े अच्छे थे। इनकी कुछ किताबों के नाम—'शुक्रिया यूरोप', 'मौजे ज़मज़म', 'शहीदे नाज़', 'मुरीदे शक़', 'असीरे हिरस', 'तुर्की हूर', 'ख़ूबसूरत बला', 'सफ़ेद ख़ून' इत्यादि। आग़ा हश्र ने 'सूरदास', 'सीता बनवास', 'गंगावतरण' आदि हिन्दी नाटक भी लिखे हैं।

ताज—सैयद इमतियाज़ अली 'ताज' प्रसिद्ध साहित्यकार, अनुवादक और नाटककार हैं। शम्सुल उलमा मौ० मुमताज अली के बेटे हैं। आधुनिक उर्दू-जगत् में इनका अच्छा आदर है। इनकी रचनाओं में सरलता, प्रवाह और प्रौढ़ता की प्रधानता है। इनका 'अनारकली' ऐतिहासिक नाटक बहुत उच्च कोटि का है। 'भारत सपूत', 'हैबतनाक अफ़साने', 'लैला', 'चचा चक्खन' आदि भी सुन्दर रचनाएँ सपूत' में महात्मा गान्धी की जीवन-घटनाएँ वर्णित हैं।

इश्तियाक़ हुसैन साहब क़ुरेशी, एम० ए०—ये सेण्ट स्टोफ़िन्स कालिज देहली में प्रोफ़ेसर हैं। गम्भीर और साहित्यिक नाटक लिखने के लिए प्रसिद्ध हैं। नाटक-कला के संशोधन पर सदैव ध्यान रखते हैं। इन्होंने अब तक आध दर्जन से अधिक नाटक लिखे हैं, जो प्रायः समाज-सुधार से सम्बन्ध रखते हैं। ये नाटक रंगमंच पर भी सफलता पूर्वक अभिनीत हो चुके हैं। इनके कुछ नाटकों के नाम—'गुनाह की दीवार'—नैतिक नाटक है। 'नफ़रत का बीज'—शिक्षाप्रद नाटक। 'नक़्शे आख़िर'—ग़दर का वर्णन। 'नीमशब'—बेजोड़ विवाह का कुपरिणाम। 'सौदजूँ'—स्त्रियों की अधिकार-रक्षा सम्बन्धी नाटक।

कुछ और नाटककार—उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में जो नाटककार हुए, उनके नाम—

ग़ुलाम हुसेन 'ज़रीफ़'—इन्होंने 'अन्जामे सख़ावत' नामक नाटक लिखा। मुहम्मद अब्दुल वहीद 'क़ैस'—इन्होंने 'अञामे और 'जल्सा परिस्तान' लिखा।

कबीर मुहम्मद 'तेग़'—इन्होंने 'अञ्जामे उल्फ़त' और 'बे नज़ीर' नाटक लिखे।

फ़ीरोज़ शाह खाँ इन्होंने 'भूलभूलैयाँ' नाम से शेक्स पीयर के एक नाटक का अनुवाद किया है।

अहमदहुसेन—'बुलबुले बीमार' नामक नाटक लिखा।

उमराव अली—इन्होंने 'जहाँगीर' नाम से अँगरेज़ी के प्रसिद्ध नाटक हेमलेट का अनुवाद किया।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ के नाटककार और उनके नाटक

मुंशी ग़ुलाम अली—'ताईद रिर्वानो' और 'महरे ज़या'।

मुंशी रहमत अली—'दर्दे जिगर' और 'क़ातिल'।

मुंशी द्वारका प्रसाद 'उफ़क़'—'राम नाटक'।

मुंशी मिर्ज़ा अब्बास—'नूरजहाँ' और 'शाही फ़रमान'।

आग़ा शायर (दाग़ के शिष्य)—'हूरे जिन्नत'।

लाला कुमरसेन, एम० ए०—'ब्रह्माण्ड'—इस नाटक में नक्षत्रों की गतियाँ दिखाई गई हैं। लालाजी नाटकों की आलोचना करने में प्रसिद्ध हैं। गवर्नमेंट कालिज लाहौर के प्रिंसिपल और काश्मीर हाईकोर्ट के जज रह चुके हैं।

मुंशी ज्ञानेश्वर प्रसाद 'मायल'—'चन्द्रगुप्त' और 'तेग़े सितम'।

हकीम अहमद शुजा, बी० ए०—'बाप का गुनाह', 'भारत का लाल', 'जाँ बाज़' इत्यादि। ये पञ्जाब कौंसिल के असिस्टेण्ट सेक्रेटरी रह चुके हैं। 'हज़ार दास्तान' नामक पत्र के सम्पादक हैं।

सैयद इमतियाज़ अली, बी० ए०—'अनारकली' और 'दुलहिन'।

सैयद दिलावर अली शाह—'पञ्जाब मेल'।

ख़ान अहमद हुसेन—'हुस्न का बाज़ार'।

साहित्यिक नाटककार—शौक़ किदवई—'मैक फ़र्सन और लूसी' तथा 'क़ासिम वज़ुहरा'।

मौलाना 'शरर'—'शहीदे वफ़ा'।

मौलवी अज़ीज़ मिर्ज़ा—'विक्रमउर्वशी' (अनुवाद)।

मौलाना ज़फ़र अली ख़ाँ——'रूस व जापान'।

सैयद तफ़ज़्ज़ुल हुसेन—'तसवीर फ़ास' (एक अँगरेज़ी नाटक का अनुवाद)।

मुंशी मुहम्मद उमर
मुंशी नूर इलाही —इन्होंने 'नाटक-सागर' नामकी पुस्तक लिखी है, जिसमें संसार के प्रसिद्ध नाटकों का संक्षिप्त इतिहास है। इनके कुछ नाटकों का परिचय—'नहे सियासत'। यह अमरीका के राष्ट्रपति इब्राहम लिंकन की जीवनी नाटक के रूप में है।

'शाने ज़राफ़त'—फ़्रांस के प्रसिद्ध नाटककार 'शिलर' की पुस्तक का अनुवाद।

'बिगड़े दिल'—'मोलियर' की एक पुस्तक का अनुवाद, इसमें कंजूसों की बड़ी ख़बर ली गई है।

'ज़फ़र की मौत'—'मेटरलिंक' के एक नाटक का अनुवाद।

सामाजिक नाटक—मौलवी अब्दुल मजीद, दरियाबादी—'ज़ूद पशेमां'—इसमें बाल-विवाह का कुपरिणाम दिखलाया है।

पं० ब्रजमोहन दत्तात्रेय 'कैफ़ी'—'राजदुलारी' और 'मुरारी दादा'।

मौलाना 'शरर'—'मेवानक़'—पर्दा-प्रथा के विरुद्ध नाटक।

कलकत्ता कालिज के विद्वान्

फ़ोर्ट विलियम कालिज कलकत्ता का उल्लेख पुस्तक के प्रारम्भ में किया जा चुका है, यहाँ उसमें काम करने वाले विद्वानों का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

मीर अम्मन—मीर अम्मन उपनाम 'अम्मन' का परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र दिया है।

सैयद हैदर बख़्श 'हैदरी'—फ़ोर्ट विलियम कालिज के पुस्तक-रचयिताओं में 'हैदरी' ने सबसे अधिक पुस्तकें लिखी हैं। परन्तु उनमें से कुछ किताबें प्रकाशित नहीं हो पाईं और न अब अप्रकाशित पुस्तकों की पाण्डुलिपि ही मिलती है। 'हैदरी' देहली के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम अब्दुल हसन था। जीविका की खोज में अब्दुल हसन बनारस चले गये। हैदरी की शिक्षा वहीं हुई। हैदरी ने पहले पहल 'क़िस्सा महरो माह' लिखा, जो डा० गिलक्रिस्ट को बहुत पसन्द आया और वे 'फ़ोर्ट विलियम कालिज' में रख लिये गये। १८१४ ई० तक हैदरी उक्त कालिज में रहे, फिर बनारस वापस आ गये और १८३३ ई० में वहीं उनका देहान्त हुआ। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम–'क़िस्सा महरो माह', 'क़िस्सा लैला मजनू', 'हफ़्तपैकर', 'तरीख़े नादरी', 'गुलज़ार दानिश', 'गुलदस्तए हैदरी', 'गुलशने हिन्द', 'तोता कहानी', 'आराइशे महफ़िल', 'गुले मग़फ़रत'। इन पुस्तकों में से 'तोता कहानी' और 'आराइशे महफ़िल' की बहुत प्रसिद्धि हुई। 'तोता कहानी' का तो विदेशी भाषाओं में भी अनुवाद हो गया है। यह मुहम्मद क़ादिरी के फ़ारसी 'तूतीनामा' का अनुवाद है। 'आराइशे महफ़िल' 'दास्ताने हातिमताई' का उर्दू रूपान्तर है।

मीर शेरअली 'अफ़सोस'—ये सैयदअली मुज़फ़्फ़रख़ाँ के बेटे

थे। इनके पूर्वज नारनौल से देहली आकर बसे। फिर 'अफ़सोस' अपने पिता के साथ बिहार होते हुए बंगाल चले गये। १८०१ ई० में २००) मासिक पर फ़ोर्ट विलियम कालिज में नौकर हुए और १८०९ ई० में इनका देहान्त हुआ। 'अफ़सोस' ने 'बाग़े उर्दू', 'आराइशे महफ़िल' आदि किताबें लिखी हैं। 'बाग़े उर्दू' सादी के 'गुलिस्ताँ' का अनुवाद है। 'आराइशे महफ़िल' नाम की पुस्तक हैदरी ने भी लिखी है, परन्तु इसका विषय इतिहास है। अर्थात् यह भारतवर्ष की तवारीख़ है; और वह हातिमताई का क़िस्सा।

मिर्ज़ा अली 'लुत्फ़'—ये काज़िम बेग ख़ाँ के बेटे थे, देहली में रहते थे। वहीं पढ़े-लिखे। फ़ारसी की कविता अच्छी करते थे। नाम मिर्ज़ाअली और उपनाम 'लुत्फ़' था। जीविका की खोज में घूमते-फिरते कलकत्ता पहुँचे और वहाँ फ़ोर्ट विलियम कालिज में नौकर हो गये। इन्होंने एक किताब लिखी, जिसका नाम है 'तज़किरा गुलशने हिन्द'। इस पुस्तक में शायरों की संक्षिप्त जीवनियाँ और उनकी कविताओं के नमूने हैं। यह पुस्तक अप्राप्य थी, परन्तु बड़ी कठिनाई से प्राप्त की जा सकी और सबसे पूर्व १९०६ ई० में प्रकाशित हुई। इसके प्रारम्भ में मौलवी अब्दुल हक़ साहब का विद्वत्तापूर्ण उपोद्घात और मौलाना शिबली की टीका-टिप्पणी है। यह पुस्तक फ़ारसी के 'गुलज़ार अब्राहीम' का उर्दू अनुवाद है।

मीर बहादुर अली 'हुसैनी'—ये सैयद अब्दुल्ला काज़िम के बेटे और देहली के रहने वाले थे, हुसैन फ़ोर्ट विलियम कालिज में मीर मुन्शी (मुख्य सम्पादक) थे। इनकी लिखी चार पुस्तकें हैं—'नस्र बेनज़ीर,' 'अख़लाक़े हिन्द' व 'तारीख़े आसाम' और 'रिसाला गिल क्रस्ट'। इनमें से पहली पुस्तक एक फ़ारसी क़िस्से का उर्दू अनुवाद है। दूसरी पुस्तक में संस्कृत की नैतिक कहानियों का उर्दू अनुवाद है। तीसरी पुस्तक का विषय उसके नाम ही से प्रकट है। चौथी पुस्तक डा० गिलक्रिस्ट की लिखी 'क़वाइदे हिन्दुस्तानी' का ख़ुलासा है।

मज़हर अली ख़ाँ 'विला'—इनका नाम मिर्ज़ा लुत्फ़ अली ख़ाँ था, परन्तु मज़हर अली ख़ाँ के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके पिता सुलेमान अली ख़ाँ फ़ारसी के शायर थे। ये देहली के रहने वाले थे। 'विला' फ़ारसी, संस्कृत और हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे। कविता भी बड़ी अच्छी करते थे। १८०२ से १८०५ ई० तक फ़ोर्ट विलियम कालिज में रहे। इनकी लिखी पुस्तकें—'माधोनल और कामकन्दला'—यह मोतीराम कवीश्वर कृत एक हिन्दी उपन्यास का उर्दू अनुवाद है। 'तरजुमा करीमा'— करीमा का उर्दू अनुवाद। 'हफ़्तगुलशन' नासिरअली ख़ाँ की एक फ़ारसी किताब का अनुवाद है। इसमें अधिकतर नैतिक शिक्षा से सम्बन्ध रखने वाली बातें हैं। 'बेताल-पचीसी' यह संस्कृत की पच्चीस कहानियों का उर्दू अनुवाद है, जो ब्रज भाषा से किया गया है। इस पुस्तक की रचना में विला को पं० लल्लूलालजी ने पर्याप्त सहायता प्रदान की। यह पुस्तक बहुत लोक-प्रिय हुई है। इसकी भाषा में ब्रजभाषा का भी पुट है। 'तारीख़ शेर-शाही'—शेरशाह बादशाह के शासन का वर्णन है। यह भी फ़ारसी की एक किताब का अनुवाद है। इस पुस्तक का फ्रेंच भाषा में भी अनुवाद हो चुका है। 'जहाँगीर नामा'—फ़ारसी पुस्तक का अनुवाद है। इसमें जहाँगीर की चर्चा की गई है।

मिर्ज़ा काज़िम अली 'जवान'—ये देहली के रहने वाले थे। वहाँ से लखनऊ आए। लखनऊ के रेज़ीडेण्ट कर्नल स्कॉट की सिफ़ा-रिश से इन्हें फ़ोर्ट विलियम कालिज में जगह मिली। १८०१ ई० में इन्होंने 'शकुन्तला नाटक' का उर्दू अनुवाद किया। यह अनुवाद 'जवान' ने 'नवाज' नामक कवीश्वर के एक हिन्दी अनुवाद के आधार पर किया था। इस अनुवाद के करने में जवान को पं० लल्लूलालजी ने बड़ी सहायता दी। यह किताब लन्दन से भी प्रकाशित हुई। शकुन्तला नाटक का यह उर्दू अनुवाद बहुत पसन्द किया गया। इसमें स्थान-स्थान पर हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। इस पुस्तक के

अतिरिक्त जवान ने 'दस्तूरे हिन्द' नामक एक किताब और लिखी। यह 'बारहमासा' है। इसमें हिन्दू और मुसलमानों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। 'जवान' ने 'तारीख़े फ़रिश्ता' का भी उर्दू अनुवाद किया। क़ुरान के उर्दू अनुवाद का सम्पादन किया।

मौ० अमानतुल्ला 'शैदा'—ये भी फ़ोर्ट विलियम कालिज में काम करते थे। अरबी और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने अरबी में 'हिदायतुल इसलाम' नाम की बड़ी पुस्तक कालिज की नौकरी से पूर्व लिखी थी। कालिज में आकर उसका उर्दू अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने 'अख़लाक़े जलाली' और 'क़ुरान' का उर्दू अनुवाद किया। 'सरफ़ उर्दू' नामक पद्यात्मक पुस्तक लिखी। इनकी 'हिदायतुल इसलाम' का अँग्रेज़ी अनुवाद भी हो चुका है, जिसे स्वयम् डॉ० गिलक्रिस्ट ने किया था। शैदा साहब 'अख़लाक़े जलाली' के उर्दू अनुवाद 'जामाउल अख़लाक़' के कारण बहुत प्रसिद्ध हुए।

शेख़ हफ़ीज़ुद्दीन—ये शेख़ वलुद्दीन के बेटे थे। इनके पिता कलकत्ता रहते थे, अतः इनकी शिक्षा भी वहीं हुई। इन्होंने भी फ़ोर्ट-विलियम कालिज में काम किया। फिर ये देहली के रेज़ीडेण्ट के मीर मुन्शी हो गये। इनकी लिखी किताबें—'ख़िरद अफ़रोज़', यह शेख़ अबुल फ़ज़ल 'अल्लामी' की पुस्तक 'अयारे दानिश' का उर्दू अनुवाद है। इसमें संस्कृत कहानियों का आधार लिया गया है। 'ख़िरद अफ़रोज़' का अंग्रेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित हो चुका है। इंग्लैण्ड में इस पुस्तक का नया संस्करण भी बड़ी शान से निकला है।

अकराम अली—ये भी फ़ोर्ट विलियम कालिज में काम करते थे। इन्होंने 'अख़वानुल सफ़ा हिन्दी' नामक पुस्तक लिखी। इसमें अरबी के कुछ शिक्षाप्रद और मनोरंजक निबन्धों का उर्दू अनुवाद किया गया है। अंग्रेज़ी में भी इसका अनुवाद हो चुका है।

निहालचन्द 'लाहोरी'—ये देहली के रहनेवाले थे, वहाँ से पंजाब चले गये और लाहोर में रहकर 'लाहोरी' कहे जाने लगे। ये भी फ़ोर्ट विलियम कालिज के लेखक थे। १८०३ ई० में इन्होंने फ़ारसी 'गुलबकावली' का उर्दू में अनुवाद किया, जो 'मज़हबे इश्क़' नाम से प्रकाशित हुआ। इसकी भाषा बड़ी परिष्कृत और सरल है।

बेनीनरायन 'जहाँ'—इनके पिता महाराजा लक्ष्मीनरायन बड़े सम्पत्तिशाली थे। ये लाहोर के रहने वाले थे। इनके भाई राय खेमनरायन भी विद्वान् और कवि थे। 'जहाँ' परिस्थिति-चक्र में पड़कर नौकरी के लिए कलकत्ता गये और वहाँ फ़ोर्ट विलियम कालिज में नौकर हो गए। इनकी पुस्तकें—'चार गुलशन'—प्रेमपूर्ण कहानियाँ; 'दीवान जहाँ'—शायरों का तज़किरा। इनके अतिरिक्त 'जहाँ' ने उर्दू में इसलाम धर्म सम्बन्धी भी कई किताब लिखी हैं।

लल्लूलालजी—लल्लूलालजी गुजराती ब्राह्मण थे। फ़ोर्ट विलियम कालिज के प्रारम्भ से ही मुलाज़िम थे। कालिज में हिन्दी की पुस्तकें भी लिखी जाती थीं। यह काम इन्हीं के सुपुर्द था। लल्लूलालजी ने सबसे पहले 'प्रेम-सागर' नामक पुस्तक लिखी, जो १८०३ ई० में प्रकाशित हुई। इनकी लिखी 'राजनीति' नामक पुस्तक भी है, जिसमें नैतिक कहानियाँ हैं। 'लतीफ़ों की पुस्तक' भी बड़ी शिक्षाप्रद और मनोरंजक है। इन्होंने 'महादेव-विलास' नाम की पद्यात्मक पुस्तक लिखी। 'सभा-विलास' चुनी हुई कविताओं का संग्रह है। लल्लूलालजी की लिखी 'सिंहासन-बत्तीसी' नामक किताब बहुत लोकप्रिय हुई है। इन्होंने हिन्दी से उर्दू अनुवाद करने में अनेक

लेखकों को सहायता दी। सदल मिश्र इस कालिज में लल्लूलालजी के सहायक और सहकारी थे।

मिर्ज़ा जान 'तपिश'—इनका नाम मिर्ज़ा मुहम्मद इस्माईल है, मिर्ज़ा जान की उपाधि से प्रसिद्ध हैं और 'तपिश' उपनाम है। १७६८ ई० में देहली में पैदा हुए। अरबी और फ़ारसी के विद्वान् थे। संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान था। कविता करने में, बचपन से ही रुचि थी। इनके काव्य-गुरु थे—ख़्वाजा मीर दर्द। देहली से लखनऊ गये और वहाँ से ढाका (बंगाल) के नवाब साहब के यहाँ नौकरी कर ली। इस समय इन्होंने 'शम्सुल बयान' नामक उर्दू मुहावरों का एक कोष लिखा जो १७६२ ई० में पूरा हुआ। फ़ोर्ट विलियम कालिज खुलने पर 'तपिश' उसमें काम करने लगे। इनका मुख्य कार्य दूसरे साहित्य-कारों के कार्य में सहायता देना था। उपर्युक्त कोष में उर्दू मुहावरों के अर्थ फ़ारसी भाषा में लिखे हैं। परन्तु उदाहरण उर्दू कवियों की कविताओं से दिए गए हैं। 'तपिश' ने 'बहार दानिश' नामक एक मसनवी लिखी, और अपना 'दीवान' भी तैयार किया।

कालिज के बाहर

कुछ और विद्वान, जिन्होंने फ़ोर्ट विलियम कालिज से बाहर रहकर उर्दू साहित्य-सेवा की—

मुहम्मद हुसैन कलीम—ये कवि और लेखक दोनों थे। इन्होंने 'फ़सूसुल हिकम' का उर्दू में अनुवाद किया। इनकी भाषा बड़ी लच्छे-दार और अनुप्रासयुक्त थी।

सैयद इन्शा अल्ला ख़ाँ—इनके पिता का नाम हकीम माशा अल्ला ख़ाँ था, जो शाही हकीम थे। देहली पर आपत्ति आने के कारण ये मुरशिदाबाद चले गए थे। वहीं इन्शा अल्ला ख़ाँ का जन्म हुआ। 'इन्शा' पढ़-लिखकर योग्य हुए तो देहली आए, फिर लखनऊ चले गए और वहाँ नवाब सआदत अली ख़ाँ के दरबारी हो गए। ये विद्वान्, कवि, भाषा-विशेषज्ञ, आलोचक, मर्मज्ञ, हँसोड़, विनोदी, आदि सब कुछ थे। १८१७ ई० में इनका देहान्त हुआ। इन्होंने ग़ज़ल, क़सीदे, मसनवियाँ, क़िते, रुबाइयाँ, रेख़ती आदि लिखी हैं। 'रानी केतकी और कुमर उदयभान की कहानी' इनकी प्रसिद्ध पुस्तक जो हिन्दी में लिखी है। इसमें फ़ारसी, अरबी आदि किसी विदेशी भाषा का कोई शब्द नहीं आने पाया। 'दरियाए लताफ़त' भी इन्हीं की लिखी हुई किताब है। यह पुस्तक उर्दू व्याकरण और भाषा से सम्बन्ध रखती है। मूल पुस्तक फ़ारसी में है, परन्तु उसका प्रतिपाद्य विषय उर्दू है। यह पुस्तक पहले पहल १८५२ ई० में प्रकाशित हुई। इसके दो खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में उर्दू व्याकरण और मुहावरों पर विचार किया है। दूसरे खण्ड में छन्द-शास्त्र सम्बन्धी वर्णन है। यह पुस्तक अपने ढंग की अकेली है। इसकी भाषा अत्यन्त परिमार्जित और उच्च कोटि की है।

मिर्ज़ा क़तील—इनका नाम दिवाली सिंह था। फ़रीदाबाद (देहली) के रहने वाले खत्री थे। ये मुसलमान हो गये थे और अपना नाम मुहम्मद हसन रख लिया था। १८२८ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये अरबी और फ़ारसी के विद्वान् थे। इन्होंने अपने मित्र इन्शा को 'दरियाए लताफ़त' लिखने में पूरी मदद दी और उस पुस्तक का दूसरा खण्ड स्वयम् लिखा। क़तील के पत्र भी प्रकाशित हो चुके हैं, इनसे भी इनकी लेखन-शैली का परिचय प्राप्त होता है।

मौ० इस्माईल—ये शाह अब्दुल ग़नी के बेटे थे। १८६६ ई० में

इनका देहान्त हुआ। इनकी लिखी दो उर्दू कितावें वताई जाती हैं—'ज़फ़र जलील' जो 'हसन-हुसेन' नामक किताव का अनुवाद है। यह पुस्तक १८२७ ई० में प्रकाशित हुई। 'मज़ाहिर हक़'—धार्मिक बृहद्ग्रन्थ।

इमाम वख़्श 'सहबाई'—ये देहली के रहने वाले थे। इन्होंने फ़ारसी की कितनी ही महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के भाष्य किये हैं। ग़दर से पहले देहली कालेज में प्रोफ़ेसर थे। जहाँ मौ० मुहम्मद हुसेन 'आज़ाद', मास्टर प्यारेलाल 'आशोब' आदि इनके शिष्य थे। सर सैयद अहमद ख़ाँ साहब से सहबाई की बड़ी घनिष्ठता थी। इन्होंने १८४२ ई० में मुन्शी शम्सुद्दीन 'फ़क़ीर' की 'हिदायकुल बलाग़त' नामक पुस्तक का उर्दू अनुवाद किया। कहने को यह अनुवाद है, परन्तु वस्तुतः उसने मौलिक पुस्तक का रूप धारण कर लिया है।

मौ० मसीहुलज़मा—१८४८ ई० में इन्होंने 'मकतब नामा' नामक विद्यार्थियों के लिए एक पुस्तक उर्दू में लिखी। इसमें अनेक उपयोगी और ज्ञातव्य बातें हैं। बारह सौ साल की एक जन्त्री भी दी गई है। इस पुस्तक का दूसरा संस्करण १८५६ ई० में हुआ।

मु० अब्दुल करीम—ये लखनऊ के निवासी थे। कलकत्ते में लाट साहब के दफ़्तर में मीरमुन्शी थे। इन्हें क़िस्से-कहानी की किताबों में 'अलिफ़ लैला' बहुत पसन्द थी। अतः उसी का अनुवाद इन्होंने अँग्रेज़ी से उर्दू में किया। अनुवाद करने में पूरे दो वर्ष लगे। यह अनुवाद १८४७ ई० में पहले पहल प्रकाशित हुआ। इसकी भाषा बड़ी सरल और स्वाभाविक है।

आग़ा अमानत—इनका नाम सैयद आग़ा हसन और उपनाम अमानत था। १८१४ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। ये बड़े अच्छे कवि थे। बीस वर्ष की आयु में इनकी ज़बान बन्द हो गई, जिसके कारण

कुछ वर्ष तक न बोल सके। लिखकर अपना काम निकालते रहे। फिर ज़बान खुल गई। 'अमानत' शायर तो मशहूर हैं ही, लेखक के रूप में भी प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपना 'इन्द्रसभा' नामक नाटक पद्य में लिखा, परन्तु उसकी भूमिका और व्याख्या गद्य में लिखी। इसकी भाषा बड़ी सुन्दर और स्वाभाविक है।

मुन्शी चिरंजीलाल—ये इलाहाबाद के रहने वाले थे। दर्शन और गणित में बड़ी रुचि रखते थे। १८५६ ई० में इन्होंने अँग्रेज़ी की एक किताब का अनुवाद कर उसका नाम 'तालीमुल नफ्स' रखा। १८५४ ई० में इन्होंने 'मिसबाहुल मसाहत' नामक किताब लिखी।

मौ० ज़ियाउद्दीन—ये शेख़ ग़ुलाम हुसेन ख़ां जागीरदार के बेटे थे। देहली में रहते थे। भौतिक विज्ञान में इन्हें बड़ी रुचि थी। नार्मल स्कूल में अध्यापक थे। भौतिक विज्ञान पर इन्होंने 'मख़ज़नुल तबीआत' नामक पुस्तक दो खण्डों में लिखी, जो १८६५ ई० में लाहौर से प्रकाशित हुई।

ख़्वाजा अमां देहलवी—इनका नाम बदरुद्दीनख़ां और उपनाम ख़्वाजा अमां था। ये देहली के रहने वाले थे। मिर्ज़ा ग़ालिब के शागिर्द थे। इन्होंने 'दास्ताने बोस्ताने ख़याल' का फ़ारसी से उर्दू अनुवाद किया। मूल पुस्तक के लेखक मीर तक़ी 'ख़याल' थे, जो गुजरात के रहने वाले थे। इस दास्तान को उन्होंने कुल जिल्दों में लिखा, परन्तु ख़्वाजा अमां केवल पांच जिल्दों का अनुवाद कर पाए थे कि उनका देहान्त हो गया। इस अनुवाद की भूमिका मिर्ज़ा ग़ालिब ने लिखी है। अनुवाद की भाषा बड़ी सुन्दर, सरल और स्वाभाविक है।

क़तील थे। आगरा में सदर निज़ामत के सरिश्तेदार रहे। यह १८३६ ई० की बात है, जब सर सैयद अहमद ख़ाँ का तबादला भी आगरा हो आया था। उस समय आगरे में उर्दू-फ़ारसी के साहित्यिकों का ख़ूब जमाव रहता था। पेन्शन लेकर 'शहीद' ने सारा जीवन ही साहित्य-सेवा में लगा दिया। रामपुर, हैदराबाद और सूरत के दरबारों में इनकी ख़ूब प्रतिष्ठा थी। हैदराबाद से तो इन्हें आजन्म वार्षिक वृत्ति मिलती रही। फ़ारसी में इन्होंने बहुसंख्यक कविताएँ रची हैं। उर्दू में इन्होंने ये पुस्तकें लिखीं—'इन्शाए बहार बेख़िज़ां'—इसमें शहीद के पत्र और लेख संगृहीत हैं, यह १८६८ ई० में प्रकाशित हुई। 'मवलूद शरीफ़ शहीद'—यह धार्मिक पुस्तक है, इसकी लोकप्रियता का ठिकाना नहीं। प्रत्येक मुसलमान के गले का हार बनी हुई है।

ग़ुलाम इमाम ख़ाँ—ये हैदराबाद के रहने वाले थे, इन्होंने उर्दू में दो किताबें लिखी हैं—(१) 'तारीख़ रशीदुद्दीन ख़ानी'—इसमें देहली और दक्षिण के बादशाहों का वर्णन है। यह किताब १८५४ ई० में लिखी गई। बड़े आकार के ८०० पृष्ठों पर समाप्त हुई है। (२) 'तारीख़ ख़ुरशेदजाही'—यह भी इतिहास-पुस्तक है।

शाह अली—ये भी हैदराबाद के रहने वाले थे। इन्होंने गणित सम्बन्धी दो पुस्तकें लिखीं—'तज़किरा' और 'अनवर बदरिया'।

यूसुफ़ ख़ाँ 'कम्बल पोश'—ये हैदराबाद के रहने वाले थे। यात्रा करने का इन्हें बड़ा शौक़ था। सारे हिन्दुस्तान की यात्रा की। योरोप गये तथा और भी अनेक देशों को देखा। १८२८ ई० से १८३८ ई० तक बराबर यात्रा करते रहे। इन्होंने 'अजायबाते फ़रङ्ग' नामक एक यात्रा-पुस्तक भी लिखी, जिसमें इंग्लैण्ड का हाल है। यह किताब पहले पहल १८४७ ई० में प्रकाशित हुई। यह उर्दू में सबसे पहला सफ़रनामा बताया जाता है। इसके पढ़ने में उपन्यास का-सा आनन्द आता है।

मुफ़्ती इकराम अल्ला 'सदीक़ी'—ये १८३५ ई० में पैदा हुए। आगरा के सुप्रसिद्ध डाक्टर मुकुन्दलाल से डाक्टरी पढ़ी, फिर मुख़्तारी की परीक्षा पास कर इलाहाबाद में वकालत की। साहित्य-सेवा में इनकी प्रारम्भ से ही रुचि थी। इन्होंने कई किताबें लिखीं। कुछ के नाम—'उलमाए अवध', 'मुसन्निफ़ीन', 'क़वायद उर्दू', 'तस्वीरे शुअरा'। 'तस्वीरे शुअरा' में कवियों का वर्णन है। यह १८६१ ई० में प्रकाशित हुई।

हकीम कुतुबुद्दीन 'बातिन'—ये हकीम मीर मुहम्मदी 'ज़ाहिर' के बेटे थे। आगरा के ताजगंज मुहल्ले में रहते थे। १८११ ई० में पैदा हुए। इनके काव्यगुरु और विद्यागुरु मियाँ नज़ीर थे। 'बातिन' ने चार दीवान, एक मसनवी और अनेक फुटकर कविताएँ लिखीं। इन्होंने 'गुलिस्तान बेख़िज़ाँ' नामक पुस्तक गद्य में भी लिखी है, यह एक 'तज़किरा' है जिसमें कवियों की चर्चा की गई है।

न्याज़ अली 'परेशान'—ये आगरा में पैदा हुए और शिक्षा भी यहीं हुई। ये मिर्ज़ा हातिम अली बेग 'महर' के शिष्य थे। यों तो इन्होंने शायरी की हर एक शाख़ में कुछ न कुछ लिखा है, परन्तु इनकी सर्वश्रेष्ठ कृति 'तज़किरा शेरोसुख़न' है। इसमें आगरे के एक बहुत बड़े मुशायरे का ज़िक्र है, जो १६ अक्टूबर सन् १८६६ ई० को बड़ी धूमधाम से हुआ था।

मौ० अब्दुल हक़ ख़ैराबादी—ये मौ० फ़ज़ल हक़ ख़ैराबादी के बेटे थे। १८२८ ई० में देहली में पैदा हुए और १८९९ ई० में इनका देहान्त हुआ। इन्हें सरकार ने 'शमसुलउलमा' का ख़िताब दिया था। ये नवाब रामपुर के उस्ताद थे। दार्शनिक विषयों में इनकी बड़ी रुचि थी। इन्होंने लगभग चालीस पुस्तकें लिखीं हैं। एक किताब तर्क-शास्त्र पर भी लिखी जो बड़ी प्रामाणिक समझी जाती है।

मौ० मुहम्मद अली तहसीलदार—ये बछराँव (मुरादाबाद) के रहने वाले थे। १८१७ ई० में पैदा हुए। ये सरिश्तेदार की नौकरी से उन्नति करते-करते तहसीलदार हुए। १८८७ ई० में इनका देहान्त हुआ। इन्होंने इसलाम सम्बन्धी धार्मिक प्रश्न को लेकर सर सैयद अहमद ख़ाँ साहब के विरुद्ध अनेक पुस्तकें लिखीं जिनकी पृष्ठ-संख्या डेढ़ हज़ार पृष्ठों से कम न होगी।

अमीर मीनाई—मुफ़्ती अमीर अहमद मीनाई मौ० करम मुहम्मद के बेटे थे। १८३२ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। इन्हें शायरी से बचपन से ही शौक़ था। इनका परिचय शायरों में दिया गया है। इनके काव्य-गुरु मु० मुज़फ़्फ़र अली 'असीर' थे। १९०० ई० में हैदराबाद में इनका देहान्त हुआ। ये कवि के रूप में तो बहुत प्रसिद्ध हैं ही, साथ ही गद्यकार भी बड़े अच्छे थे। इन्होंने ये किताबें लिखी हैं—

'इन्तख़ाब यादगार'—यह पुस्तक १८७३ ई० में लिखी गई, इसमें चार सौ से अधिक शायरों का वर्णन है। 'अमीरुल लुग़ात'—यह उर्दू का एक बृहत् कोष है, जो पूर्ण न हो सका। इसकी कुछ जिल्दें १८९१ और १८९२ ई० में प्रकाशित हुई थीं। अमीर के पत्रों का भी एक संग्रह प्रकाशित हो चुका है। ये अरबी और फ़ारसी के विद्वान् थे, संस्कृत और हिन्दी भी अच्छी जानते थे।

पं० गिरिराज किशोर दत्त—ये आगरा के रहने वाले थे, ये मुंसिफ़ और सब-जज रहे। सब-जजी से पेन्शन लेकर शेष जीवन आगरे में बिताया। इन्होंने बहुत-सी क़ानूनी किताबों के अनुवाद किये, कितनी ही मौलिक पुस्तकें भी लिखीं, जिनमें से एक किताब 'आइने वकालत' है, जो १८८९ ई० में प्रकाशित हुई। इसमें वकीलों को ऐसी बातें समझाई गयी हैं, जिन्हें एक अनुभवी और शुभचिन्तक हाकिम ही समझा सकता है। इन्होंने क़ानून जैसे नीरस विषय को बहुत सरस बनाने का प्रयत्न किया है।

मीर नासिर अली ख़ाँ देहलवी—ये १८४७ ई० में देहली में पैदा हुए। मौलवी सैयद नासिरुद्दीन के बेटे थे। इनका परिवार साहित्यिक था। इनकी शिक्षा देहली कालिज में हुई। ४० साल तक नमक विभाग में मुलाज़िम रहे, फिर पेंशन लेकर पाटौदी (गुड़गाँव) रियासत के प्रबन्धक हो गए। सरकार ने इन्हें ख़ानबहादुर का ख़िताब दिया था। मीर साहब ने पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित कर, तथा उनमें लेख लिख कर उर्दू की प्रशंसनीय सेवा की। 'तेरहवीं सदी', 'ज़माना', 'सलाए आम' आदि पत्र निकाले। ये गद्य-काव्य बड़ी सुन्दरता और सफलता से लिखते थे।

मुन्शी प्यारेलाल 'आशोब'—ये प्रसिद्ध कवि तथा लेखक थे। १८६४ ई० में लिटरेरी सोसाइटी के नाम से देहली में इन्होंने एक साहित्य-संस्था स्थापित की थी। इससे नवयुवक साहित्यकारों को ख़ूब प्रोत्साहन मिलता था। जीवन भर मुंशीजी का शिक्षा-विभाग से सम्बन्ध रहा। इन्होंने जो किताबें लिखीं, कोर्स के ढंग की लिखीं, परन्तु उनसे उनकी मौलिकता और विद्वत्ता का परिचय मिलता है। ये मौलाना हाली के साथियों में से थे। 'ख़ुमख़ानए जावेद' के प्रसिद्ध लेखक लाला श्रीराम एम० ए० इनके भतीजे थे। 'आशोब' गद्य तो बहुत ही सुन्दर लिखते थे, कविता भी बड़ी स्वाभाविक और सरल करते थे।

सूरज नरायन 'महर'—ये उर्दू के प्रसिद्ध कवि और लेखक थे। सरकारी सेवा से पेंशन लेकर देहली में रहते और साहित्य-सेवा में समय बिताते थे। इनकी कविताएँ बहुत अच्छी हैं। इन्होंने वृद्धावस्था में संस्कृत पढ़ कर उपनिषदादि कितने ही संस्कृत ग्रन्थों के उर्दू अनुवाद किये। ये अँगरेज़ी, उर्दू और फ़ारसी के विद्वान् थे। १९३२ में इनका देहान्त हुआ।

पं० विशन नरायन 'दर'—इनका जन्म १८६४ ई० में बारा

वंकी में हुआ। लखनऊ में वैरिस्टरी की। उर्दू के विद्वान्, लेखक और कवि थे। 'अब्र' उपनाम था। अँगरेज़ी के भी उच्च कोटि के विद्वान्, वक्ता और लेखक थे। अपने समय के प्रसिद्ध राजनैतिक नेता थे। कांग्रेस में इनके भाषणों की धूम रहती थी। इनकी रचनाएँ बड़े आदर से पढ़ी जाती हैं। इन्होंने 'शरशार' और 'न्यू स्कूल आव् उर्दू लिटरेचर' आदि महत्त्वपूर्ण लेख लिखे हैं।

पं० किशनप्रसाद 'कौल'—ये भारत-सेवक-समिति के सदस्य और मन्त्री रहे हैं। लखनऊ में इनके कारण फ़ारसी और उर्दू की बहुत अच्छी प्रगति रही। इन्होंने कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं। कौल साहब ने 'हिन्दुस्तानी' नामक उर्दू के अर्द्ध साप्ताहिक पत्र का वर्षों सम्पादन किया। 'साधू और वेश्या', 'श्यामा', 'क़ुरबानी', 'मजबूर-वफ़ा', 'मशाहीरे क़ौम की तक़रीर' आदि इनकी लिखी पुस्तकें हैं।

रायबहादुर रामबाबू सकसेना—ये संयुक्त प्रान्तीय सरकार के विविध उच्च पदों पर प्रतिष्ठित रह चुके हैं। कोटा राज्य के मिनिस्टर भी रहे हैं। प्रसिद्ध विद्वान् और साहित्यकार हैं। शायरी भी बहुत अच्छी करते हैं। कितनी ही किताबें लिखी हैं। इनका लिखा उर्दू का इतिहास (हिस्ट्री आव् उर्दू लिटरेचर) बहुत प्रसिद्ध है। 'तारीख़े उर्दू अदब' के नाम से उसका अनुवाद भी हो चुका है। इस पुस्तक में साहित्यिक आलोचना बड़ी गम्भीरता, मार्मिकता और निष्पक्षता से की गई है।

प्रोफ़ेसर महेश प्रसाद—ये काशी विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैं। अरबी, फ़ारसी और उर्दू के आलिम तथा संस्कृत और हिन्दी के पण्डित हैं। अँगरेज़ी भी बहुत अच्छी जानते हैं। इन्होंने महा कवि ग़ालिब की सूक्तियों का एक उत्तम संग्रह प्रकाशित किया है। अपनी ईरान-यात्रा पर भी बड़ी सुन्दर पुस्तक लिखी है। ये हिन्दी के भी सुलेखक हैं। हिन्दी वालों को उर्दू-साहित्य की झाँकी कराने में इन्होंने अच्छी सफलता प्राप्त की है।

मुंशी इक़बाल वर्मा 'सह्र'—इनका जन्म हथगाँव (फ़तहपुर) में हुआ। आयु ५० साल के लगभग है। इन्होंने महाकवि कालिदास के 'शकुन्तला' नाटक का उर्दू में बड़ा सुन्दर अनुवाद किया है। 'रुबाइयात उमर .खैयाम' का भी हिन्दी अनुवाद किया है। मुंशी प्रेमचन्द की भी कुछ पुस्तकों के उर्दू अनुवाद किये हैं। इनका किया 'तुलसीदास' नामक हिन्दी पुस्तक का उर्दू अनुवाद बहुत सुन्दर है। ये कविता भी बहुत अच्छी करते हैं।

ताजवर—इनका जन्म नजीबाबाद (बिजनौर) में हुआ। मौलवी फ़ाज़िल और मुंशी फ़ाज़िल परीक्षाएँ पास कर ये लाहौर के दयालसिंह कालिज में फ़ारसी और उर्दू के अध्यापक नियुक्त हुए। 'हुमायूँ', 'अदबी दुनिया', 'मख़ज़न', 'शाहकार' आदि पत्रों का सम्पादन किया। इन्होंने 'उर्दू मर्कज़' के नाम से एक साहित्य-संस्था भी स्थापित की, जो उर्दू को नए साँचे में ढालने के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

लाला किशनचन्द 'ज़ेबा'—ये प्रसिद्ध नाटककार हैं। 'ज़ख़्मी पंजाब', 'रायबहादुर', 'कायापलट' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। ये अधिकतर राजनैतिक और सामाजिक विषयों पर लिखते हैं।

बाबू सीतल सहाय—ये प्रमुख राष्ट्रिय कार्यकर्त्ता हैं। इन्होंने 'वाजिद अलीशाह' नाम की बड़ी उत्कृष्ट पुस्तक लिखी है। शायरी भी सुन्दर करते हैं। किसानों और मज़दूरों की दुर्दशा पर इनकी अनेक रचनाएँ बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं।

चौधरी जयकृष्णदास एम० ए०—ये एटावाद में वकालत करते हैं। उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। इन्होंने उर्दू में महाकवि कालिदास का जीवनचरित्र लिखा है।

मुंशी ज्वालाप्रसाद माथुर—इनका जन्म अलवर में हुआ।

अनेक रजवाड़ों में प्रतिष्ठित पदों पर काम करते रहे हैं। इन्होंने 'वक़ाए राजपूताना' (राजपूताने का इतिहास) और भरतपुर का इतिहास लिखा है।

मुंशी विश्वेश्वर प्रसाद—ये १८६७ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। इनके पिता मुंशी द्वारका प्रसाद 'उफ़क़' प्रसिद्ध कवि थे। ये 'नज़र' के शिष्य हैं। 'बहरे तरन्नुम' इनकी प्रसिद्ध पुस्तक है। इन्होंने 'वाल्मीकि रामायण', 'तुलसीकृत रामायण', 'विनय-पत्रिका' आदि के उर्दू अनुवाद किये हैं। 'श्रीमद्भगवत् गीता' का भी अनुवाद किया है। इनकी कविताओं का संग्रह 'क़यानाते दिल' नाम से प्रकाशित हुआ है।

सर शेख़ अब्दुल क़ादिर—ये लाहौर में बैरिस्टर हैं। साहित्य सेवा की लगन बचपन से ही है। इन्होंने 'मख़ज़न' नामक रिसाले का सम्पादन बड़ी योग्यता से किया है। अंगरेज़ी में उर्दू साहित्य पर अनेक विद्वत्ता पूर्ण निबन्ध लिखे हैं।

प्रो० अमरनाथ झा, एम० ए०—ये डी० ए० वी० कालिज लाहौर में प्रोफ़ेसर हैं। इन्होंने दार्शनिक विषयों पर उच्च कोटि के अनेक ग्रन्थ और निबन्ध लिखे हैं।

मुंशी गोरखप्रसाद 'इबरत'—ये गोरखपुर के प्रसिद्ध वकील थे। इन्होंने 'मुसद्दसे हाली' की शैली पर 'नग़्मोनुमाए हिन्द' नामक एक बहुत उत्कृष्ट काव्य-पुस्तक लिखी है। इनकी 'जगाने वाली घड़ी' शीर्षक कविता बहुत प्रसिद्ध है। १९१८ ई० में इनका देहान्त हुआ। सुप्रसिद्ध शायर श्री रघुपत सहाय 'फ़िराक़' इन्हीं के सुपुत्र हैं।

दिल—इनका नाम हकीम ज़मीर हसन ख़ाँ और उपनाम 'दिल' है। उर्दू, फ़ारसी के विद्वान् और 'अमीर मीनाई' के शिष्य हैं। पन्द्रह-सोलह साल की उम्र से कविता करते हैं। 'नग़्मए दिल'

नामक इनका दीवान प्रकाशित हो चुका है। 'तरानए दिल' नामक संग्रह भी तैयार है।

'आरज़ू'—इनका नाम सैयद अनवर हुसेन और उपनाम आरज़ू है। लखनऊ में पैदा हुए। इनके पिता मीर ज़ाकर हुसेन भी उर्दू के अच्छे कवि थे। ये 'जलाल' के शिष्य हैं। कविता करने की ओर लुटपन से ही रुचि है। इनके तीन दीवान हैं—'फ़ुगां आरज़ू', 'जान आरज़ू' और 'सुरीली बाँसुरी।' 'सुरीली बाँसुरी' की कविताएँ साधारण बोल-चाल की भाषा में हैं। इन्होंने नाटक भी कई लिखे हैं।

'नातिक़'—इनका नाम सैयद अहमद और उपनाम 'नातिक़' है। १८७८ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। वहीं शिक्षा प्राप्त की। अब चिकित्सा करते हैं। प्रसिद्ध कवि हैं।

'उम्मेद'—इनका नाम मौ० मुहम्मद अली अब्दुल कलाम और उपनाम 'उम्मेद' है। १८७८ ई० में अमेठी (सुल्तानपुर) में पैदा हुए। प्रारम्भ में लखनऊ रहकर अरबी और फ़ारसी पढ़ी। मुन्शी सज्जाद हुसेन एडीटर 'अवध पंच' से भी इनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। ये 'अवध-पंच' के सम्पादन में भी सहायता देते थे। फ़ारसी और उर्दू दोनों में बड़ी अच्छी कविता करते हैं।

मौ०महदी हसन—ये भावों का चित्रण बड़ी सुन्दरता से करते हैं। इनकी एक विशेष शैली है। इनकी लिखी 'अफ़ादात महदी' नामक पुस्तक प्रसिद्ध है।

शेख़ मिनहाजुद्दीन एम० एस-सी०—ये इसलामिया कालिज पेशावर में प्रोफ़ेसर हैं। इन्होंने विज्ञान और ज्योतिष सम्बन्धी कई विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें 'ज़ीनते आसमान', 'नजरियाँ,' 'इजाफ़ियात' आदि प्रसिद्ध हैं।

सैयद अली 'अहसन'—ये मारहरा (एटा) के रहने वाले

थे। अलीगढ़ यूनिवर्सिटी में प्रोफ़ेसर रहे। इन्होंने 'वली' के दीवान का वड़ी योग्यता से सम्पादन किया है। 'उर्दू लश्कर' और 'तारीख़े नस्र उर्दू' इनकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। १८४० ई० में इनका देहान्त हुआ। आलोचना-कला में इनका ऊँचा स्थान है। इनकी भाषा प्रभावपूर्ण है।

श्री मेहरलाल सोनी 'ज़िया' एम०ए०—१६१३ ई० में फ़तेहावाद (अमृतसर) में इनका जन्म हुआ। लाहौर से एम० ए० पास किया। ये 'सीमाव' अकवरावादी के शिष्य हैं। 'तुलूअ' 'तजल्लियात,' 'कारवाँ' आदि इनकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं।

'नातिक़'—इनका नाम अवू उल हसन और उपनाम 'नातिक़' है। ये मु० ज़हूरुद्दीन हसन के पुत्र और गुलावठी (वुलन्दशहर) के रहने वाले हैं। १८८६ ई० में इनका जन्म हुआ। 'अरवी' और 'फ़ारसी' के विद्वान् हैं। अंग्रेज़ी भी अच्छी जानते हैं। 'दाग़' के शिष्य हैं। आजकल नागपुर में रहते हैं। अच्छे साहित्यकार और कवि हैं।

'वहशत'—ये १८८१ ई० में कलकत्ता में पैदा हुए। इसलामिया कालिज कलकत्ता में उर्दू के प्रोफ़ेसर थे, अव अवकाश प्राप्त कर चुके हैं। सरकार ने 'ख़ानवहादुर' का ख़िताव दिया है। इनका एक दीवान प्रकाशित हुआ है, जिसमें उर्दू के साथ फ़ारसी की भी कुछ कविताएँ हैं।

'अफ़सर'—इनका नाम हामिदुल्ला ख़ाँ और उपनाम 'अफ़सर' है। ये १८६८ ई० में मेरठ में पैदा हुए। उर्दू, फ़ारसी और अरवी के विद्वान् हैं। अँग्रेज़ी में वी० ए० पास किया है। वहुत छोटी उम्र से कविता करते हैं। इनकी कविताएँ प्रायः स्वतन्त्र विषयों पर होती हैं।

'अख़्तर'—इनका नाम मौ० अली अख़्तर और उपनाम 'अख़्तर' है। ये १३११ हि० में रामपुर रियासत में पैदा हुए। उर्दू, फ़ारसी और अँग्रेज़ी के अच्छे विद्वान् हैं। हैदरावाद में मुलाज़िम हैं। वहुत छोटी

उम्र से कविता करते हैं। इनकी कितनी ही कविताएँ बहुत लोकप्रिय हुई हैं।

मु० कैलाश वर्म्मा 'शायक'—ये प्रसिद्ध लेखक, कवि और अनुवादक मु० इक़बाल वर्म्मा 'सेहर' के सुपुत्र हैं। १९१० ई० में हथगाँव (फ़तेहपुर) में पैदा हुए। बी० ए० पास किया। इनकी रचनाएँ उर्दू के प्रसिद्ध पत्रों में छपती रहती हैं। कहानियाँ भी ख़ूब लिखते हैं। इनकी हिन्दी रचनाएँ भी बहुत अच्छी होती हैं। गद्य-पद्य दोनों में समान गति है।

आज़ाद 'अन्सारी'—इनका नाम अल्ताफ़ अहमद और उपनाम 'आज़ाद' है। १२८८ हि० में नागपुर में पैदा हुए। पढ़-लिख कर विविध स्थानों में चिकित्सा करते रहे। अब हैदराबाद में ऐनक की दूकान करते हैं। मौ० हाली के शिष्य हैं। कविता बहुत अच्छी करते हैं।

'रविश'—इनका नाम शाहिद अज़ीज़ और उपनाम 'रविश' है। १९११ ई० में ज्वालापुर में पैदा हुए। मौ० तुफ़ैल मुहम्मद 'शाहिद' के बेटे हैं। उर्दू और फ़ारसी के अतिरिक्त हिन्दी, संस्कृत और अँग्रेज़ी भी जानते हैं। अपने पिता के शिष्य हैं। ग़ज़ल और नज़्म दोनों लिखते हैं। इनके पिता 'शाहिद' भी प्रसिद्ध कवि थे।

साहिर—इनका नाम श्रीअमरनाथ और उपनाम 'साहिर' है। रायबहादुर जानकी नाथ 'मदन' रईस देहली के पुत्र हैं। १८६३ ई० में बरेली में पैदा हुए। उर्दू और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् हैं। पहले फ़ारसी में कविता करते थे, फिर उर्दू में करने लगे। ये बरसों तहसीलदार रहे हैं। इनकी लिखी कितनी ही किताबें हैं। देहली रहते हैं।

प्रो० आनन्द वर्म्मा—ये पहले हिन्दू कालिज देहली में प्रोफ़ेसर थे। अब देहली यूनिवर्सिटी में उर्दू-फ़ारसी-विभाग के अध्यक्ष हैं। इनकी 'मयारे उर्दू' नाम की पुस्तक बहुत प्रसिद्ध है।

'बिस्मिल'—मुन्शी आनन्द स्वरूप 'बिस्मिल' उर्दू और फ़ारसी के विद्वान् हैं। इनकी उर्दू कविताएँ बड़ी अच्छी होती हैं। राष्ट्रिय विषयों पर तो ये बड़ी ही सफलता से लिखते हैं। आजकल पंजाब में चिकित्सा-कार्य करते हैं। अलीगढ़ और खुर्जा भी रह चुके हैं। बड़े मिलनसार और हँसमुख हैं। इनकी आयु पचास वर्ष के लग भग होगी।

प्रो० हामिद हुसेन क़ादरी—ये वयोवृद्ध विद्वान् हैं। आगरा सेण्ट जॉन्स कालिज में फ़ारसी-उर्दू के प्रोफ़ेसर हैं। इन्होंने उर्दू साहित्य की प्रशंसनीय सेवा की है। अनेक किताबें लिखीं हैं। क़ादरी साहब ने 'दास्ताने तारीख़ उर्दू' नाम का उर्दू का एक बृहत् इतिहास भी लिखा है। इसमें आदि से लेकर बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक के गद्यकारों का वर्णन है। इनकी रची निम्नलिखित पुस्तकें भी हैं—'बाग़बान' विश्व कवि रवीन्द्रनाथ के 'गार्डनर' का अनुवाद। 'कमाले [illegible]'—महाकवि दाग़ की चुनी कविताओं का संग्रह और उन पर आलोचना। 'तारीख़ो तनक़ीद अदबियात उर्दू'—आलोचना-सिद्धान्त सम्बन्धी। 'तारीख़ मरसियागोई,' 'शाहकार अनीस'—'अनीस' की चुनी हुई कविताएँ। 'अलकोहल और ज़िन्दगी,—मदिरापान के विरुद्ध। 'तरबियत अतफ़ाल'—बालोपयोगी।

मु० मेलाराम 'वफ़ा'—ये अनुवादक, कवि और लेखक हैं। इन्होंने 'कोलम्बस' पर बड़ी अच्छी पुस्तक लिखी है। इनकी लिखी रामचन्द्रजी की जीवनी बड़ी सुन्दर है।

मु० प्यारेलाल 'रौनक़'—ये नासिख़ के शिष्य हैं, उर्दू कविता बड़ी अच्छी करते हैं। इन्होंने 'कमाल' नामक रिसाले का सम्पादन बड़ी योग्यता से किया। 'रौनक़े सख़ुन' और 'रौनक़' नामक इनके कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

मु० बनवारीलाल 'शोला'—ये १८४० ई० में सहारनपुर में

पैदा हुए। पढ़-लिख कर अलीगढ़ में वकालत शुरू की। मु० हरगोपाल 'तफ़्ता' के शिष्य थे। 'बज़्मे वृन्दावन' नामक इनकी पुस्तक प्रसिद्ध है। 'अरमुग़ाने शोला' के नाम से इनकी कविताओं का एक संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। ये धार्मिक कविताएँ बड़ी सुन्दर लिखते थे।

'अहसान' दानिश—इनका नाम अहसानुल हक़ और उप-नाम 'अहसान' है। ये काज़ी दानिशअली के पुत्र हैं। १६१४ ई० में काँधला (मुज़फ्फ़र नगर) में पैदा हुए। इनके कविता-गुरू तौक़ीर ताहिर हैं। काँधला से ये लाहौर चले गए। वहाँ इन्होंने अपना 'बुक डिपो' खोला है। ये अधिकतर नज़्में लिखते हैं, कुछ ग़ज़लें भी लिखी हैं। इनकी पुस्तकों के नाम—'तफ़सीरे फ़ितरत' 'चराग़ान', 'नवाए कारगर' 'आतिशे ख़ामोश', दर्दे ज़िन्दगी' इत्यादि।

सैयद मसऊद हसन रिज़वी एम० ए०—ये लखनऊ यूनि-वर्सिटी में फ़ारसी और उर्दू विभाग के अध्यक्ष हैं। प्रसिद्ध आलोचक और लेखक हैं। इन्होंने 'हमारी शायरी' नामक पुस्तक में कविता-कला की बड़ी सुन्दर विवेचना की है। इस किताब को विद्वानों ने बहुत पसन्द किया है। रिज़वी साहब ठोस विद्वान् और प्रगतिशील साहित्यकार हैं।

उर्दू के योरोपियन लेखक

यूरोप में सब से पहला उर्दू-लेखक हालैण्ड निवासी जान जोशुआ केटलर नामक व्यक्ति माना जाता है। यह १७११ ई० में डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी का डायरेक्टर नियुक्त होकर तीन साल सूरत में रहा था। शाहआलम बादशाह और जहाँदार शाह के दरबारों में भी उपस्थित हुआ था। १७१२ ई० के दरबार में भी सम्मिलित था। इसने प्रायः १७१५ ई० में लैटिन भाषा में 'उर्दू ज़बान की ग्रामर' लिखी जो १७४३ ई० में प्रकाशित हुई। पादरी बेंज-मिन शुल्ज़ ने भी लैटिन में उर्दू का व्याकरण लिखा। १७४७ ई० में इसी विद्वान् ने 'बाइबिल' का उर्दू अनुवाद किया। १८४४ ई० में मिस्टर

मिल ने उर्दू वर्णमाला पर एक छोटी-सी पुस्तक लिखी। जी० ए० फ़र्टेज़ ने १७४८ ई० में एक किताब लिखी जिसमें उर्दू वर्णमाला की दूसरे देशों की वर्णमालाओं से तुलना की गई है। हैडले ने १७७२ ई० में उर्दू का व्याकरण लिखा। १७७८ ई० में पुर्तगाली भाषा में भी उर्दू का एक व्याकरण प्रकाशित हुआ। डफ़ ने हिन्दुस्तान में रहकर उर्दू व्याकरण लिखा जो लन्दन से प्रकाशित हुआ। यह व्यक्ति १७८५ ई० में हिन्दुस्तान आया और कलकत्ता में इसने संस्कृत, बंगाली तथा उर्दू सीखी। डाक्टर जान गिलक्रिस्ट ने नीचे लिखी किताबें लिखीं—'अंग्रेज़ी हिन्दुस्तानी डिक्शनरी—' १७६३ ई० में। 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' १७६२ ई० में। 'ओरियण्टल लिंगुइस्ट' (मशरक़ी ज़बान दाँ) १७६८ ई० में। 'मशरक़ी ज़बानों का खुलासा'—१८०० ई० में। 'क़सिस मशरक़ी' (अंग्रेज़ी से अनुवादित)—१८०३ ई० में। 'रहनुमाए ज़बान उर्दू'—१८०४ ई० में। 'हिन्दी अरबी का आईना'—१८०४ ई० में। 'क़वायद उर्दू'—१८०६ ई० में। 'उर्दू रिसाला गिलक्रिस्ट'—१८२० ई० में। 'अंग्रेज़ी-हिन्दुस्तानी बोलचाल'—१८२० ई० में।

कप्तान जोज़फ़ टेलर नामक अंग्रेज़ ने 'उर्दू-अंग्रेज़ी कोष' लिखा। इसमें विलियम हंटर ने भी सहायता दी। यह पुस्तक १८२० ई० में प्रकाशित हुई। गैडोन ने १८०६ ई० में फ़ारसी-हिन्दुस्तानी डिक्शनरी लिखी। कप्तान टामस रोबुक ने १८११ ई० में 'लुग़त जहाज़-रानी' लिखी। इन्होंने 'तरजुमाने हिन्दुस्तानी' नामक किताब भी लिखी, जो लन्दन में १८२४ ई० में प्रथम बार प्रकाशित हुई। जान शेक्सपीयर ने १८१३ ई० में 'उर्दू लुग़त' लिखी। विलियम टेट ने १८२७ ई० में 'मुक़दमा ज़बान हिन्दुस्तानी' नामक पुस्तक लिखी। डाक्टर एस० डबल्यू० फ़ैलन ने चार कोश लिखे—अर्थात् 'हिन्दुस्तानी इँगलिश डिक्शनरी', 'इँगलिश हिन्दुस्तानी डिक्शनरी', 'हिन्दुस्तानी इँगलिश क़ानूनी डिक्शनरी', 'इँगलिश हिन्दुस्तानी क़ानूनी डिक्शनरी। फ़ैलन साहब की मृत्यु १८८० ई० में हुई।

फ्रांसीसी प्रो० गारसन दतासी ने पेरिस में बैठकर हिन्दुस्तानी

की प्रशंसनीय सेवा की। इस विषय पर व्याख्यान दिए, लेख लिखे और किताबें बनाईं। सचमुच इस विद्वान् ने संस्कृत, हिन्दी, अरबी, फ़ारसी और उर्दू की अच्छी सेवा की है। इसकी उर्दू साहित्य सम्बन्धी पुस्तकों की संख्या बीस से अधिक है। कुछ के नाम नीचे दिए जाते हैं—'पन्दआमोज़ हिकायात' का अनुवाद, 'इन्तख़ाब कलाम मीर तक़ी 'मीर' (.फ्रेंच अनुवाद)—१८२६ ई० में। क़िस्सा कामरूप (.फ्रेंच अनुवाद) १८२४ ई० में। 'इन्तख़ाब कलाम वली औरंगाबादी',—१८३६ ई० में। 'कुतबाजात अरबी, फ़ारसी उर्दू'—१८२८ ई० में। 'ज़िक्र तज़-किराज़ात'—जिसमें हिन्दी और उर्दू के लेखकों और कवियों का वर्णन है, १८३७ ई० में लिखा गया। 'मुसलमान मशरिक़ का इल्म उरूज फ़ारसी व उर्दू'—१८३४ ई० में। 'हिन्दुस्तान के खाने'—१८३४ में। 'इन्तख़ाब क़िस्सा गुलबकावली' (.फ्रेंच अनुवाद)—१८३५ ई० में। 'उर्दू ज़बान का इब्तदाई रिसाला'—१८३३ ई० में। "सादी—दखिनी हिन्दुस्तान का एक मशहूर शायर'—१८४३ ई० में। 'तज़किरा शोअ-राए उर्दू' (दो जिल्दों में)—१८४७ ई० में। 'इन्तख़ाब उर्दू-हिन्दी'—१८५४ ई० में। 'तज़किरा मुसन्निफ़ीन व तसानीफ़ उर्दू'—१८६८ ई० में। '.ख़ुतबात मुतअल्लिक़ ज़बान उर्दू'—१८४७ ई० में। 'तज़किरा शोअराए उर्दू' (तीन जिल्दों में)।

मिस्टर एफ़० फ़ैलन ने मौलवी करीमुद्दीन देहलवी की सहायता से शोअराए हिन्द का तज़किरा 'तबक़ात शोअराए हिन्द' के नाम से लिखा, जो १८४८ ई० में प्रकाशित हुआ। विलियम मैकफ़र्सन ने १८५१ ई० में 'दस्तूरुल अमल अदालत दीवानी' नामक पुस्तक लिखी। मिस्टर फ़ैगन ने 'मजमूआ क़वानीन ताज़ीरात हिन्द' लिखी। मि० पील ने जो आगरा कालिज में भौतिक विज्ञान के असिस्टेंट प्रोफ़ेसर थे, 'आलात तबई का नक़्शा' तैयार किया और उसके उपयोग के लिए १८५० ई० में उर्दू में एक रिसाला भी लिखा। १८५३ ई० में जान-पार्क्स लेडली नामक अँगरेज़ ने अर्थशास्त्र सम्बन्धी एक अँगरेज़ी किताब का उर्दू अनुवाद किया। इन दिनों ईसाइयों की धर्म-पुस्तक

वाइविल के भी अनेक उर्दू तर्जुमे हुए। पहला-सा तो नहीं, परन्तु अब भी अँगरेज़ों को उर्दू साहित्य से कुछ न कुछ शौक़ अवश्य है। कभी-कभी अब भी इनके द्वारा उर्दू सम्बन्धी किताबें प्रकाशित हो ही जाती हैं। उदाहरणार्थ १६३२ ई० में ग्राहम वेली ने 'हिस्ट्री आव उर्दू लिटरेचर' नामक एक किताब लन्दन से प्रकाशित की थी। और भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

'देहली कालिज' की साहित्य-सेवा

'देहली कालिज' के सम्बन्ध में इस पुस्तक के प्रारम्भ में ही संकेत किया जा चुका है। फ़ोर्ट विलियम कालिज कलकत्ता की तरह ही अँग्रेज़ों ने 'देहली कालिज' की भी स्थापना की थी। इसका उद्देश्य हिन्दुस्तानियों को पाश्चात्य शिक्षा देना था। पहले एक स्कूल खोला गया, फिर वही स्कूल उन्नति करते-करते 'देहली कालिज' वन गया। १८२७ ई० से इस विद्यालय में अँग्रेज़ी पढ़ाने की भी व्यवस्था हुई। थोड़े ही दिनों में अंग्रेज़ी पढ़ने वालों की संख्या तीनसौ के लगभग होगई। यह कालिज देहली में कश्मीरी दरवाज़े के समीप था। गणित, विज्ञान आदि की शिक्षा व्याख्यानों द्वारा दी जाती थी, क्यों कि उस समय तक विज्ञान और शिल्प की पुस्तकों के अनुवाद न हुए थे। कालिज में निःशुल्क शिक्षा दी जाती थी। फ़ीस लेना तो अलग रहा, उलटा विद्यार्थियों को छात्र-वृत्तियाँ देने का नियम था। इस कालिज का प्रिंसिपल अँग्रेज़ होता था। अध्यापक अँग्रेज़ और हिन्दुस्तानी दोनों थे। यथा प्रो० रामचन्द्र, प्रो० राम किशन, मौ० करीम उद्दीन पानीपती, मौ० इमाम वख़्श सहवाई इत्यादि। एक वार एक फ्रेंच प्रिंसिपल नियुक्त हुआ, उसने १८४२ ई० में 'वर्नाक्युलर ट्रांसलेशन

सोसाइटी' के नाम से एक संस्था स्थापित की। इस संस्था के मुख्य कार्य्यकर्ता प्रो० रामचन्द्र और मौ० इमामबख़्श सहबाई थे। इसके द्वारा अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, अँग्रेज़ी आदि भाषाओं से अनेक पुस्तकों के अनुवाद किये गए, जिससे देश को बड़ा लाभ पहुँचा। प्रो० रामचन्द्र का उल्लेख इसी पुस्तक के प्रारम्भ में किया गया है। प्रो० रामकिशन ने सर विलियम मेकनाटन की क़ानूनी किताब 'हिन्दू-धर्मशास्त्र' का अंग्रेज़ी से उर्दू में अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त चिकित्सा, कृषि, व्याकरण आदि विषयों की पुस्तकों के अनुवाद भी किये तथा कई मौलिक किताबें भी लिखीं। मौ० करीमउद्दीन पानीपती ने स्त्रियों के लिए उपयोगी और मनोरंजक पुस्तकें लिखीं। इन्होंने नीचे लिखी किताबें भी लिखीं—छन्दः शास्त्र सम्बन्धी एक पुस्तक, 'तारीख़ अबूउल फ़िदा' का अनुवाद, 'शोअराए अरब का तज़किरा', 'शोअराए उर्दू का तज़किरा', उत्तराधिकार (विरासत) के क़ानून पर एक पुस्तक, 'गुलिस्ताने हिन्द' इत्यादि। इस कालिज के विद्यार्थियों में प्रो० रामचन्द्र, मास्टर प्यारेलाल 'आशोब,' मौ० ज़काउल्ला, मौ० मुहम्मदहुसेन 'आज़ाद,' मौ० नज़ीर अहमद, मौ० शहामत अली (प्रधान मन्त्री इन्दौर राज्य), आगरा के सुप्रसिद्ध डाक्टर मुकुन्दलाल आदि बहुत प्रसिद्ध हो गए हैं। 'देहली कालिज' के प्रिंसिपलों द्वारा भी उर्दू की बड़ी सेवा हुई है। अन्त को १८५७ के भयङ्कर राज-विप्लव (ग़दर) के समय 'देहली कालिज' पर भी आपत्ति आई, वह नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया, और उसका पुस्तकालय जला डाला! कालिज के प्रिंसिपल मि० फ्रांस टेलर मार डाले गये! परन्तु जिस 'ट्रस्ट' की आमदनी से यह कालिज चलता था; वह क़ायम रहा। अतः विद्रोह शान्त होने पर दूसरा कालिज चाँदनी चौक में 'देहली इंस्टीट्यूट' के नाम से खोला गया। थोड़े ही दिनों में इसके विद्यार्थियों की संख्या पाँच सौ के लगभग होगई। एक बड़ा पुस्तकालय और अजायब घर भी कालिज के साथ खोला गया। इस नये कालिज के खुल जाने से पहला कालिज 'पुराना देहली कालिज' कहलाया।

उर्दू के मुख्य कवि

५ अमीर .ख़ुसरो—अमीर .ख़ुसरो का समय १२५५ ई० से १३२५ ई० तक माना जाता है। ये एटा ज़िले के पटियाली गाँव में पैदा हुए थे। इन्होंने देहली के ग्यारह बादशाहों का शासन-काल देखा और सात बादशाहों की नौकरी की। नौकरी की हालत में इन्होंने पंजाब और बंगाल की यात्रा की। कई युद्धों में भी सम्मिलित हुए। ये सैनिक भी थे और विद्वान् भी। गृहस्थ भी थे और साधु भी। कवि भी थे और संगीतज्ञ भी। काव्य और संगीत दोनों कलाओं पर इनका समान अधिकार था। संगीत में तो इन्होंने कितनी ही नई बातें निकालीं। फ़ारसी के इन्होंने तीन दीवान लिखे और आठ मसनवियाँ रचीं। हिन्दी में भी .ख़ुसरो ने बहुत-सी कविताएँ लिखीं, जिनका उल्लेख उन्हीं के दीवान की भूमिका में किया है, परन्तु ये सब कविताएँ प्राप्य नहीं हैं। .ख़ुसरो के नाम से अनेक दोहे, पहेलियाँ, अनमिलियाँ, कह मुकरियाँ आदि प्रसिद्ध हैं। इन्हें हिन्दी से बड़ा प्रेम था। बड़ी सुन्दरता से हिन्दी बोलते और उसमें कविता लिखते थे। 'कहमुकरी' उस पहेली को कहते हैं जिसमें उसकी बूझ मौजूद हो, परन्तु प्रकट रूप से समझ में न आवे। अमीर .ख़ुसरो ने ऐसी बहु संख्यक 'कहमुकरियाँ' कही हैं। सब से पहले इन्होंने ही उर्दू में ख़ालिकबारी' नामक पद्यात्मक कोष लिखा और सब से प्रथम ग़ज़ल भी इन्होंने ही कही। इनकी उर्दू कविताओं की कोई किताब नहीं है। हिन्दी वालों की तरह उर्दू वाले भी अमीर .ख़ुसरो को अपना आदि कवि मानते हैं। .ख़ुसरो की फ़ारसी कविताओं की ईरानियों ने भी मुक्त कंठ से सराहना की है। .ख़ुसरो का देहान्त १३२५ ई० में देहली में हुआ। इनकी क़ब्र देहली में, इनके परम श्रद्धेय हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया की क़ब्र के पास ही बनी हुई है। हज़रत औलिया पर इनकी प्रगाढ़ भक्ति थी, उनके मरने के थोड़े दिनों बाद ही यह भी चल बसे।

सब से प्रथम फ़ारसी छन्दों को .खुसरो ने ही उर्दू में इस्तैमाल किया। इनकी लिखी कुछ पुस्तकों के नाम—'मसनवी मजनूं लैला', 'मसनवी आईनए सिकन्दरी' 'मसनवी हिश्त वहिश्त' 'शीरीं .खुसरो' 'ख़ालिक-बारी' आदि। अन्तिम कृति 'मसनवी तुग़लक नामा' इन्होंने बादशाह ग़यासुद्दीन (प्रथम) की प्रेरणा से लिखी थी।

'वली'—इनका पूरा नाम ठीक-ठीक नहीं मालूम, कुछ लोग शाह वली अल्लाह कहते हैं। इनका जन्म १६६८ ई० में औरंगाबाद (दक्षिण) में हुआ। ये शाह हबीबुल्ला के बेटे थे। २० वर्ष की आयु तक वहीं पढ़ते-लिखते रहे। फिर विद्याध्ययन के लिए अहमदाबाद गए। वहाँ कुछ काल रह कर फिर औरंगाबाद आगए। ये अरबी-फ़ारसी के बड़े विद्वान् थे। रेखना (उर्दू) में लिखना पहले पहल इन्होंने ही प्रारम्भ किया। ये एक सूफ़ी फ़कीर के घर पैदा हुए थे, अतः इनकी अधिकतर कविताएँ ईश्वर-सम्बन्धी हैं। 'वली' की कविताओं का अन्य कवियों ने .खूब अनुकरण किया है। इनके शिष्यों की संख्या सैकड़ों है, जिनमें बड़े-बड़े विद्वान् भी हैं। 'वली' यात्रा .खूब करते थे। दो बार देहली भी आए। देहली आने पर इनकी धूम मच गई। सर्वत्र 'वली' की ही चर्चा होने लगी। इनका दीवान .खूब लोकप्रिय हुआ। लोगों में कविता करने और समझने की रुचि पैदा होगई। 'वली' ने किसी बादशाह या धनी की प्रशंसा कभी नहीं की। कुछ लोगों का ख़याल है कि उर्दू में 'दीवान' लिखने की प्रथा 'वली' से ही चली, परन्तु यह धारणा ठीक नहीं प्रतीत होती, क्यों कि उनसे पहले भी कुतुबशाही युग के दीवान मिले हैं। अपने अन्तिम समय में 'वली' औरंगाबाद चले गए थे, और १७४४ ई० में वहीं उनका देहान्त हुआ।

वली के कारण उत्तरी भारत में रेखता की कविता का .खूब विकास हुआ। इन्होंने अपनी कविताओं में फ़ारसी शब्दों के साथ हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग किया है। ये अपने समय के उस्ताद माने गए और इनकी कविता का .खूब आदर हुआ। इन्होंने ग़ज़ल, क़सीदा,

मसनवी, मुस्तज़ाद, रुबाई आदि सब ही लिखे हैं। इनकी लिखी 'दह-मजलिस' नामक मसनवी बहुत प्रसिद्ध है। कहते हैं, हिन्दी में भी इन्होंने एक दीवान लिखा था जो अप्राप्य है। इनका लिखा 'नूरुल मारिफ़त' नामक एक और दीवान बताया जाता है। उसमें सूफ़ियाना कविताएँ संगृहीत हैं। 'वली' की कविताएँ बड़ी सरस, सरल और स्वाभाविक हैं। कविताओं में कला का अच्छा विकास हुआ है।

'वली' उर्दू कविता के आदि प्रवर्त्तक थे, इनकी कृपा से ही आज उर्दू-उपवन इतना हरा-भरा दिखाई देता है। इनसे पहले कवि या तो फ़ारसी में कविता करते थे, या हिन्दी में। उर्दू का तो कोई नाम भी न जानता था। 'वली' ने फ़ारसी कविता के भावों को उर्दू में रख कर एक नया युग उपस्थित कर दिया। उनकी 'उर्दू' खड़ी बोली और ब्रज-भाषा का मिश्रण मात्र थी।

'कुल्लियाते वली' नामक वली की कविताओं का एक संग्रह भी प्रकाशित हुआ है। इसके प्रारम्भ में विद्वत्तापूर्ण उपोद्घात है। यह संग्रह कितनी ही अप्रकाशित हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर, कई वर्षों के परिश्रम से तैयार हुआ बताया जाता है।

'आबरू'—इनका नाम शाह नजमुद्दीन और उपनाम 'आबरू' था। ये शाह मुबारक के नाम से प्रसिद्ध थे। बादशाह मुहम्मदशाह के समय में हुए। इनके पिता शेख़ मुहम्मद ग़ऊस ग्वालियरी भी अच्छे साहित्यिक थे। आबरू ग्वालियर में ही पैदा हुए, परन्तु बचपन में ही देहली आगए। वहीं पढ़े-लिखे और कविता करने लगे। ये सिराजुद्दीन अलीख़ाँ से इसलाह लेते थे। इन्होंने बहुत-सी कविताएँ लिखीं, परन्तु वे ग़दर के समय नष्ट होगईं। इनकी लिखी 'आरायशे माशूक़' नामक एक मसनवी है। ये कुछ दिन नारनौल भी रहे थे। इनकी एक आँख मारी गई थी जिसके कारण बहुधा मिर्ज़ा जानजाना 'मज़हर' से छेड़छाड़ रहती थी। प्राचीन कवियों में 'आबरू' का ऊँचा स्थान है। उपमाएँ और श्लिष्टालङ्कार इनकी कविता के विशेष गुण

हैं। ये बड़े मिलनसार थे। पीर मक्खन नामक एक व्यक्ति से इनका बड़ा प्रेम था। अपनी कविताओं में, इन्होंने प्रायः उसका उल्लेख भी किया है। १७५० ई० में पचास वर्ष की आयु में इनका देहान्त हुआ।

'आरज़ू'—इनका नाम सिराजुद्दीनअलीख़ाँ और उपनाम 'आरज़ू' था। 'ख़ान आरज़ू' के नाम से प्रसिद्ध थे। ये शेख़ हिसामुद्दीन के पुत्र थे। अपने समय के बहुत बड़े कवि हो गए हैं। 'मीर', 'सौदा' मज़हर, 'दर्द' आदि तक ने इनको उस्ताद माना है। इसी से इनकी महत्ता सिद्ध है। 'आरज़ू' फ़ारसी और उर्दू दोनों भाषाओं में कविता करते थे। कवियों के सब ही इतिहासों में इनका प्रतिष्ठा पूर्वक उल्लेख किया गया है। १६९२ ई० के लगभग ये आगरा में पैदा हुए थे। कविता करने में रुचि बचपन से ही थी। फ़रुख़सियर के समय में २४ वर्ष की आयु में देहली गए। देहली पर आपत्ति आने के कारण ये लखनऊ चले गए, और १७५६ ई० में वहीं इनका देहान्त हुआ। इनकी लाश इनकी पूर्व सूचनानुसार देहली में ही दफन की गई। 'आरज़ू' की कविता बड़ी मधुर है। इनकी लिखी कुछ पुस्तकें—'फ़ारसी दीवान'—इसमें तीस हज़ार शेर हैं। 'शरह गुलिस्तान सादी', 'सिराजुल लुग़ात' (फ़ारसी), 'चिराग़े हिदायत', 'गरायबुल लुग़ात' (उर्दू), 'शरह सिकन्दर नामा', 'तज़किरा आरज़ू' (मजमुल नफ़ास),—इसमें उन हिन्दुस्तानी और दक्षिणी शायरों का वर्णन है, जिन्होंने फ़ारसी में कविता की है। इनके शिष्यों की बहुत बड़ी संख्या थी, जिनमें से, कितने ही तो इनसे भी अधिक प्रसिद्ध हुए। यथा—'मज़हर', 'सौदा' 'मीरतक़ी' 'मीर दर्द' आदि। 'आरज़ू' ने भाषा की दृष्टि से उर्दू को परिमार्जित करने के लिए बहुत प्रयत्न किया। उसमें अनेक नए मुहावरों का प्रयोग कर उसे सरस और शुद्ध बनाया। 'आरज़ू' अधिकतर फ़ारसी में ही कविता करते थे। कभी-कभी उर्दू में भी लिख डालते थे।

'हातिम'—शाह ज़हूरुद्दीन 'हातिम' १६९९ ई० में देहली में

पैदा हुए। ये शेख़ फ़तेहउद्दीन के बेटे थे। इलाहाबाद में सिपाहीगिरी करते थे। वृद्धावस्था में देहली आगए। इनकी कविता पर 'वली' की कविता-शैली का बड़ा प्रभाव है। ये अपने समय में 'रेख़ता' के उस्ताद माने जाते थे। इनके लिखे दो दीवान बताए जाते हैं। एक पुरानी शैली पर और दूसरा नवीन पर। पहले इनका उपनाम 'रम्ज़' था। इन्होंने अपने बड़े दीवानों से कुछ कविताएँ चुनकर एक छोटा दीवान बनाया और उसका नाम 'दीवानज़ादा' रखा था। इस 'दीवानज़ादे' में भी पाँच हज़ार शेर हैं। इन्होंने हुक़्के पर भी एक मसनवी लिखी थी। इनकी कविताओं में कहीं-कहीं हास्य का भी पुट है। उर्दू की 'देहली-शैली' के आविष्कारक ये ही हैं। इन्होंने भाषा-परिमार्जन का काम बड़ी योग्यता से किया है। इनकी कविता सरस और सरल है। १७९२ ई० के लगभग देहली में इनका देहान्त हुआ। उर्दू साहित्य में इनका बहुत ऊँचा स्थान है। कितने ही प्रसिद्ध शायरों के ये गुरु थे, जिनमें 'सौदा' मुख्य हैं। 'सौदा' के भविष्य पर इन्होंने बड़ी-बड़ी आशाएँ बाँध रखी थीं, जो पूरी हुईं। सचमुच 'सौदा' ने 'हातिम' की ख्याति पर चार चाँद लगा दिए। अपने अन्तिम समय में 'हातिम' ने फ़क़ीरी धारण कर ली थी, और उनके विचारों में भी विरक्ति आ गई थ। इनकी फ़ारसी कविताओं का भी एक दीवान है।

मज़मून—इनका नाम शेख़ शरफ़ुद्दीन और उपनाम 'मज़मून' था। ये शेख़ फ़रीदुद्दीन शकरगंज के वंशज थे। जन्म आगरा में हुआ, परन्तु बचपन में ही देहली चले गये थे। पेशा सिपाहीगिरी था। इन्होंने अपने युग के अनुसार बहुत अच्छी कविताएँ की हैं। दो सौ शेरों का एक दीवान लिखा है। कविता निर्दोष और सुन्दर है। कहीं-कहीं अश्लीलता अवश्य आगई है। इन्होंने कविताओं में नये-नये शब्दों का प्रयोग किया है। ये बड़े विनोदी और हँसमुख थे। इनके जीवन में ही इनकी कविताओं की ख़ूब प्रतिष्ठा हुई। १७४५ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये अपने छोटे भाई से कविताओं का संशोधन कराया

करते थे। इनके दाँत उखड़ गए थे, इसलिए इनके मित्र हँसी में इन्हें 'शायर बेदाना' कहा करते थे। 'मज़मून' के मरने पर 'सौदा' ने ये पंक्तियाँ कही थीं—

लिये मै उठ गया साक़ी मेरा भी पुर हो पैमाना
इलाही किस तरह देखूं मैं इन आँखों से मैख़ाना
बिनाएँ उठ गयीं यारो ग़ज़ल के ख़ूब कहने की
गया 'मज़मून' दुनिया से रहा 'सौदा' सो मस्ताना।

'मज़हर'—इनका नाम शम्सुद्दीन और उपनाम 'मज़हर' था। ये 'जान जाना' के नाम से प्रसिद्ध थे। कहते हैं, बादशाह आलमगीर ने इनका यह नाम रखा था। ये मिर्ज़ा जान के पुत्र थे। १६९८ ई० के लगभग कालाबाग़ (मालवा) में पैदा हुए। ये साधु-प्रकृति के थे। सूफ़ी फ़कीरों की संगत इन्हें बहुत पसन्द थी, इनका प्रायः सारा समय काव्य-चर्चा में ही व्यतीत होता था। बादशाह मुहम्मदशाह ने इन्हें बहुत बड़ी जागीर देनी चाही, परन्तु इन्होंने उसे धन्यवादपूर्वक अस्वीकृत कर दिया। नबाब फ़ीरोज़ जंग द्वारा भेट में दिये कई गाँव भी इन्होंने नहीं लिए: ऐसे थे ये विरक्त और त्यागी। इन्होंने उर्दू कविता में एक नया रंग पैदा किया है। ये गद्य और पद्य दोनों समान सफलता से लिखते थे। इनकी कविता में भाव-गाम्भीर्य के साथ-साथ अनुभूति और भक्ति-भावना की भी प्रचुरता है। 'मज़हर' के फ़ारसी के दो दीवान हैं। उर्दू में एक दीवान अपूर्ण है। इनकी मृत्यु बड़ी बुरी तरह हुई। कहते हैं, १७८० ई० में, मुहर्रम के अवसर पर, इन्होंने ताज़ियों को व्यर्थ की वस्तु कह दिया था, जिससे कुछ कट्टर मुसल-मान बिगड़ गए और घात लगाकर उन्होंने इन पर आक्रमण कर दिया, जिससे ये दो-तीन दिन बाद मर गए। 'मज़हर' साधारण पढ़े-लिखे थे। ये रंग-ढंग, बोल-चाल, रहन-सहन और शिष्टाचार के बड़े पाबन्द थे। अशिष्टता को तनक भी सहन न कर सकते थे। इन्होंने एक धोबिन घर में डाल रखी थी। इस पर 'सौदा' ने इन पर नीचे

लिखी फबती कसी थी, जिसमें इनकी कविताओं का भी मज़ाक उड़ाया गया है, और धोबिन की ओर भी संकेत है—

मज़हर का शेर फ़ारसी और रेख़ता के बीच
'सौदा' यक़ीन जान कि रोड़ा है बाट का।
आगाहे फ़ारसी तो कहें उसको रेख़ता—
वाक़िफ़ जो रेख़ता के ज़रा होवे ठाट का
सुनकर वो यह कहे कि नहीं रेख़ता है यह
और रेख़ता भी है तो फ़ीरोज़शह की लाट का
अल क़िस्सा इसका हाल यही है कि सच कहूँ—
कुत्ता है धोबी का कि न घर का न घाट का।

'नाजी'—इनका नाम सैयद मुहम्मद शाकिर और उपनाम 'नाजी' था। ये सिपाही-पेशा थे। मुहम्मद शाह के ज़माने में देहली में रहते थे। इन्होंने देहली पर नादिरशाह का आक्रमण देखा था। एक 'मुख़म्मस' में इस आक्रमण का आँखों देखा वर्णन इन्होंने बड़ी ही कारुणिक भाषा में किया है। जवानी में ही इनका देहान्त होगया। 'आरज़ू' इनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। इनमें नुक़ताचीनी की बुरी आदत थी। सब की कविताओं में कुछ न कुछ दोष निकालने की चेष्टा किया करते थे। 'नाजी' की हास्य रस की कविताएँ भी मज़ेदार हैं। इनका दीवान ख़ूब लोक-प्रिय हुआ है। कविता में भाषा-सौन्दर्य और भावों की सूक्ष्मता अधिक मात्रा में पाई जाती है। कहीं-कहीं अश्लीलता दोष भी आगया है।

'ताबाँ'—इनका नाम मीर अब्दुल इलाही और उपनाम 'ताबाँ' था। ये अत्यन्त सुन्दर थे।—इतने सुन्दर कि इनकी प्रशंसा में शायरी तक की जाने लगीं थी। इनकी प्रशंसा सुनकर, कहते हैं कि, बादशाह शाह आलम स्वयम् इन्हें देखने गए थे। ये शराब बहुत पीते थे, इससे इनका स्वास्थ्य बिगड़ गया था और ये युवावस्था ही में चल

बसे। इनकी कविताएँ शृङ्गार-रस प्रधान हैं। परन्तु भाव बहुत सुन्दर और गम्भीर हैं।

'यकरंग'—इनका नाम मुस्तफ़ाख़ाँ और उपनाम 'यकरंग' था। ये देहली के ऊँचे कवियों में गिने जाते थे। 'मज़हर' के शिष्य थे। 'आबरू' से भी इसलाह लेते थे। इनका एक दीवान है, जो आदर की दृष्टि से देखा जाता है। इनकी कविता में प्रेम और ईश्वर-भक्ति के भाव अधिक हैं। अलङ्कारों और उपमानों की भरमार है। इनके लिखे 'मरसिए' भी प्रसिद्ध हैं। ये बड़ी मौजी तबियत के थे। गाने-बजाने का भी खूब शौक़ था। यारबाश भी पक्के थे। इनके जन्म मरण-सम्बन्धी सन्-संवत् का पता नहीं चलता।

'फ़ुग़ाँ'—इनका नाम अशरफ़ अलीख़ाँ और उपनाम 'फ़ुग़ाँ' था। ये देहली के बादशाह अहमदशाह के कुटुम्बी थे। इनके पिता का नाम मिर्ज़ा अलीख़ाँ था। ये बड़े विनोदी और हँसमुख थे। साधारण बात-चीत में भी हँसी का फ़व्वारा छोड़ देते थे। इनकी हँसोड़ प्रकृति के कारण देहली के शाही दरबार से इन्हें 'ज़रीफ़ुल मुल्क' 'कोका ख़ानबहादुर' की उपाधि मिली थी। व्यंग्यपूर्ण बातें करने और फबती छोड़ने का इन्हें बड़ा अभ्यास था। देहली पर आपत्ति आने पर, ये मुरशिदाबाद और फ़ैज़ाबाद रहे। फ़ैज़ाबाद में नवाब शुजाउद्दौला ने इनका ख़ूब स्वागत-सत्कार किया और इन्हें अपना दरबारी कवि बना लिया। एक दिन ये नवाब की किसी बात से अप्रसन्न होगये और फ़ैज़ाबाद छोड़कर पटना पहुँचे। वहाँ महाराज शिताबराय ने इनकी बड़ी प्रतिष्ठा की। फिर सारा जीवन पटना में ही बिताया और वहीं १७७२ ई० में इनका देहान्त हुआ। उर्दू में इनका एक दीवान है, जिसमें दो सहस्र शेर हैं। एक फ़ारसी दीवान भी इनका लिखा बताया जाता है। 'सौदा' और 'अमीर' ने इनकी प्रतिभा की बड़ी प्रशंसा की है। 'फ़ुग़ां' ने अपनी कविताओं में फ़ारसी और हिन्दी मुहावरों का बड़ा सुन्दर प्रयोग किया है। इनकी कविता निर्दोष

और सुन्दर है। भावों में गम्भीरता है। भाषा शिष्ट और सरल है। प्रारम्भ में ये श्लिष्ट काव्य करते थे, परन्तु पीछे उसका लिखना छोड़ दिया। इन्होंने क़िते क्रमबद्ध लिखे हैं। इनकी विचार-शृङ्खला ख़ूब सुलझी हुई है। 'मीर' इन्हें क़ज़लबाश ख़ाँ 'उम्मेद' का शागिर्द बताते हैं, और 'मसहफ़ी' अली क़ुली नदीम का। जो हो, प्रसिद्ध है कि महाराज शिताबराय के दरबार में .फ़ुग़ाँ ने एक ग़ज़ल पढ़ी जिसके क़ाफ़िए 'तालियाँ,' 'जालियाँ,' 'डालियाँ' आदि थे। जब ग़ज़ल पढ़ी जा चुकी तो दरबार में बैठा हुआ जुगनू मियाँ नामक एक मसख़रा बोल उठा—'इस ग़ज़ल में सब क़ाफ़िए तो आए, मगर 'तालियाँ' नहीं आईं। इस पर '.फ़ुग़ाँ' ने फ़ौरन कहा—

जुगनू मियाँ की दुम जो चमकती है रात को,
सब देख-देख उसको बजाते हैं तालियाँ।

इन मिसरों को सुनकर सारा दरबार मारे हँसी के लोट-पोट गया और जुगनू मियाँ की गर्दन शर्म से झुक गई।

'दर्द'—इनका नाम सैयद ख़्वाजा मीर और उपनाम 'दर्द' था। इनका जन्म फ़र्रुख़सियर के शासन के समय १७७२ ई० में देहली में हुआ। पिता का नाम ख़्वाजा मुहम्मद नासिर 'अन्दलीब' था। इनके पिता भी कवि थे, उनका एक दीवान 'नालए अन्दलीब' नामक प्रसिद्ध है। 'दर्द' की शिक्षा घर पर ही हुई। कविता की ओर इनकी रुचि बचपन से ही थी। एक किताब तो इन्होंने १५ वर्ष की आयु में ही लिख डाली। फिर तो इन्होंने कितनी ही पुस्तकें लिखीं। आत्मा और परमात्मा से सम्बन्ध रखने वाली इनकी कविताएँ बड़ी उत्कृष्ट हैं। इन्होंने अपनी कविताओं में गम्भीर भाव बड़ी सरलता से व्यक्त किए हैं। छोटे छन्दों में महत्त्वपूर्ण भाव दरसाए हैं। प्रेम-प्रसंग में बड़ी उच्च भावना का परिचय दिया है। अशिष्टता या अश्लीलता का इनकी कविता में लेश भी नहीं है। इनकी कविता में 'इश्क़ हक़ीक़ी' का रंग है। ये बड़े भक्त और विरक्त थे। ग़रीब-अमीर सब ही इनकी प्रतिष्ठा

करते थे। ये सभ्यता और सौजन्य की प्रतिमा थे। देहली पर जब आक्रमण हुआ तो प्रायः सब कवि वहाँ से चले गये, परन्तु 'दर्द' परमात्मा पर अटल विश्वास किये, अपने स्थान पर ही जमे रहे। इन्होंने अपनी कविता में किसी बादशाह या अमीर की प्रशंसा नहीं की। ये बड़े स्वाभिमानी और स्वतन्त्र विचार के थे। किसी से मिलने-जुलने न जाते थे। एक बार बादशाह शाह आलम मिलने के लिये इनके मकान पर पहुँचा और बैठक में पाँव फैलाकर बैठ गया। 'दर्द' को बादशाह की यह चेष्टा सहन न हुई। बादशाह ताड़ गया और बोला—'हज़रत, माफ़ कीजिए, टाँग में तकलीफ़ है, इसीलिए उसे फैला दिया है।' इस पर 'दर्द' ने कहा—'तकलीफ़ थी तो यहाँ आने की तकलीफ़ न करनी चाहिए थी।' 'दर्द' के घर हर महीने महफ़िल जमती थी। बड़े-बड़े क़व्वाल और कलाकार एकत्र होते थे। 'दर्द' की संगीत में भी ख़ूब गति थी। सदैव गायकों के जमघट लगे रहते थे। मुहर्रम के दिनों में इनके यहाँ मर्सिया भी ख़ूब पढ़े जाते थे।

'दर्द' भी उर्दू के स्तम्भों में माने जाते हैं। इनके समसामयिक कवियों पर भी इनकी कविता का बड़ा प्रभाव है। इनका देहान्त १८४० ई० में देहली में हुआ। कहते हैं, इन्होंने अपनी मृत्यु की भविष्यवाणी पहले ही कर दी थी। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम—'दीवान दर्द', 'दीवान ख़्वाजा मीर दर्द', 'दर्द के सौ शेर', 'मैख़ाना दर्द।' 'मैख़ाना दर्द' में 'दर्द' के सन्तान, शिष्य, सम्बन्धियों और इष्ट-मित्रों आदि का वर्णन है। जीवन की साहित्यिक घटनाओं का भी उल्लेख है। इनके अतिरिक्त 'दर्द' की ये भी किताबें हैं—'वारदाते दर्द', 'नालए दर्द', 'दर्दे दिल', 'शमअ महफ़िल', 'वाक़आते दर्द', 'इल्मुल किताब' (१११ रिसालों का संग्रह)।

'दर्द' के शिष्यों की संख्या बहुत थी। उनकी भेंट-पूजा से ही इनका निर्वाह हो जाता था। इन्हें कुछ जागीर भी मिली हुई थी। 'दर्द' के कवितागुरु शाह गुलशन थे। 'सौदा' इनसे बड़ा प्रेम रखते थे। लखनऊ पहुँचकर भी वे इन्हें याद करते रहते थे। दर्द के भाई 'मीर

असर' भी अच्छे कवि थे। इनके शिष्यों में 'हिदायत', 'फ़िराक़' आदि मुख्य हैं।

'सोज़'—इनका नाम सैयद मुहम्मद मीर और उपनाम 'सोज़' था। ये मीर ज़याउद्दीन के बेटे थे। १८७४ ई० में देहली में पैदा हुए। बाण चलाने और घुड़सवारी में दक्ष थे। व्यायाम भी .खूब करते थे। सुन्दर लेखन-कला में भी प्रवीण थे। देहली पर आपत्ति आई तो ये फ़क़ीर के वेश में घूमते-फिरते फ़रु.ख़ाबाद पहुँचे और वहाँ के नवाब की कुछ दिनों नौकरी की। फ़रु.ख़ाबाद से लखनऊ और फिर मुर्शिदाबाद चले गए। दुबारा लखनऊ आये तो नवाब आसिफ़-उद्दौला ने इनकी .खूब आव-भगत की और वे स्वयम् इनके शिष्य बन गए। परन्तु थोड़े दिनों बाद ही नवाब की मृत्यु हो गई। पहले इनका उपनाम 'मीर' था, परन्तु जब 'मीर तक़ी' ने भी अपना उपनाम 'मीर' रख लिया तो ये 'सोज़' बन गए। नीचे के शेर में 'सोज़' ने अपने दोनों उपनामों का उल्लेख किया है—

कहते थे पहले 'मीर-मीर' तब न मुए हज़ार हैफ़,
अब जो कहें हैं 'सोज़-सोज़' यानी सदा जला करो।

१७९३ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये बड़े प्रसन्नचित्त और मधुरभाषी थे। लोगों से बड़े प्रेमपूर्वक मिलते थे। इनकी कविता-शैली सरल और स्वाभाविक है। ये शब्दाडम्बर, अतिशयोक्तियों और व्यर्थ की उपमाओं को पसन्द न करते थे। इनकी कविता में फ़ारसी और अरबी के कठिन शब्द नहीं हैं। जहाँ-तहाँ हिन्दी शब्दों का भी समावेश है। ये छन्द छोटा इस्तेमाल करते थे। भाषा प्रायः बोल-चाल की है। इनका कविता पढ़ने का ढंग निराला था। जैसा विषय होता था वैसी ही आवाज़ और भावभंगी कर लेते थे, अर्थात् साकार कविता बन जाते थे। कहते हैं, एक बार किसी मुशायरे में इन्होंने नीचे लिखा क़िता पढ़ा और जब चौथा चरण आया तो पढ़ते-पढ़ते ज़मीन पर गिर पड़े—

गये घर से जो हम अपने सवेरे
सलामुल्लाह ख़ाँ साहब के डेरे
वहाँ देखे कई तिफ़्ले परीरू
अरे रे रे, अरे रे रे, अरे रे।

मानो 'परी-रू तिफ़्लों' को देखकर सोज़ का दिल क़ाबू से बाहर हो गया! ये शृंगारी कवियों के सिरमौर थे। इनका उर्दू कवियों में ऊँचा स्थान है।

इनके सम्बन्ध की एक घटना और बताई जाती है। किसी मुशायरे में इन्होंने नीचे लिखा शेर पढ़ा—

ओ यारे स्याह ज़ुल्फ़ सच कह
बतलादे दिल जहाँ छुपा हो
कुण्डली तले देखियो न होवे
काटा न हर्फ़ी तेरा बुरा हो।

इसको पढ़ते-पढ़ते इन्होंने ऐसी भाव-भंगी बना ली कि लोग उन्हें अचेत समझ कर घबरा गए और सँभालने को दौड़े। 'सोज़' की कविताओं का एक दीवान मिलता है, जिसमें ग़ज़लें, रुबाइयाँ, मसनवियाँ, मुख़म्मस आदि हैं। 'फ़साने अजायब' के लेखक मिर्ज़ा रजबअली 'सरूर' सोज़ के ही शिष्य थे।

'सौदा'—इनका नाम मिर्ज़ा मुहम्मद रफ़ी और उपनाम 'सौदा' था। ये मिर्ज़ा मुहम्मद शफ़ी के बेटे थे। इनके पूर्वज काबुल के रहने वाले थे। १७१३ ई० में देहली में इनका जन्म हुआ। वहीं पढ़े-लिखे। अरबी और फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे। इनके कविता-गुरु सुलेमान कुली ख़ाँ और शाह 'हातिम' थे। 'सौदा' ने पहले पहल फ़ारसी में कविता लिखना प्रारम्भ किया, फिर 'आरज़ू' की प्रेरणा से उर्दू में भी लिखने लगे। इनकी उर्दू कविताओं की धूम मच गई। वे बड़ी लोकप्रिय सिद्ध हुईं। देहली के गली-कूचे 'सौदा' की शायरी से गूँजने लगे। वे शायरी में उस्ताद माने जाने लगे। किसी कवि

को उसके जीवन में इतनी अधिक प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि होना सचमुच बड़े गौरव की बात थी। बादशाह शाहआलम तो इनको कविताओं पर इतने मुग्ध हुए कि उन्होंने इन्हें अपना गुरु ही बना लिया। 'सौदा' के लिए यह स्वर्ण सुअवसर था, परन्तु वे किसी बात पर बादशाह से अप्रसन्न हो गये और दरबार में आना-जाना छोड़ दिया। यहाँ तक कि बादशाह के गुरु होने से भी इन्कार कर दिया। इसके पश्चात् अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने इन्हें बड़े आदर और प्रेम से अपने यहाँ बुलाया। उस समय इन्होंने वहाँ जाने से इन्कार कर दिया। परन्तु जब देहली पर संकट आया और सर्वत्र भगदड़ मच गई तो ये भी वहाँ से चल पड़े और फ़र्रुख़ाबाद के नवाब अहमदख़ाँ का आश्रय प्राप्त किया। वहाँ से, कई साल रहकर, 'सौदा' फ़ैज़ाबाद गए और नवाब शुजाउद्दौला के आश्रित रहे। नवाब ने बहुत आव-भगत की और इन्हें अपना दरबारी कवि बना लिया। एक दिन बातों ही बातों में नवाब ने कहा—"मिर्ज़ा, तुम्हारी वह रुबाई मुझे अब तक याद है, जो तुमने मेरे निमन्त्रण को अस्वीकार करते हुए लिखी थी।" 'सौदा' को नवाब की यह बात बुरी तरह खटकी, परन्तु उस समय वे लोहू का-सा घूँट पीकर चुप हो रहे। 'सौदा' की वह अस्वीकृति-सूचक रुबाई इस प्रकार थी—

सौदा पै दुनिया तू बहरे सू कब तक
आवारा अज़ीं कूचए वाँ को कब तक।
हासिल यही इससे ताकि दुनिया होवे
बिलफ़र्ज़ हुआ यह भी तो फिर तू कब तक।

फ़ैज़ाबाद से राजधानी उठकर लखनऊ गई तो 'सौदा' भी लखनऊ गए। नवाब शुजा उद्दौला का देहान्त होने के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी नवाब आसिफ़ुद्दौला ने भी सौदा की बड़ी प्रतिष्ठा की। इन्हें 'मलिकुल शोअरा' (कवि-सम्राट्) की उपाधि और चौदह हज़ार रुपये वार्षिक की वृत्ति प्रदान की। उस समय सौदा की

ख्याति का ठिकाना न था। १७८१ ई० में लखनऊ में, 'सौदा' का देहान्त हुआ और वहीं वे दफ़न किए गये।

यों तो 'सौदा' ने सब ही विषयों पर कविताएँ लिखीं, परन्तु 'क़सीदा' लिखने में वे बड़े सिद्धहस्त थे। हिजो (निन्दा-सूचक भड़ौआ) लिखने का प्रारम्भ इन्होंने ही किया। कहीं-कहीं इन्होंने अपनी कविताओं में हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग किया है। उपमाओं में 'अर्जुन 'और 'कन्हैया' को भी नहीं भूले। उर्दू भाषा के परिमार्जन के लिए इन्होंने बड़ा प्रयत्न किया। उसे परिष्कृत, विशुद्ध और मुहावरेदार बनाया। 'सौदा' बड़े सजीव थे, वृद्धावस्था में भी उनकी सजीवता बराबर बनी रही। उनके मन में जो बात आती उसे प्रकट किये बिना न रहते थे। उन्हें न उपहार-पुरस्कार की लिप्सा थी और न किसी का भय था। ज़रा किसी से मन-मुटाव हुआ कि इन्होंने उसकी 'हिजो' लिखनी शुरू की। इनके कारण "हिजो" ने भी एक कला का रूप धारण कर लिया, जो उस समय ख़ूब विकसित हुई। कभी-कभी 'सौदा' हिजो में सरकारी अफ़सरों के कुप्रबन्ध की भी कड़ी आलोचना कर डालते थे, इससे सब सावधान रहते थे। इनकी कही बात सर्वत्र फैल जाती थी। फिर उसका रोक सकना किसी के वश की बात न थी। इनकी 'हिजो' में कहीं-कहीं बाज़ारूपन ज़रूर आ जाता था। एक विद्वान् का कहना है कि मुग़लों की शासन-व्यवस्था पर सौदा की कविता से बड़ा प्रकाश पड़ता है। भाषा पर 'सौदा' का पूर्ण अधिकार था। 'मज़मून' हाथ बाँधे खड़े रहते थे। वे शब्दों और महावरों का प्रयोग बड़ी सुन्दरता से करते थे। इनकी कविता का प्रभाव परवर्ती कवियों पर भी ख़ूब पड़ा है। 'ग़ालिब' और 'ज़ौक़' ने तो इन्हें बहुत ही आदर दिया है। भाषा का सौन्दर्य, अर्थ-गाम्भीर्य, भावों की सूक्ष्मता इत्यादि इनकी कविता की विशेषताएँ हैं। इन्होंने अपनी कविता में आत्मा-परमात्मा सम्बन्धी भाव बहुत ही कम व्यक्त किए हैं। इनकी कविताओं का संग्रह 'कुल्लियाते सौदा' के नाम से

प्रकाशित हुआ है। 'सौदा' नाम की एक किताव और प्रकाशित हुई है, जिसमें सौदा सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण और ज्ञातव्य बातें हैं। इनकी लिखी तथा इनसे सम्बन्ध रखने वाली कुछ पुस्तकें—'दीवान फ़ारसी', 'रुद्द फ़ारसी क़सायद', 'दीवान उर्दू', 'चौबीस मसनवियाँ' 'तज़मीन बरकलाम मीर' 'क़सायद उमराए देहली व लखनऊ', 'शुअराए उर्दू का तज़किरा,' 'मीर तक़ी' की मसनवी, 'शोलए इश्क़' का गद्यानुवाद 'इन्तख़ावे कुल्लियाते सौदा', 'इन्तख़ावे सौदा,' इत्यादि।

'मीर हसन'—इनका नाम मीर ग़ुलाम हसन और उपनाम 'हसन' था। ये 'मीर हसन' के नाम से प्रसिद्ध थे। इनका जन्म १७२१ ई० में देहली में हुआ। ये मीर ग़ुलाम हुसेन 'ज़ाहक' के बेटे थे। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। ये फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे। इनके कविता-गुरु ख़्वाजा मीर 'दर्द' थे। देहली पर संकट आया तो ये अपने पिता के साथ फ़ैज़ाबाद चले गए और वहाँ सरकारी नौकरी कर ली। जब फ़ैज़ाबाद से राजधानी लखनऊ आई तो यह भी लखनऊ आ गए। लखनऊ में आने के थोड़े दिनों बाद ही पचास साल की आयु में इनका देहान्त हो गया। लखनऊ में इनकी कविता की धूम मच गई थी। इनकी फ़ारसी रचनाएँ उच्च कोटि की हैं। ये बड़े विनोदी और हँसोड़ स्वभाव के थे। इनकी कविता में बड़ा माधुर्य्य है। ये सर्व-प्रिय थे, इनके विरुद्ध न तो किसी ने कुछ कहा और न लिखा। 'ग़ज़ल', 'मरसिया', 'मसनवी', 'क़सीदे' आदि सब ही इन्होंने लिखे हैं। भाषा बड़ी सरस और सरल है। इनके चार पुत्रों में से तीन अर्थात् ख़लीक़, ख़ुल्क और मुहसिन कवि थे। 'हसन' के कविता-पाठ का ढंग बड़ा आकर्षक और प्रभावपूर्ण था। इनके लिखे कुछ ग्रन्थ इस प्रकार हैं—'ग़ज़लों का एक दीवान,' 'ग्यारह मसनवियाँ।' इन मसनवियों में 'गुलज़ारेइरम' और 'मसनवी सहरुल बयान' उर्फ़ 'मसनवी मीरहसन' अधिक प्रसिद्ध हैं। 'गुलज़ारेइरम' में शाह मदार के मेले की छड़ियों का वर्णन है। 'मसनवी मीरहसन' नवाब आसिफ़ुद्दौला के समय में

लिखी गई थी। इसमें उस समय के रीति-रिवाज, बोल-चाल, रहन-सहन, विवाह-शादी आदि का वर्णन है। यह मसनवी 'बेनज़ीर' और 'बदरमुनीर की प्रेम-कथा है। 'हसन' ने फ़ारसी में एक 'तज़किरा' भी लिखा है, जिसमें लगभग तीन सौ उर्दू शायरों का संक्षिप्त परिचय है। 'मीरहसन' की कविता में स्वाभाविकता ख़ूब है। भाषा मुहावरेदार और बोल-चाल की है। घटनाओं का वर्णन बड़ी सुन्दरता से किया गया है। इतना सुन्दर कि आँखों देखा-सा मालूम देता है। इनकी मसनवी 'सहरुल बयान' के सम्बन्ध में प्रो० आज़ाद ने लिखा है—'उसको लिखे १२५ वर्ष बीत गये, परन्तु भाषा आजकल की-सी जान पड़ती है।' उर्दू साहित्य में दो ही मसनवियाँ मानी जाती हैं, एक उपर्युक्त मसनवी और दूसरी पं० दयाशंकर कौल की 'गुलज़ारे नसीम'। 'हसन' की कविताओं का दीवान प्रकाशित हो गया है। इन्होंने अपना कोई शिष्य नहीं बनाया। अपने पुत्र ख़लीक को भी कभी इसलाह नहीं दी, वह भी मसहफ़ी के शिष्य बने। 'हसन' के पोते 'अनीस' और 'यूनिस' प्रसिद्ध कवि हो गये हैं।

'मीर तक़ी'—इनका नाम मीर मुहम्मद तक़ी और उपनाम 'मीर' था। इनका जन्म १७१२ ई० में, आगरा में, ईदगाह के पास हुआ। ये मीर मुहम्मद अली या मीर अब्दुल्ला के बेटे थे। जब ये दस बरस के थे तब ही इनके पिता का देहान्त हो गया। फिर ये आगरा से दिल्ली चले गये। इनकी शिक्षा भी वहीं आरज़ू की देख-रेख में हुई। देहली में ख़्वाजा मीर दर्द के यहाँ मुशायरा हुआ करता था, उसमें 'मीर सोज़', 'सौदा', 'सज्जाद' आदि सम्मिलित होते थे, 'मीर' साहब भी वहाँ जाते और अपनी कविता सुनाते थे। इनकी कविता की बड़ी प्रशंसा होती थी। देहली के धनी-मानी कविता-प्रेमियों पर 'मीर' का बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने इन्हें किसी प्रकार का आर्थिक कष्ट न होने दिया। देहली पर आपत्ति आने के कारण 'मीर' जीविका की खोज में इधर-उधर घूमते रहे। कभी आगरा

आये और कभी बरसाना गए और कभी कुम्हेर के राजा सूरजमल का आश्रय प्राप्त किया। कई नौकरियाँ कीं और छोड़ीं। 'मीर' की कविता की ख़ूब प्रसिद्धि हो गई थी, वे अपने समय के बहुत बड़े कवि समझे जाते थे। इन्हीं दिनों 'मीर' को नवाब आसिफ़ुद्दौला ने लखनऊ बुलवाया और इनकी बड़ी आव-भगत की तथा २००) मासिक वृत्ति भी नियत कर दी। यहाँ 'मीर' का निर्वाह बड़ी अच्छी तरह होने लगा। नवाब साहब इनसे इतने प्रसन्न थे कि इन्हें शिकार में भी साथ रखते थे। 'मीर' ने कई शिकारों का वर्णन बड़ी सुन्दरता से किया है। ये ग़ज़ल लिखने में सर्व-श्रेष्ठ माने गए हैं। इनकी ग़ज़लों में सरसता और सरलता ख़ूब है। ये भावों का बड़ा सुन्दर स्पष्टीकरण करते हैं। भाषा परिमार्जित और शिष्ट है। ये छोटे-छोटे छन्दों में बड़ी-बड़ी बातें कहते हैं। कविता में स्वाभाविकता और अनुभूति है। 'ग़ालिब' और 'नासिख़' ने इन्हें बहुत बड़ा उस्ताद माना है। ये प्रकृति-चित्रण और कलाकारी दोनों में दक्ष थे। सब 'तज़किरों' में इनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई है। लोगों का विचार है कि जिस प्रकार 'सौदा' 'क़सीदे' और 'हिजो' लिखकर प्रसिद्ध हो गये, उसी तरह 'मीर' ने 'ग़ज़लें' और 'मसनवियाँ' लिखकर ख्याति प्राप्त की। 'सौदा' की कविता 'वाह' और 'मीर' की कविता 'आह' है, क्योंकि 'सौदा' का जीवन बड़े सुख से बीता, परन्तु 'मीर' को अनेक कष्ट उठाने पड़े। यही भाव दोनों की कविताओं में भी पाए जाते हैं।

'मीर' का देहान्त लगभग ९० वर्ष की आयु में लखनऊ में हुआ। 'कुल्लियाते मीरतक़ी' के नाम से इनकी सब कविताओं का संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इनके छह बड़े-बड़े दीवान हैं। एक दीवान फ़ारसी का है। कई मसनवियाँ हैं। 'निकातुल शोअरा' शायरों के लिए बड़ी उपयोगी पुस्तक है। इसमें पुराने कवियों की आलोचनात्मक चर्चा है। 'ज़िक्रे मीर'—'मीर' का आत्मचरित है। 'मीर' बड़ी स्वतन्त्र प्रकृति के थे, इन्हें किसी की कविता पसन्द न आती थी। ये किसी की मुँहदेखी भी न कहते थे। एक बार किसी ने इनसे पूछा—

'आजकल कवि कौन-कौन हैं?' उत्तर दिया—'मैं' और 'सौदा'। हाँ, आधे कवि 'मीर दर्द' और चौथाई 'सोज़' भी माने जा सकते हैं। निर्धनता के कारण 'मीर' को भूखों तक रहना पड़ा, परन्तु उनकी उच्च भावना और आदर्श-प्रियता में कुछ भी अन्तर नहीं आया। दैन्य तो उनके पास भी न फटकता था। वे अपने कवि होने की झोंक में अमीर तो क्या, बादशाहों की भी परवा न करते थे। वे बड़े अक्खड़ और खड़तल थे। वैसे जीवन सादा और पवित्र था। इनकी अक्खड़ता की कितनी ही कथाएँ प्रसिद्ध हैं।

'मीर' ने क़सीदे अधिक दक्षता से नहीं लिखे। उर्दू में इन्होंने 'मुसल्लस' और मुरब्बा छन्दों का सम्भवतः सब से पहले प्रयोग किया। ये फ़ारसी से कितनी ही बातें उर्दू में लाए। इनकी कविताएँ अधिकतर करुणरस-पूर्ण हैं। 'इन्तख़ाब कलाम मीर', 'इन्तख़ाब मसनवियात', 'मसनवियात मीर', 'इन्तख़ाब मीर', 'मीरतक़ी मीर' आदि 'मीर' सम्बन्धी अनेक पुस्तकें हैं।

'इन्शा'—इनका नाम सैयद इन्शा अल्लाख़ाँ और उपनाम 'इन्शा' था। ये हकीम मीर माशा अल्लाख़ाँ के पुत्र थे। इनका परिवार बड़ा प्रतिष्ठित था। इनके पिता देहली में शाही हकीम थे, कुछ कविता भी करते थे। देहली पर आपत्ति आने के कारण हकीम माशा अल्ला ख़ाँ मुर्शिदाबाद चले गए और वहीं 'इन्शा' का जन्म हुआ। 'इन्शा' को घर ही पर ऊँचे दरजे की शिक्षा दी गई। कविता की ओर इनकी बचपन से ही प्रवृत्ति थी। शाह आलम के समय में 'इन्शा' मुर्शिदाबाद से देहली आए। बादशाह ने इनकी बड़ी प्रतिष्ठा की और ये दरबारी शायर बना दिये गये। शाह आलम 'इन्शा' की कविता पर मुग्ध थे, परन्तु वे नाममात्र के बादशाह थे, दरबार लुट चुका था। अतएव 'इन्शा' यहाँ अपनी योग्यता का उचित प्रतिफल मिलता न देख लखनऊ चले गए। वहाँ शाहज़ादा मिर्ज़ा सुलेमान शिकोह 'सुलेमान' के यहाँ नौकरी कर ली और धीरे-धीरे 'मसहफ़ी' के स्थान पर

उनके कविता-गुरु बन गए। फिर ये अपने बुद्धि-वैचक्षण्य से नवाब सआदत अलीख़ाँ के दरबारी कवि हुए। नवाब साहब इनके बिना एक क्षण भी न रह सकते थे। 'इन्शा' का हास्य-विनोद कभी-कभी भौंडा हो जाता था। एक दिन दरबार में उनके मुँह से हँसी में कोई बेहूदी बात निकल गई जो नवाब को नापसन्द आई। तब से नवाब ने 'इन्शा' पर तरह-तरह की पाबन्दियाँ लगा दीं, और उनकी वृत्ति भी बन्द कर दी। कहते हैं, उस समय 'इन्शा' के भूखों मरने तक की नौबत आ गई थी। फिर पुत्र-शोक के कारण तो वे और भी दुखी हो गए। उनकी मानसिक दशा बहुत ख़राब हो गई और वे १८१८ ई० में चल बसे!

'इन्शा' चुटकुले छोड़ने और सभा रिझाने की कला में बड़े प्रवीण थे। भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था। अपना जीवन इन्होंने उर्दू भाषा की शुद्धि और उन्नति में लगाया। हास्य-विनोद लिखने में ये किसी से कम न रहे। इन की गद्य-पद्यात्मक रचनाओं और बात-चीत में भी विनोद का पुट रहता था। प्रत्येक विषय को अपने रंग में ढालने की ये अद्भुत क्षमता रखते थे। ये ऐतिहासिक घटना और कथा-प्रसंग बड़ी ख़ूबी से वर्णन करते थे। इनका अध्ययन व्यापक, बुद्धि तीव्र और स्मरणशक्ति बलवती थी। अरबी, फ़ारसी और उर्दू विद्वान् तो ये थे ही, साथ ही पश्तो, पूर्वी, पंजाबी, मरहठी, मारवाड़ी, कश्मीरी, हिन्दी आदि भी अच्छी तरह जानते थे। इन भाषाओं में इन्होंने कविताएँ भी की हैं। नयी बातें निकालने में इनका मस्तिष्क ख़ूब काम करता था। 'दीवान इन्शा' और 'कुल्लियाते इन्शा' नामक पुस्तकों में 'इन्शा' की कविताओं का संग्रह है। इनकी लिखी 'दरियाए लताफ़त' सम्भवतः उर्दू व्याकरण की सर्वप्रथम पुस्तक है। 'रानी केतकी की कहानी' इन्होंने विशुद्ध हिन्दी में लिखी है। इनकी लिखी पुस्तकों के नाम—'दीवान उर्दू', 'दीवान रेख़ती', 'उर्दू और फ़ारसी के क़सीदे', 'दीवान फ़ारसी', फ़ारसी मसनवी,' 'मसनवी शिकार-नामा', 'मसनवी आशिक़ाना', 'मुर्ग़नामा', 'मसनवी मौसम व शिका-

यत ज़माना', 'मसनवी मारवाड़ी', फुटकर कविताएँ, क़िते, तारीख़ें, पहेलियाँ इत्यादि। गरमी, भिड़, खटमल, मक्खी, पिस्सू आदि की निन्दा में भी इन्होंने बहुत-सी कविताएँ लिखी हैं।

'जुरअत'—इनका नाम यहिया अमान और उपनाम 'जुरअत' था। ये शेख़ क़लन्दर बख़्श के नाम से प्रसिद्ध थे। हाफ़िज़ 'अमान' के बेटे थे। देहली में पैदा हुए, परन्तु पालन-पोषण फ़ैज़ाबाद में हुआ। फ़ैज़ाबाद से लखनऊ चले आये और आजन्म वहीं रहे। ये मिर्ज़ा जाफ़र अली 'हसरत' के शागिर्द थे। कविता के अतिरिक्त ज्योतिष और संगीत में भी इनकी अच्छी गति थी। सितार के बड़े अभ्यासी थे। युवावस्था में ही इनकी आँखें जाती रही थीं। पढ़े-लिखे थे, और कविता में इनकी स्वाभाविक गति थी। हर वक़्त इसी धुन में रहते थे। इनका एक दीवान और दो मसनवियाँ हैं। दीवान में इनकी सब तरह की कविताएँ हैं। मसनवियाँ छोटी-छोटी हैं। एक मसनवी का नाम है—'बरसात की हिजो' और दूसरी का 'हुस्नो इश्क़'। क़सीदे नहीं लिखे। 'जुरअत' की कविताओं में अधिकतर विलासिता की ही प्रधानता है, और ऐसी ही मजलिसों से इनका सम्बन्ध भी रहा। इनकी कविता साधारण रुचि के बहुत अनुकूल है। उसमें ऊँचे दर्जे का कवित्व कम है। एक मुशायरे में, जिसमें 'मीर' और 'जुरअत' भी थे, 'जुरअत' की कविता की ख़ूब 'वाह-वाह' हुई। इस-से उत्साहित होकर 'जुरअत' 'मीर' के पास जा बैठे। पहले तो 'मीर' ने टाला, परन्तु 'जुरअत' के बहुत आग्रह करने पर वे बोले—'मियाँ जुरअत, तुम शेर कहना क्या जानो, अपनी चूमा-चाटी कर लिया करो।' अभिप्राय यह कि 'जुरअत' ऊँचे दर्जे के कवि नहीं थे। उर्दू के प्रसार और परिमार्जन के लिए भी इन्होंने कोई उल्लेखनीय प्रयत्न नहीं किया। इनकी मृत्यु १८०६ ई० में हुई।

मसहफ़ी—इनका नाम शेख़ ग़ुलाम हम्दानी और उपनाम 'मसहफ़ी' था। ये शेख़ वली मुहम्मद के बेटे थे। १७४५ ई० में अम-

रोहा में पैदा हुए। होश सम्हालते ही देहली चले गए थे। शिक्षा वहीं हुई। इन्हें पुस्तकें पढ़ने का बड़ा शौक़ था। इनकी कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हुईं। ये अपने घर पर भी मुशायरे कराया करते थे। जिनमें 'हसन,' 'जुरअत', 'इन्शा' आदि भी सम्मिलित होते थे। १२ वर्ष दिल्ली रहकर नवाब आसिफ़ुद्दौला के समय में ये लखनऊ चले गए और शाहज़ादा सुलेमान शिकोह के यहाँ नौकरी कर ली। एक बार फिर देहली गए, परन्तु वापस आ गए और अन्त तक लखनऊ में ही रहे। ८० वर्ष को आयु में इनका देहान्त हुआ। ये फ़ारसी और उर्दू दोनों के सफल कवि थे। इन्होंने सात दीवान लिखे, आठवाँ लिख रहे थे कि चल बसे! इनके लिखे चार फ़ारसी दीवान चोरी गए बताए जाते हैं। 'मसहफ़ी ने दो फ़ारसी तज़किरे भी लिखे हैं। एक फ़ारसी कवियों का और दूसरा उर्दू कवियों का। 'शाहनामा' का भी एक अंश लिखा है, जिसमें शाहआलम के परिवार का वृत्तान्त है।

'मसहफ़ी' के दीवान और तज़किरे बहुत प्रसिद्ध हैं। दीवानों में उनकी सभी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कविताएँ संगृहीत हैं। तज़किरे में ३५० उर्दू कवियों के संक्षिप्त परिचय हैं। 'मसहफ़ी' ने अपने समकालीन कवियों का सविस्तर वर्णन किया है। ये बड़ी शीघ्रता से कविता करते थे। कोई मुशायरा होता तो उसके लिए बहुत-से शेर बना डालते। साधारण शेर तो मुशायरों में शायरी पढ़ने वालों के हाथ बेच देते और कुछ चुने हुए शेर अपने पढ़ने के लिए रख लेते। अधिक और शीघ्र लिखने के कारण इनकी कविता में प्रौढ़ता कुछ कम हो गई थी। इनके शिष्य बहुत थे, जिनमें से कुछ तो चोटी के उस्ताद हो गए हैं। 'मसहफ़ी' अपनी कविता में छन्द सम्बन्धी शिथिलता कभी न आने देते थे। 'इंशा' के साथ इनकी ख़ूब नोक-झोंक रहती थी और इसका मुख्य कारण यह बताया जाता है कि 'इंशा' के लखनऊ पहुँचने पर 'मसहफ़ी' का रंग कुछ फीका पड़ गया था, और शाहज़ादा सुलेमान शिकोह अपनी कविता में 'मसहफ़ी' के बदले 'इंशा' से इसलाह लेने लगे थे। यह नोक-झोंक शब्दों तक ही नहीं रही, बल्कि उसने उग्र और

क्रियात्मक द्वेष का रूप धारण कर लिया था। दोनों शायरों के शिष्यों ने दलबन्दी द्वारा अपने-अपने उस्तादों के पक्ष में विरोध की अग्नि प्रज्वलित कर दी थी। एक दिन 'मसहफ़ी' के शागिर्द इकट्ठे होकर हिजो कहते हुए, उपद्रव की कुत्सित भावना से 'इंशा' के यहाँ गए, परन्तु 'इंशा' ने सबकी ख़ूब ख़ातिर की, उन्हें मिठाई खिलाई और सबको शान्त कर दिया। दूसरे दिन 'इंशा' ने 'मसहफ़ी' की हिजो का बड़ा ज़ोरदार जवाब लिखा और एक जुलूस निकाला, जिसमें यह जवाब पढ़ा गया। अस्तु, 'मसहफ़ी' के शिष्यों में 'आतिश', 'ख़लीक़', 'ज़मीर', 'अमीर' आदि मुख्य हैं।

'रङ्गीन'—इनका नाम सआदत यार ख़ाँ और उपनाम 'रंगीन' था। ये तहमासप बेग ख़ाँ तूरानी के बेटे थे। सर हिन्द में पैदा हुए थे। इनके पिता तूरान से दिल्ली आये और वहाँ हफ़्त हज़ारी के प्रतिष्ठित पद पर नियुक्त थे। 'रंगीन' ने कुछ दिनों शाहज़ादा सुलेमान शिकोह के यहाँ नौकरी की और फिर वह घोड़ों का व्यापार करने लगे। 'इंशा' के बड़े दोस्त थे। कविता करने की प्रारम्भ से ही प्रवृत्ति थी। 'रंगीन' मीर से अपनी कविता में इसलाह लेना चाहते थे, परन्तु उन्होंने यह कह कर टाल दिया कि तुम अमीर आदमी के लड़के हो, तुमसे शायरी नहीं आ सकती। 'रंगीन' ने तबियत भी ख़ूब रंगीन पाई थी। ये बड़े शौक़ीन और मिलनसार थे। लगभग ८० वर्ष की आयु में इनका देहान्त हुआ। इनकी निम्नलिखित पुस्तकें हैं—'मसनवी दिल पज़ीर'-शाहज़ादे माहजबीं और श्रीनगर की रानी का क़िस्सा है। 'ईजादे रंगीन'—अश्लील और रोचक क़िस्सा। 'दीवान रेख़्ता', 'दीवान बेख़्ता', 'दीवान आमेख़्ता', और 'दीवान अंगेख़्ता'। चारों दीवानों के संग्रह का नाम—'चार अन्सर रंगीन' है। 'मजालिसे रंगीन'—में 'रंगीन' ने अपने समय के कवियों का हाल लिखा है, और उनकी कविताओं की आलोचना भी की है। 'फ़रसनामा'—इसमें घोड़ों की शिनाख़्त और उनके रोगों के इलाजों

का वर्णन है। 'रंगीन' 'रेख़्ती' लिखने के बड़े अभ्यासी थे। इनकी कविताओं को तत्कालीन बिगड़ी हुई सोसाइटी का दर्पण कहना चाहिए।

'इन्शा' और 'मसहफ़ी'-युग के कुछ शायर

'क़ायम'—शेख़ कयामुद्दीन 'क़ायम' चाँदपुर (बिजनौर) के रहने वाले थे। नौकरी के कारण देहली में रहने लगे। रुबाइयाँ और क़िते लिखने में बड़े दक्ष थे। 'सौदा' के शिष्य थे। इन्होंने एक तज़किरा भी लिखा है। देहलो पर आपत्ति आने के कारण ये टाँडा चले गये थे। वहाँ से रामपुर गये, जहाँ १७६१ ई० में इनका देहान्त हो गया।

'मिन्नत'—मीर कमरुद्दीन 'मिन्नत' देहली के रहने वाले थे। कवितायेँ बहुत लिखते थे, इनकी कुल्लियात में लगभग डेढ़ लाख शेर हैं। इन्होंने मसनवियाँ भी लिखी हैं, जिनमें 'शकरिस्तान' बहुत प्रसिद्ध है। देहली से १७७२ ई० में लखनऊ गये और वहाँ से कलकत्ता पहुँचे, जहाँ मारक्विस आव् हेस्टिंग्स ने इन्हें 'मलिकुल शोअरा' (कविसम्राट्) की उपाधि प्रदान की। फिर गवर्नर जनरल की सिफ़ारिश से ये हैदराबाद गये। वहाँ निज़ाम साहब ने इनके एक क़सीदे पर ख़ुश होकर इन्हें बहुत इनाम दिया। हैदराबाद से कलकत्ता वापस आ गये और वहीं इनका देहान्त हुआ।

'ममनून'—मीर निज़ामुद्दीन 'ममनून' मीर क़मरुद्दीन 'मिन्नत' के बेटे थे। इनका जन्म देहली में हुआ था। अकबर शाह ने इन्हें 'फ़ख़ु ल शोअरा' की उपाधि दी थी। कुछ दिनों अजमेर में एक बड़े पद पर रहे थे, परन्तु फिर देहली आगये और १८४१ ई० में वहीं इनका देहान्त हुआ। ये उच्च कोटि के कवि थे। इनके शिष्य भी बहुत प्रसिद्ध हैं।

'हसरत'—मिर्ज़ा जफ़र अली 'हसरत' देहली में पैदा हुए।

शाह आलम (द्वितीय) से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। इन्होंने अपनी कविता में, .ग़ुलाम क़ादिर द्वारा बादशाह की आँखें निकलवाने आदि अत्याचारों का आँखों देखा वर्णन, बड़े कारुणिक ढंग से किया है। देहली से ये फ़ैज़ाबाद और लखनऊ गये। वहाँ इनकी कविताओं की .खूब धूम मची। इनकी कुल्लियात में मसनवी, मुसद्दस, ग़ज़लें, रुबाइयाँ, मुख़म्मस आदि सब सम्मिलित हैं। देहली से फ़ैज़ाबाद जाते हुए, इन्होंने अपनी यात्रा का कवित्वमय वर्णन किया है। इनके शिष्यों में 'जुरअत' बहुत प्रसिद्ध हुए। नवाब शुजाउद्दौला और नवाब आसिफ़ुद्दौला ने इनकी अच्छी प्रतिष्ठा की थी। शाहज़ादा सुलेमान शिकोह भी इनकी कविता के प्रेमी थे। १७६८ ई० में लखनऊ में इनका देहान्त हुआ।

'.क़ुदरत'—शाह .क़ुदरतुल्ला '.क़ुदरत', 'मज़हर' और 'हसरत' के शिष्य बताए जाते हैं। १७८६ ई० में मुरशिदाबाद में इनका देहान्त हुआ। 'मीर हसन' ने इनकी कविता की बड़ी प्रशंसा की है।

'बेदार'—मीर मुहम्मद अली 'बेदार' ख़्वाजा 'मीर दर्द' के शिष्य थे। फ़ारसी और उर्दू दोनों में कविता करते थे। अन्तिम समय में ये देहली से आगरा आ गये और १७६४ ई० में यहीं इनका देहान्त हुआ। इनके दो दीवान हैं। कविता विशुद्ध और सरल है, उसमें सूफ़ियाना भावों की प्रधानता है।

'हिदायत'—हिदायतुल्लाख़ाँ 'हिदायत' देहली के रहने वाले और 'मीर दर्द' के शिष्य थे। १७६६ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनका लिखा एक दीवान है। बनारस की प्रशंसा में इनकी एक मसनवी भी बताई जाती है।

फ़िराक़—हकीम सनाउल्ला ख़ाँ 'फ़िराक़' देहली के प्रसिद्ध हकीमों में से थे। ये भी अच्छी कविता करते थे। 'मीर दर्द' से 'इस-लाह' लेते थे।

'ज़िया'—मीर ज़ियाउद्दीन 'ज़िया' 'सौदा' के समकालीन थे। देहली से फ़ैज़ाबाद और लखनऊ गये। वहाँ से अज़ीमाबाद गये। वहाँ महाराज शिताबराय के पुत्र राजा बहादुर 'राजा' के उस्ताद बने और वहीं उनका देहान्त हुआ। ये ग़ज़ल अधिक लिखते थे। 'मीर हसन' प्रारम्भ में इन्हीं के शिष्य थे।

'बक़ा'—शेख़ बक़ाउल्ला 'बक़ा' हाफ़िज़ लुतफ़ुल्ला ख़ुशनवीस के बेटे थे। देहली में पैदा हुए; परन्तु बसे लखनऊ में जाकर। उर्दू में शाह 'हातिम' और 'मीर दर्द' के शिष्य थे। फ़ारसी में 'हज़ीं' और उर्दू में 'बक़ा' उपनाम था। 'मीर' और 'सौदा' से इनकी नोक-झोंक रहती थी। ये अपने समय के प्रसिद्ध कवि थे। इनका दीवान भी है। देहान्त १७८७ ई० में हुआ।

'हज़ीं'—मीर मुहम्मद बाक़र 'हज़ीं' मिर्ज़ा मज़हर जानजाना के प्रसिद्ध शिष्य थे। जीविका की खोज में ये देहली से अज़ीमाबाद (पटना) पहुँचे। वहाँ के नवाब ने इनका बड़ा आदर-सत्कार किया। इनका एक दीवान है, जिसमें क़सीदे, ग़ज़लें आदि बहुत हैं।

'बयान'—ख़्वाजा अहसनुल्ला कश्मीरी 'बयान' देहली में पैदा हुए थे। 'मज़हर' के शिष्य थे। अन्तिम समय में हैदराबाद गये और वहाँ १७९४ ई० में इनका देहान्त हुआ। 'मीर हसन' ने अपने तज़किरे में इनकी कविता की प्रशंसा की है।

'रासिख़'—शेख़ ग़ुलाम अली 'रासिख़' मीर तक़ी 'मीर' के शिष्य थे। १७४३ ई० में अज़ीमाबाद (पटना) में पैदा हुए। पटना में इनकी शायरी की ख़ूब चर्चा रही। ७४ बरस की उम्र में इनका देहान्त हुआ। 'रासिख़' की कविता सरस, सरल और शुद्ध होती है। भाषा पर इनका अच्छा अधिकार है। इन्होंने लखनऊ के नवाबों की प्रशंसा में कई क़सीदे भी लिखे हैं, जिनकी ख़ूब तारीफ़ हुई।

'नासिख़'—इनका नाम इमामबख़्श और उपनाम 'नासिख़' था। इनके वंश का ठीक-ठीक पता नहीं लगता। इनका जन्म फ़ैज़ाबाद में हुआ और पढ़ाई-लिखाई लखनऊ में हुई। कहते हैं, लाहौर के किसी ख़ुदाबख़्श नामक सौदागर ने इन्हें गोद ले लिया था। उसने ही पाला-पोसा और पढ़ाया-लिखाया। जो हो, ये फ़ारसी और अरबी के प्रसिद्ध विद्वान् थे। इनका कविता-गुरु कोई न था। ये शरीर से ख़ूब हृष्ट-पुष्ट और लम्बे-तड़ंगे थे। व्यायाम ख़ूब करते और खाते भी ख़ूब थे। कहा जाता है कि ये एक समय में पाँच सेर के लगभग भोजन-सामग्री खा जाते थे। नासिख़ ने विवाह नहीं किया था। इनका सारा समय कसरत और कविता में ही बीतता था। इन्होंने कभी किसी की नौकरी नहीं की, परन्तु इनके शिष्यों और प्रेमियों ने इन्हें कभी किसी प्रकार का आर्थिक कष्ट नहीं होने दिया। 'नासिख़' ने बड़े आराम से ज़िन्दगी बिताई। ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने इन्हें अपना दरबारी कवि बनाकर 'मलिकुल शुअरा' (कवि-सम्राट्) की उपाधि देनी चाही, परन्तु इन्होंने यह कह कर उसे लेने से इनकार कर दिया कि हैदर को न तो देहली की-सी बादशाहत हासिल है, और न अँगरेज़ी सरकार का अधिकार प्राप्त है, फिर मैं उसके इस ख़िताब को लेकर क्या करूँ! हैदर को यह बात बुरी लगी और वह अप्रसन्न हो गये, जिसके कारण 'नासिख़' लखनऊ छोड़ कर इलाहाबाद आगये। फिर इनको महाराजा चन्दूलाल ने बहुत-सा धन देकर हैदराबाद बुलाया, परन्तु ये वहाँ गये नहीं। ग़ाज़ीउद्दीन हैदर की मृत्यु के पश्चात् ये फिर लखनऊ पहुँचे और वहीं १८३८ ई० में इनका देहान्त हुआ।

'नासिख़' ने क़िते बहुत लिखे, क़सीदे नहीं लिखे। इनकी कई मसनवियाँ भी हैं, जिनमें 'नज़मे सिराज़' प्रसिद्ध है। और भी कई किताबें हैं। ये उर्दू के सिद्धहस्त कवि थे। 'नासिख़' उस्ताद माने जाते थे। अरबी और फ़ारसी पर इनका पूर्ण अधिकार था। उर्दू की लखनऊ-शैली के प्रवर्त्तक ये ही थे। लखनऊ में इनका बहुत प्रभाव था।

किसी मुहावरे या शब्द के प्रयोग के सम्बन्ध में विवाद उठने पर इन्हें ही प्रमाण माना जाता था, और अब तक माना जाता है। ये कविता में शब्दों का प्रयोग बड़ी शुद्धता और सुन्दरता से करते थे। 'रेख़ता' के स्थान में 'उर्दू' शब्द का प्रयोग सबसे प्रथम इन्होंने ही किया है। लखनऊ में तो उसी समय उर्दू शब्द का प्रचार हो गया था, परन्तु देहली में इसके बाद भी बहुत दिनों तक 'रेख़ता' ही चलता रहा। 'आए हैं', 'जाए हैं' के स्थान में 'आता है, जाता है' लिखना 'नासिख़' ने ही प्रारम्भ किया था। इन्होंने उस समय प्रचलित 'आइयाँ', 'जाइयाँ', 'दिखाइयाँ' आदि का प्रयोग त्याग दिया था। 'नासिख़' ने कविता में से अश्लील और भद्दे शब्दों का बहिष्कार किया और उसे परिमार्जित एवं शिष्ट रूप दिया। इन्होंने उर्दू में जो-जो परिवर्त्तन किये, पीछे उनकी एक पुस्तक भी छप गई थी।

'नासिख़' के शिष्यों की बहुत बड़ी संख्या है, जिनमें 'वक़', 'वज़ीर', 'रश्क़', 'बहर', 'मुनीर', 'महर' 'नादिर', 'आबाद', 'ताहर' आदि मुख्य हैं। 'नासिख़' अपनी कविताएँ बहुत कम सुनाते थे। कोई सुनाने का बहुत आग्रह करता तो पहले उसकी परीक्षा लेने के लिए कुछ अटपटे शेर सुनाते। यदि वह उनकी दाद देने लगता, तो समझ लेते कोरा मूर्ख है, कविता नहीं जानता, और फिर सुनाना बन्द कर देते। यदि उन शेरों को सुन कर श्रोता चुप रहता या चक्कर में पड़ दाद न देता, तो फिर उसे समझा-समझा कर अच्छी-अच्छी कविताएँ सुनाते थे। इन्होंने उर्दू में जिस शैली (लखनऊ-शैली) का आविष्कार किया, उसमें कृत्रिमता, अस्वाभाविकता, शब्दाडंबर, अतिशयोक्तियों, निरर्थक उपमाओं आदि की प्रधानता है। इन्हीं पर अधिक ध्यान दिया गया है, भावों की सूक्ष्मता और कल्पना की गम्भीरता पर नहीं। 'नासिख़' की कविता में भी ये दोष मौजूद हैं। इनके तीन दीवान हैं, जिनमें 'दफ़्तर परेशान' भी है। यह परेशानी की हालत में इलाहाबाद में लिखा गया था।

'नासिख़' के सात शिष्य

१—'वर्क़'—इनका नाम मिर्ज़ा मुहम्मद रज़ा और उपनाम 'वर्क़' था। ये मिर्ज़ा काज़िम अली ख़ाँ के बेटे थे। अवध के अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह के मित्र और उस्ताद थे। बादशाह से इन्हें बड़ा प्रेम था, उनके साथ ये भी कलकत्ता गये थे और वहीं १८५८ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये 'नासिख़' के शिष्य थे, उन्हीं की शैली पर कविता लिखते थे। इनकी भी अच्छी ख्याति थी। इनका एक बड़ा दीवान है, जिसमें एक कविता में लखनऊ की तबाही का बड़ा ही करुण चित्र खींचा गया है। 'जलाल' और 'सहर' इनके प्रसिद्ध शिष्य थे।

२—'बहर'—इनका नाम शेख़ इमदाद अली और उपनाम 'बहर' था। ये शेख़ इमामबख़्श के बेटे थे। इनका जीवन बड़े कष्ट में बीता। अन्तिम समय में, ये रामपुर-दरबार के आश्रित हुए। वहाँ नवाब क़ल्ब-अलीख़ाँ ने इनकी ख़ूब प्रतिष्ठा की। ७५ वर्ष की आयु में, १८८२ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनका दीवान 'रिन्द' ने प्रकाशित किया था। इनकी कविता में भी शब्दाडम्बर और कृत्रिमता है, परन्तु उतनी अधिक नहीं जितनी कि 'नासिख़' के अन्य शिष्यों की कविताओं में है। इनके बहुत-से शेर सरस, सरल, प्रभावशाली और सारगर्भित हैं। भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार है। उर्दू कवियों में इनका ऊँचा स्थान माना जाता है।

३—'आबाद'—मिर्ज़ा मेहदी हसनख़ाँ 'आबाद' मिर्ज़ा ग़ुलाम ज़फ़र के बेटे थे। १८०६ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। इनकी गणना लखनऊ के रईसों में थी। इन्होंने बहुत-सी कविताएँ लिखी हैं। दो दीवान, एक मसनवी और तीन वासोख़्त प्रकाशित हो चुके हैं। एक दीवान का नाम 'निगारिस्ताने इश्क़' है। 'बहारिस्ताने सख़ुन' नामक इनका एक कविता-संग्रह भी प्रसिद्ध है। 'आबाद' की कविता साधारण है; परन्तु कहीं-कहीं चमत्कार भी दिखाई देता है।

४–'वज़ीर'—ख़्वाजा मुहम्मद वज़ीर 'वज़ीर' ख़्वाजा मुहम्मद फ़क़ीर के बेटे थे। इनका परिवार लखनऊ के प्रतिष्ठित परिवारों में से था। ये अच्छी कविता लिखते थे, इनका दीवान 'दफ़्तरे फ़साहत' के नाम से प्रसिद्ध है। ये 'नासिख़' के सबसे अधिक प्रिय और प्रसिद्ध शिष्य थे। अपने उस्ताद की शैली पर ही लिखते थे। इन्होंने बड़ी-बड़ी कठिन समस्याओं की पूर्तियाँ की हैं। ये अपने समय में उच्च कोटि के शायर समझे जाते थे।

५–'रश्क'—मीर अली औसत 'रश्क' मीर सुलेमान के बेटे थे। इनका पालन-पोषण लखनऊ में हुआ। वहीं पढ़े-लिखे। 'नासिख़' के प्रसिद्ध शिष्य थे। शायर तो थे ही, परन्तु इनकी प्रसिद्धि अधिकतर 'नफ़सुल लुग़ात' नामक फ़ारसी कोष लिखने के कारण हुई। 'नज़्म मुबारक' और 'नज़्म गरामी' नामक इनके दो दीवान हैं। इनकी कविता में भी लखनऊ-शैली का पूर्ण विकास हुआ है। ये अपने उस्ताद नासिख़ के ढंग पर ही चले हैं। ये तारीख़ कहने के बड़े अभ्यासी थे। इनके अनेक शिष्यों में 'मुनीर' बहुत प्रसिद्ध हैं। इनका देहान्त १८६५ ई० में, ७० बरस की आयु में हुआ। ये शब्द-शुद्धि पर बड़ा ध्यान देते थे।

६–'महर'—मिर्ज़ा हातिम अली बेग 'महर' मिर्ज़ा फ़ैज़अली बेग 'क़ज़ल बाश' के बेटे थे। १८११ ई० में एक प्रतिष्ठित परिवार में पैदा हुए। पढ़-लिखकर १८४० ई० में चुनारगढ़ में मुंसिफ़ हो गये। आगरा में भी इन्होंने वकालत की थी। १८७९ ई० में पटा में इनका देहान्त हुआ। इनकी लिखी हुई कुछ किताबों के नाम ये हैं—'दीवान उर्दू', 'अलमासदरख़्शाँ' या 'ख़यालाते महर', 'पैराया अरूज़' (छन्द-शास्त्र सम्बन्धी किताब) 'अयाग़ फ़रंगिस्तान' (अँगरेज़ी शासन का संक्षिप्त इतिहास), मसनवी 'दाग़े निगार', 'दाग़े दिल महर', 'मसनवी शुआए महर', इसकी प्रशंसा मिर्ज़ा ग़ालिब ने भी की है। 'महर' ने विविध विषयों पर बहुत-सी कविताएँ लिखी हैं। ये भी अच्छे शायर

थे। भाषा पर इनका .खूब अधिकार था। 'इनकी कुछ कविताएँ' तो बहुत ही श्रेष्ठ और उच्च कोटि की हैं।

७–'मुनीर'—सैयद इस्माईल हुसेन 'मुनीर' सैयद अहमद हुसेन शाह के बेटे थे। शिकोहाबाद (मैनपुरी) के रहने वाले थे। लखनऊ में पढ़े-लिखे। इनका उर्दू दीवान 'मुन्तख़िबातेआलम' प्रसिद्ध है। ये 'नासिख़' के शिष्य थे और 'रश्क' से भी इस्लाह लेते थे। मुलाज़िमत के सिलसिले में ये कलकत्ता, मुरशिदाबाद, फ़र्रुख़ाबाद, इलाहाबाद रहे। अन्त में रामपुर-दरबार के आश्रित हुए और वहीं १८८१ ई० में इनका देहान्त हुआ। 'तनवीरुल अशआर' और 'नज़्मे मुनीर' ये दो दीवान इनके लिखे हुए हैं। एक मसनवी है—'मैराजुल मज़ामीन'। ये मरसिया और क़सीदे भी .खूब लिखते थे। इनकी कविताओं में लखनऊ का रंग है। ये अपने समय के प्रतिष्ठित कवि थे।

'आतिश'—इनका नाम ख़्वाजा हैदरअली और उपनाम 'आतिश' था। इनके पिता ख़्वाजा अलीबख़्श देहली के प्रतिष्ठित नागरिक थे, परन्तु देहली छोड़ कर फ़ैज़ाबाद चले आये और अन्त तक वहीं रहे। 'आतिश' का जन्म फ़ैज़ाबाद में ही हुआ। इनके पिता इन्हें बहुत छोटा छोड़ कर चल बसे थे, अतः इनकी शिक्षा यथोचित रूप से न हो सकी, फलतः ये कुसंगति में फँस गए और छैल-छबीले बन कर इधर-उधर घूमने लगे। फिर एक नौकरी के सिलसिले में लखनऊ गए। उस समय वहाँ 'मसहफ़ी' और 'इंशा' की धूम थी। वहाँ के मुशायरे देख कर शायरी की ओर इनकी भी रुचि हुई और ये 'मसहफ़ी' के शिष्य बन गये। कुछ ही दिनों के अभ्यास से ये अच्छी कविता करने लगे और इनकी प्रसिद्धि बढ़ चली। ये अधिक विद्वान् न थे। सौन्दर्योपासक और स्वतन्त्र प्रकृति के थे। सिपाहियाना ढंग से रहते और तलवार बाँधते थे। जीवन-भर किसी अमीर की .खुशामद नहीं की। लखनऊ-दरबार से इन्हें अस्सी रुपये मासिक मिलते थे, यही इनकी जीविका था। ये बड़े साधु-स्वभाव, सन्तोषी और संकोची थे।

अन्त में इनका अपने गुरु 'मसहफ़ी' से कुछ मनोमालिन्य हो गया था। इनकी कविताओं में आवेश की मात्रा अधिक है। अस्वाभाविकता, बनावट, शब्दाडम्बर, निरर्थक अतिशयोक्तियों और ऊटपटाँग उपमाओं से वह मुक्त है। कविताओं में शब्दों का प्रयोग बड़ा समुचित और सुष्ठु रीति से हुआ है। इनकी कितनी ही कविताएँ तो गानात्मक दृष्टि से भी बहुत सुन्दर हैं। उनमें मुहावरों का प्रयोग बड़ी सुन्दर रीति से हुआ है। 'आतिश' का भाव-प्रकाशन करने का ढंग बड़ा प्रभावशाली और आकर्षक है। इनकी भाषा सरल, परिमार्जित और बोलचाल की है। प्रसाद गुण और ऊँची कल्पना इनकी कविता की विशेषताएँ हैं। 'आतिश' का पहला दीवान इनके जीवन में ही प्रकाशित हुआ, और दूसरा मरने के बाद। यह पूर्व प्रकाशित दीवान का परिशिष्ट है। 'आतिश' ने अधिकतर ग़ज़लें लिखी हैं। उनमें सूफ़ियाना रंगत ख़ूब है। इन्होंने उर्दू-साहित्योपवन से कूड़ा-करकट दूर करने के लिए प्रशंसनीय प्रयत्न किया। 'नासिख़' से इनकी नोंक-झोंक रहती थी। साथ ही दोनों एक दूसरे की प्रशंसा भी ख़ूब करते थे। कहते हैं, 'नासिख़' के मरने का इन्हें इतना दुःख हुआ था कि कविता करना ही छोड़ दिया। 'कुल्लियाते आतिश' नाम से इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है। 'आतिश' का मुहम्मदअली नामक लड़का भी शायर था। वृद्धावस्था में 'आतिश' अन्धे हो गये थे। १८६४ ई० के लगभग इनका देहान्त हुआ। इनके शिष्यों में 'रिन्द', 'सबा', 'ख़लील', 'नसीम', 'आग़ा हिजो' आदि मुख्य हैं।

आतिश के पांच शिष्य

१—'रिन्द'—नवाब सैयद मुहम्मद ख़ाँ 'रिन्द' सिराजुद्दौला नवाब ग़यास मुहम्मदख़ाँ के बेटे थे। १७९३ ई० में फ़ैज़ाबाद में पैदा हुए। पालन-पोषण और लिखाई-पढ़ाई बड़े अमीरी ढंग से हुई। जब तक फ़ैज़ाबाद में रहे 'ख़लीक़' से इसलाह लेते और अपना उपनाम 'वफ़ा' लिखते रहे। १८२१ ई० में लखनऊ चले आए। यहाँ ख़्वाजा

हैदरअली 'आतिश' के शिष्य हुए और 'रिन्द' उपनाम रखा। 'आतिश' का 'गुलदस्ते इश्क़' नामक दीवान इनके जीवन में ही प्रकाशित हो गया था। दूसरा दीवान मरने के बाद छपा। ये बड़े मस्तमौला थे। इनकी ज़िन्दगी ख़ूब सुख-चैन में बीती। इनकी कविता सरल और आडम्बरहीन है। मुहावरे और भाषा की दृष्टि से भी बड़ी सुन्दर है। ऊँचे भाव कम हैं। विनोद का पुट भी अच्छा है। किन्हीं-किन्हीं शेरों में आत्मा तथा परमात्मा सम्बन्धी भाव भी हैं। 'आतिश' के शिष्यों में इनका ऊँचा स्थान है। ग़दर शुरू होने के कुछ पहले बम्बई में इनका देहान्त हुआ। ये हज जाने के विचार से वहाँ गये थे।

२—'ख़लील'—इनका नाम मीर दोस्तअली और उपनाम 'ख़लील' था। ये सैयद जमाल अली के बेटे थे। बरौली (अवध) में पैदा हुए। इनकी कुछ कविताएँ उच्च कोटि की हैं। ये अपनी कविता में अप्रचलित शब्दों की ठूँस-ठाँस बहुत करते थे। इनकी कविता इश्क़िया मज़मूनों से रँगी हुई है।

३—'सबा'—इनका नाम मीर वज़ीर अली और उपनाम 'सबा' था। ये मीर बन्दे अली के बेटे थे। लखनऊ में पैदा हुए थे। अरबी और फ़ारसी में अच्छी गति थी। बड़े मिलनसार और सुशील थे। इन्हें वाजिदअली शाह की सरकार से २००) मासिक मिलते थे। ये 'आतिश' के मुख्य शिष्यों में से थे। स्वयम् इनके भी कई प्रसिद्ध शिष्य हो गये हैं। घोड़े से गिरकर इनका देहान्त हुआ। 'गुञ्चए आरज़ू' नामक इनका एक दीवान भी प्रकाशित हो गया है। 'शिकारनामा वाजिदअली शाह' नामक इनकी एक मसनवी भी है। इनकी कविता में अस्वाभाविकता तथा अप्रचलित शब्दों की भरमार है। कहीं-कहीं 'आतिश' के रंग की भी झलक पाई जाती है।

४—'आग़ा हिज्रो'—इनका नाम मीर सादात हुसेन ख़ाँ और उपनाम 'आग़ाहिज्रो' था। ये वाजिदअली शाह के समधी अर्थात

शाहज़ादा मिर्ज़ा हामिद अली 'कौकब' के ससुर थे। ग़दर के बाद ये भी कलकत्ता चले गये और शाहज़ादा के साथ मटियाबुर्ज में रहने लगे। शाहज़ादे के मरजाने से इनको घोर दुःख हुआ। ये लखनऊ-शैली के शायर थे, अर्थात् भाषा शुद्ध, सुन्दर और सरल, छन्द ठीक परन्तु भावों की कमी। ये अपनी कविता में अरबी-फ़ारसी के कठिन शब्द बहुत कम काम में लाते थे।

८—'नसीम'—इनका नाम पं० दयाशंकर कौल और उपनाम 'नसीम' था। इनके पिता पं० गंगाप्रसाद कौल कश्मीरी, लखनऊ के प्रतिष्ठित नागरिक थे। 'नसीम' प्रायः अपने उपनाम से ही प्रसिद्ध हैं। इनका जन्म १८१२ ई० में लखनऊ में हुआ। ये फ़ारसी और उर्दू के विद्वान् थे। बादशाह अमजदअली शाह की फ़ौज में बख़्शी के ओहदे पर नियुक्त थे। बचपन से ही इनकी कविता की ओर प्रवृत्ति थी। बीस वर्ष की आयु में ये 'आतिश' के शिष्य हुए। 'नसीम' प्रारम्भ में ग़ज़ल लिखते थे। पच्चीस वर्ष की उम्र में इन्होंने 'मसनवी मीर हसन' के जवाब में 'मसनवी गुलज़ारे नसीम' लिखी। कहते हैं, प्रारम्भ में 'गुलज़ारे नसीम' बहुत बड़ी थी, परन्तु पीछे उस्ताद के कहने से 'नसीम' ने इसे छोटा कर दिया, जो वर्त्तमान रूप में है। यह मसनवी १८३५ ई० में लिखी गई। इसके प्रकाशित होते ही चारों ओर 'नसीम' की ख्याति फैल गई। प्रवाह, शब्द-सौन्दर्य, उपमा, अलंकार, मुहावरे आदि सभी दृष्टियों से 'गुलज़ारे नसीम' उत्कृष्ट काव्य है। कला और कल्पना में तो कमाल ही कर दिया है। इस मसनवी की अनेक पंक्तियाँ तो लोकोक्तियों का रूप धारण कर चुकी हैं। इस महाकाव्य ने 'नसीम' को अमर और उर्दू-साहित्य को गौरवान्वित कर दिया। कहते हैं, 'नसीम' की मसनवी पर 'आतिश' ने जो संशोधन किए थे, वे उन्हें पसन्द नहीं आए और उन्होंने अपनी लिखी कविता ही रहने दी। 'गुलज़ारे नसीम' उर्दू-काव्य-साहित्य में बहुत ऊँची पुस्तक मानी जाती है। जिस समय वह सबसे पहले एक मुशायरे में पढ़ी गई, तो उसमें उपस्थित सभी बड़े-बड़े कवियों ने उसकी

भूरि-भूरि प्रशंसा की और 'नसीम' को उसके कारण बहुत ऊँचा कवि माना। 'नसीम' बड़े हँसमुख और हाज़िर जवाब थे। लखनऊ के एक मुशायरे में 'नासिख़' ने 'नसीम' को इंगित करके कहा—पण्डितजी, इस मिसरे का दूसरा मिसरा नहीं सूझता—

'शेख़ ने मस्जिद बना मिस्मार बुतख़ाना किया'—इसके उत्तर में 'नसीम' ने फ़ौरन फ़रमाया—

'तब तो एक सूरत भी थी अब साफ़ वीराना किया।' फिर क्या था, सारी महफ़िल में वाह-वाह होने लगी और 'नासिख़' झेंप गए। 'नसीम' ने 'नासिख़' के व्यंग्य का कैसा समुचित, स्वाभाविक और युक्ति-युक्त उत्तर दिया!

'नसीम' ने कविता को कभी जीविका का साधन नहीं बनाया। उन्होंने कभी दरबारी कवि बनने की चेष्टा भी नहीं की। जो कुछ लिखा, स्वान्तः सुखाय लिखा। इनकी अद्भुत प्रतिभाशक्ति के सब ही प्रशंसक थे। नवाब और बादशाह भी बड़ा आदर करते थे। 'नसीम' का देहान्त बत्तीस वर्ष की आयु में हैज़े से हुआ। कहते हैं, इन्होंने अपने मरने के कुछ ही घण्टे पहले नीचे लिखी शेर कही थी—

पहुँची न राहत हमसे किसी को
बल्कि अज़ीयत कोश हुए।
जान पड़ी तब बारे शिकम थे,
मरके बवाले दोश हुए।

'गुलज़ारे नसीम' में 'गुलबकावली' की कहानी लिखी गई है। उसमें भावों और दृश्यों का चित्रण करने में 'नसीम' ने कमाल किया है। ऐसे महान् कलाकार को पाकर उर्दू साहित्य धन्य हुआ। 'नसीम' की कविताओं का एक संग्रह या दीवान भी बताया जाता है। 'गुलज़ारे नसीम' लिखने से पूर्व 'नसीम' ने बहुत-सी ग़ज़लें लिखी थीं, जो बड़ी स्वाभाविक और सरल हैं। वह अनावश्यक अतिशयोक्तियों और क्लिष्ट पदों से मुक्त हैं। उनमें सीधी बात सीधी तरह कही गई है।

'ख़लीक़'—इनका नाम मुस्तहसन और उपनाम 'ख़लीक़' था। ये मीरहसन के बेटे थे। इनकी शिक्षा फ़ैज़ाबाद और लखनऊ में हुई। ये छोटी उम्र से ही कविता करते थे। 'मसहफ़ी' से अपनी कविता में इसलाह लेते थे। एक बार फ़ैज़ाबाद में मिर्ज़ा मुहम्मद 'तक़ी' के घर पर हुए एक मुशायरे में, जिसमें 'आतिश' भी मौजूद थे, 'ख़लीक़' ने एक ग़ज़ल पढ़ी, जिसका मतला था—

'रश्के आईना है, उस रश्केक़मर का पहलू,
साफ़ इधर से नज़र आता है उधर का पहलू।'

कहते हैं, इस मतले ही को सुन कर 'आतिश' ने अपनी ग़ज़ल फाड़ डाली और कहा—'जब यहाँ ऐसा शायर मौजूद है, तो मेरी क्या ज़रूरत।' ये अपनी ग़ज़लें बेच कर निर्वाह करते थे। अन्तिम आयु में इन्होंने मरसिया लिखने शुरू किये। ये 'ज़मीर', 'फ़सीह' और 'दिलगीर' के समकालीन थे। 'ख़लीक़' की 'ज़मीर' के साथ ख़ूब प्रतिद्वन्द्विता रहती थी। दोनों मरसिया-कला में उस्ताद थे और इस दिशा में इनकी ख़ूब धूम थी। पहले मरसिया चार मिसरों में लिखा जाता था। इनके समय में उसने मुसद्दस का रूप धारण किया, अर्थात् वह छह मिसरों का लिखा जाने लगा। यद्यपि इस प्रथा का प्रारम्भ 'सौदा' ने किया था तथापि प्रचार इन्हीं के समय में हुआ। 'ख़लीक़' ने भाषा की विशुद्धता और उसे मुहावरेदार बनाने पर भी बड़ा ज़ोर दिया। उन्होंने मरसिया का रूप ही बदल दिया। उसे आकर्षक, उपयोगी और कविता का एक महत्त्वपूर्ण अंग बना दिया।

मीरहसन के चार पुत्र थे, जिनमें से 'इखलक', 'ख़लीक़' और 'मुहसन' ये तीन शायर थे। 'ख़लीक़' ने भी दीवान लिखा है।

'अनीस'—इनका नाम बबरअली ख़ाँ और उपनाम 'अनीस' था, सुप्रसिद्ध शायर मीरहसन के पौत्र और मुस्तहसन 'ख़लीक़' के पुत्र थे। १८५८ ई० में फ़ैज़ाबाद में पैदा हुए। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा फ़ैज़ाबाद में ही हुई, फिर लखनऊ चले आए और वहाँ मौ० हैदरअली

आदि से अरबी-फ़ारसी पढ़ते रहे। ये व्यायाम के बड़े शौक़ीन थे। सिपाहीगीरी और घुड़सवारी में भी ख़ूब दक्ष थे। प्रारम्भ में इन्होंने साधारण ग़ज़लें लिखनी शुरू कीं, फिर अपने पिता की प्रेरणा से लोक-परलोक सम्बन्धी उपयोगी विषयों पर ग़ज़लें लिखने लगे। इनके पिता भी अपने समय के बड़े अच्छे कवि थे। मरसिया लिखने में तो 'अनीस' ने कमाल ही कर दिया। इनकी वर्णन-शैली बड़ी स्वाभाविक, सुन्दर और आकर्षक है। मरसिया लिखने में 'अनीस' से बढ़कर किसी की ख्याति नहीं हुई। इनके मरसिये ख़ूब लोकप्रिय हुए। १८७४ ई० में ७२ साल की आयु में लखनऊ में इनका देहान्त हुआ। 'अनीस' क़ायदे के बड़े पाबन्द थे। नियत समय पर ही सबसे मिलते-जुलते थे। बिना सूचना दिये कोई उनके पास न जा सकता था। अपने वंश की प्रतिष्ठा और स्वाभिमान का वे सदैव ध्यान रखते थे। बादशाह से भी मिलने न जाते थे। उनकी वेशभूषा विशेष प्रकार की थी। धन के लोभ से इन्होंने कभी किसी की प्रशंसा नहीं की। जब तक लखनऊ पर तबाही नहीं आई, 'अनीस' लखनऊ से बाहर नहीं गये। लखनऊ पर आपत्ति आई तो ये अपने प्रेमियों के बहुत आग्रह पर अज़ीमाबाद, पटना, इलाहाबाद और हैदराबाद गये थे। इनके मरसिये सुन कर लोग दंग रह जाते थे। 'अनीस' की ख्याति इनके पिता के जीवन में ही होने लगी थी। पहले ये 'हज़ीं' उपनाम लिखते थे, जब 'नासिख़' के शिष्य हुए तो 'अनीस' उपनाम हुआ। इनके लिखे मरसियों, सलाम, क़िते और रुबाइयों की संख्या सहस्रों है। इनकी कविताओं का संग्रह पाँच जिल्दों में प्रकाशित हुआ है, परन्तु उन जिल्दों में सब कविताएँ नहीं आईं। कुछ कविताएँ अप्रकाशित भी हैं। कहते हैं, 'अनीस' ने सब मिल कर ढाई लाख शेर लिखे हैं। कुछ ग़ज़लें भी हैं। 'अनीस' का पढ़ने का ढंग बड़ा आकर्षक और निराला था। एक बड़ा आइना आगे रख कर ये कविता पढ़ने का अभ्यास किया करते थे, जिससे पढ़ते समय की भाव-भंगी स्वयं भी देखते जायँ, और यदि कुछ त्रुटि हो तो उसे ठीक कर लें। पढ़ते समय ये व्यर्थ इधर-उधर हाथ न चलाते थे,

आँखों की चेष्टा या गर्दन को कुछ हिलाकर ही कविता के रस या प्रसंग को व्यक्त कर देते थे। 'अनीस' ने उर्दू को सँवारने-सुधारने और उसका सब दृष्टियों से परिमार्जन करने के लिए बड़ा प्रयत्न किया। मुहावरों के समुचित प्रयोग और शब्द-सौन्दर्य उनकी कविता की विशेषताएँ हैं। ये शब्द-कोष के सम्राट् थे। मज़मून इनके आगे हाथ बाँधे खड़े रहते थे। 'अनीस' की भाषा को लखनऊ और देहली दोनों शैलियों वाले प्रामाणिक मानते हैं। इनके लिखे मरसिये उर्दू-साहित्य की अद्भुत देन हैं। इनके प्रकृति-वर्णन में सौन्दर्य, घटना-क्रम में आकर्षण और भावों में सजीवता, स्वाभाविकता तथा मौलिकता है। ये मानव-स्वभाव के बड़े ही चतुर चितेरे हैं, जिसका वर्णन करते हैं, कमाल तक पहुँचा देते हैं। युद्ध का ऐसा वर्णन किया है, मानो पाठक अपनी आँखों से सारा दृश्य देख रहा हो। 'अनीस' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने मरसियों की दक़ियानूसी प्रवृत्ति को रोक कर उसमें नवीनता का प्रवेश किया। प्राकृतिक, ऐतिहासिक और स्वाभाविक वर्णन की नींव डाली। जो मरसिये सिर्फ़ रोने-पीटने तक सीमित थे, उन्हें सजीव काव्य और सुन्दर कला के रूप में परिवर्तित किया। मरसिया-कला का जितना विकास इनके द्वारा हुआ, उतना अन्य प्रकार नहीं हुआ। 'अनीस' की कविताओं का संग्रह 'कुल्लियाते मरासी अनीस' के नाम से प्रकाशित हुआ है। ये बड़े चरित्रवान्, सन्तोषी और अल्पभाषी थे। नपे-तुले शब्द ही मुँह से निकालते थे। 'दबीर' से इनकी ख़ूब नोक-झोंक रहती थी। 'यादगारे अनीस' में 'अनीस' की जीवनी और कविताओं का आलोचनात्मक वर्णन है। 'रूहे अनीस' में चुनी हुई कविताएँ हैं।

'दबीर'—इनका नाम मिर्ज़ा सलामत अली और उपनाम 'दबीर' था। ये १८०३ ई० में देहली में पैदा हुए। मिर्ज़ा ग़ुलाम हुसेन के बेटे थे। देहली पर तबाही आई तो ये अपने पिता के साथ लखनऊ चले आये और यहीं इनकी पढ़ाई-लिखाई हुई। कविता का शौक़ इन्हें बचपन से ही था। मरसिया लिखने में इन्होंने बड़ी उन्नति की।

'दबीर' ने सारा जीवन मरसियों को उन्नत और विकसित करने में ही लगा दिया। इनके कारण मरसियों की .खूब उन्नति और प्रतिष्ठा हुई। लखनऊ के बादशाह नवाब ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने भी 'दबीर' से अपने महलों में मरसिये सुने। इससे 'दबीर' की ख्याति और भी बढ़ गई। इनके शिष्यों की संख्या बहुत बड़ी थी। रईसों और अमीरों के घरों में भी इनके शिष्य मौजूद थे। अपने जीवन-काल में ही 'दबीर' उर्दू के उस्ताद माने जाने लगे। ये पटना, अज़ीमाबाद आदि भी गए थे, जहाँ इनकी .खूब ख्याति हुई। बुढ़ापे में इनकी नेत्र-ज्योति क्षीण हो गई थी, अतः इलाज के लिए वाजिदअली शाह ने इन्हें कलकत्ता (मटियाबुर्ज) बुलाया और सुयोग्य चिकित्सकों द्वारा इनका इलाज कराया। इनके मरसियों में नवीन भावों की प्रधानता है। कविता में इन्होंने .कुरान की आयतों और हदीसों को .खूब चस्पाँ किया है। ये शीघ्र और बहुत लिखते थे। 'दबीर' के कविता-गुरु 'जमीर' इनकी प्रतिभा से बड़े प्रसन्न थे और इन्हें अपना प्रधान शिष्य समझते थे। 'दबीर' और 'अनीस' में .खूब नोक-झोंक रहती थी, परन्तु दोनों एक दूसरे की प्रतिष्ठा में किसी प्रकार का अन्तर न आने देते थे। लखनऊ में शायरों के दो दल थे, एक 'अनीस' का और दूसरा 'दबीर' का। 'दबीर' के मरसियों का संग्रह 'कुल्लियाते मरासी दबीर' के नाम से प्रकाशित हुआ है। 'हयाते दबीर' नाम की जीवनी भी है, जिसमें 'दबीर' की जीवन-घटनाओं और कविताओं पर आलोचनात्मक विचार किया गया है। १८७५ ई० में लखनऊ में इनकी मृत्यु हुई और ये अपने घर में ही दफ़न किये गये। लखनऊ में 'दबीर' के नाम से एक कूचा है। इनके कुछ मकान भी हैं।

'अनीस' और 'दबीर' दोनों अपने समय के उस्ताद थे। दोनों की .खूब प्रतिष्ठा हुई और दोनों ने ही उर्दू-साहित्य की प्रशंसनीय सेवा की। दोनों में कौन बड़ा और कौन छोटा था, यह कहना कठिन है। परन्तु कुछ विद्वानों की राय है कि 'अनीस' की कविता सरसता, सरलता और स्वाभाविकता के लिये प्रसिद्ध है, परन्तु 'दबीर'

की कविता ने अपनी रंगीनी तथा कलात्मकता के लिए ख्याति प्राप्त की। 'दबीर' बड़े मिलनसार, शान्त स्वभाव और साधु-प्रकृति के थे। सुन्दर शब्द-योजना, अलंकृत भाषा और सरसतापूर्ण प्रवाह इनकी कविता के विशेष गुण हैं। यों तो इन्होंने कविता के सभी विषयों पर लिखा है, परन्तु उनमें रुबाइयाँ और मरसिये बहुत प्रसिद्ध हैं।

'नज़ीर'—इनका नाम वली मुहम्मद और उपनाम 'नज़ीर' था। १७३६ ई० के लगभग इनका जन्म देहली में हुआ। ये मुहम्मद फ़ारूक़ के बेटे थे। देहली पर आपत्ति आने के कारण अपनी मा और नानी के साथ आगरा चले आए और ताजगंज मुहल्ले में बस गए। ये उर्दू के अतिरिक्त फ़ारसी और अरबी के भी प्रसिद्ध विद्वान् थे। बड़े फक्कड़, सरल हृदय और सन्तोषी थे। आगरा में इन्होंने माईथान के लाला बिलासराय के लड़कों को सत्रह रुपये मासिक पर पढ़ाया था। मथुरा में भी अध्यापकी की थी। पेशवाओं के लड़के भी पढ़ाये थे। ये प्रायः घोड़ी पर चढ़ कर आया-जाया करते थे। १२ अगस्त १८३० ई० को आगरे में ही इनका देहान्त हुआ और ताजगंज में ये दफ़न किये गए।

'नज़ीर' ने दीर्घजीवी होने के कारण 'इंशा', 'जुरअत', 'नासिर' आदि की मजलिसों के दृश्य देखे थे। इनकी कविता में सूफ़ियाना भावों की प्रचुरता है। ये हिन्दू-मुस्लिम मेल-मिलाप के सबल समर्थक थे। इन्होंने हिन्दुओं के त्योहारों, मेलों और देवी-देवताओं पर भी बड़ी सुन्दर और सरस कविताएँ की हैं। राजा-महाराजाओं के बुलाने पर भी ये उनके यहाँ न जाते थे। बड़े स्वाभिमान-सम्पन्न और निरीह थे। इनमें मिलनसारी हद दरजे की थी। ये भाँति-भाँति के लोगों में मिलते-बैठते थे, इसीलिए इन्हें अनुभव ख़ूब हो गया था। लड़कों के आग्रह पर उन्हें छोटी-छोटी कविताएँ बना देते थे, जिसे वे गलीकूचों में गाते फिरते थे। इन्हें गाने और मेले-तमाशों का बड़ा शौक़ था।

बड़े प्रसन्नचित्त और यारबाश थे। धार्मिक पक्षपात और घमण्ड तो इन्हें छू तक न गया था। हिन्दू और मुसलमान दोनों समुदाय इनकी इज़्ज़त करते थे। ये युवावस्था में ख़ूब रंगीन तबीयत के रहे। इनकी कविताओं में गहरा शृंगार उन्हीं दिनों का है। बुढ़ापे में 'नज़ीर' की रुचि बिलकुल बदल गई थी, और वे सूफ़ी तथा विरक्त हो गए थे। इस समय की इनकी कविताएँ बड़ी प्रभावशालिनी हैं। इनके लिखे दो लाख से अधिक शेर बताए जाते हैं, जो नष्ट हो गए। उपलब्ध कविताएँ छह हज़ार शेरों से अधिक नहीं हैं। 'नज़ीर' अपनी कविताओं को सुरक्षित न रखते थे। इनकी कविताएँ सन्तों की वाणी जैसी हैं, जो हृदय पर असर किये बिना नहीं रहतीं और संसार की क्षणभंगुरता का चित्र खींचकर रख देती हैं।

'नज़ीर' की दृष्टि में अल्लाह और राम में कोई भेद नहीं हैं, वे फ़क़ीर भी थे और सन्त भी। यही कारण था कि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उनसे प्रेम करते थे। 'नज़ीर' के जनाज़े के साथ सैकड़ों हिन्दू भी गए थे, और उन्होंने अपनी धार्मिक प्रथा के अनुसार 'नज़ीर' की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना की थी। 'नज़ीर' की अधिकतर कविताएँ ऐसी हैं, जो कभी पुरानी या असामयिक नहीं हो सकतीं। वे जब कभी पढ़ी जायँगी, सनातन सत्य की तरह प्रकट होंगी। 'नज़ीर' विश्वबन्धुत्व के समर्थक हैं। ये प्राणिमात्र में एक आत्मा का प्रकाश देखते हैं। पशु-पक्षियों तक का वर्णन उन्होंने अपनी कविताओं में किया है। उनका ऋतु-वर्णन तो बड़ा ही सुहावना है। ये हिन्दू और मुसलमान दोनों के मेलों और त्योहारों में सम्मिलित होते थे। इन्होंने राम और कृष्ण की बड़ी महिमा गाई है। त्योहारों का रोचक वर्णन किया है, उनसे उपदेश लिया है और उनकी अच्छाइयाँ दिखाई हैं। हिन्दुओं से अधिक मिलने-जुलने के कारण 'नज़ीर' की भाषा में भी हिन्दीपन है। ये हिन्दू रीति-रिवाजों को भी ख़ूब जानते थे। जगह-जगह अपनी कविताओं में इन्होंने वैसे ही भाव भी वर्णन किये हैं। 'नज़ीर' ने अपनी कविताओं में बोल-चाल के ऐसे शब्दों का भी

बड़ी .खूबी से प्रयोग किया है, जिन्हें प्रायः शायर लोग त्याज्य समझते हैं।

'नज़ीर' की कविता सरल और स्वाभाविक है। उसमें दृश्यों तथा घटनाओं का ज्यों का त्यों चित्र अंकित है। वे बनावट या अ-स्वाभाविकता से काम नहीं लेते। विषय के अनुकूल ही सीधी-सादी बोल-चाल की भाषा का प्रयोग करते हैं। भावों को शब्दों के जगड्-वाल में नहीं छिपाते। उनका शब्द-भाण्डार असीम है। 'नज़ीर' निन्दा-स्तुति से परे थे, अर्थात् न इन्होंने किसी की 'हिजो' लिखी और न कोई 'क़सीदा' रचा। इन्होंने मानव-प्रकृति का .खूब अध्ययन किया था। इसीलिए इनकी कविता बहुत लोक-प्रिय हुई। ये बड़े सहिष्णु थे, कष्टों को धैर्य-पूर्वक सहने में इन्हें आनन्द आता था। 'नज़ीर' की कविता में शिष्ट और निर्दोष हास्य का पुट भी पाया जाता है। ये संगीत के बड़े प्रेमी और कलाकार थे। साधारण-सी बातों का वर्णन बड़े आकर्षक ढंग से करते थे। 'केरेक्टर' वर्णन करने की इनमें अच्छी योग्यता थी। कविता में इन्होंने अनेक अछूते विषयों का समावेश किया है। इनकी कविता में गम्भीर दार्शनिक भावों की कमी है। वस्तुतः ये हिन्दुस्तानी कवि थे। ये एक ऐसी शैली के प्रव-र्त्तक थे जो इन्हीं के साथ समाप्त भी हो गई। 'नज़ीर' की 'बनजारा-नामा', 'महादेव का विवाह', 'लैला-मजनूँ', 'नज़्मे मौत', 'कृष्ण-कन्है-या', 'रोटीनामा', 'जोगीनामा', 'हंसनामा' आदि कविताएँ प्रसिद्ध हैं। 'कुल्लियाते नज़ीर', 'रूहे नज़ीर', 'जवाहर कुल्लियाते नज़ीर' आदि नामों से इनकी कविताओं के संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।

'नसीर'—इनका नाम नसीरुद्दीन और उपनाम 'नसीर' था। देहली के रहने वाले शाह ग़रीब के बेटे थे। रंग काला था, इसलिये लोग इन्हें मियाँ कल्लू भी कहते थे। ये बड़े अच्छे कवि थे। इनकी पहुँच शाह आलम के दरबार तक थी। शाह मुहम्मद 'मायल' के शिष्य थे। मीर 'दर्द' से भी इसलाह लेते थे। यात्रा के बड़े प्रेमी थे। देहली पर तबाही आने पर ये लखनऊ तथा हैदराबाद गए और वहाँ

इन्होंने अपनी कविता का चमत्कार दिखाया। हैदराबाद में तो इनके कितने ही शिष्य हो गये हैं। १८४० ई० में हैदराबाद में ही इनका देहान्त हुआ।

'नसीर' ने बहुत कविताएँ लिखी थीं, जिनमें से अधिकतर नष्ट हो गईं। कारण यह हुआ कि ये अपनी रचनाओं का संग्रह या संरक्षण नहीं करते थे। इनका एक दीवान है, जिसमें एक लाख शेर बताए जाते हैं। ये कठिन काफ़िए और रदीफ़ की ग़ज़लें बहुत लिखते थे। इनकी उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ बड़ी निराली हैं। नैतिक विषयों पर भी इन्होंने अच्छी कविताएँ लिखी हैं। इनकी कविता में गम्भीर या ऊँचे भावों की कमी है। 'नसीर' शब्द-सौन्दर्य पर ही अधिक ध्यान देते थे। ये आशु कवि भी थे। देहली में अपने घर पर मुशायरे कराते थे, जिनमें उस समय के बड़े-बड़े कवि और शायर सम्मिलित होते थे। ये बड़े विरक्त और सन्तोषी थे। इनके शिष्यों की संख्या बहुत बड़ी थी। 'ज़ौक़' भी इन्हीं के शिष्य थे, परन्तु पीछे किसी बात पर उनसे खटपट हो गई थी। 'नसीर' में धार्मिक पक्षपात बिल्कुल न था।

'मोमिन'—इनका नाम मोमिनख़ाँ और उपनाम 'मोमिन' था। ये हकीम ग़ुलाम नबीख़ाँ के बेटे थे। इनके पूर्वज काश्मीर के रहने वाले थे। १७९९ ई० में देहली में इनका जन्म हुआ। इनके पिता शाही हकीम थे, उन्हें पेन्शन मिलती थी, और जागीर भी मिली हुई थी। मोमिन की शिक्षा घर पर ही हुई थी। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता थे। चिकित्सा-शास्त्र और ज्योतिष में भी ख़ूब गति थी। शतरञ्ज के खिलाड़ी थे। कहते हैं, इन्होंने छत से गिरकर अपने मरने की भविष्य-वाणी पहले ही कर दी थी, जो सत्य हुई। अर्थात् १८५२ ई० में छत से गिरकर ही इनकी मृत्यु हुई। ये बड़े रसिक थे, इनकी ग़ज़लें बहुत प्रसिद्ध हैं। उनमें भावों की सूक्ष्मता और असाधारण भावुकता है। इनकी कविता प्रसादगुण युक्त है। वृद्धावस्था में इन्होंने

बड़ी गम्भीर और उच्च भावों से भरी हुई कविताएँ लिखी हैं। ये शाह नसीर के शिष्य थे। अक्खड़ और स्वतन्त्र प्रकृति के थे। बड़े-बड़े पदों पर बुलावा आया, परन्तु जाने से इन्कार कर दिया। संतोषी जीव थे। अमीरों की चापलूसी से इन्हें बड़ी घृणा थी। इन्होंने एक क़सीदा पटियाला-नरेश राजा अजयसिंह की प्रशंसा में लिखा था। जिसके पुरस्कार में उन्होंने इन्हें एक हथिनी भेंट की थी। इनकी कविता में उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ बड़ी सुन्दर हैं। रँगीली और रसीली कविता लिखने में भी इन्होंने कमाल किया है। इनकी मसनवियाँ उच्च कोटि की हैं। 'मोमिन' का उर्दू कवियों में बहुत ऊँचा स्थान है। ये एक ऐसी शैली के प्रवर्त्तक हैं, जिसका अनुकरण इनके पीछे के कितने ही कवियों ने किया है। इन्हें दूसरों की रचनाएँ बहुत कम अच्छी लगती थीं। कभी-कभी तो बड़े-बड़े उस्तादों की कविताओं को भी तुच्छ बता देते थे। 'मोमिन' की कविताओं का संग्रह प्रकाशित हो गये हैं। 'मोमिन' नाम की एक किताब भी प्रकाशित हुई है, जिसमें इनका संक्षिप्त परिचय और कविताओं का मार्मिक विवेचन है। इनके अतिरिक्त 'अशआर मोमिन', 'मोमिन के सौ शेर' आदि पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। 'मोमिन' के पढ़ने का ढंग बड़ा करुण और आकर्षक था। जब ये कविता पढ़ते तो सन्नाटा छा जाता था। इन्होंने सारा जीवन देहली में ही बिताया। एक-आध बार रामपुर, सहसवान, जहाँगीराबाद, सहारनपुर आदि स्थानों में भी गये थे।

'शेफ्ता'—इनका नाम नवाब मुस्तफ़ाख़ाँ और उपनाम 'शेफ़्ता' था। नवाब मुर्तज़ाख़ाँ के बेटे थे, जिन्होंने लार्ड लेक के साथ रहकर बड़ी बहादुरी के काम किये थे और बदले में होडल-पलवल का इलाक़ा पाया था। जहाँगीराबाद (बुलन्दशहर) का इलाक़ा नवाब मुस्तफ़ाखाँ ने ख़रीदा था, जिस पर अब तक उनके वंशजों का अधिकार चला आता है। 'शेफ़्ता' का जन्म १८०६ ई० में देहली में हुआ, ग़दर तक वहीं रहे। फिर जहाँगीराबाद चले आए।

ये फ़ारसी और उर्दू दोनों में कविता करते थे। फ़ारसी में 'हसरती' और उर्दू में 'शेफ़्ता' उपनाम था। फ़ारसी में 'ग़ालिब' से और उर्दू में 'मोमिन' से इसलाह लेते थे। इनका एक दीवान फ़ारसी का और दूसरा उर्दू का है। इन्होंने एक यात्रा-वर्णन और एक तज़किरा भी लिखा है। ये कवि की अपेक्षा आलोचक अधिक थे। कविता की बड़ी मार्मिक आलोचना करते थे। 'ग़ालिब' भी अपनी कविता पर इनकी सम्मति की बड़ी क़द्र करते थे। शैली में ये 'मोमिन' के अनुयायी थे। कविता में उच्च भाव रखते थे, भाषा विशुद्ध होती थी। इनके यहाँ जहाँगीराबाद में मौलाना अलताफ़ हुसेन 'हाली' कई साल तक रहे थे।

'तसकीन'—इनका नाम मीर हुसेन और उपनाम 'तसकीन' था। ये मीर अहसन के बेटे थे, दिल्ली में पैदा हुए। शाह नसीर के शिष्य थे। उनके मरने पर मोमिन के शिष्य हुए। इन्होंने ख़ूब ख्याति प्राप्त की। रामपुर दरबार के आश्रित रहे और वहाँ के नवाब यूसुफ़-अली ख़ाँ ने इनकी अच्छी प्रतिष्ठा की। ५० वर्ष की आयु में सन् १८४९ ई० में इनका रामपुर में देहान्त हुआ। इनकी कविता इनके गुरु 'मोमिन' के रंग पर होती थी। दोनों की कविताओं में बहुत कुछ साम्य था। कभी-कभी तो गुरु-शिष्य दोनों की रचनाओं में भेद करना भी कठिन हो जाता था। इनके बेटे मीर अब्दुल रहमन 'आसी' भी अच्छे कवि थे। 'आसी' नवाब क़लब अलीख़ाँ के समय तक रामपुर में ही रहे।

'नसीम' देहलवी—मिर्ज़ा असग़र अलीख़ाँ 'नसीम' नवाब आक़ा अली ख़ाँ के बेटे थे। १७९४ ई० में देहली में पैदा हुए। शिक्षा भी देहली में ही हुई। बड़े होने पर अपने भाई के साथ लखनऊ चले गए। ये बड़े आत्मसम्मानी, धार्मिक और सहिष्णु थे। इन्होंने अलिफ़लैला के कुछ भाग का पद्यानुवाद किया है। ये अपनी देहली की शैली पर ही कविता करते थे, परन्तु फिर भी लखनऊ में इनकी

ख़ूब ख्याति हुई थी। इन्होंने बहुत कविताएँ लिखी हैं, पर ये उन्हें सुरक्षित न रख सके। लखनऊ में इनके अनेक शिष्य थे। इनके भावों में सूक्ष्मता और मौलिकता है। ये मुहावरों का ख़ूब ध्यान रखते थे। इनकी भाषा भी शुद्ध होती थी। उर्दू कवियों में 'नसीम' का ऊँचा स्थान है। इनका एक दीवान भी है।

'ज़ौक़'—इनका नाम शेख़ मुहम्मद इब्राहीम और उपनाम 'ज़ौक़' था। जन्म १७८९ ई० में देहली में हुआ। इनके पिता शेख़ मुहम्मद रमज़ान एक साधारण सिपाही थे। ज़ौक़ की शिक्षा देहली में ही हुई। विद्यार्थि-अवस्था में ही इनकी कविता की ओर प्रवृत्ति हुई और ये शाह नसीर के शिष्य होगए। नसीर के साथ ही ये मुशायरों में जाने लगे। अरबी और फ़ारसी मौलवी अब्दुल रज़्ज़ाक़ से पढ़ी। ज़ौक़ की प्रखर प्रतिभा को देखकर 'नसीर' को भय होने लगा कि कहीं वह उनसे बढ़ न जाय, अतः वे ज़ौक़ की कविताओं को बिना इसलाह के ही वापस कर देते। इसलाह देते तो बुरी तरह मुँह बना लेते। फलतः यह गुरु-शिष्य-परम्परा अधिक दिनों न चल सकी। ज़ौक़ अपनी कविता पर स्वयं इसलाह करने लगे और इनकी कविताओं की धूम मच गई—सर्वत्र ख्याति फैल गई। 'नसीर' शाह-ज़ादा बहादुर शाह 'ज़फ़र' की कविताओं में इसलाह किया करते थे। उनके हैदराबाद चले जाने पर यह काम ज़ौक़ को सौंपा गया। इससे ज़ौक़ की प्रसिद्धि और भी बढ़ी। इस समय 'ज़ौक़' की आयु बीस साल के लगभग थी। देहली के नवाब इलाहीबख़्श ख़ाँ 'मारूफ़' भी इनके शिष्य हो गए। हैदराबाद से 'नसीर' देहली वापस आए तो उन्होंने यहाँ अपनी कविता की धाक जमानी चाही, परन्तु ज़ौक़ के मुक़ाबले में वह न जम सकी। 'ज़फ़र' के यहाँ से ज़ौक़ को चार रुपये मासिक मिलते थे, फिर पाँच हुए और जब 'ज़फ़र' बाद-शाह हो गए तो ज़ौक़ की वृत्ति क्रमशः सौ रुपये मासिक कर दी गई। हाथी, ख़िलअत, इनाम, गाँव और उपाधियाँ भी मिलती रहीं। इस

प्रकार इनका आर्थिक संकट दूर होगया और ये सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे। १८५४ ई० में इनका देहान्त हुआ।

ज़ौक़ अपनी प्रखर प्रतिभा और स्मरण-शक्ति के लिए प्रसिद्ध थे। ये बड़े ईश्वर-भक्त और सहृदय थे। इन्होंने कभी किसी चिड़िया की भी हत्या नहीं की। संगीत, ज्योतिष, चिकित्सा आदि विषयों में भी इनकी ख़ूब गति थी। आयुर्वृद्धि के साथ इनकी विद्वत्ता और प्रतिभा का भी विकास होता गया। एक बार इनको हैदराबाद से बुलावा आया, परन्तु ये वहाँ नहीं गए और लिख भेजा—

'इन दिनों गरचे दकिन में है बड़ी क़द्रे सुख़न,
कौन जाए 'ज़ौक़' पर दिल्ली की गलियाँ छोड़ कर।'

ज़ौक़ की रहन-सहन बड़ी सादा थी। ये हर वक़्त कविता में लीन रहते थे। इन्होंने बहुत-सी कविताएँ लिखी थीं, जो ग़दर की लूट-मार में नष्ट हो गईं। ये ग़ज़ल और क़सीदा दोनों के उस्ताद थे। इनकी ये दोनों चीज़ें पर्याप्त संख्या में मौजूद हैं। इन्होंने उर्दू को सम्हाल-सुधार कर बहुत परिमार्जित रूप दिया। मुहावरों और कहावतों का जितना सुन्दर प्रयोग इन्होंने किया, उतना इनसे पूर्व किसी ने न किया था। इनकी ग़ज़लों की भाषा बड़ी सरस और सरल है। उनमें गम्भीर, दार्शनिक भाव भी व्यक्त किये गए हैं। इनकी कविता में विषमता नहीं आने पाई, अर्थात् जिस सुन्दरता से ये किसी चीज़ का प्रारम्भ करते हैं, उसी से उसकी समाप्ति भी करते हैं। क़सीदा लिखने में तो 'सौदा' के बाद इन्हीं का स्थान है। वस्तुतः 'ज़ौक़' बड़े विद्वान् और कुशल कलाकार थे। उत्प्रेक्षा, उपमा और शब्द-योजना के आचार्य थे। 'ज़ौक़' की कविता स्वाभाविक है। उसमें बनावट को स्थान नहीं दिया गया। मधुर और सरस भाषा में कल्पना की ऊँची उड़ान बड़ी ही सुहावनी मालूम देती है। इनके कविता-पाठ का ढंग बड़ा आकर्षक था। सुनने वाले मन्त्र-मुग्ध-से हो जाते थे। 'ज़ौक़' बड़े अध्ययनशील थे। जो ग्रन्थ इन्होंने पढ़े, वे प्रायः सब

इन्हें उपस्थित थे। घटनाओं की तारीखें तक याद थीं। ये विविध विषयों पर घंटों बातें कर सकते थे। इनकी वक्तृत्वशक्ति भी ग़ज़ब की थी। कविता में इतने लीन रहते थे कि उन्हें मेले-झमेलों और तीज-त्योहारों की कुछ भी सुध-बुध न रहती थी। गरमी, जाड़े बरसात इत्यादि सभी ऋतुओं में एक ही कोठरी में खुरहरी खाट पर बैठे लिखते-पढ़ते रहते थे। मौ० आज़ाद के शब्दों में "जहाँ अव्वल रोज़ बैठे वहीं बैठे, और जभी उठे दुनिया से उठे।" कहा जाता है कि अपने मरने से कुछ घंटे पूर्व 'ज़ौक़' ने यह शेर कहा था—

"कहते हैं आज 'ज़ौक़' जहाँ से गुज़र गया,
क्या ख़ूब आदमी था ख़ुदा मग़फ़रत करे।"

'ज़ौक़' के सैकड़ों शिष्य थे, जिनमें नवाब मिर्ज़ाख़ाँ, 'दाग़', 'ज़फ़र', (प्रो०) 'आज़ाद', 'ज़हीर', 'अनवर' आदि मुख्य हैं। 'ज़ौक़' से सम्बन्ध रखने वाली ये पुस्तकें मिलती हैं—'क़साइद ज़ौक़', 'इन्तख़ाब ग़ज़लियात ज़ौक़', 'दीवाने ज़ौक़', दीवाने ज़ौक़ वग़ैरह'। 'ज़ौक़' के सम-सामयिकों में 'सहबाई', 'ममनून', 'आज़ुर्दा', 'शेफ़्ता', 'मोमिन', 'ग़ालिब' आदि हैं। 'ग़ालिब' और 'ज़ौक़' की नोक-झोंक प्रसिद्ध है। एक समय की बात है, जब मिर्ज़ा जवाँबख़्श के विवाह के अवसर पर 'ज़ौक़' और 'ग़ालिब' दोनों ने सेहरे लिखे। मिर्ज़ा ग़ालिब ने जो सेहरा लिख कर बादशाह की भेंट किया, उसका मक़्ता था—

"हम सुख़न फ़हम हैं ग़ालिब के तरफ़दार नहीं,
देखें इस सेहरे से कहदे कोई बेहतर सेहरा।"

बादशाह ने यह मक़ता पढ़ा तो उन्हें कुछ खटका, अतः उन्होंने 'ज़ौक़' से अनुरोध किया—'उस्ताद, आप भी सेहरा कहिये और मक़ते पर ग़ौर फ़रमाइए'। फिर क्या था, 'ज़ौक़' ने भी सेहरा लिख डाला और मक़ते में 'ग़ालिब' के मक़ते की तरफ़ इस तरह संकेत किया—

"जिसको दावा हो स.खुन का ये सुना दे उसको,
देखो इस तरह से कहते हैं स.खुनवर सेहरा।"

इसे पढ़ कर मिर्ज़ा 'ग़ालिब' समझ गये कि रंग बदल गया और कुछ का कुछ हो गया। इस पर ग़ालिब ने एक क़ता कहा, जिसका पहला शेर यह है—

"मंज़ूर है गुज़ारिशे अहवाल वाक़ई,
अपना बयाने हुस्न तबीयत नहीं मुझे।"

फिर क्या था, बात ख़त्म हो गई।

'अनवर'—सैयद शुजाउद्दीन 'अनवर' 'ज़हीर' के छोटे भाई थे। ये 'ज़ौक़' के शिष्य थे। 'ज़ौक़' के बाद अपनी कविता 'ग़ालिब' को दिखाने लगे थे। बड़े योग्य और होनहार कवि थे, परन्तु ३८ साल की उम्र में ही जयपुर में इनका देहान्त हो गया। इनके समय में इनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। इनके लिखे दो दीवान नष्ट हो गए, बड़े परिश्रम से ज्यों-त्यों कर एक दीवान संगृहीत हो पाया है, जो प्रकाशित भी हो गया है। इनकी कविता में 'ज़ौक़', 'ग़ालिब' और 'मोमिन' तीनों का कुछ-कुछ रंग है। यही इनकी कविता की विशेषता है।

'ज़हीर'—इनका नाम सैयद ज़हीरुद्दीन और उपनाम 'ज़हीर' था। ये जलालुद्दीन हैदर के बेटे थे। देहली में पैदा हुए थे। चौदह वर्ष की उम्र में ही 'ज़ौक़' का शिष्यत्व ग्रहण कर कविता करने लगे थे। ग़दर की लूट-मार के दिनों में इधर-उधर घूम-फिर कर बुलन्द-शहर पहुँच गए। वहाँ 'जलवए तूर' नामक पत्र का सम्पादन किया। ये रामपुर, टोंक, अलवर, जयपुर आदि स्थानों में भी रहे थे, और अन्त में हैदराबाद पहुँचे, जहाँ इनका देहान्त हुआ। इनके चार दीवान हैं, जिनमें से तीन छप चुके हैं। 'गुलिस्ताने स.खुन' नामक दीवान बहुत प्रसिद्ध है। यद्यपि 'ज़हीर' 'ज़ौक़' के शिष्य थे, परन्तु इन्हें शैली 'मोमिन' की पसन्द थी। इन्होंने कहा भी है—

"तर्ज़े 'मोमिन' से न आगाह था जब तक कि 'ज़हीर',
सच तो यह है कि कभी रंग ग़ज़ल ने न दिया।"

'ज़हीर' अपने समय के प्रसिद्ध शायर थे। कला और भाव दोनों ही दृष्टियों से इनकी कविता सुन्दर है। इनके शिष्यों में नज-मुद्दीन अहमद 'साक़िब' आदि मुख्य हैं।

'ग़ालिब'—इनका नाम मिर्ज़ा असदुल्लाख़ाँ और उपनाम 'ग़ालिब' था। ये मिर्ज़ा नौशह के नाम से भी प्रसिद्ध थे। ग़ालिब के दादा १७५६ ई० में समरक़न्द से हिन्दुस्तान आये। बादशाह शाह आलम की तरफ़ से इन्हें पहासू का परगना जागीर में दिया गया। 'ग़ालिब' के पिता का नाम अब्दुल्ला बेग ख़ाँ, उपनाम 'मिर्ज़ा दूल्हा' था। इनका विवाह आगरे के एक रईस ख़्वाजा ग़ुलाम हुसेन की लड़की से हुआ। यद्यपि ये फ़ौज में नौकर थे, तथापि अधिकतर अपनी ससुराल में ही रहा करते थे। 'ग़ालिब' का जन्म १७६७ ई० में आगरे में हुआ। इनका मकान आगरे में उस जगह था, जहाँ अब पीपलमंडी की सड़क पर 'काला महल' बना हुआ है। 'ग़ालिब' पाँच बरस के थे कि इनके पिता का देहान्त हो गया। इनके चचा नसरुल्लाबेग ख़ाँ ने इनका पालन-पोषण किया परन्तु तीन वर्ष बाद उनका भी देहान्त हो गया। इसके पश्चात् ग़ालिब की शिक्षा ननसाल में हुई। ये कुछ दिनों महाकवि 'नज़ीर' से भी पढ़े थे। तेरह वर्ष की आयु में इनका विवाह प्रसिद्ध कवि नवाब इलाहीबख़्श ख़ाँ 'मारूफ़' की लड़की से हुआ। मारूफ़ साहब लुहारू के जागीरदार नवाब अहमद बख़्श ख़ाँ के सगे भाई थे। नवाब इलाहीबख़्श देहली में रहते थे, अतः विवाह के पश्चात् 'ग़ालिब' का भी देहली आना-जाना शुरू हो गया। 'ग़ालिब' ने आगरे में ईरानी विद्वान् मुल्ला अब्दुस्समद से फ़ारसी पढ़ी। यह व्यक्ति पारसी से मुसलमान हुआ था।

१८१४ ई० के लगभग 'ग़ालिब' आगरा छोड़ कर देहली गए और जीवन-भर किराये के मकानों में रहते रहे। निज का मकान न

बना सके। 'ग़ालिब' के संतान तो हुईं, परन्तु वह जीवित न रहीं। इन्होंने जैनुल आबदीन ख़ाँ 'आरिफ़' नामक अपने एक निकट संबंधी को गोद ले लिया। इस पर ये बड़ा प्यार करते थे। 'ग़ालिब' को अपने चचा की जागीर से सात सौ रुपया सालाना मिलते थे, और वाजिदअली शाह बादशाह अवध के दरबार से पाँच सौ रुपया वार्षिक नियत थे। १८४२ ई० में 'देहली कालिज' के लिए फ़ारसी-अध्यापक की आवश्यकता हुई। उसके लिए गवर्नमेंट के सेक्रेटरी मिस्टर टामसन ने (जो पीछे लेफ़्टीनेण्ट गवर्नर हुए) 'ग़ालिब' को चुना और मुलाक़ात (इण्टरव्यू) के लिए बुलाया। 'ग़ालिब' पालकी में बैठकर मिलने पहुँचे और इस बात की प्रतीक्षा करने लगे कि साहब बहादुर उन्हें लेने के लिए आवें। परन्तु साहब 'ग़ालिब' को नौकरी का उम्मेदवार समझ कर न आये। इसे 'ग़ालिब ने अपनी मान-हानि समझा और ये नौकरी का विचार त्याग कर अपने घर चले आए। आख़िर इनके स्थान पर मौलवी इमामबख़्श सहबाई नियुक्त कर लिए गए।

'ग़ालिब' को चौसर खेलने का बड़ा शौक़ था। १८४८ ई० में जो शहर कोतवाल था, उसका 'ग़ालिब' से कुछ वैमनस्य था, अतः उसने जुआ खेलने के अपराध में इन्हें गिरफ़्तार कर लिया और छह महीने की क़ैद करा दी। परन्तु तीन महीने पश्चात् ये स्वयं मजिस्ट्रेट की रिपोर्ट पर छोड़ दिये गये। १८५० ई० में बादशाह बहादुर शाह 'ज़फ़र' ने ग़ालिब को 'तारीख़ें शाही' लिखने का काम सौंपा और 'नज्मुद्दौला दबीरुल मुल्क निज़ाम जंग' का ख़िताब दिया, ख़िलअत भी बख़्शी और पचास रुपये मासिक वेतन नियत कर दिया। १८५४ ई० में बादशाह के कविता-गुरु 'ज़ौक़' का देहान्त हुआ तो वह 'ग़ालिब' से अपनी कविता का संशोधन कराने लगे। इन्हीं दिनों रामपुर के नवाब यूसुफ़अली ख़ाँ ने 'ग़ालिब' की सौ रुपये मासिक वृत्ति नियत कर दी। १८४० ई० में नवाब साहब ने देहली रह कर 'ग़ालिब' से फ़ारसी पढ़ी थी और फिर इन्हें अपना कविता-गुरु

बना लिया था। नवाब यूसुफ़ अलीख़ाँ के बाद नवाब क़लबअलीख़ाँ भी 'ग़ालिब' को बराबर सौ रुपये मासिक देते रहे। इस वेतन के अतिरिक्त इन्हें रियासत की अ से और भी बहुत-सी चीज़ें भेंट की जाती थीं। १५ फ़रवरी १८६९ ई० को तिहत्तर वर्ष की आयु मे 'ग़ालिब' का देहान्त हुआ, और ये हज़रत सुल्तान निज़ामुद्दीन औलिया के दरगाह में दफ़न किये गए।

'ग़ालिब' बड़े मिलनसार थे। ये सच्चे मित्र, शुभचिन्तक, अध्यापक, आदरणीय वयोवृद्ध, प्रतिष्ठित नागरिक और सहृदय व्यक्ति थे। इनके मित्रों की बहुत बड़ी संख्या थी। ये सबके दुख-दर्द में सम्मिलित होते और सच्चे हृदय से सहानुभूति प्रकट करते थे। उदारता का यह हाल था अपनी सीमित आय में से बहुत-सा धन अपने मित्रों तथा दीन-दुखिओं को सहायता में व्यय कर देते थे। इसीलिए सदैव ऋणी बने रहते थे। मित्रों और शिष्यों से बराबर पत्र-व्यवहार रखते थे, जिससे उनके समाचारों से सूचित रहें। पत्रों के उत्तर तुरन्त देते थे। मरने से एक दिन पहले, जब थोड़ी देर के लिए बेहोशी दूर हुई तो 'ग़ालिब' ने नवाब अलाउद्दीन अहमदख़ाँ के पत्रोत्तर में जो ख़त लिखवाया उसमें एक वाक्य यह भी था—'मेरा हाल मुझसे क्या पूछते हो, एक-आध रोज़ में हमसायों (पड़ोसियों) से पूछना।'

एक बार 'ग़ालिब' लाट साहब के दरबार से ख़िलअत और तीन रत्न लेकर घर आए। जानते थे कि चपरासी और जमादार इनाम माँगने आवेंगे, इसलिये घर आते ही ख़िलअत और रत्न बाज़ार भेज दिये। चपरासी आए तो उनको बैठा लिया और बाज़ार से उक्त चीज़ों का मूल्य आने पर उन्हें इनाम देकर विदा किया। 'ग़ालिब' अतिथि-सत्कार के लिए प्रसिद्ध थे। पक्षपात इनके पास भी न फटकता था। हिन्दू-मुसलमान दोनों से समान व्यवहार करते थे। मुंशी हरगोपाल 'तुफ़्ता', मास्टर प्यारेलाल 'आशोब', मुंशी बिहारीलाल 'मुश्ताक़', बाबू हरगोविन्द सहाय, मुंशी शिवनरायन आदि अपने

हिन्दू शिष्यों से 'ग़ालिब' निरन्तर पत्र-व्यवहार करते रहते थे। सबसे अधिक पत्र इन्होंने मुंशी हरगोपाल को लिखे।

'ग़ालिब' बड़े स्वाध्यायशील थे, परन्तु ये पुस्तकें ख़रीदते न थे। पुस्तक-विक्रेताओं से किराये पर मँगाकर पढ़ा करते थे। काव्य, चिकित्सा, ज्योतिष, छन्द, आचारशास्त्र आदि विषयों में इनकी बड़ी रुचि थी। सूफ़ी साहित्य के तो ये प्रसिद्ध विद्वान् थे। कविता के सम्बन्ध में भी 'ग़ालिब' बड़े निष्पक्ष थे। सत्कविता की प्रशंसा करने में कभी संकोच न करते थे। 'ग़ालिब' और 'मोमिन' में ख़ूब नोक-झोंक रहती थी, यहाँ तक कि दोनों एक मुशायरे में सम्मिलित न होते थे। फिर भी ग़ालिब, मोमिन की कविता का ख़ूब आदर करते थे। मोमिन की मृत्यु पर जो १८५१ ई० में हुई, ग़ालिब ने बड़ी प्रभावपूर्ण रुबाई लिखी थी। 'मोमिन' का यह शेर—

'तुम मेरे पास होते हो गोया,
जब कोई दूसरा नहीं होता।'

'ग़ालिब' को बहुत पसन्द था। इसे सुनकर इन्होंने यहाँ तक कहा था! 'काश मोमिन मेरा सारा दीवान ले लेता और यह शेर मुझे दे देता।'

'ग़ालिब' बड़े विनोद-प्रिय थे। इनकी बात-बात में हास्य का पुट रहता था। इनके लतीफ़े प्रसिद्ध हैं। 'यादगारे ग़ालिब' नामक पुस्तक में इनके अनेक लतीफ़े दिये हुए हैं। 'ग़ालिब' की विनोद-प्रियता और सजीवता में अन्त समय तक अन्तर न आया था। ग़दर के बाद एक दिन तहक़ीक़ात के लिए 'ग़ालिब' करनल ब्राउन के सामने पेश हुए। साहब ने इनका हुलिया देखकर पूछा—'तुम मुसलमान हो?' यह बोले—'हुज़ूर आधा।' करनल ने कहा—'क्या मतलब?' बोले—'शराब पीता हूँ, सूअर नहीं खाता।' 'ग़ालिब' ने एक और अवसर पर कहा था कि 'मैंने किसी दिन नमाज़ नहीं पढ़ी और किसी दिन शराब नहीं छोड़ी, फिर मुझे मुसलमान क्यों समझते हो।' 'ग़ालिब'

शराब पीते थे, परन्तु इस दोष को छिपाते न थे। आम खाने का बड़ा शौक़ था। एक बार किसी ने ग़ालिब से आमों की प्रशंसा पूछी तो कहा—'बहुत हों और मीठे हों।'

'ग़ालिब' ने देहली के अन्तिम सम्राट् बहादुरशाह 'ज़फ़र' की आज्ञा से फ़ारसी में ख़ानदान तेमूर की तारीख़ लिखनी शुरू की थी। पहला ही भाग लिखा गया था कि ग़दर हो गया और वह तारीख़ अधूरी रह गई। और भी फ़ारसी की कई किताबें लिखीं। उर्दू में 'ऊदे हिन्दी' 'ग़ालिब' का लिखी हुई प्रसिद्ध पुस्तक है। 'रुक्क़ाते ग़ालिब' का पहला संग्रह ग़ालिब के जीवन में ही—अर्थात् इनके देहान्त से चार महीने पूर्व—प्रकाशित हुआ था। 'उर्दूए मुअल्ला' नामक 'ग़ालिब' की चिट्ठियों का दूसरा संग्रह इनके मरने के कुछ दिन पश्चात् १८६९ ई० में प्रकाशित हुआ। 'उर्दूए मुअल्ला' का दूसरा भाग १८९९ ई० में प्रकाशित हुआ। इस भाग में अधिकतर वे पत्र हैं, जिनमें 'ग़ालिब' ने लोगों को इसलाहें दी हैं, या शायरी के सम्बन्ध में कोई हिदायत दी है, अथवा कोई रहस्य बताया है। 'मकातीब ग़ालिब' चिट्ठियों का अन्तिम संग्रह है। इसमें वे पत्र हैं जो 'ग़ालिब' ने रामपुर के नवाबों को लिखे थे। इन पुस्तकों के अतिरिक्त इनकी लिखी और भी कई छोटी-मोटी पुस्तकें हैं। पुस्तकों की भूमिका और प्रशस्तियाँ लिखने में भी ये बड़े दक्ष थे।

'ग़ालिब' ने प्रारम्भ में अपना उपनाम 'असद' और फिर 'ग़ालिब' रक्खा। इनकी शायरी की बहुत जल्द धूम मच गई थी और देश के बड़े-बड़े लोगों को उसने अपनी ओर आकृष्ट कर लिया था। ये प्रायः पत्र-व्यवहार द्वारा अपने शिष्यों की कविताओं में संशोधन किया करते थे। इस कार्य के लिए ग़ालिब ने एक दफ़्तर-सा खोल रक्खा था। ये प्रेम और सहानुभूति की प्रतिमा थे। इनका मुख्य धर्म मानव-सेवा था। इनके मित्रों और शिष्यों में हिन्दुओं की संख्या कम न थी। ग़ालिब निष्कपट, स्पष्टवादी और उदारमना थे। अपने दोषों को सबके सामने कह डालते थे। स्वाभिमान इनमें कूट-कूट कर भरा

था। 'ग़ालिब' का जीवन प्रायः कष्टों का जीवन रहा। ग़दर में भी
इन्हें बड़े दुःख भोगने पड़े। उस समय ये संदिग्ध दृष्टि से देखे गये
और इनकी पेंशन ज़ब्त कर ली गई, परन्तु पीछे निर्दोष सिद्ध हुए।
अन्त में इनका स्वास्थ्य बिगड़ जाने के कारण शरीर रोगों का घर बन
गया था। आर्थिक दशा भी शोचनीय हो गई थी। इसीलिए इनकी
पिछली कविताओं में करुण रस अधिक है। कविताओं में अत्यन्त
सूक्ष्म और ऊँचे दर्जे के हास्य का पुट भी पाया जाता है। ये बड़ी से
बड़ी विपत्ति को हँसकर सह लेते थे। इनका कहना है—

'रंज का ख़ूगर हुआ इन्साँ तो मिट जाता है रंज,
मुश्किलें इतनी पड़ीं मुझ पर कि आसाँ हो गईं,

कवियों में 'ग़ालिब' का स्थान बहुत ऊँचा है। इनकी प्रतिभा
प्रखर और विद्वत्ता व्यापक थी। इन्हें अपने फ़ारसी पांडित्य का बड़ा
अभिमान था और ये अपनी फ़ारसी कविता की बड़ी क़द्र करते थे।
परन्तु इनकी ख्याति उर्दू कविता से ही हुई। प्रारम्भ में इनकी उर्दू
कविताएँ बड़ी कठिन होती थीं, परन्तु फिर इन्होंने सरल उर्दू लिखनी
शुरू की जिसके कारण ये और भी अधिक लोकप्रिय हुए। 'ग़ालिब'
छन्दः शास्त्र के आचार्य थे। इनकी शैली, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि
सब ही में मौलिकता है। कविता में अनूठे भाव भरे पड़े हैं। इनकी
कविता सर्वसाधारण की चीज़ नहीं बन सकी, क्योंकि उसमें दार्शनिक
भाव अधिक हैं। भावों के सुन्दर और शुद्ध चित्रण के लिए ग़ालिब
प्रसिद्ध हैं। ये जीवन की विविध समस्याओं पर दार्शनिक ढङ्ग से
विचार करते हैं। कविता में अपना हृदय निकाल कर रख देते हैं।
गम्भीर और दार्शनिक भावों को बड़ी सुन्दरता और सरलता से व्यक्त
करते हैं। 'ग़ालिब' साहित्याकाश के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। इनकी
कविताओं से उर्दू भाषा समृद्ध और धन्य हुई। 'ग़ालिब' की तुलना
संसार के किसी भी बड़े कवि से की जा सकती है। ये कुछ दिनों के
लिए अपने शिष्य नवाब रामपुर द्वारा बुलाए जाने पर रामपुर भी
चले गए थे। वृद्धावस्था में ये बहरे हो गये थे। अतः चुपचाप पड़े

रहते और किसी से बात करनी होती तो लिखकर कर लेते। मरने से कुछ समय पहले इन्होंने कहा था—

'दमे वापसीं बरसरे राह है,
अज़ीज़ो, अब अल्ला ही अल्लाह है।'

'ग़ालिब' की गद्य पुस्तकों का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। कविताओं का संग्रह 'दीवाने उर्दू' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त 'ग़ालिब' के लिखे फ़ारसी भाषा के अनेक काव्य-ग्रन्थ हैं, जिनकी बड़ी प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि है। 'ग़ालिब' के सैकड़ों शिष्यों में से 'मजरूह', 'सालक', 'हाली', 'तुफ़्ता' आदि मुख्य हैं। इनके सब-से अधिक प्रसिद्ध शिष्य मौलाना अल्ताफ़ हुसेन 'हाली' हैं। 'ग़ालिब' साहित्यिक शास्त्रार्थों या विवादों में बड़ी विद्वत्ता से प्रवृत्त होते थे। इनके ये ऐतिहासिक मुबाहिसे छप भी चुके हैं। उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त 'ग़ालिब' से संबंध रखने वाली नीचे लिखी पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। 'यादगारे ग़ालिब'—इसमें 'ग़ालिब' की जीवनी और उनकी चुनी हुई कविताओं की आलोचना है। 'ग़ालिब'—यह ग़ालिब की प्रामाणिक जीवनी है। 'ग़ालिब नामा', 'ज़िक्रे ग़ालिब', 'ग़ालिब की शायरी', 'सद कलाम ग़ालिब'। 'ग़ालिब' की कविताओं पर विद्वानों ने भाष्य भी किये हैं।

'मजरूह'—मीर महदी 'मजरूह' मीर हुसेन के बेटे और देहली के रहने वाले थे। 'ग़ालिब' के सब से प्रिय शिष्य थे। ये अलवर-नरेश महाराज शिवधानसिंह के आश्रित रहे, फिर रामपुर चले गए और वहाँ इनकी शायरी की बहुत क़द्र हुई। वहाँ इन्होंने अपना 'मज़हर मानी' नामक दीवान छपवाया। ये छोटे-छोटे छन्दों में बड़ी सरल, सरस और सारगर्भित कविता करते थे। भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था। इनकी रचनाओं में भावों की नवीनता या मौलिकता की कमी है। परन्तु वे पिंगल के दोषों से मुक्त हैं। 'मजरूह' उर्दू कविता के अन्तिम युग के स्तम्भों में से हैं। इन्होंने उर्दू की

प्राचीन पद्धति को बड़ी सुन्दरता और योग्यता से निबाहा है। 'ग़ालिब' से इनके बहुत अच्छे सम्बन्ध थे, 'हाली' भी इनका आदर करते थे।

'सालक'—मिर्ज़ा .कुरबान अली बेग 'सालक' नवाब मिर्ज़ा आलम बेग के बेटे थे। हैदराबाद में पैदा हुए और शिक्षा देहली में पाई। पहले '.कुरबान' उपनाम था, और 'मोमिन' से इसलाह लेते थे। उनके पश्चात् 'ग़ालिब' को गुरु बनाया एवम् 'सालक' उपनाम रक्खा। ग़दर के समय दिल्ली से अलवर चले गए। वहाँ कुछ दिनों वकालत की, इसके बाद हैदराबाद गए। वहाँ 'मख़ज़नुल फ़वायद' नामक पत्र का सम्पादन किया। १८७२ ई० में हैदराबाद ही में इनका देहान्त हुआ।

'सालक' के दीवान का नाम 'हंजार सालक' है। ये ग़ालिब के प्रसिद्ध शिष्यों में से थे। भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से इनकी कविता बहुत अच्छी है। मौलिकता की कमी है। इन्होंने देहली की तबाही का बड़ा ही करुण वर्णन किया है। 'ग़ालिब' की मृत्यु पर इनका लिखा मरसिया भी बड़ा करुणापूर्ण है।

ज़की—इनका नाम नवाब सैयद मुहम्मद ज़करिया ख़ाँ रिज़वी और उपनाम 'ज़की' था। १८३९ ई० में देहली में पैदा हुए। ये नवाब सैयद मुहम्मदख़ाँ के बेटे और नवाब आज़मुद्दौला मीरमुहम्मद ख़ाँ 'सरूर' के धेवते थे। उक्त दोनों साहब भी अच्छे शायर थे। इन लोगों के लिखे दीवान हैं। 'सरूर' का लिखा तो रेख़्ता के शायरों का एक तज़किरा भी है।

'ज़की' अरबी और फ़ारसी के विद्वान् थे। चिकित्सा, ज्योतिष, संगीत आदि में भी इनकी अच्छी गति थी। इनके कविता-गुरु 'ग़ालिब' थे। 'ग़ालिब' से इनका कुछ रिश्ता भी था। ये जिस मुशायरे में पहुँच जाते, उसमें रंगत आजाती थी। इनकी कविता में नये-नये भावों की प्रधानता है। अन्तिम समय में ये बदायूँ में मदरसों के

डिप्टी इन्सपेक्टर थे। वहीं से पेन्शन ली। १९०३ ई० में इनका देहान्त हुआ।

'ज़की' का दीवान इनके जीवन में ही प्रकाशित हो गया था। ये कविता की प्राचीन पद्धति के उस्ताद माने जाते थे। इनके अनेक शिष्य हैं, जिनमें 'फ़रहंगे आसफ़िया' के प्रणेता मौलवी सैयद अहमद और पं० जवाहर कौल 'साक़ी' मुख्य हैं।

'रख़शाँ'—इनका नाम ज़याउद्दीन अहमद ख़ाँ और उपनाम 'रख़शाँ' तथा 'नैयर' था। ये नवाब अहमद बख़्शख़ाँ, रईस लुहारू के छोटे बेटे थे। 'ग़ालिब' के शिष्य थे, और उनसे इनकी रिश्तेदारी भी थी। 'रख़शाँ' अपने समय के प्रतिष्ठित विद्वानों और कवियों में समझे जाते थे। ये कविता-मर्मज्ञ तो थे ही, इतिहास के भी बड़े प्रेमी थे। १८६९ ई० में इनका देहान्त हुआ।

'रख़शाँ' के बड़े बेटे नवाब शहाबुद्दीन अहमद ख़ाँ 'साक़िब' भी उर्दू तथा फ़ारसी दोनों में अच्छी कविता करते थे। ये भी 'ग़ालिब के शिष्य थे। छोटे बेटे नवाब सैयदुद्दीन अहमदख़ाँ 'तालिब' भी सुकवि थे। ये 'सालक' और 'हाली' से इसलाह लेते थे। 'साक़िब' के बेटे मिर्ज़ा शुज़ाउद्दीन अहमद ख़ाँ 'ताबाँ' भी अच्छी कविता करते थे। ये 'शादाँ' और 'दाग़' के शिष्य थे। इनके दो दीवान भी हैं।

'आज़ुर्दा'—मुफ़्ती सदरुद्दीन ख़ाँ 'आज़ुर्दा' अपने समय के बहुत बड़े विद्वान् और साहित्यिक हो गए हैं। ये मौलवी लुतफ़ुल्ला कश्मीरी के बेटे थे। अरबी, फ़ारसी और उर्दू के विद्वान् थे। बहुत बड़े सरकारी पद पर प्रतिष्ठित थे। रामपुर के नवाब यूसुफ़ अली ख़ाँ और भूपाल के नवाब सदीक़ हसन ख़ाँ ने इनको अपना कविता-गुरु बनाया था। सर सैयद अहमदख़ाँ भी इनके शिष्य थे। अध्ययन-अध्यापन में इनकी बड़ी रुचि थी। सरकारी काम से अवकाश मिलने पर स्वयं पढ़ते और अपने शिष्यों को पढ़ाते थे। 'ग़ालिब', 'मोमिन', 'जौक़,' 'शेफ़्ता' आदि इनके मित्र थे। ग़दर में इनकी भी आधी जागीर

ज़ब्त कर ली गई थी। ये अरबी, फ़ारसी और उर्दू तीनों भाषाओं में कविता करते थे। अपनी कविताओं में 'नसीर', मुजरिम' और 'ममनून' से इसलाह लिया करते थे। इनकी कविता अत्यन्त स्पष्ट, सरस, सरल और प्रभावशालिनी है। इनका कोई दीवान नहीं है। 'आज़ुर्दा' ने उर्दू शायरों का एक तज़किरा भी लिखा था, जो अब नहीं मिलता। इनकी प्रसिद्धि अधिकतर पाण्डित्य के कारण हुई।

'आरज़ू'—सैयद अनवर हुसेन साहब 'आरज़ू' लखनऊ के रहने वाले थे। ये सैयद ज़ाकर हुसेन के बेटे और 'जलाल' के शागिर्द थे। इनकी गणना लखनऊ के मशहूर शायरों में थी। पहले 'उम्मेद' उपनाम था फिर 'आरज़ू' रक्खा। ये छन्दः शास्त्र के अच्छे विद्वान् थे। काव्य की प्रत्येक दिशा में इनकी अच्छी गति थी। ये लखनऊ-निवासी होकर भी कविता की देहली-शैली के अनुयायी थे। इनकी कविता प्रत्येक दृष्टि से अच्छी है। नाटक लिखने की ओर भी इनकी प्रवृत्ति रही। मरसिया लिखने में भी इन्होंने अच्छी सफलता प्राप्त की थी।

'अहसान'—अहसान अली ख़ां 'अहसान' क़ासिम अली ख़ाँ के बेटे थे। १७६८ ई० में बरेली ज़िले के एक गाँव में पैदा हुये। फिर अपने पिता के साथ शाहजहाँपुर चले गए और वहीं पढ़े-लिखे। ये कविता में 'जलाल' के शागिर्द थे। सरकारी नौकरियाँ करके इन्होंने शाहजहाँपुर में मुख़्तारी शुरू की। 'गुलदस्ता अरमुग़ाँ' नामक पत्र निकाला। इनका दीवान 'ख़ुमकदा ख़याल' अच्छी कविताओं का संग्रह है। इन्होंने और भी कई किताबें लिखी हैं। इनकी कविता में कोई विशेषता नहीं है।

अमीर—इनका नाम मुंशी अमीर अहमद मीनाई और उपनाम 'अमीर' था। ये मौलवी करम मुहम्मद के बेटे थे। १८२८ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई, फिर मदरसे में दाख़िल हुए। इन्होंने अरबी-फ़ारसी का अध्ययन किया था,

चिकित्सा और ज्योतिष में भी अच्छी गति थी। कविता की ओर अमीर की बचपन से ही प्रवृत्ति रही। इनके कविता-गुरु 'असीर' थे। उस समय लखनऊ में सर्वत्र शायरी की धूम थी। 'आतिश' और 'नासिख़' के मुबाहिलों—मुशायरों तथा 'अनीस' और 'दबीर' की प्रतिद्वन्द्विताओं ने इनकी तबीयत पर बहुत प्रभाव डाला, जिसका फल यह हुआ कि 'अमीर' की प्रतिभा एकदम जाग्रत् हो उठी और चारों ओर इनकी ख्याति फैल गई। १८५२ ई० में वाजिदअली शाह ने इन्हें अपने दरबार में बुलाकर इनकी कविताएँ सुनीं। उनकी प्रेरणा से इन्होंने 'इरशादुल सुल्तान' तथा 'हिदायतुल सुल्तान' नामक दो पुस्तकें लिखीं, जिनके उपलक्ष्य में इन्हें अच्छा पुरस्कार दिया गया। १८५७ ई० में जब अवध की नवाबी ख़त्म हो गई, तब ये रामपुर चले गये। वहाँ नवाब यूसुफ़ख़ाँ ने इनकी ख़ूब आव-भगत की। रामपुर में ये ४३ वर्ष बड़े सुख से रहे। इन दिनों कभी-कभी 'ग़ालिब' रामपुर आया करते थे। इसके पश्चात् निज़ाम साहब के बुलाने पर 'अमीर' हैदराबाद चले गये, परन्तु वहाँ जाते ही अस्वस्थ हो गए और कुछ काल बीमार रह कर ७२ वर्ष की आयु में (१९०० ई० में) इनका देहान्त हुआ।

जिस समय 'अमीर' हैदराबाद गए, उस समय 'दाग़' और पं० रतननाथ 'सरशार' भी वहीं थे। ये 'दाग़' के मकान पर ही ठहरे। उन्होंने इनकी बीमारी में बड़ी सहानुभूति से परिचर्या की। 'अमीर' ने कितनी ही पुस्तकें लिखी थीं, जो ग़दर के समय नष्ट हो गईं। एक बार इनके घर में आग लग जाने से भी बहुत-से काग़ज़-पत्र जल गए थे। 'अमीर' कवि भी थे और विद्वान् भी। साहित्य-संसार में इनकी बड़ी ख्याति थी। इनकी प्रारम्भिक कविताएँ सदोष और कवित्व गुण से हीन हैं। आगे चल कर तो ये बहुत ऊँचे कवि हो गये। फिर तो इनकी कविता में शब्द-सौन्दर्य और भाव-गाम्भीर्य की कमी न रही। प्रत्येक दिशा में इनकी प्रतिभा जागरूक थी। इनकी कविता में सरलता, स्वाभाविकता और प्रवाह की प्रचुरता है। सूफ़ियाना भावों की भी

उसमें ख़ूब झलक है। शब्दाडम्बर बहुत कम है। कल्पना की सूक्ष्मता और भावों की उच्चता प्रशंसनीय है। भाषा पर 'अमीर' का पूर्ण अधिकार था। इन्होंने अपनी कविता में कोई अशिष्ट शब्द या अश्लील भाव नहीं आने दिया। न किसी के लिए कोई निन्दात्मक कविता लिखी। ये व्यर्थ के वाद-विवाद में न पड़ते थे, साहित्यिक समस्याओं के सम्बन्ध में कोई कुछ पूछता तो बड़ी निष्पक्षता और नम्रता से अपना मत प्रकट कर देते। ये बड़े सहृदय और मिलनसार थे। इनका पद उर्दू कवियों में बहुत ऊँचा है। इनकी लिखी 'अमीरुल लुग़ात' की केवल दो जिल्दें तैयार हो सकीं, जिनसे 'अमीर' की विद्वत्ता का परिचय प्राप्त होता है। 'अमीरुल लुग़ात' बड़ा महत्व-पूर्ण ग्रन्थ है। इनके शिष्यों की संख्या सैकड़ों थी, जिनमें कितने ही तो बहुत प्रसिद्ध हुए। 'अमीर' और 'दाग़' की ख़ूब पटती थी, दोनों में बड़ा स्नेह था। 'अमीर' की कुछ पुस्तकों के नाम—'मरातुल ग़ैब,' उर्दू ग़ज़लों और क़सीदों का दीवान। 'सनमख़ानए इश्क़', 'नूरे तजल्ली' और 'अब्रोकरम' (मसनविय), 'सुबहे अज़ल', 'इन्तख़ाब यादगारे रामपुर', इसमें रामपुर-दरबार के कवियों का वर्णन है। 'जौहरे इन्तख़ाब', 'गौहरे इन्तख़ाब', 'इसरारे नज़्म', 'बहारे हिन्द'—उर्दू मुहावरों व शब्दों का संक्षिप्त कोश। 'सुरमए बसीरत'—इसमें अरबी और फ़ारसी के वे शब्द हैं जिनका उर्दू में अशुद्ध प्रयोग किया जाता है।

'अमीर' को चिट्ठी लिखने का बड़ा शौक़ था। इनके ख़त बड़े रोचक हैं। इन चिट्ठियों से इनके स्वभाव और चरित्र की बहुत-सी बातें मालूम होती हैं, कितनी ही साहित्य सम्बन्धी बातों पर भी प्रकाश पड़ता है।

'दाग़'—इनका नाम नवाब मिर्ज़ाख़ाँ और उपनाम 'दाग़' था। १८३१ ई० में दिल्ली में पैदा हुए। इनके पिता नवाब शम्सुद्दीन ख़ाँ लुहारू के नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ के छोटे भाई थे। १८३७ ई० में इनके पिता का देहान्त हुआ। जब 'दाग़' की उम्र छह-सात साल की

थी कि इनकी माँ ने बादशाह बहादुर शाह 'ज़फ़र' के लड़के मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान उर्फ़ मिर्ज़ा फ़ख़ के साथ विवाह कर लिया और 'शौकत महल' की उपाधि पाई। 'दाग़' भी मा के साथ महल में रहने लगे, जो लाल क़िले के नाम से प्रसिद्ध था। वहीं अरबी और फ़ारसी की शिक्षा प्राप्त की। 'ग़यासुल लुग़ात' के रचयिता मौलवी ग़यासुद्दीन रामपुरी से फ़ारसी पढ़ी। सैनिक शिक्षा भी पाई और सुलेखन-कला का भी अभ्यास किया। उस समय क़िले में कविता की ख़ूब चर्चा रहती थी। 'ग़ालिब', 'ज़ौक़' 'आज़ुर्दा', 'सहबाई' आदि बड़े-बड़े कवि जमा होते थे। 'दाग़' पर भी इनका असर पड़ा और ये भी कविता करने लगे। बादशाह और मिर्ज़ा फ़ख़ दोनों ज़ौक़ के शागिर्द थे। 'दाग़' भी उनके शिष्य हो गए। कविता में दाग़ की स्वाभाविक प्रवृत्ति थी ही, अतः ये बहुत जल्द आकर्षक और प्रभाव-पूर्ण कविता करने लगे। दरबार तक इनकी पहुँच हो गई और वह इनकी कविता से गूँजने लगा। बादशाह 'दाग़' की कविता सुन कर मुग्ध हो जाते और भरपेट प्रशंसा करते। फिर क्या था, 'दाग़' की ख्याति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। ये अपने उस्ताद 'ज़ौक़' के साथ मुशायरों में भी जाने लगे। १८५६ ई० में मिर्ज़ा फ़ख़ का देहान्त हो गया, इससे 'दाग़' की मा को क़िला छोड़ना पड़ा। 'दाग़' भी मा के साथ चले आए। इस समय इनकी आयु पच्चीस वर्ष के लगभग थी। १८५७ ई० में ग़दर हो गया, दिल्ली में भगदड़ मच गई। 'दाग़' भी जान बचाकर अपने परिवार-सहित रामपुर पहुँचे। वहाँ के नवाब यूसुफ़अली ख़ाँ ने 'दाग़' की बड़ी आव-भगत की और इन्हें आश्रय दिया। नवाब यूसुफ़अलीख़ाँ के मरने के बाद उनके पुत्र क़लबअली ख़ाँ बादशाह हुए। उन्होंने भी 'दाग़' का बड़ा आदर-सत्कार किया। 'दाग़' को अस्तबल की देख-भाल का काम सौंपा गया, जिसे इन्होंने बड़ी ख़ूबी से किया। घोड़ों की नस्लों और बीमारियों का 'दाग़' को ख़ूब अनुभव तथा ज्ञान हो गया था। रामपुर के शाही मुशायरे 'दाग़' के प्रबन्ध से ही होते थे। ये नवाब साहब के साथ हज भी गए

और इन्हीं दिनों पटना, कलकत्ता, दिल्ली आदि की भी यात्रा की। १८८६ ई० में नवाब कुलबअलीख़ाँ का देहान्त हो गया, इससे वहाँ का कवि-समाज उजड़ गया।

रामपुर में चौबीस साल बड़े सुख तथा गौरव के साथ बिता कर 'दाग़' दिल्ली आए और फिर १८८८ ई० में हैदराबाद चले गए। मार्ग में जिन-जिन स्थानों में ठहरते गए, उन-उन में इनके शिष्य भी बनते गए। हैदराबाद पहुँचने पर वहाँ के निज़ाम नवाब महबूबअली ख़ाँ 'आसफ़' ने इन्हें अपना मुसाहिब 'पार्शद' बनाया। पहले वेतन ४५०) मिला, फिर १०००) और अन्त को १५००) मिलने लगा। 'बुल-बुले हिन्दुस्तान', 'जहाँ उस्ताद', 'नाज़िम यारजंग', 'दबीरुद्दौला', 'फ़सीहुल मुल्क' आदि ऊँची उपाधियाँ भी प्रदान की गईं। हैदराबाद में ये अठारह वर्ष रहे। वहाँ इनको सबसे अधिक सुख और गौरव प्राप्त हुआ। सैकड़ों शिष्य बन गए। मुशायरों की धूम मच गई। 'दाग़' की लोक-प्रियता का ठिकाना न रहा। उर्दू कविता में प्राण-सञ्चार कर अन्ततः १९०५ ई० में हैदराबाद में ही 'दाग़' का देहान्त हुआ।

'दाग़' बड़े मिलनसार, हँसमुख और सरल स्वभाव के थे। स्वाभिमानी भी ख़ूब थे। किसी की ख़ुशामद या चापलूसी न करते थे। किसी की 'हजो' (निन्दात्मक कविता) भी कभी नहीं लिखी। वाद-विवाद में न पड़ते थे। अपने समय के सर्वश्रेष्ठ शायरों में से थे। इनकी कविता बड़ी सरल, सरस और स्वाभाविक है। शैली में चपलता और विशेष प्रकार का बाँकपन है। इनकी कविता में व्यर्थ की अतिशयोक्तियाँ और ऊटपटाँग उपमाएँ नहीं हैं। कविता सजीव और नपे-तुले शब्दों से सुसज्जित है। उसमें मानव-हृदय का बड़ा अच्छा चित्रण किया गया है। मुहावरों और शब्द-सौन्दर्य की विशेषता है। शृङ्गार सम्बन्धी भावों की प्रचुरता ने कविता को बहुत लोक-प्रिय बना दिया है। भाव-गाम्भीर्य और कल्पना की उच्चता में कमाल किया है। 'दाग़' ने प्रेम-समस्या का लौकिक दृष्टि से बड़ा

अच्छा विवेचन किया है। इनकी कविता में दार्शनिकता बहुत कम है। कहीं-कहीं शृङ्गार का अत्यधिक पुट आ गया है। 'दाग़' ने बहुधा लम्बे और कठिन छन्दों का प्रयोग किया है। अधिकांश कविताएँ आशिक़ाना हैं, अतः उनमें रसिकता की प्रधानता है। ये नई शैली के प्रवर्त्तक थे। यों तो 'दाग़' ने कसीदा, रुबाई, मसनवी आदि सभी कुछ लिखा है, परन्तु ग़ज़ल लिखने वालों में इनका बहुत ऊँचा स्थान है। इनके चार दीवान हैं, 'गुलज़ारे दाग़,' 'आफ़तावे दाग़', 'दीवाने दाग़' और 'माहतावे दाग़'। इन दीवानों में दाग़ की प्रसिद्ध और मार्के की ग़ज़लें संगृहीत हैं। 'फ़रियादे दाग़' नामक एक मसनवी है। 'कमाले दाग़' में 'दाग़' को चुनी हुई कविताएँ और उनकी आलोचनात्मक व्याख्याएँ हैं। 'दाग़' और 'हयाते दाग़' नामक इनकी जीवनियाँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके शिष्यों ने डाक्टर सर मुहम्मद इक़बाल, 'नूह' नारवी, 'जिगर' मुरादाबादी, 'वे.खुद' देहलवी, 'अहसन' मारहरवी, 'आग़ा शायर' देहलवी आदि मुख्य हैं।

'जलाल'—हकीम सैयद जामनअली 'जलाल' १८३१ ई० में लखनऊ में पैदा हुये। हकीम असग़रअली दास्तानगो के बेटे थे। इनकी बचपन से ही कविता में रुचि थी। 'रश्क' के शिष्य थे। लखनऊ पर आपत्ति आने पर रामपुर चले गए और वहाँ २० बरस रहे। जब रामपुर के नवाब यूसुफ़अलीख़ाँ और उनके बेटे नवाब क़लब अलीख़ाँ का देहान्त हो गया तो ये मंगरौल (काठियावाड़) चले आए और वहाँ से फिर लखनऊ गए। लखनऊ में ७६ वर्ष की आयु में २ अक्टूबर १९०९ ई० को देहान्त हुआ। इन्होंने चार दीवान रचे और भी कई किताबें लिखीं। इन्हें भाषा-विज्ञान में बड़ी रुचि थी। शब्दों की खोज .खूब करते थे। बड़े स्पष्टवादी और स्वाभिमानी थे। लखनऊ की कविता-शैली के अनुयायी थे। इनकी कविता निर्दोष है, परन्तु उसमें कुछ नवीनता नहीं है। फड़कते हुए शेर बहुत कम हैं। इनके शिष्यों में 'कमाल', 'यास', 'आरज़ू', 'अहसान' आदि

प्रसिद्ध हैं। इनकी लिखी 'मुन्तख़िबुल क़वायद' नामक पुस्तक में हिन्दी शब्दों की उत्पत्ति दी गयी है। 'सरमाया ज़बान उर्दू' में उर्दू महावरे और परिभाषाएँ हैं। इनके बनाये उर्दू के दो शब्द-कोष भी हैं। 'मुफ़ीदुल शुअरा' और 'रिसाला दस्तूरुल फ़सहा' इनकी लिखी छन्द शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकें हैं।

'तसलीम'—मुंशी अमीरुल्ला 'तसलीम' १८२० ई० में फ़ैज़ाबाद ज़िले में पैदा हुए। इनके पिता का नाम मौलवी अब्दुल समद था। 'तसलीम' पीछे लखनऊ में रहने लगे थे। ये अरबी-फ़ारसी के अच्छे विद्वान् तथा सुलेखन-कला में बड़े प्रवीण थे। 'नसीम' देहलवी इनके कविता-गुरु थे। लखनऊ में रहकर भी ये देहली-शैली के अनुयायी थे। पहले 'तसलीम' फ़ौज में नौकर थे, फिर दरबारी शायरों में इनकी नियुक्ति हो गई। लखनऊ पर आपत्ति आने के समय ये रामपुर चले गए और शान्ति हो जाने पर फिर लखनऊ आगए। अबकी बार इन्होंने लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस में नौकरी की। कुछ दिनों पश्चात् नवाब कलबअलीख़ाँ के शासन-काल में ये फिर रामपुर गए और वहाँ मदरसों के डिपुटी इन्सपेक्टर हो गए। ९१ वर्ष की आयु में १९११ ई० में रामपुर में ही इनका देहान्त हुआ।

'तसलीम' कुछ दिनों टोंक और मंगरौल में भी रहे थे। इनकी कविता अत्यन्त सरल, स्वाभाविक और प्रभाव-पूर्ण है। मसनवियाँ बहुत सुन्दर हैं। इनके लिखे कुछ क़सीदे भी अच्छे हैं। ग़ज़लें ख़ूब हैं। 'तसलीम' को अपने जीवन में अत्यधिक आर्थिक संकट सहने पड़े, परन्तु इनके जीवन की सरसता में ज़रा भी कमी नहीं आई। इनके शिष्यों में 'हसरत' (मुहानी), मुहम्मद इसमाईल, 'सब्र' आदि मुख्य हैं। इनकी पुस्तकें निम्नलिखित हैं:—'नज़्म अरज मन्द', 'नज़्म दिल अफ़रोज़', 'दफ़्तर ख़याल।' इनके सिवा इनका एक अप्रकाशित दीवान भी बताया जाता है। इनकी मसनवियों के नाम—'नालए तसलीम', 'शाम गरेबाँ', 'सुबह ख़न्दाँ', 'दिलोजान', 'नग़मए

बुलबुल', 'शौकते शाहजहाँ', 'गौहरे इन्तखाब', 'तारीख़ रामपुर।' इनके अतिरिक्त इन्होंने नवाब रामपुर की योरोप-यात्रा कविता में लिखी है, जिसमें बीस-पच्चीस हज़ार शेर हैं।

'हाली'—इनका नाम ख़्वाज़ा अल्ताफ़ हुसेन और उपनाम 'हाली' था। १८३७ ई० में पानीपत के एक प्रतिष्ठित अंसारी परिवार में पैदा हुये। इनके पिता ख़्वाजा ईज़दबख़्श सरकारी नमक के महकमे में मुलाज़िम थे। 'हाली' के पूर्वज तो धन-धान्य से सम्पन्न थे, परन्तु इनके पिता के समय में निर्धनता आ गई थी और वे निर्धन-अवस्था में ही 'हाली' को नौ साल का छोड़कर काल-कवलित हुए। फिर 'हाली' की शिक्षा का प्रबन्ध इनके बड़े भाई और बहन ने किया। प्रथम इन्हें 'कुरान' कंठ कराया, फिर अरबी और फ़ारसी की शिक्षा दी गई। १७ वर्ष की आयु में इनकी इच्छा के विरुद्ध इनका विवाह कर दिया गया। उस समय ये और अधिक पढ़ने के विचार से चुप-चाप देहली चले आये और वहाँ मौलवी नवाजिश अली से अरबी पढ़ी। इन दिनों 'देहली कालिज' बड़ी उन्नति पर था। परन्तु 'हाली' प्राचीनता-प्रेमी होने के कारण उसमें पढ़ने के लिए न गए और न वहाँ के किसी विद्यार्थी से ही मिले। 'हाली' अपने देहली-प्रवास में मिर्ज़ा 'ग़ालिब' की सेवा में उपस्थित हुआ करते थे। 'ग़ालिब' की आदत थी कि वे अपने मित्र-मिलापियों को कविता करने की सलाह न देते थे। परन्तु हाली ने जो उर्दू-फ़ारसी की एक-आध ग़ज़ल उनको सुनाई तो वे बड़े प्रसन्न हुए, और कहने लगे—'हाली', यद्यपि मैं किसी को कविता करने की अनुमति नहीं दिया करता, परन्तु तुम्हारे सम्बन्ध में मेरी धारणा है कि यदि तुम कविता न करोगे तो अपनी प्रतिभा पर अत्याचार करोगे।' उस समय 'हाली' को देहली में बहुत कविता लिखने का अधिक अवसर न मिला। ये घरवालों के आग्रह से १८५५ ई० में पानीपत चले आए और स्वाध्याय में समय बिताने लगे। फिर हिसार की कलक्टरी कचहरी में साधारण-सी नौकरी कर ली जो १८५७ में ग़दर हो जाने के कारण छूट गई।

भाव भरे। स्त्रियों की दशा सुधारने का प्रयत्न किया और मुसलमानों में जीवन डालने वाली भावनाएँ जगाईं। 'हाली' ने वृद्धावस्था में गम्भीर दार्शनिक विषयों पर भी कविताएँ कीं। इनकी कुछ किताबों का परिचय नीचे दिया जाता है—

'तास्सुब और इंसाफ़ का मुनाज़िरा,' 'रहम व इंसाफ़,' 'बरखा रुत,' 'निशाने उम्मेद,' 'हुब्बेवतन,' 'मुसद्दसे हाली,' 'शिकवहे हिन्द,' 'कुल्लियात हाली,' 'दीवान हाली,' 'मुनाजात बेवा', 'चुप की दाद,' 'ग़ालिब और हकीम मुहम्मद ख़ाँ के मरसिये,' 'देहली की तबाही का मरसिया', 'मजमूआ नज़्म हाली', 'मजमूआ नज़्म फ़ारसी', 'शेरो शायरी', (काव्यकला पर बड़ा आलोचनात्मक निबन्ध है)। 'हाली' की मसनवियाँ बहुत लोक-प्रिय हुईं। 'मुसद्दसे हाली' तो इनकी सबसे प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण काव्य-पुस्तक है। इसने मुसलमानों में नया जीवन भर दिया है। 'शिकवहे हिन्द' में भी मुसलमानों के गत गौरव का वर्णन कर उनमें जागृति के भाव भरे हैं। 'मुनाजाते बेवा' में विधवाओं की दुर्दशा का बड़ा ही कारुणिक और हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किया गया है। इसके तो कई भाषाओं में तर्जुमे हो चुके हैं। संस्कृत में भी पद्यानुवाद हुआ है। 'चुप की दाद' में स्त्रियों की विशेषताओं और उनके कर्त्तव्याकर्त्तव्य का वर्णन है। 'दीवाने हाली' के प्रारम्भ में विद्वत्तापूर्ण साहित्यिक उपोद्घात द्वारा काव्य का विवेचन किया गया है। 'हाली' ने ग़ज़लें, रुबाइयाँ, क़सीदे, तारीख़ें आदि सभी लिखे हैं। रुबाइयों का अँगरेज़ी अनुवाद तो विलायत में छपा है। इनकी कविताएँ सरल, सुबोध और स्वाभाविक हैं। उनमें सदाचार-शिक्षा का पूरा ध्यान रक्खा गया है। ग़ज़लों और क़सीदों में पहले पहल जातीय भाव इन्होंने ही भरे हैं। 'मुसद्दसे हाली' में तो जातीय प्रेम का वह गहरा रंग है जो कभी फीका नहीं पड़ सकता। 'हाली' ने हिन्दुस्तान की प्रशंसा में ग़ज़लें लिखी हैं। राजनैतिक भावों को व्यक्त किया है। वे मानव-स्वभाव और प्राकृतिक दृश्यों के कुशल चित्रकार हैं। शब्दों के

जगड्वाल में भावों की भव्यता नष्ट नहीं होने देते। आशिक़-माशूक़, साग़र-साक़ी, गुल-बुलबुल आदि व्यर्थ की बातों से कविता को बचाते हैं। जो बात कहते हैं, स्वभाव-सिद्ध कवि की भाँति बड़ी सरलता और स्पष्टता से कहते हैं।

'हाली' कवि ही नहीं, लेखक भी बड़े ज़बरदस्त हैं। इनका गद्य भी बड़ा सरल, सरस और अत्यन्त भावपूर्ण है। ये जीवन-चरित-लेखन-कला में बड़े सिद्धहस्त हैं। इन्होंने अपनी लेखनी के प्रभाव से कितनों ही को अमर बना दिया। 'हाली' सर सैयद के विचारों के समर्थक थे। अलीगढ़-कालिज के ट्रस्टी भी थे। सैयद साहब भी इनसे बड़ा प्रेम करते और इनसे सब बातों में सलाह लेते थे। 'मुसद्दसे हाली' सर सैयद की प्रेरणा से ही लिखा गया था। सैयद साहब ने इस मुसद्दस की प्रशंसा में यहाँ तक लिखा कि 'जब ख़ुदा मुझसे पूछेगा कि तू क्या लाया है तो मैं कहूँगा 'हाली' से मुसद्दस लिखवा लाया हूँ; और कुछ नहीं।' पुराने ढर्रे के कवियों और लेखकों ने 'हाली' की कविताओं की प्रतिकूल आलोचनाएँ कीं, उन्हें रूखी-सूखी तुकबन्दी मात्र बताया। परन्तु अन्ततः ऐसे लोगों को मुँह की खानी पड़ी और 'हाली' की कविता सर्वत्र सूर्य-प्रभा की भाँति फैल गई।

'हाली' बड़े निरभिमान और बात के धनी थे। इनका ख़ूब आदर हुआ। मरने के बाद लोगों ने इनका स्मारक बनाने की चर्चा चलाई, परन्तु किसी प्रतिभाशाली कवि का सच्चा स्मारक उसकी कविता ही है। १९३५ ई० के अक्टूबर मास में, पानीपत में 'हाली' की जन्म-शताब्दी बड़े समारोहपूर्वक मनाई गई थी। इस महोत्सव के अध्यक्ष का आसन नवाब भूपाल ने ग्रहण किया था। उस समय 'मुसद्दसे हाली' का विशेष संस्करण निकाला गया। 'तज़किरा हाली' और 'रुबाइयात हाली' भी प्रकाशित किये गए।

मौलाना हाली ने अपने लेखों में इस बात को कई बार व्यक्त किया है, कि जो मनुष्य उर्दू साहित्यकार बनना चाहता है, उसे संस्कृत या कम से कम हिन्दी अवश्य सीखनी चाहिये, उर्दू-हिन्दी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने 'खुमखानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान बावजूदे कि तक़रीबन एक हज़ार बरस से हिन्दुस्तान में आबा मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या ब्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ बावजूद सख्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा बाक़ायदा (नियमित) बताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें बसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाबिले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो ब्रजभाषा (हिन्दी) जो बमुक़ाबले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-बलाग़त से लबरेज़ है, उसको भी अमूमन बेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़द्र अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार बिलकुल ब्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।.........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम ब्रजभाषा से बेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना बिलकुल अपने तईं उस मसल का मुसदाक़ (चरितार्थ) बनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से बैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो वे शब्द इसी स्थान के लिए बनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे बहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

में प्रविष्ट किये, जो आँख ओझल हो चुके थे और जिनका प्रयोग किसी ने न किया था। ये शब्द-शास्त्र के आचार्य थे।

मौलाना हाली बड़े सन्तोषी थे। उन्हें हविस ज़रा भी न थी। जैसी स्थिति होती, उसी में प्रसन्न रहते और यथाशक्ति दूसरों की भी सहायता करते। देहली के ऐंग्लो अरेबिक स्कूल से साठ रुपयें मासिक से अधिक न लिया। हैदराबाद की सौ रुपये मासिक की वृत्ति उनकी योग्यता के आगे अत्यन्त नगण्य थी, क्योंकि साधारण योग्यता के बहुत-से आदमी वहाँ से सैकड़ों रुपया वज़ीफ़ा पा रहे थे। हाली ने कदाचित् ही अपनी किसी किताब की रजिस्टरी कराई हो, नहीं तो सब अन-रजिस्टर्ड थीं और उन्हें कोई भी छाप सकता था। जिस महाकवि की देश में इतनी धूम हो, उसका इस प्रकार का दान साधारण बात न थी। 'हाली' जब किसी शिक्षित नवयुवक को देखते तो बहुत प्रसन्न होते और उसका उत्साह बढ़ाते थे। गुणग्राहकता का यह हाल था कि जहाँ कहीं अच्छी रचना देखते तो उसकी बड़ी प्रशंसा करते और पत्र लिखकर उसके लेखक को प्रोत्साहन देते थे। साथ ही यदि किसी कृति में कोई दोष देखते तो बड़ी सहानुभूति और स्नेह से उसके विषय में समझाते और उसका दूसरा रूप सुझाते। मौलाना हाली आलोचना को बहुत पसन्द करते थे, वे कहते थे कि आलोचना से गुण-दोषों की प्रतीति होती है, परन्तु आलोचना सहानुभूति और शुद्ध भावना से होनी चाहिए। उसमें व्यक्तिगत कटाक्ष करना या किसी की हँसी उड़ाना अनुचित और आपत्तिजनक है। 'हाली' ने अपनी जन्मभूमि में दो संस्थाएँ स्थापित कीं। एक स्कूल और दूसरी लाइब्रेरी। स्कूल अब 'हाली मुसलिम हाई स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध है। 'पबलिक ओरिएण्टल लायब्रेरी' पानीपत में अत्यन्त रमणीक स्थान पर बनी हुई है। मौलाना बड़े हँसमुख और विनोदप्रिय थे, इनकी कविताओं में भी कहीं-कहीं विनोद का पुट पाया जाता है। इनकी बड़ी इच्छा थी कि उर्दू में उच्च कोटि के उपन्यास और नाटक लिखे जाते। ये विदेशी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने 'ख़ुमख़ानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान वावजूदे कि तक़रीवन एक हज़ार वरस से हिन्दुस्तान में आया मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या व्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ वावजूद सख़्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक़्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा वाक़ायदा (नियमित) वताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें वसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाविले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो व्रजभाषा (हिन्दी) जो वमुक़ावले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-वलाग़त से लवरेज़ है, उसको भी अमूमन वेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़दर अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार विलकुल व्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम व्रजभाषा से वेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना विलकुल अपने तईं उस मसल का मुसदाक़ (चरितार्थ) वनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से वैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो वे शब्द इसी स्थान के लिए वनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे वहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

में प्रविष्ट किये, जो आँख ओझल हो चुके थे और जिनका प्रयोग किसी ने न किया था। ये शब्द-शास्त्र के आचार्य थे।

मौलाना हाली बड़े सन्तोषी थे। उन्हें हविस ज़रा भी न थी। जैसी स्थिति होती, उसी में प्रसन्न रहते और यथाशक्ति दूसरों की भी सहायता करते। देहली के एंग्लो अरेबिक स्कूल से साठ रुपये मासिक से अधिक न लिया। हैदराबाद की सौ रुपये मासिक की वृत्ति उनकी योग्यता के आगे अत्यन्त नगण्य थी, क्योंकि साधारण योग्यता के बहुत-से आदमी वहाँ से सैकड़ों रुपया वज़ीफ़ा पा रहे थे। हाली ने कदाचित् ही अपनी किसी किताब की रजिस्टरी कराई हो, नहीं तो सब अन-रजिस्टर्ड थीं और उन्हें कोई भी छाप सकता था। जिस महाकवि की देश में इतनी धूम हो, उसका इस प्रकार का दान साधारण बात न थी। 'हाली' जब किसी शिक्षित नवयुवक को देखते तो बहुत प्रसन्न होते और उसका उत्साह बढ़ाते थे। गुणग्राहकता का यह हाल था कि जहाँ कहीं अच्छी रचना देखते तो उसकी बड़ी प्रशंसा करते और पत्र लिखकर उसके लेखक को प्रोत्साहन देते थे। साथ ही यदि किसी कृति में कोई दोष देखते तो बड़ी सहानुभूति और स्नेह से उसके विषय में समझाते और उसका दूसरा रूप सुझाते। मौलाना हाली आलोचना को बहुत पसन्द करते थे, वे कहते थे कि आलोचना से गुण-दोषों की प्रतीति होती है, परन्तु आलोचना सहानुभूति और शुद्ध भावना से होनी चाहिए। उसमें व्यक्तिगत कटाक्ष करना या किसी की हँसी उड़ाना अनुचित और आपत्तिजनक है। 'हाली' ने अपनी जन्मभूमि में दो संस्थाएँ स्थापित कीं। एक स्कूल और दूसरी लाइब्रेरी। स्कूल अब 'हाली मुस्लिम हाई स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध है। 'पबलिक ओरिएण्टल लायब्रेरी' पानीपत में अत्यन्त रमणीक स्थान पर बनी हुई है। मौलाना बड़े हँसमुख और विनोदप्रिय थे, इनकी कविताओं में भी कहीं-कहीं विनोद का पुट पाया जाता है। इनकी बड़ी इच्छा थी कि उर्दू में उच्च कोटि के उपन्यास और नाटक लिखे जाते। ये विदेशी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने '.खुमखानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान बावजूदे कि तक़रीबन एक हज़ार बरस से हिन्दुस्तान में आए। मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या ब्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ बावजूद सख़्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक़्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा बाक़ायदा (नियमित) बताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें बसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाबिले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो ब्रजभाषा (हिन्दी) जो बमुक़ाबले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-बलाग़त से लबरेज़ है, उसको भी अमूमन बेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़दर अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार बिलकुल ब्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम ब्रजभाषा से बेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना बिलकुल अपने तईं उस मसल का मुसदाक़ (चरितार्थ) बनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से बैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो ये शब्द इसी स्थान के लिए बनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे बहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

में प्रविष्ट किये, जो आँख ओझल हो चुके थे और जिनका प्रयोग किसी ने न किया था। ये शब्द-शास्त्र के आचार्य थे।

मौलाना हाली बड़े सन्तोषी थे। उन्हें हविस ज़रा भी न थी। जैसी स्थिति होती, उसी में प्रसन्न रहते और यथाशक्ति दूसरों की भी सहायता करते। देहली के एंग्लो अरेबिक स्कूल से साठ रुपयें मासिक से अधिक न लिया। हैदराबाद की सौ रुपये मासिक की वृत्ति उनकी योग्यता के आगे अत्यन्त नगण्य थी, क्योंकि साधारण योग्यता के बहुत-से आदमी वहाँ से सैकड़ों रुपया वज़ीफ़ा पा रहे थे। हाली ने कदाचित् ही अपनी किसी किताब की रजिस्टरी कराई हो, नहीं तो सब अन-रजिस्टर्ड थीं और उन्हें कोई भी छाप सकता था। जिस महाकवि की देश में इतनी धूम हो, उसका इस प्रकार का दान साधारण बात न थी। 'हाली' जब किसी शिक्षित नवयुवक को देखते तो बहुत प्रसन्न होते और उसका उत्साह बढ़ाते थे। गुणग्राहकता का यह हाल था कि जहाँ कहीं अच्छी रचना देखते तो उसकी बड़ी प्रशंसा करते और पत्र लिखकर उसके लेखक को प्रोत्साहन देते थे। साथ ही यदि किसी कृति में कोई दोष देखते तो बड़ी सहानुभूति और स्नेह से उसके विषय में समझाते और उसका दूसरा रूप सुझाते। मौलाना हाली आलोचना को बहुत पसन्द करते थे, वे कहते थे कि आलोचना से गुण-दोषों की प्रतीति होती है, परन्तु आलोचना सहानुभूति और शुद्ध भावना से होनी चाहिए। उसमें व्यक्तिगत कटाक्ष करना या किसी की हँसी उड़ाना अनुचित और आपत्तिजनक है। 'हाली' ने अपनी जन्मभूमि में दो संस्थाएँ स्थापित कीं। एक स्कूल और दूसरी लाइब्रेरी। स्कूल अब 'हाली मुसलिम हाई स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध है। 'पबलिक ओरिएण्टल लायब्रेरी' पानीपत में अत्यन्त रमणीक स्थान पर बनी हुई है। मौलाना बड़े हँसमुख और विनोदप्रिय थे, इनकी कविताओं में भी कहीं-कहीं विनोद का पुट पाया जाता है। इनकी बड़ी इच्छा थी कि उर्दू में उच्च कोटि के उपन्यास और नाटक लिखे जाते। ये विदेशी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने 'ख़ुमख़ानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान बावजूदे कि तक़रीबन एक हज़ार बरस से हिन्दुस्तान में आबाद मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या व्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ बावजूद सख़्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक़्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा बाक़ायदा (नियमित) बताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें बसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाबिले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो व्रजभाषा (हिन्दी) जो बमुक़ाबले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-बलाग़त से लबरेज़ है, उसको भी अमूमन बेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़दर अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार बिलकुल व्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।.........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम व्रजभाषा से बेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना बिलकुल अपने तईं उस मसल का मुसद्दाक़ (चरितार्थ) बनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से बैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो वे शब्द इसी स्थान के लिए बनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे बहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

में प्रविष्ट किये, जो आँख ओझल हो चुके थे और जिनका प्रयोग किसी ने न किया था। ये शब्द-शास्त्र के आचार्य थे।

मौलाना हाली बड़े सन्तोषी थे। उन्हें हविस ज़रा भी न थी। जैसी स्थिति होती, उसी में प्रसन्न रहते और यथाशक्ति दूसरों की भी सहायता करते। देहली के एंग्लो अरेबिक स्कूल से साठ रुपयें मासिक से अधिक न लिया। हैदराबाद की सौ रुपये मासिक की वृत्ति उनकी योग्यता के आगे अत्यन्त नगण्य थी, क्योंकि साधारण योग्यता के बहुत-से आदमी वहाँ से सैकड़ों रुपया वज़ीफ़ा पा रहे थे। हाली ने कदाचित् ही अपनी किसी किताब की रजिस्टरी कराई हो, नहीं तो सब अन-रजिस्टर्ड थीं और उन्हें कोई भी छाप सकता था। जिस महाकवि की देश में इतनी धूम हो, उसका इस प्रकार का दान साधारण बात न थी। 'हाली' जब किसी शिक्षित नवयुवक को देखते तो बहुत प्रसन्न होते और उसका उत्साह बढ़ाते थे। गुणग्राहकता का यह हाल था कि जहाँ कहीं अच्छी रचना देखते तो उसकी बड़ी प्रशंसा करते और पत्र लिखकर उसके लेखक को प्रोत्साहन देते थे। साथ ही यदि किसी कृति में कोई दोष देखते तो बड़ी सहानुभूति और स्नेह से उसके विषय में समझाते और उसका दूसरा रूप सुझाते। मौलाना हाली आलोचना को बहुत पसन्द करते थे, वे कहते थे कि आलोचना से गुण-दोषों की प्रतीति होती है, परन्तु आलोचना सहानुभूति और शुद्ध भावना से होनी चाहिए। उसमें व्यक्तिगत कटाक्ष करना या किसी की हँसी उड़ाना अनुचित और आपत्तिजनक है। 'हाली' ने अपनी जन्मभूमि में दो संस्थाएँ स्थापित कीं। एक स्कूल और दूसरी लाइब्रेरी। स्कूल अब 'हाली मुस्लिम हाई स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध है। 'पबलिक ओरिएण्टल लायब्रेरी' पानीपत में अत्यन्त रमणीक स्थान पर बनी हुई है। मौलाना बड़े हँसमुख और विनोदप्रिय थे, इनकी कविताओं में भी कहीं-कहीं विनोद का पुट पाया जाता है। इनकी बड़ी इच्छा थी कि उर्दू में उच्च कोटि के उपन्यास और नाटक लिखे जाते। ये विदेशी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने '.खुमखानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान बावजूदे कि तक़रीबन एक हज़ार बरस से हिन्दुस्तान में आये मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या ब्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ बावजूद सख्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक़्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा बाक़ायदा (नियमित) बताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें बसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाबिले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो ब्रजभाषा (हिन्दी) जो बमुक़ाबले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-बलाग़त से लबरेज़ है, उसको भी अमूमन बेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़द्र अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार बिलकुल ब्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम ब्रजभाषा से बेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना बिलकुल अपने तईं उस मसल का मुसदाक़ (चरितार्थ) बनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से बैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो वे शब्द इसी स्थान के लिए बनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे बहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

में प्रविष्ट किये, जो आँख ओझल हो चुके थे और जिनका प्रयोग किसी ने न किया था। ये शब्द-शास्त्र के आचार्य थे।

मौलाना हाली बड़े सन्तोषी थे। उन्हें हविस ज़रा भी न थी। जैसी स्थिति होती, उसी में प्रसन्न रहते और यथाशक्ति दूसरों की भी सहायता करते। देहली के एँग्लो अरेबिक स्कूल से साठ रुपयें मासिक से अधिक न लिया। हैदराबाद की सौ रुपये मासिक की वृत्ति उनकी योग्यता के आगे अत्यन्त नगण्य थी, क्योंकि साधारण योग्यता के बहुत-से आदमी वहाँ से सैकड़ों रुपया वज़ीफ़ा पा रहे थे। हाली ने कदाचित् ही अपनी किसी किताब की रजिस्टरी कराई हो, नहीं तो सब अन-रजिस्टर्ड थीं और उन्हें कोई भी छाप सकता था। जिस महाकवि की देश में इतनी धूम हो, उसका इस प्रकार का दान साधारण बात न थी। 'हाली' जब किसी शिक्षित नवयुवक को देखते तो बहुत प्रसन्न होते और उसका उत्साह बढ़ाते थे। गुणग्राहकता का यह हाल था कि जहाँ कहीं अच्छी रचना देखते तो उसकी बड़ी प्रशंसा करते और पत्र लिखकर उसके लेखक को प्रोत्साहन देते थे। साथ ही यदि किसी कृति में कोई दोष देखते तो बड़ी सहानुभूति और स्नेह से उसके विषय में समझाते और उसका दूसरा रूप सुझाते। मौलाना हाली आलोचना को बहुत पसन्द करते थे, वे कहते थे कि आलोचना से गुण-दोषों की प्रतीति होती है, परन्तु आलोचना सहानुभूति और शुद्ध भावना से होनी चाहिए। उसमें व्यक्तिगत कटाक्ष करना या किसी की हँसी उड़ाना अनुचित और आपत्तिजनक है। 'हाली' ने अपनी जन्मभूमि में दो संस्थाएँ स्थापित कीं। एक स्कूल और दूसरी लाइब्रेरी। स्कूल अब 'हाली मुस्लिम हाई स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध है। 'पबलिक ओरिएण्टल लायब्रेरी' पानीपत में अत्यन्त रमणीक स्थान पर बनी हुई है। मौलाना बड़े हँसमुख और विनोदप्रिय थे, इनकी कविताओं में भी कहीं-कहीं विनोद का पुट पाया जाता है। इनकी बड़ी इच्छा थी कि उर्दू में उच्च कोटि के उपन्यास और नाटक लिखे जाते। ये विदेशी

का प्रश्न उठने पर इन्होंने '.खुमखानए जावेद' नामक पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था—

"कौन नहीं जानता कि मुसलमान बावजूदे कि तक़रीबन एक हज़ार बरस से हिन्दुस्तान में आबा मगर इस तवील मुद्दत में उन्होंने चन्द मुस्तस्नियात (अपवादों) को छोड़कर कभी संस्कृत या व्रजभाषा (हिन्दी) की तरफ़ बावजूद सख़्त ज़रूरत के आँख उठाकर नहीं देखा। जिस संस्कृत को यूरोप के मुहक़्क़िक़ (अन्वेषक) लातिनी व यूनानी से ज़्यादा फ़सीह (ललित) ज़्यादा वसीअ (व्यापक) और ज़्यादा बाक़ायदा (नियमित) बताते हैं, और जिसकी तहक़ीक़ात में उम्रें बसर कर देते हैं, मुसलमानों ने आमतौर पर कभी उसको क़ाबिले इल्तफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं समझा। अगर यह कहा जाय कि संस्कृत का सीखना कोई आसान काम नहीं है, तो व्रजभाषा (हिन्दी) जो बमुक़ाबले संस्कृत के निहायत सहलुल वसूल (सुख-साध्य) है और जिसकी शायरी निहायत लतीफ़ (ललित) शिगुफ़्ता (विकसित) और फ़साहत-बलाग़त से लबरेज़ है, उसको भी अमूमन बेगानावार नज़रों से देखते रहे। हालाँकि जो उर्दू इनको इस क़द्र अज़ीज़ है, उसकी ग्रामर का दारोमदार बिलकुल व्रजभाषा या संस्कृत की ग्रामर (व्याकरण) पर है।........सच यह है कि मुसलमानों का हिन्दुस्तान में रहना और संस्कृत या कम से कम व्रजभाषा से बेपरवा या मुतनफ़्फ़िर होना बिलकुल अपने तईं उस मसल का मुसद्दाक़ (चरितार्थ) बनाना है कि 'दरिया में रहना और मगर मच्छ से बैर'।"

मौलाना हाली की उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट प्रकट है कि इनका संस्कृत और हिन्दी से कितना प्रेम था, और ये इन दोनों भाषाओं की उपयुक्तता और महत्ता को मुक्त-कंठ से स्वीकार करते थे। ये अपनी गद्य-पद्यात्मक रचनाओं में हिन्दी शब्द ऐसी सुन्दरता से लिख जाते थे कि ऐसा प्रतीत होता था मानो वे शब्द इसी स्थान के लिए बनाए गए हैं। 'हाली' ने ऐसे बहुत-से हिन्दी शब्द उर्दू साहित्य

और 'पञ्जाब मेगज़ीन' नामक सरकारी पत्रों के सहायक सम्पादक रहे थे। बहुत दिनों तक गवर्नमेण्ट कालिज लाहौर में फ़ारसी और अरबी के अध्यापक भी रहे। १८८७ ई० में महारानी विक्टोरिया की जुबिली के अवसर पर इन्हें सरकार की ओर से 'शम्सुलउलमा' की उपाधि प्रदान की गई। १८८९ ई० में अधिक मानसिक परिश्रम और पारिवारिक विपत्तियों के कारण 'आज़ाद' का दिमाग़ ख़राब हो गया, जिससे ये साहित्य-सेवा के योग्य न रहे। अन्ततः २२ जनवरी १९१० ई० को लाहौर में इनका देहान्त हुआ।

प्रो० 'आज़ाद' ने उर्दू-साहित्य की अमूल्य सेवाएँ कीं। गद्य और पद्य दोनों में जीवन उड़ेल दिया और उर्दू को नया जामा पहनाया। ये धुरन्धर साहित्य-महारथी, प्रौढ़ लेखक, निष्पक्ष आलोचक, अनुभवी शिक्षा-विशेषज्ञ और सफल पत्रकार थे। फ़ारसी के उद्भट विद्वान् और भाषा-विज्ञान के आचार्य थे। 'आज़ाद' के गद्य में भी कविता का-सा आनन्द आता है। उर्दू कविता से आशिक़-माशूक़ी के पुराने ढकोसले को दूर कर उसे स्वाभाविक, सरल और उपयोगी बनाने में इन्होंने बड़ा काम किया। 'आज़ाद' ने अपने नये रंग में छोटी-छोटी मसनवियाँ और कविताएँ लिखी हैं। उस्ताद 'ज़ौक़' के देहान्त के पश्चात् ये हकीम आग़ाजान 'ऐश' से इसलाह लेते थे। इनकी रची सब कविताएँ ग़दर में नष्ट हो गईं। कुछ कविताएँ ग़दर के बाद भी लिखीं, जो 'नज़्मे आज़ाद' के नाम से प्रकाशित हो चुकी हैं। 'आज़ाद' ने अँगरेज़ी भावों को लेकर भी कविताएँ की हैं। मसनवी 'शराफ़त हक़ीक़ी', 'मारफ़त इलाही', 'सलाम अलीक़', 'एकतारे का आशिक़', 'मेहनत करो' आदि इनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। इनकी 'शबेक़द्र' मसनवी बहुत प्रसिद्ध है। मसनवी 'हुब्बे वतन', मसनवी 'ख़्वाबे अमन', मसनवी 'अबरो करम', 'ज़मस्तान', 'सुबह उम्मेद' आदि कविताएँ भी बहुत विख्यात हैं।

प्रो० 'आज़ाद' पद्य की अपेक्षा गद्य को अधिक आवश्यक समझते थे, इसीलिए इन्होंने इस ओर अधिक ध्यान दिया। इनकी

भाषाओं की पुस्तकों के अनुवाद की बड़ी आवश्यकता अनुभव करते थे।

प्रो० 'आज़ाद'—इनका नाम मौलवी मुहम्मद हुसेन और उपनाम 'आज़ाद' था। १८३२ ई० में देहली में पैदा हुए। इनके पिता मौ० मुहम्मद बाक़र भी बड़े विद्वान् थे। १८३७ ई० में सम्भवतः सब से प्रथम 'उर्दू अख़बार' नामक उर्दू पत्र उन्होंने ही निकाला था। उस्ताद 'ज़ौक़' से मुहम्मद बाक़र की बड़ी घनिष्ठता थी, इसी कारण प्रो० 'आज़ाद' ज़ौक़ के शिष्य हुए। 'आज़ाद' की प्रारम्भिक शिक्षा 'ज़ौक़' की देख-रेख में हुई, और इन्हीं से इनकी कविता की ओर प्रवृत्ति हुई। अरबी और फ़ारसी 'आज़ाद' ने 'देहली-कालिज' में पढ़ी थी। 'ज़ौक़' के साथ रहने के कारण 'आज़ाद' को बड़े-बड़े मुशायरों में जाने और प्रसिद्ध साहित्यकारों से परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला। १८५७ ई० में देहली पर तबाही आई तो इनके पिता बाग़ी समझ कर क़ैद कर लिए गए और फिर सम्भवतः अन्य क़ैदियों के साथ गोली का शिकार बने। उस समय 'आज़ाद' भी वेश बदलकर अपने पिता से मुलाक़ात करने पहुँचे और मिलकर चले आए। फिर ये देहली छोड़कर इधर-उधर घूमते-फिरते लखनऊ पहुँचे। परन्तु वहाँ ये अधिक दिनों तक न रह सके और १८६४ ई० में इन्होंने लाहौर में आकर शिक्षा-विभाग में पन्द्रह रुपये मासिक की नौकरी कर ली। धीरे-धीरे पदोन्नति हुई और इन्हें मदरसों के लिए उर्दू-फ़ारसी की किताबें लिखने का काम सौंपा गया। इनकी लिखी किताबें बहुत लोकप्रिय हुईं। इनसे पंजाब में उर्दू का ख़ूब प्रचार बढ़ा। 'अन्जुमने पंजाब' की स्थापना में भी इनका बड़ा हाथ था। इसी अन्जुमन के अधीन 'आज़ाद' की प्रेरणा से एक मुशायरा क़ायम हुआ, जिसका उद्देश्य उर्दू-कविता से व्यर्थ की अतिशयोक्तियाँ, आलंकारिक जगड़वाल एवं कृत्रिमता दूर कर उसे सरल, सुबोध और उपयोगी बनाना था। 'आज़ाद' दो बार ईरान भी गए थे। वहाँ इन्होंने फ़ारसी का विशेष रूप से अध्ययन किया। वे 'अतालीक़ पंजाब'

। 'अकबर' की कविता खूब लोकप्रिय हुई। इन्होंने अपने युग का प्रतिनिधित्व बड़ी योग्यता से किया। ये कवि, आलोचक, साहित्यकार, सुधारक, शिक्षक, उपदेशक सब कुछ थे। इनकी कविताओं में हास्य और व्यंग्य का जो गम्भीर पुट रहता है, उस पर सारा सहृदय-समाज मुग्ध है। ये बड़े मिलनसार और विनम्र थे। बातों ही बातों में विनोद के ऐसे चुटकुले छोड़ देते थे कि सुनने वाले की तबीअत फड़क जाती थी। प्रेम, सचाई, सहानुभूति, आतिथ्य आदि इनके विशेष गुण थे। इनमें धार्मिक पक्षपात छू तक न गया था। वृद्धावस्था में इन्हें अपने पुत्र हाशिम के मरने का बड़ा दुःख हुआ। उस समय इन्होंने कहा था—

"वह चमन ही मिट गया जिसमें कि आई थी बहार
अब तुझे पाकर मैं ऐ बादे बहारी क्या करूँ।
बज़्मे इशरत में बिठाना था जिसे वह उठ गया,
अब मैं ऐ फ़र्दा तेरी उम्मेदवारी क्या करूँ।"

'अकबर' हज़ार उपदेशकों के एक उपदेशक और लाख सुधारकों के एक सुधारक या आलोचक थे। इनकी दो पंक्तियों में जो प्रभाव है, वह उपदेशकों के लम्बे-चौड़े व्याख्यानों और पोथों में भी नहीं। 'अकबर' स्वाभाविक कवि थे। इनकी प्रारम्भिक कविता प्राचीन शैली की है। फिर धीरे-धीरे उसमें नवीनता और मौलिकता आती गई, जिससे वह बहुत ऊँचे दर्जे की हो गई और सहृदयों के हृदयों का हार बन गई। इनकी कविता में इश्क़िया ग़ज़लों, सूफ़ियाना भावों, आलोचनात्मक मीठी चुटकियों और मनोरञ्जक एवं शिक्षाप्रद व्यंग्यों की छबीली छटा देखते ही बनती है। पश्चिमीय सभ्यता की आलोचना इन्होंने बड़े ही सुन्दर ढंग से की है। इनकी कविताओं में जीवन सम्बन्धिनी समस्याओं का भी बड़ा हृदय-हारी विवेचन है। सादाचारिक और आध्यात्मिक विषयों पर भी इन्होंने ख़ूब लिखा है। इनकी कितनी ही कविताएँ तो लोकोक्तियों के रूप में पढ़ी जाती हैं। 'अकबर' की कुछ अप्रकाशित कविताएँ भी हैं, जिन्हें इन्होंने विशेष

ये गद्य-पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध हैं। 'फ़ारसी रीडरें', 'उर्दू रीडरें', 'उर्दू का क़ायदा', 'क़वायद उर्दू', 'क़सिस हिन्द', 'जामुल क़वायद, नयी उर्दू रीडरें', 'आबेहयात', 'नौरंगे ख़याल', 'सुख़नदान फ़ारस', 'क़ायनात अरब', 'पन्द पारसी', 'नसीहत का करनफूल', 'दीवान ज़ौक़', 'जानवरस्तान', 'निगारिस्तान फ़ारस', 'दरबार अकबरी', 'लुग़ाते आज़ाद', 'तज़किरा उलमा', 'ड्रामा अकबर', 'सैरे ईरान', 'फ़िलसफ़ा उल हयात', 'बयाज़े आज़ाद', 'ख़ुमकदा आज़ाद', इत्यादि। 'मकतूबात-आज़ाद' के नाम से 'आज़ाद' की चिट्ठियाँ भी प्रकाशित हो गई हैं। प्रो० 'आज़ाद' ने 'आबेहयात' लिखकर उर्दू-साहित्य की प्रशंसनीय और ठोस सेवा की है। यह उर्दू कवियों और कविताओं का विस्तृत इतिहास है। इनकी लेखन-शैली बड़ी मनोरञ्जक और आकर्षक है। 'ज़ौक़' की कविताओं का संग्रह करने में भी इन्हें घोर परिश्रम करना पड़ा था। यदि ये इतना उद्योग न करते तो आज 'ज़ौक़' की कविता संसार के सामने न होती।

'अकबर'—इनका नाम सैयद अकबर हुसेन रिज़वी और उपनाम 'अकबर' था। इनका जन्म १६ नवम्बर १८४६ ई० को बारा (इलाहाबाद) में हुआ। ये अमीर तफ़ज़्ज़ुल हुसेन साहब के बेटे थे। इनकी शिक्षा मदरसों व सरकारी स्कूलों में हुई। इन्हें अरबी और फ़ारसी भी पढ़ाई गई। अँग्रेज़ी में भी इन्होंने अच्छा अभ्यास कर लिया था। १८६६ ई० में मुख़्तारी पास कर ये नायब तहसीलदार और १८७० ई० में हाईकोर्ट के मुन्शी हुए। १८७२ ई० में वकालत पास करके मुंसिफ़ हो गए। फिर धीरे-धीरे उन्नति करते हुए सबजज और सेशन जज तक हुए। १८९८ ई० में इन्हें 'ख़ान बहादुर' का ख़िताब मिला। १९०३ ई० में रिटायर हुए और ९ अक्टूबर १९२१ ई० को इलाहाबाद में इनका देहान्त हुआ। मुंशी ग़ुलाम हुसेन साहब 'वहीद' इनके कविता-गुरु थे। अकबर ने पहले-पहल लखनऊ के 'अवध पञ्च' में लेख और कविताएँ लिखना शुरू किया, फिर कानपुर के 'ज़माना' में भी ख़ूब लिखा। इन्हीं दोनों पत्रों से इनका साहित्यिक जीवन प्रारम्भ होता

। 'अकबर' की कविता खूब लोकप्रिय हुई। इन्होंने अपने युग का प्रतिनिधित्व बड़ी योग्यता से किया। ये कवि, आलोचक, साहित्य-कार, सुधारक, शिक्षक, उपदेशक सब कुछ थे। इनकी कविताओं में हास्य और व्यंग्य का जो गम्भीर पुट रहता है, उस पर सारा सहृदय-समाज मुग्ध है। ये बड़े मिलनसार और विनम्र थे। बातों ही बातों में विनोद के ऐसे चुटकुले छोड़ देते थे कि सुनने वाले की तबीअत फड़क जाती थी। प्रेम, सचाई, सहानुभूति, आतिथ्य आदि इनके विशेष गुण थे। इनमें धार्मिक पक्षपात छू तक न गया था। वृद्धावस्था में इन्हें अपने पुत्र हाशिम के मरने का बड़ा दुःख हुआ। उस समय इन्होंने कहा था—

"वह चमन ही मिट गया जिसमें कि आई थी बहार
अब तुझे पाकर मैं ऐ बादे बहारी क्या करूँ।
बज़्मे इशरत में बिठाना था जिसे वह उठ गया,
अब मैं ऐ फ़र्दा तेरी उम्मेदवारी क्या करूँ।"

'अकबर' हज़ार उपदेशकों के एक उपदेशक और लाख सुधारकों के एक सुधारक या आलोचक थे। इनकी दो पंक्तियों में जो प्रभाव है, वह उपदेशकों के लम्बे-चौड़े व्याख्यानों और पोथों में भी नहीं। 'अकबर' स्वाभाविक कवि थे। इनकी प्रारम्भिक कविता प्राचीन शैली की है। फिर धीरे-धीरे उसमें नवीनता और मौलिकता आती गई, जिससे वह बहुत ऊँचे दर्जे की हो गई और सहृदयों के हृदयों का हार बन गई। इनकी कविता में इश्क़िया ग़ज़लों, सूफ़ियाना भावों, आलोचनात्मक मीठी चुटकियों और मनोरञ्जक एवं शिक्षाप्रद व्यंग्यों की छबीली छटा देखते ही बनती है। पश्चिमीय सभ्यता की आलोचना इन्होंने बड़े ही सुन्दर ढंग से की है। इनकी कविताओं में जीवन सम्बन्धिनी समस्याओं का भी बड़ा हृदय-हारी विवेचन है। सादाचारिक और आध्यात्मिक विषयों पर भी इन्होंने ख़ूब लिखा है। इनकी कितनी ही कविताएँ तो लोकोक्तियों के रूप में पढ़ी जाती हैं। 'अकबर' की कुछ अप्रकाशित कविताएँ भी हैं, जिन्हें इन्होंने विशेष

ये गद्य-पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध हैं। 'फ़ारसी रीडरें', 'उर्दू रीडरें', 'उर्दू का क़ायदा', 'क़वायद उर्दू', 'क़सिस हिन्द', 'जामुल क़वायद, नयी उर्दू रीडरें', 'आवेहयात', 'नौरंगे ख़याल', 'सुख़नदान फ़ारस', 'क़ायनात अरब', 'पन्द पारसी', 'नसीहत का करनफूल', 'दीवान ज़ौक़', 'जानवरस्तान', 'निगारिस्तान फ़ारस', 'दरबार अकबरी', 'लुग़ाते आज़ाद', 'तज़किरा उलमा', 'ड्रामा अकबर', 'सैरे ईरान', 'फ़िलसफ़ा उल हयात', 'बयाज़े आज़ाद', 'ख़ुमकदा आज़ाद', इत्यादि। 'मक्तूबात-आज़ाद' के नाम से 'आज़ाद' की चिट्ठियाँ भी प्रकाशित हो गई हैं। प्रो० 'आज़ाद' ने 'आवेहयात' लिखकर उर्दू-साहित्य की प्रशंसनीय और ठोस सेवा की है। यह उर्दू कवियों और कविताओं का विस्तृत इतिहास है। इनकी लेखन-शैली बड़ी मनोरञ्जक और आकर्षक है। 'ज़ौक़' की कविताओं का संग्रह करने में भी इन्हें घोर परिश्रम करना पड़ा था। यदि ये इतना उद्योग न करते तो आज 'ज़ौक़' की कविता संसार के सामने न होती।

'अकबर'—इनका नाम सैयद अकबर हुसेन रिज़वी और उपनाम 'अकबर' था। इनका जन्म १६ नवम्बर १८४६ ई० को बारा (इलाहाबाद) में हुआ। ये अमीर तफ़ज़्ज़ुल हुसेन साहब के बेटे थे। इनको शिक्षा मदरसों व सरकारी स्कूलों में हुई। इन्हें अरबी और फ़ारसी भी पढ़ाई गई। अँग्रेज़ी में भी इन्होंने अच्छा अभ्यास कर लिया था। १८६६ ई० में मुख्तारी पास कर ये नायब तहसीलदार और १८७० ई० में हाईकोर्ट के मुन्शी हुए। १८७२ ई० में वकालत पास करके मुंसिफ़ हो गए। फिर धीरे-धीरे उन्नति करते हुए सबजज और सेशन जज तक हुए। १८९८ ई० में इन्हें 'ख़ान बहादुर' का ख़िताब मिला। १९०३ ई० में रिटायर हुए और १ अक्टूबर १९२१ ई० को इलाहाबाद में इनका देहान्त हुआ। मुंशी ग़ुलाम हुसेन साहब 'वहीद' इनके कविता-गुरु थे। अकबर ने पहले-पहल लखनऊ के 'अवध पञ्च' में लेख और कविताएँ लिखना शुरू किया, फिर कानपुर के 'ज़माना' में भी ख़ूब लिखा। इन्हीं दोनों पत्रों से इनका साहित्यिक जीवन प्रारम्भ होता

। 'अकबर' की कविता खूब लोकप्रिय हुई। इन्होंने अपने युग का प्रतिनिधित्व बड़ी योग्यता से किया। ये कवि, आलोचक, साहित्य-कार, सुधारक, शिक्षक, उपदेशक सब कुछ थे। इनकी कविताओं में हास्य और व्यंग्य का जो गम्भीर पुट रहता है, उस पर सारा सहृदय-समाज मुग्ध है। ये बड़े मिलनसार और विनम्र थे। बातों ही बातों में विनोद के ऐसे चुटकुले छोड़ देते थे कि सुनने वाले की तबीअत फड़क जाती थी। प्रेम, सचाई, सहानुभूति, आतिथ्य आदि इनके विशेष गुण थे। इनमें धार्मिक पक्षपात छू तक न गया था। वृद्धावस्था में इन्हें अपने पुत्र हाशिम के मरने का बड़ा दुःख हुआ। उस समय इन्होंने कहा था—

"वह चमन ही मिट गया जिसमें कि आई थी बहार
अब तुझे पाकर मैं ऐ बादे बहारी क्या करूँ।
बज़्मे इशरत में बिठाना था जिसे वह उठ गया,
अब मैं ऐ फ़र्दा तेरी उम्मेदवारी क्या करूँ।"

*'अकबर' हज़ार उपदेशकों के एक उपदेशक और लाख सुधा-*रकों के एक सुधारक या आलोचक थे। इनकी दो पंक्तियों में जो प्रभाव है, वह उपदेशकों के लम्बे-चौड़े व्याख्यानों और पोथों में भी नहीं। 'अकबर' स्वाभाविक कवि थे। इनकी प्रारम्भिक कविता प्राचीन शैली की है। फिर धीरे-धीरे उसमें नवीनता और मौलिकता आती गई, जिससे वह बहुत ऊँचे दर्जे की हो गई और सहृदयों के हृदयों का हार बन गई। इनकी कविता में इश्क़िया ग़ज़लों, सूफ़ियाना भावों, आलोचनात्मक मीठी चुटकियों और मनोरञ्जक एवं शिक्षाप्रद व्यंग्यों की छबीली छटा देखते ही बनती है। पश्चिमीय सभ्यता की आलोचना इन्होंने बड़े ही सुन्दर ढंग से की है। इनकी कविताओं में जीवन सम्बन्धिनी समस्याओं का भी बड़ा हृदय-हारी विवेचन है। सदा-चारिक और आध्यात्मिक विषयों पर भी इन्होंने ख़ूब लिखा है। इनकी कितनी ही कविताएँ तो लोकोक्तियों के रूप में पढ़ी जाती हैं। 'अकबर' की कुछ अप्रकाशित कविताएँ भी हैं, जिन्हें इन्होंने विशेष

कारण-वश अपने जीवन में प्रकाशित न कराया था। इन्होंने अपनी कविताओं में अँग्रेज़ी शब्द बड़ी ख़ूबी से इस्तेमाल किये हैं। इनकी कविताओं के तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। सम्भवतः और खण्ड भी प्रकाशित होंगे। 'अकबर' की चिट्ठियों का भी एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। ये सरस और महत्त्वपूर्ण चिट्ठियाँ इन्होंने समय-समय पर अपने मित्रों को लिखी थीं। इस संग्रह से 'अकबर' के जीवन पर भी ख़ूब प्रकाश पड़ता है। 'अकबर' की इतनी अधिक ख्याति का मुख्य कारण इनकी व्यंग्यात्मक एवं हास्यरस-पूर्ण कविता है। व्यंग्य में सरकारी शासन-नीति की भी इन्होंने खरी आलोचना की, जिसके लिए उन्हें सरकार की ओर से एक बार चेतावनी भी मिली।

'अकबर' का हास्य दैनिक जीवन की साधारण-सी घटनाओं पर है, जिसके समझने में कुछ भी कठिनाई नहीं होती और जो दिल में एक अजीब गुदगुदी पैदा कर देता है। 'अकबर' ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा मामूली-मामूली बातों में काव्योचित चमत्कार भर दिया है। इनका विनोद व्यापक है। कभी वे अंगरेज़ी शिक्षा-सभ्यता पर व्यंग्य कसते हैं और कभी सामाजिक दूषणों और धार्मिक बुराइयों की चुटकियाँ लेते हैं। 'अकबर' प्राचीनता के पोषक और सचाई के समर्थक स्वभाव-सिद्ध कवि थे। ये सरल, निष्कपट, सन्तोषी, आडम्बर-शून्य, सच्चे और साधु-स्वभाव थे। स्वाभिमान, सहानुभूति, मिलनसारी आदि इनके विशेष गुण थे। 'अकबर' की कविताओं का प्रचार उर्दू-दुनिया में ही नहीं, हिन्दी संसार में भी अत्यधिक है। किसी कवि या साहित्यकार की इतनी अधिक लोक-प्रियता वस्तुतः बड़े सौभाग्य और गौरव की बात है। निस्सन्देह 'अकबर' एक अजीब दिल-दिमाग़ लेकर आए थे। वे जिस निराली शैली के प्रवर्तक थे उसका अन्त भी उन के साथ ही हो गया! इनकी कविताओं के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इनके सम्बन्ध में [illegible] 'अकबर इलाहाबादी', 'अकबर के सौ शेर',

'मकातीब अकबर', 'ख़तूत, 'अकबर', 'रुक्क़ात अकबर' आदि पुस्तकें भी हैं। हिन्दी में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

मुहम्मद इस्माईल—इनका जन्म १२ नवम्बर १८४४ ई० को मेरठ में हुआ। पढ़-लिखकर शिक्षा-विभाग में साधारण नौकरी की। फिर मेरठ और सहारनपुर में फ़ारसी के हेड मौलवी हुए। १८८८ ई० में सेन्ट्रल नार्मल स्कूल आगरा में तबदील कर दिये गए। १८६६ ई० में पेन्शन लेकर शेष जीवन पुस्तक-प्रणयन में बिताया। १ नवम्बर १६१७ ई० को इनका देहान्त हुआ। बालकों के लिए लिखी इनकी रीडरें और कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। ये गद्य-पद्य दोनों समान सफलता से लिखते थे। इनकी शैली बड़ी सरस, सरल और स्पष्ट है। बालकों के लिए लिखी इनकी कविताओं को बड़े-बूढ़े भी उत्साह और चाव से पढ़ते हैं। इन्होंने उर्दू की पुरानी और नयी दोनों शैलियों को बड़ी सफलता से निभाया है। 'कुल्लियाते इस्माईल' नाम से इनकी रचनाओं का संग्रह प्रकाशित हो गया है। 'बच्चों के इस्माईल' नामक पुस्तक में बच्चों से सम्बन्ध रखनेवाली कविताएँ संगृहीत हैं। प्रेम, शृङ्गार, राजनीति, समाज-सुधार, सदाचार, प्रकृति-वर्णन आदि सब ही विषयों पर इन्होंने कविताएँ की हैं। सूफ़ियाना रंग में भी बहुत कुछ लिखा है। ग़ज़लों में अधिकतर सूफ़ियाना और सादाचारिक भाव हैं। भाषा पर इनका पूरा अधिकार था। ये अपने समय के प्रतिष्ठित विद्वानों में थे। अनुप्रास-हीन कविताएँ भी इन्होंने लिखी हैं। इस्माईल साहब ने अमीर ख़ुसरो की कविताओं की आलोचना और उनकी प्रामाणिक जीवनी लिखने का काम प्रारम्भ किया था, परन्तु मौत ने इन्हें आ घेरा और यह काम हो न सका।

'नज़र'—मुंशी नौबतराय 'नज़र' लखनऊ के एक प्रतिष्ठित कायस्थ-कुल में १८६६ ई० में पैदा हुए। प्रारम्भ में इन्हें उर्दू-फ़ारसी और अँगरेज़ी पढ़ाई गई। कविता की ओर इनकी बचपन से ही

कारण-वश अपने जीवन में प्रकाशित न कराया था। इन्होंने अपनी कविताओं में अँग्रेज़ी शब्द बड़ी ख़ूबी से इस्तेमाल किये हैं। इनकी कविताओं के तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। सम्भवतः और खण्ड भी प्रकाशित होंगे। 'अकबर' की चिट्ठियों का भी एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। ये सरस और महत्त्वपूर्ण चिट्ठियाँ इन्होंने समय-समय पर अपने मित्रों को लिखी थीं। इस संग्रह से 'अकबर' के जीवन पर भी ख़ूब प्रकाश पड़ता है। 'अकबर' की इतनी अधिक ख्याति का मुख्य कारण इनकी व्यंग्यात्मक एवं हास्यरस-पूर्ण कविता है। व्यंग्य में सरकारी शासन-नीति की भी इन्होंने खरी आलोचना की, जिसके लिए उन्हें सरकार की ओर से एक बार चेतावनी भी मिली।

'अकबर' का हास्य दैनिक जीवन की साधारण-सी घटनाओं पर है, जिसके समझने में कुछ भी कठिनाई नहीं होती और जो दिल में एक अजीब गुदगुदी पैदा कर देता है। 'अकबर' ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा मामूली-मामूली बातों में काव्योचित चमत्कार भर दिया है। इनका विनोद व्यापक है। कभी वे अँगरेज़ी शिक्षा-सभ्यता पर व्यंग्य कसते हैं और कभी सामाजिक दूषणों और धार्मिक बुराइयों की चुटकियाँ लेते हैं। 'अकबर' प्राचीनता के पोषक और सचाई के समर्थक स्वभाव-सिद्ध कवि थे। ये सरल, निष्कपट, सन्तोषी, आडम्बर-शून्य, सच्चे और साधु-स्वभाव थे। स्वाभिमान, सहानुभूति, मिलनसारी आदि इनके विशेष गुण थे। 'अकबर' की कविताओं का प्रचार उर्दू-दुनिया में ही नहीं, हिन्दी संसार में भी अत्यधिक है। किसी कवि या साहित्यकार की इतनी अधिक लोक-प्रियता वस्तुतः बड़े सौभाग्य और गौरव की बात है। निस्सन्देह 'अकबर' एक अजीब दिल-दिमाग़ लेकर आए थे। वे जिस निराली शैली के प्रवर्तक थे उसका अन्त भी उन के साथ ही हो गया! इनकी कविताओं के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इनसे सम्बन्ध रखने वाली 'अकबर इलाहाबादी', 'अकबर के सौ शेर',

'मकातीव अकबर', 'ख़तूत, 'अकबर', 'रुक्क़ात अकबर' आदि पुस्तकें भी हैं। हिन्दी में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

मुहम्मद इस्माईल—इनका जन्म १२ नवम्बर १८४४ ई० को मेरठ में हुआ। पढ़-लिखकर शिक्षा-विभाग में साधारण नौकरी की। फिर मेरठ और सहारनपुर में फ़ारसी के हेड मौलवी हुए। १८८८ ई० में सेन्ट्रल नार्मल स्कूल आगरा में तबदील कर दिये गए। १८६६ ई० में पेन्शन लेकर शेष जीवन पुस्तक-प्रणयन में बिताया। १ नवम्बर १६१७ ई० को इनका देहान्त हुआ। बालकों के लिए लिखी इनकी रीडरें और कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। ये गद्य-पद्य दोनों समान सफलता से लिखते थे। इनकी शैली बड़ी सरस, सरल और स्पष्ट है। बालकों के लिए लिखी इनकी कविताओं को बड़े-बूढ़े भी उत्साह और चाव से पढ़ते हैं। इन्होंने उर्दू की पुरानी और नयी दोनों शैलियों को बड़ी सफलता से निभाया है। 'कुल्लियाते इस्माईल' नाम से इनकी रचनाओं का संग्रह प्रकाशित हो गया है। 'बच्चों के इस्माईल' नामक पुस्तक में बच्चों से सम्बन्ध रखनेवाली कविताएँ संगृहीत हैं। प्रेम, शृङ्गार, राजनीति, समाज-सुधार, सदाचार, प्रकृति-वर्णन आदि सब ही विषयों पर इन्होंने कविताएँ की हैं। सूफ़ियाना रंग में भी बहुत कुछ लिखा है। ग़ज़लों में अधिकतर सूफ़ियाना और सादाचारिक भाव हैं। भाषा पर इनका पूरा अधिकार था। ये अपने समय के प्रतिष्ठित विद्वानों में थे। अनुप्रास-हीन कविताएँ भी इन्होंने लिखी हैं। इस्माईल साहब ने अमीर ख़ुसरो की कविताओं की आलोचना और उनकी प्रामाणिक जीवनी लिखने का काम प्रारम्भ किया था, परन्तु मौत ने इन्हें आ घेरा और यह काम हो न सका।

'नज़र'—मुंशी नौबतराय 'नज़र' लखनऊ के एक प्रतिष्ठित कायस्थ-कुल में १८६६ ई० में पैदा हुए। प्रारम्भ में इन्हें उर्दू-फ़ारसी और अँगरेज़ी पढ़ाई गई। कविता की ओर इनकी बचपन से ही

इन्होंने उर्दू कविता में हिन्दी शब्दों का प्रयोग बड़ी ख़ूबी से किया है, जिससे कविता की सुन्दरता बढ़ गई है। अँगरेज़ी कविताओं के भाव लेकर भी कुछ कविताएँ लिखी हैं। उपदेशात्मक कविता लिखने में भी ये सिद्धहस्त थे।

'सरूर' ने कुछ दिनों कानपुर के 'ज़माना' नामक पत्र में भी काम किया था। 'जामे सरूर' और 'ख़ुमख़ानए सरूर' इनकी दो पुस्तकें हैं। इन्हीं में इनकी कविताओं का संग्रह है।

'सरूर' की आर्थिक अवस्था कभी अच्छी नहीं रही। इन्हें सर्वदा निर्धनता का सामना करना पड़ा, यहाँ तक कि अपनी कविताएँ तक बेचनी पड़ीं, जो दूसरों के नाम से छपीं। प्रारम्भ में इनकी कविताएँ मासिक पत्रों में छपी थीं, जिनकी बड़ी धूम मची।

तथा म्यूनिक यूनिवर्सिटी (जर्मन) से 'डाक्टर आव् फिलासफ़ी' की उपाधि प्राप्त की। इसी समय लन्दन से बैरिस्टरी का इम्तहान पास किया। स्वदेश वापस आने पर अपनी पुरानी प्रोफ़ेसरी पर फिर नियुक्त हो गए। पश्चात् बैरिस्टरी शुरू की जिसमें ख़ूब सफल रहे। विदेश-यात्रा में 'इक़बाल' का कितने ही विद्वानों से परिचय हुआ। इन्होंने डाक्टर की उपाधि प्राप्त करने के लिए जो निबन्ध लिखा था, वह मिस्टर अरनाल्ड (अब सर टामस) की भूमिका सहित विलायत में ही प्रकाशित हुआ। हिन्दुस्तान से जाकर अरनाल्ड यूनिवर्सिटी में अरबी के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए थे। उनके छुट्टी लेने पर कुछ दिनों 'इक़बाल' ने उनके स्थान पर काम किया। १६२२ ई० इन्हें 'सर' की उपाधि मिली। 'इक़बाल' ने बड़ी गम्भीर दृष्टि से पूर्वीय और पश्चिमीय दर्शनशास्त्र का अध्ययन किया था। ये बड़ी व्यापक दृष्टि के कवि थे। इनकी कविता का प्रारम्भ ग़ज़लों से हुआ। इन्होंने विलायत में रह कर अधिकतर फ़ारसी में कविताएँ लिखीं। 'हिमालय', 'तराना हिन्दी', 'हिन्दुस्तान', 'बच्चों का क़ौमी गीत', 'नया शिवाला' आदि कविताएँ राष्ट्रिय भावों से भरी हुई हैं। ये कविताएँ इनके विलायत जाने से पूर्व की हैं। विलायत जाकर 'इक़बाल' का दृष्टि-कोण कुछ बदल गया और इनमें 'अखिल मुस्लिम भ्रातृत्व' की भावना घर कर गई। कविताओं में भी यही भाव आने लगे। सरल शब्दों के स्थान में कठिन फ़ारसी शब्दों की प्रचुरता का प्रारम्भ इनकी कविताओं में वहीं से हुआ। उस समय इनकी कविताओं का दार्शनिक रंग और भी गहरा हो गया। इनकी ग़ज़लें थोड़ी मगर बहुत ऊंचे दर्जे की हैं। 'हमदर्दी', 'एक मकड़ा और मक्खी', 'एक गाय और बकरी' और 'एक पहाड़ और गिलहरी', 'बच्चों की दुआ', 'माँ का ख़्वाब' आदि सरल, सरस, स्वाभाविक और उपदेश-पूर्ण कविताएँ इन्होंने बच्चों के लिए लिखी हैं। राष्ट्रिय कविताओं से 'इक़बाल' की बहुत प्रसिद्धि हुई। इनकी 'शिवाला' नामक कविता हिन्दू-मुस्लिम मेल-मिलाप के लिए शुभ सन्देश है। 'तराना हिन्दी' बड़ी श्रेष्ठ कविता

इन्होंने उर्दू कविता में हिन्दी शब्दों का प्रयोग बड़ी ख़ूबी से किया है, जिससे कविता की सुन्दरता बढ़ गई है। अँगरेज़ी कविताओं के भाव लेकर भी कुछ कविताएँ लिखी हैं। उपदेशात्मक कविता लिखने में भी ये सिद्धहस्त थे।

'सरूर' ने कुछ दिनों कानपुर के 'ज़माना' नामक पत्र में भी काम किया था। 'जामे सरूर' और 'ख़ुमख़ानए सरूर' इनकी दो पुस्तकें हैं। इन्हीं में इनकी कविताओं का संग्रह है।

'सरूर' की आर्थिक अवस्था कभी अच्छी नहीं रही। इन्हें सर्देव निर्धनता का सामना करना पड़ा, यहाँ तक कि अपनी कविताएँ तक बेचनी पड़ीं, जो दूसरों के नाम से छपीं। प्रारम्भ में इनकी कविताएँ मासिक पत्रों में छपी थीं, जिनकी बड़ी धूम मची।

तथा म्यूनिक यूनिवर्सिटी (जर्मन) से 'डाक्टर आव् फिलासफ़ी' की उपाधि प्राप्त की। इसी समय लन्दन से बैरिस्टरी का इम्तहान पास किया। स्वदेश वापस आने पर अपनी पुरानी प्रोफ़ेसरी पर फिर नियुक्त हो गए। पश्चात् बैरिस्टरी शुरू की जिसमें ख़ूब सफल रहे। विदेश-यात्रा में 'इक़बाल' का कितने ही विद्वानों से परिचय हुआ। इन्होंने डाक्टर की उपाधि प्राप्त करने के लिए जो निबन्ध लिखा था, वह मिस्टर अरनाल्ड (अब सर टामस) की भूमिका सहित विलायत में ही प्रकाशित हुआ। हिन्दुस्तान से जाकर अरनाल्ड यूनिवर्सिटी में अरबी के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए थे। उनके छुट्टी लेने पर कुछ दिनों 'इक़बाल' ने उनके स्थान पर काम किया। १६२२ ई० इन्हें 'सर' की उपाधि मिली। 'इक़बाल' ने बड़ी गम्भीर दृष्टि से पूर्वीय और पश्चिमीय दर्शनशास्त्र का अध्ययन किया था। ये बड़ी व्यापक दृष्टि के कवि थे। इनकी कविता का प्रारम्भ ग़ज़लों से हुआ। इन्होंने विलायत में रह कर अधिकतर फ़ारसी में कविताएँ लिखीं। 'हिमालय', 'तराना हिन्दी', 'हिन्दुस्तान', 'बच्चों का क़ौमी गीत', 'नया शिवाला' आदि कविताएँ राष्ट्रिय भावों से भरी हुई हैं। ये कविताएँ इनके विलायत जाने से पूर्व की हैं। विलायत जाकर 'इक़बाल' का दृष्टिकोण कुछ बदल गया और इनमें 'अखिल मुस्लिम भ्रातृत्व' की भावना घर कर गई। कविताओं में भी यही भाव आने लगे। सरल शब्दों के स्थान में कठिन फ़ारसी शब्दों की प्रचुरता का प्रारम्भ इनकी कविताओं में वहीं से हुआ। उस समय इनकी कविताओं का दार्शनिक रंग और भी गहरा हो गया। इनकी ग़ज़लें थोड़ी मगर बहुत ऊंचे दर्जे की हैं। 'हमदर्दी', 'एक मकड़ा और मक्खी', 'एक गाय और बकरी' और 'एक पहाड़ और गिलहरी', 'बच्चों की दुआ', 'माँ का ख़्वाब' आदि सरल, सरस, स्वाभाविक और उपदेश-पूर्ण कविताएँ इन्होंने बच्चों के लिए लिखी हैं। राष्ट्रिय कविताओं से 'इक़बाल' की बहुत प्रसिद्धि हुई। इनकी 'शिवाला' नामक कविता हिन्दू-मुस्लिम मेल-मिलाप के लिए शुभ सन्देश है। 'तराना हिन्दी' बड़ी श्रेष्ठ कविता

है। राष्ट्रिय कविताओं के कारण सारा देश इनकी ओर आकृष्ट हो गया था। 'इक़बाल' आशावादी कवि हैं। ये अपनी कविता-द्वारा प्रेम और आशा का सन्देश देते हैं। निराशा इनके पास भी नहीं फटकती। ये असफलताओं को सफलता की सीढ़ी समझते हैं और दुःख को सुख का आधार। 'इक़बाल' व्यावहारिक कवि थे। जीवन की विविध समस्याओं पर इन्होंने सूक्ष्म दार्शनिक दृष्टि से विचार किया है। ये प्रकृति-वर्णन करने में भी ख़ूब सफल हुए। जुगनू, चाँद, सुबह, हिमाला, पहाड़, नदी आदि सभी का शब्द-चित्र इन्होंने बड़ी सुन्दरता से अंकित किया है। 'इक़बाल' ने किसी के कहने से या किसी को प्रसन्न करने के लिए कभी कोई कविता नहीं लिखी। इनकी कितनी ही कविताएँ तो इतनी ओजस्विनी हैं कि मुर्दा शरीरों में भी प्राण-सञ्चार कर देती हैं। इनके छोटे छन्दों में गम्भीर और व्यापक भाव भरे हुए हैं। ये प्रतिनिधि कवि थे। इन्होंने युग की समस्याओं, भावनाओं और विचार-धाराओं को बड़ी कुशलता और स्पष्टता से व्यक्त किया है। कई कविताओं में दार्शनिकता के अतिरिक्त विज्ञान का भी पुट है। इनकी ख्याति विदेशों में भी ख़ूब हुई। 'इक़बाल' की कविताओं के अँगरेज़ी अनुवाद बड़े आदर से पढ़े जाते हैं। 'इसरारे बेख़ुदी' नामक इनकी किताब का अँगरेज़ी अनुवाद बहुत लोक-प्रिय हुआ है। विदेशी विद्वानों ने 'इक़बाल' की पुस्तकों की बड़ी सुन्दर और मार्मिक आलोचनाएँ की हैं। इनकी उर्दू कविताओं के संग्रह 'बाँगे दरा', 'कुल्लियाते इक़बाल' 'बाले जिब्रील' और 'ज़र्बे कलीम' नाम से प्रकाशित हुए हैं। नीचे लिखी हुई इनकी फ़ारसी की किताबें हैं—'इल्मुल इक़्तिसाद', 'फ़िलसफ़ा ईरान', 'असरारे ख़ुदी' (इस पुस्तक का प्रो० निकल्सन कृत अँगरेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित हो गया है), 'रमूज़े बेख़ुदी', 'पयामे मशरिक़' इत्यादि। डाक्टर 'इक़बाल' के सम्बन्ध में और भी अनेक विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें 'रूहे इक़बाल', 'इक़बाल और उसका पैग़ाम', 'इक़बाल', 'फ़लसफ़ा और इक़बाल', 'जौहरे इक़बाल' आदि मुख्य हैं। यद्यपि

'इक़बाल' हज़रत 'दाग़' के 'शिष्य थे, तथापि उनकी कविता में 'ग़ालिब' की शैली का प्रभाव झलकता है। इनकी फ़ारसी कविता पर हाफ़िज़ 'शोराज़ी' की छाप है। २१ अप्रैल १९३८ ई० को 'इक़बाल' का देहान्त हुआ। इनकी अन्तिम कविताएँ 'अरमग़ान हजाज़' के नाम से प्रकाशित हुई हैं।

'चकवस्त'—इनका नाम पं० ब्रजनरायन 'चकवस्त' और उपनाम कुछ नहीं है। ये १८८२ ई० में फ़ैज़ाबाद में पैदा हुए। इनकी शिक्षा लखनऊ में हुई। केनिंग कालिज से १९०५ ई० में बी० ए० पास किया, फिर १९०८ ई० में एल-एल० बी० की परीक्षा पास की और लखनऊ में ही वकालत शुरू कर दी। इनकी वकालत ख़ूब चली। कविता की ओर इनकी बचपन से ही प्रवृत्ति थी। ये प्रकृति-वर्णन अधिक करते हैं। इनकी कविताएँ सूक्ष्म और उच्च भावों से भरी हुई हैं। उनमें पद-पद पर कवि-सुलभ-प्रतिभा का चमत्कार दिखाई देता है। विद्यार्थि-अवस्था में ही इनकी कविताएँ बड़े आदर की दृष्टि से देखी जाती थीं। कालिज में इनकी रचनाओं की धूम थी। इनका उपनाम कुछ न होने पर भी, ये आवश्यकता होने पर अपनी पारिवारिक उपाधि 'चकवस्त' को ही कविता में प्रयुक्त कर देते थे। इन्होंने लिखा भी है—

'ज़िक्र क्या आएगा बज़्मे शुअरा में अपना—
मैं तख़ल्लुस का भी दुनिया में गुनहगार नहीं।'

'चकवस्त' ने धार्मिक, राष्ट्रिय, सामाजिक और प्राकृतिक कविताएँ लिखने में कमाल किया है। इन्होंने मुसद्दस भी ख़ूब लिखे हैं, ग़ज़लें भी बड़ी अच्छी कही हैं। ये किसी के शिष्य न थे। अपनी कविता में हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग करते थे। इनकी कविताएँ सरल, सरस, स्वाभाविक, सुस्पष्ट, भावपूर्ण और विशुद्ध हैं। उनके शब्द-सौन्दर्य और मुहावरों का तो कहना ही क्या। 'चकवस्त' की कविताएँ अधिक नहीं हैं। जो हैं, वे 'सुबहे वतन' के नाम से प्रका-

शित हो चुकी है। इस पुस्तक की भूमिका सर तेजबहादुर सप्रू ने लिखी है। १९१८ ई० में 'चकबस्त' ने 'सुबहे उम्मेद' नामक साहित्यिक पत्र भी निकाला था। इनकी कविताओं में आशिक़-माशूक़ और साग़र-साक़ी का पुराना ढकोसला नहीं है, और न ऊट-पटांग अतिशयोक्तियों या बेढंगी उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं की ही भरमार है।

'चकबस्त' ने 'अवध-पञ्च' की पुरानी फ़ायलों से कुछ लेख चुनकर पुस्तक रूप में प्रकाशित कराए थे। इस पुस्तक के दो खण्ड हैं। इनसे उस समय की साहित्यिक महत्ता प्रकट होती है। इन्होंने मसनवी 'गुलज़ारे नसीम' का सम्पादन कर उसे भी प्रकाशित कराया। इस पर मौ० अब्दुल हलीम 'शरर' ने कुछ आक्षेप किये। 'चकबस्त' ने उनके जवाब दिये। फिर तो एक ख़ासा साहित्यिक विवाद उठ खड़ा हुआ। यह साहित्यिक शास्त्रार्थ 'मुबाहिसा गुलज़ारे नसीम' नाम से प्रकाशित हो चुका है। चकबस्त ने दर्शन, शिक्षा आदि गहन विषयों पर भी कविताएं लिखी हैं। भारतीय महापुरुषों की मृत्यु पर लिखी इनकी श्रद्धाञ्जलियां (मर्सिये) उर्दू-साहित्य में बहुत ऊंचा स्थान रखती हैं। वे करुण रस से ओतप्रोत हैं। इनकी रुबाइयां भी बड़ी सुन्दर हैं। इनकी कविताएं 'दीवाने चकबस्त' के नाम से प्रकाशित हुई हैं।

बड़े आदर से देखे जाते हैं। इनके लेखों का संग्रह 'मज़ामीन चकबस्त' के नाम से प्रकाशित हुआ है।

१९२६ ई० के जनवरी मास में 'चकबस्त' एक मुक़द्दमे के सिलसिले में रायबरेली गए थे। वहाँ से लौटते समय (१२ जनवरी १९२६ ई० को) इन पर पक्षाघात का ऐसा भयङ्कर आक्रमण हुआ कि ये मार्ग ही में चल बसे! इनके भाई रायबहादुर पं० महाराजनरायन 'चकबस्त' लाश को मोटर पर रखकर लखनऊ लाए। उस दिन चकबस्त के शोक में लखनऊ की अदालतें बन्द रहीं और सर्वत्र मातम छा गया! शायरों ने बड़ी करुण कविताएँ लिखकर श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कीं।

हसरत मुहानी—इनका नाम फ़ज़ुलुल हसन और उपनाम 'हसरत' है। १८७५ ई० में मुहान ज़िला उन्नाव में पैदा हुए। १९०३ ई० में अलीगढ़ कालिज से बी० ए० पास किया और लगभग उसी समय 'उर्दूए मुअल्ला' नामक मासिक पत्र निकाला जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। उत्तरी हिन्द के प्राचीन शायरों की जीवनियाँ और कविताओं से परिचित होने में इस पत्र द्वारा बहुत सहायता मिली। लखनऊ-निवासी मु० अमीरुल्ला 'तसलीम' 'हसरत' के कविता-गुरु थे। 'हसरत' की गणना प्रसिद्ध शायरों में है। ग़ज़लों के मुर्दा शरीर में फिर से प्राण-प्रतिष्ठा करने वाले 'हसरत' ही हैं। इन्होंने ग़ज़लों का एक नया मार्ग दिखाया जो इनके नाम से प्रसिद्ध है। 'हसरत' ने अधिकतर ग़ज़लें ही लिखी हैं। इन्होंने ग़ज़लों को आकर्षक, रोचक, स्वाभाविक और सरस रूप दिया है। जिन दोषों ने पहले समय में ग़ज़लों में घर कर लिया था, 'हसरत' ने अपनी ग़ज़लों को उनसे मुक्त रक्खा है। साथ ही 'हसरत' की ग़ज़लों में वे सब विशेषताएँ मौजूद हैं, जिनके कारण कभी ग़ज़लों का बहुत ऊँचा स्थान था। 'हसरत' ने ग़ज़ल लिखने में ख़्वाजा मीर 'दर्द,' 'मीर,' 'सौदा,' 'मसहफ़ी,' 'मोमिन,' 'ग़ालिब,' और 'नसीम' के गुणों को ग्रहण करने और

१७

उनकी परम्परा बनाए रखने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। उन्होंने कहा भी है—

"ग़ालिबो मसहफ़ीओ मीरो नसीमो मोमिन,
तबअ हसरत ने उठाया है हर उस्ताद से फ़ैज़।,,

'हसरत' ने अपनी कविताओं में सीधे-सादे विचार बड़ी सरलता से व्यक्त किये हैं। इनकी भाषा शुद्ध और शैली परिमार्जित है। इनकी सजीव शब्द-योजना और छोटे-छोटे वाक्य बड़े ही हृदयग्राही जान पड़ते हैं। 'हसरत' की कविता में अनुचित और अनावश्यक शब्दों का प्रवेश नहीं हुआ। इनकी कविताओं में करुण और शृङ्गार रस का ख़ूब परिपाक हुआ है। इनका शृङ्गार-वर्णन स्वाभाविक सौन्दर्य की महिमा से ओत-प्रोत है।

'हसरत' देश और जाति के सच्चे सेवक हैं। अपने राज-नैतिक विचारों के कारण इन्हें अनेकों कष्ट सहने पड़े हैं। कविता की ओर इनकी रुचि अल्पायु से ही है। १६१४ ई० में इनकी ग़ज़लों का पहला संग्रह प्रकाशित हुआ तो उसकी बड़ी प्रशंसा हुई। और भी कई संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 'हसरत' की कविताओं में विचारों की पवित्रता, कल्पना की उच्चता, भावों की सूक्ष्मता और सुन्दर साहित्यिकता का दर्शन कर बड़ा आनन्द प्राप्त होता है। इन्होंने 'दीवाने ग़ालिब' की बड़ी मार्मिक टीका लिखी है। प्रेमतत्व की मीमांसा करने में उच्च भावना का परिचय दिया है। 'हसरत' बड़े सहृदय हैं। इन्होंने प्रसिद्ध-प्रसिद्ध उर्दू कवियों की चुनी हुई कविताओं का ग्यारह जिल्दों में एक संग्रह भी प्रकाशित किया है। इनकी रची पुस्तकों के नाम—'कुल्लियाते हसरत', 'इन्तख़ाबे हसरत', 'इन्तख़ाबे कुल्लियात हसरत', 'इन्तख़ाब सुख़न' (ग्यारह खण्डों में)।

'फ़ानी'—मौलाना शौकत अलीख़ाँ 'फ़ानी' १८७६ ई० में, बदायूँ में पैदा हुए। ये मुहम्मद शुजाअत अली ख़ाँ के बेटे थे। प्रारम्भ में अरबी और फ़ारसी पढ़ी। १६०१ ई० में बरेली कालिज

से बी० ए० और १९०८ ई० में अलीगढ़ से एल-एल० बी० पास किया। ये ११ बरस की उम्र से ही कविता करते थे। पहला दीवान २० साल की आयु में तैयार किया, परन्तु वह नष्ट हो गया। दूसरा दीवान १९२६ ई० में 'बाक़ियाते फ़ानी' के नाम से प्रकाशित हुआ। फ़ानी बदायूँ से आगरा आ गये थे और यहाँ माईथान मुहल्ले में रहकर वकालत करते थे। आगरा से आपको हैदराबाद बुला लिया गया; और वहाँ शिक्षा-विभाग में एक ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित हुए। अन्त को हैदराबाद में ही देहान्त हुआ। फ़ानी का जीवन निराशाओं और असफलताओं का जीवन था। उनकी कविताओं में भी यही भाव भरे हुए हैं, परन्तु इन भावों से कविता के सौन्दर्य या चमत्कार में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया। 'फ़ानी' की कविताएँ बड़ी दार्शनिक, गम्भीर और करुण रस से पूर्ण हैं। वे स्वाभाविक, सरल और हृदय को स्पर्श करने वाली हैं। भाषा की विशुद्धता और मुहाविरों की सुन्दरता देखते ही बनती है। इनकी कविता में अरबी-फ़ारसी के अप्रचलित और कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ, इनकी कविताएँ 'ग़ालिब', 'दाग़' और 'मीर' का मिश्रण-सा प्रतीत होती हैं। 'फ़ानी' की कविताओं का संग्रह 'इरफ़ानियाते फ़ानी' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। ये फ़ारसी में भी बड़ी सुन्दर कविता करते थे। अपने समय के सर्वश्रेष्ठ कवियों में गिने जाते थे। निःसन्देह उर्दू-साहित्य में इनका स्थान बहुत ऊँचा था।

'सीमाब'—इनका नाम मौलवी आशिक़ हुसेन और उपनाम 'सीमाब' है। ये १८८० ई० में आगरा में पैदा हुए। मौलवी मुहम्मद हुसेन सिद्दीक़ी के बेटे हैं। उर्दू-फ़ारसी पढ़कर अजमेर कालिज में अँगरेज़ी का अध्ययन किया, फिर कुछ दिनों तक रेलवे में नौकर रहे। उस समय इनकी मज़हबी ग़ज़लें बड़ी जोशीली होती थीं। नौकरी छोड़कर १९२१ ई० से ये पूर्ण रूप से साहित्य-सेवा में लग गए। आगरे से इन्होंने 'पैमाना', 'ताज' और 'शायर' पत्र निकाले, जो बड़ी सफलता से चले। 'शायर' (मासिक) तो अब भी निकल

रहा है। उर्दू संसार में इसकी अच्छी प्रसिद्धि है। 'सीमाव' ने ढाई सौ के लगभग पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें साहित्य, इतिहास, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि सभी विषय हैं। ये मिर्ज़ा 'दाग़' के शिष्य हैं। 'सीमाव' के बहुसंख्यक शिष्य सारे देश में फैले हुए हैं। कितने ही शागिर्द तो बड़े प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध हैं। उर्दू की 'आगरा-शैली' के ये प्रतिष्ठाता और नेता हैं। स्त्री-शिक्षा पर भी इन्होंने बहुत लिखा है। ये ग़ज़लें बड़ी ख़ूबी से लिखते हैं। गद्य के भी प्रसिद्ध लेखक हैं। 'मुरस्सा' और 'आगरा अख़बार' के सम्पादक हैं। इनकी कविताओं की धूम है। 'सीमाव' की कुछ किताबों के नाम—'कलीम अज़्म', 'कार अमरोज', 'सीरतुलहसीन', 'वफ़ा की देवी', 'सीरतुल अकवरी', 'ज़माना-ख़तो किताबत', 'ख़ातूने जन्नत', 'हालाते हाली', 'चराग़े दाग़', 'नूरजहाँ', 'ज़ेबुन्निसा', 'जामे कौसर', 'ज़माना आदाव', 'साज़ो आहंग' इत्यादि।

'सीमाव' द्वारा संस्थापित 'लिटरेरी सुसाइटी' की अध्यक्षता में बड़े सफल मुशायरे होते रहते हैं। ये मुशायरों में गाकर कविता सुनाने के पक्ष में नहीं हैं। ये ऊँची आवाज़ से अपनी ग़ज़ल पढ़ देते हैं, जिसमें एक हलकी-सी लय होती है। इन्होंने फ़ारसी की प्रसिद्ध पुस्तक 'मसनवी मौलाना रूम' का पद्यात्मक अनुवाद किया है। ये ग़ज़ल, रुबाई, नज़्म आदि सभी तरह की कविता लिखते हैं। इनकी गद्य-पद्य दोनों शैलियों में प्रौढ़ता है।

असग़र गोंडवी—हज़रत असग़र हुसेन 'असग़र' का जन्म १८८४ ई० में हुआ। ये गोरखपुर के रहने वाले हैं, परन्तु इनके पिता नौकरी के कारण अधिकतर गोंडा में रहे। वे गोंडा में क़ानूनगो थे, पेन्शन लेकर वहीं वस गये। 'असग़र' की पढ़ाई-लिखाई घर पर ही हुई, इन्होंने अपने परिश्रम से ही इतनी योग्यता प्राप्त कर ली थी। कविता का शौक़ इनको वचपन से ही है। 'जिगर' (बिलग्रामी) और 'तसलीम' से इसलाह लेते थे। इनकी कविता माधुर्य और सरसता के

लिए प्रसिद्ध है, वह सहृदय-समाज को बलात् अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। मादकता भी उसमें .खूब है। इनकी कविताओं का एक संग्रह 'निशाते रूह' के नाम से प्रकाशित हुआ है। दूसरा संग्रह 'सरोदे ज़िन्दगी' के नाम से प्रकाशित हुआ है।

'फ़िराक़'—मुंशी रघुपत सहाय 'फ़िराक़' का जन्म गोरखपुर में १८६६ ई० में हुआ। इनके पिता मुंशी गोरखप्रसाद 'इबरत' बड़े प्रसिद्ध वकील और कवि थे। 'फ़िराक़' की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई, फिर बी० ए० पास किया और डिपुटी कलक्टर हो गए, परन्तु कांग्रेस के असहयोग-आन्दोलन में इन्होंने यह पद त्याग दिया। उस समय डेढ़ साल तक जेल में भी रहे। यद्यपि इनकी प्रवृत्ति कविता की ओर बचपन से ही थी, परन्तु उसका विकास कारागार में हुआ। ये सांस्कृतिक, प्राकृतिक, स्वाभाविक, ऐतिहासिक सभी प्रकार की कविताएँ लिखते हैं। उनमें सरलता, सरसता और भावपूर्णता .खूब होती है। ये मानव-स्वभाव के बड़े अच्छे पारखी हैं। फ़िराक़ ने सब ही तरह की कविताएँ लिखी हैं, परन्तु इनकी ग़ज़लें बहुत पसन्द की जाती हैं। इनकी कविताओं का संग्रह दो खण्डों में तैयार हुआ है।

फ़िराक़ ने पीछे एम० ए० पास किया और कई कालिजों में अध्यापक रहे। आजकल इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में लेक्चरर हैं।

मौ० ज़फ़र अली—आपका जन्म १८७१ ई० में काश्मीर में हुआ। इनके पिता बड़े ज़मींदार थे। उर्दू-फ़ारसी और अरबी वज़ीराबाद और पटियाला में पढ़ी। फिर अलीगढ़ कालिज से बी० ए० पास किया। कुछ दिनों हैदराबाद में भी रहे और वहाँ मिर्ज़ा 'दाग़' के शिष्य बने। पिता का देहान्त होने पर ये लाहौर चले आए और 'ज़मींदार' नामक दैनिक पत्र निकाला जो बड़ी शान से चल रहा है। ये साहित्यिक, कवि, पत्रकार, ग्रन्थकार और व्याख्याता हैं। इनकी कविताएँ अधिकतर राजनैतिक और धार्मिक होती हैं।

गद्य और पद्य दोनों बड़ी सफलता से लिखते हैं। नागरिक जीवन के सम्बन्ध में इनकी 'मुआशरत' नामक पुस्तक बहुत प्रसिद्ध है। इनकी कुछ पुस्तकों के नाम:—'बहारिस्तान'-कविताओं का संग्रह। 'मार्का मज़हब और साइंस'—अँग्रेज़ी की एक प्रसिद्ध पुस्तक का अनुवाद। इसमें धर्म्म और विज्ञान का सूक्ष्म भेद दिखाया गया है। 'सुनहरा घोंघा,' 'मेरो ऐनक' आदि भी इनकी लिखी पुस्तकें हैं।

महरूम—इनका नाम तिलोकचन्द और उपनाम 'महरूम' है। १८८७ ई० में ईसाखेल (मियाँवाली) में पैदा हुए। ये भगत रामदास के पुत्र हैं। बी० ए० तक शिक्षा पाई है। कई संस्थाओं में अध्यापकी कर चुके हैं। बचपन से ही इनकी कविता की ओर प्रवृत्ति है। ये प्रकृति-निरीक्षण के बड़े प्रेमी हैं, अतः इनकी कविताओं में प्रकृति का बड़ा स्वाभाविक और सुन्दर चित्र अंकित हुआ है। १९१५ में इनकी पत्नी का देहान्त हुआ, जिसके शोक में इन्होंने बड़ी ही करुण कविताएँ लिखी हैं। करुण काव्य लिखने में ये सिद्धहस्त हैं। जीवन की संकटपूर्ण परिस्थितियों ने इन्हें साक्षात् करुण रस बना दिया है। 'महरूम' ने बिना किसी साम्प्रदायिक भेद-भाव के महापुरुषों के वृत्तान्त वर्णन किये हैं। इनकी कविताओं का संग्रह 'गंजेमानी' के नाम से प्रकाशित हुआ है। 'महरूम' की कविताओं से प्रभावित होकर महाकवि अकबर ने निम्न लिखित शेर लिखा था—

है दाद का मुस्तहक़ कलामे महरूम,
लफ़्ज़ों का जमाल और मानी का हुजूम।
है इनका सख़ुन मुफ़ीद दानिश आमोज़,
इनकी नज़्मों की है बजा मुल्क में धूम।

'जोश' मलीहाबादी—हज़रत शबीर हसनख़ाँ 'जोश' का जन्म, १८९६ ई० में मलीहाबाद में हुआ। इनके परिवार में चार पीढ़ियों से कविता होती चली आती है। इनके पिता नवाब बशो-

रुद्दीन ख़ाँ 'बशीर' भी अच्छे कवि थे। उनका एक दीवान भी है। दादा और परदादा भी प्रसिद्ध कवि थे। 'जोश' नौ-दस बरस की उम्र से ही कविता करते हैं। प्रारम्भ में 'अज़ीज़' लखनऊ से इसलाह ली थी। आपने 'उसमानिया यूनिवर्सिटी' के अनुवाद-विभाग में भी काम किया है। इन्होंने अपनी कविताओं को आशिक़-माशूक़ों के चोचलों से अछूता रखा। ये मानव-हृदय का चित्र बड़ी सुन्दरता से अङ्कित करते हैं। जो कुछ लिखते हैं, तन्मय होकर लिखते हैं। इसीलिए उनके हृदयोद्गार सीधे हृदय तक पहुँचते हैं। ये किसी के कहने-सुनने से कविता नहीं करते, जो कुछ लिखते हैं 'स्वान्तः सुखाय' लिखते हैं। अपनी उमंग आने पर, अन्तरात्मा की प्रेरणा से लिखते हैं। उर्दू में इन्होंने अपनी कविताओं द्वारा एक क्रान्ति-सी कर दी है। ये देहली से निकलने वाले 'कलीम' नामक पत्र के सम्पादक भी हैं। इनकी रुबाइयों का संग्रह 'जुनूनो हिकमत' के नाम से प्रकाशित हुआ है। 'आयातो नग़मात', और 'नक़शोनिगार' इनकी कविताओं का संग्रह है। 'शुअलाओ शबनम'—इसमें राजनैतिक और इसलामी कविताएँ संगृहीत हैं। 'फ़िक़रोनिशात'—यह भी कविताओं का संग्रह है। 'शायर की रातें', 'हर्फ़ हिकायत' और 'पैग़म्बरे इसलाम' आदि भी इनकी किताबें हैं। इन कविता-संग्रहों में 'जोश' की राष्ट्रिय, धार्मिक, राजनैतिक और नैतिक सभी प्रकार की कविताएँ संगृहीत हैं।

'हफ़ीज़' जालन्धरी—इनका जन्म १९०० ई० में जालन्धर में हुआ। इन्होंने बहुत थोड़ी आयु में ही कविता लिखनी शुरू कर दी थी। पहले ग़ज़लें लिखीं, फिर तो इनकी कविताओं का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया। ये अपनी कविताओं का संशोधन 'गरामी' से कराते थे। १९२५ ई० में ये ख़ैरपुर (सिन्ध) में दरबारी कवि के रूप में नियुक्त किये गए, परन्तु वहाँ का जीवन इन्हें विशेष रुचिकर प्रतीत न हुआ, अतः वापस चले आए। इन्होंने अपनी कविताओं का संग्रह 'नग़मए ज़ार' के नाम से प्रकाशित किया है। इससे इनकी

ख़ूब ख्याति हुई। प्रसिद्ध पुस्तक 'शाहनामा इसलाम' का उर्दू पद्यानुवाद भी किया, जिसके तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इससे तो इनकी लोक-प्रियता बहुत ही बढ़ गई है। कुछ दिनों इन्होंने लाहौर के 'फूल' और 'तहज़ीब निसवाँ' का सम्पादन भी किया था। उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त इनकी निम्नलिखित पुस्तकें भी हैं—'सोज़ो साज़'—इनकी कविताओं का संग्रह। 'हफ़्त पैकर'—सात कहानियाँ। 'मयादी अफ़साने'—कहानी-संग्रह है। 'नग़मए ज़ार'—ग़ज़लों का संग्रह (दो भागों में)।

'तहसीन'—इनका नाम मुहम्मद अतर हुसेन और उपनाम 'तहसीन' था। ये मुहम्मद बाक़र ख़ाँ शौक़ के बेटे थे। इनका सम्बन्ध अबूल मुतसव्विरख़ाँ सफ़दर जंग के दरबार से था, फिर जनरल स्मिथ के मीर मुंशी होकर उनके साथ कलकत्ता चले गये। साहब के विलायत जाने पर ये पटना पहुँचे और वहाँ वकालत शुरू कर दी। पटना से फ़ैज़ाबाद गये और वहाँ नवाब शुजाउद्दौला के यहाँ नौकर हो गये और नवाब आसिफ़ुद्दौला के समय तक बराबर नौकरी करते रहे। ये सुलेखक होने के अतिरिक्त साहित्यिक बड़े अच्छे थे, ज़ाब्ता अँग्रेज़ी, और 'तवारीख़, कासिमी' ये दो पुस्तकें इन्होंने लिखी हैं। अमीर ख़ुसरो की फ़ारसी पुस्तक 'चहार दरवेश' का उर्दू अनुवाद 'नौतर्ज़ मुरस्सा' के नाम से किया है। इसकी भाषा बड़ी लच्छेदार और फ़ारसी शब्दों से भरपूर है।

'जलील'—इनका नाम हाफ़िज़ जलील और उपनाम 'जलील' था। ये हाफ़िज अब्दुल करीम के बेटे थे। १८६४ ई० में मानिकपुर (अवध) में पैदा हुए। लखनऊ में शिक्षा पाई। हज़रत अमीर मीनाई के प्रधान शिष्यों में थे। अरबी और फ़ारसी के प्रसिद्ध विद्वान् थे। १८९९ ई० के लगभग अपने उस्ताद अमीर मीनाई के साथ हैदराबाद गये और वहाँ १९०८ ई० में स्वर्गीय निज़ाम मीर महबूब अलीख़ाँ साहब ने इनकी ५००) मासिक वृत्ति नियत कर इन्हें अपना उस्ताद

बनाया। पहले इस पद पर हज़रत दाग़ नियुक्त थे, जिनका उस समय देहान्त हो गया था। १६०६ ई० में 'जलील' का पहला दीवान प्रकाशित हुआ। इनकी कविता-शैली इनके गुरु अमीर मीनाई से मिलती-जुलती है। भाषा और भावों की दृष्टि से ये बड़े उत्कृष्ट कवि थे। इनको अमीर मीनाई का स्थानापन्न कहा जाता है। 'जलील' की पुस्तकों में 'ताजेसुख़न,' 'जानेसुख़न 'मैराजेसुख़न', 'सरताजेसुख़न', 'कलामे जलील' बहुत प्रसिद्ध हैं। 'तज़कीरो तानीस' नामक पुस्तक में इन्होंने सात सहस्र शब्दों की व्याख्या की है। उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त 'जलील' ने 'उर्दू का अरूज़' 'गुलेसदवर्ग,' 'अमीर मीनाई की जीवनी,' 'रूहे सुख़न' आदि पुस्तकें भी लिखी हैं। ये सुप्रसिद्ध 'अमीरूल लुग़ात' के सम्पादकीय विभाग के अध्यक्ष थे। निज़ाम सरकार की ओर से इन्हें कितनी ही ऊँची-ऊँची उपाधियाँ मिली थीं।

'तबातबाई'—सैयद अली हैदर नज़्म तबातबाई १८५० ई० लखनऊ में पैदा हुए। ये मीर मुस्तफ़ा हुसेन 'तबातबाई' के बेटे थे। म० मंडूलाल 'ज़ार' से कविता सीखी। अवध के बादशाह के पुत्रों के अध्यापक भी रहे। वाजिदअली शाह के कलकत्ता चले जाने पर, ये निज़ाम कालिज हैदराबाद में प्रोफ़ेसर हो गये और लगभग ३० वर्ष तक इस पद पर रहे। निज़ाम के युवराज के भी गुरु रहे। हैदराबाद के अनुवाद-विभाग में भी काम किया। अनुवाद करने में ये बड़े सिद्धहस्त थे। बड़े ही धार्मिक, सत्य-प्रिय, मिलनसार और भावुक थे। १६३३ ई० में इनका देहान्त हुआ। इनके मरने के बाद इनका दीवान प्रकाशित हुआ है, जिसमें ग़ज़लें, रुबाइयाँ और तारीख़ें हैं। 'तारीख़ योरोप' (अनुवाद है) और 'शरह दीवान ग़ालिब' भी इनकी लिखी पुस्तकें हैं।

रियाज़ ख़ैराबादी—इनका जन्म १८५१ ई० में ख़ैराबाद ज़ि० सीतापुर (यू० पी०) में हुआ। इनकी शिक्षा इनके विद्वान् पिता सैय्यद तुफ़ैल अहमद द्वारा घर पर ही हुई। इन्हें अपने जीवन में

अधिकतर कष्टों और असफलताओं का ही सामना करना पड़ा। इनकी कविता बड़ी सरस और हृदयहारिणी है। उसमें प्रेम और सौन्दर्य का चित्र बड़ी सुन्दरता से अङ्कित किया गया है। कहीं माशूक़ों से छेड़छाड़ है तो कहीं 'पीरमुग़ाओं' से दिल्लगी है। कभी किसी की भाव-भंगी पर फबती छोड़ते हैं तो कभी किसी की लम्बी दाढ़ी की हँसी उड़ाते हैं। ये माशूक़ की ख़ुशामद बहुत कम करते हैं। बल्कि कभी-कभी तो स्वयम् रूठ जाते हैं। इनकी कुछ किताबों के नाम—

'रियाज़ रिज़वाँ' (दीवान), 'हरमलरा कामिल'—यह अँग्रेज़ी पुस्तक Light of Heaven का अनुवाद है।

'बे.ख़ुद' देहलवी—हाजी सैयद वहीउद्दीन अहमद 'बे.ख़ुद' का जन्म १८६० ई० में भरतपुर में हुआ। फिर ये अपने पिता सैयद शम्सुद्दीन (सय्यद अहमद) 'सालिम' के साथ देहली चले गये। वहीं पढ़े-लिखे। कविता में इनकी बचपन से ही रुचि है। ये 'दाग़' के शिष्य हैं और उनके स्थानापन्न भी कहे जाते हैं। जितने अच्छे कवि हैं, उतने ही अच्छे काव्य-मर्मज्ञ भी। इन्होंने 'शरह दीवान ग़ालिब' (ग़ालिब के दीवान का टीका) लिखकर उर्दू साहित्य की बड़ी सेवा की है। ३२ वर्ष तक अंग्रेज़ों को उर्दू-फ़ारसी पढ़ाते रहे। इनकी भाषा में बड़ा लोच और मिठास है। कविता बाहरी और भीतरी दोनों दृष्टियों से उत्कृष्ट है। ये बड़े धार्मिक और ईश्वर-भक्त हैं। 'गुफ़्तार बेख़ुद'—इनकी कविताओं का संग्रह है। 'दरशहवार बे.ख़ुद'—कविता-संग्रह। 'शरह दीवान ग़ालिब' आदि इनकी लिखी पुस्तकें हैं।

'तसलीम'—मु० अमीरुल्ला 'तसलीम' १८२० ई० में फ़ैज़ाबाद ज़िले में पैदा हुए। फ़ारसी और अरबी की शिक्षा घर पर ही हुई। ये 'नसीम' देहलवी के शिष्य थे। देहली शैली के समर्थक थे। ख़ुशख़त भी ख़ूब थे। इनका अधिक समय रामपुर में व्यतीत हुआ।

१९११ ई० में, ९१ वरस की आयु में देहान्त हुआ। इनकी कुछ रचनाएँ ग़दर के समय नष्ट हो गईं। इनकी लिखी किताबों के नाम—'नज़्म अरजमन्द', 'नज़्म दिल अफ़रोज़', 'दफ़्तर ख़याल' ये दीवान हैं। मसनवियाँ—'नालए तसलीम', 'शाम गरेबाँ', 'सुवह ख़न्दाँ', 'दिलो-जान', 'नग़मए बुलबुल', 'शौकत शाहजहानी', 'जौहरे इन्तख़ाब', 'तारीख़ रामपुर'। इनके अतिरिक्त इन्होंने नवाव रामपुर की योरोप-यात्रा पद्य में लिखी है। इसमें बीस-पच्चीस हज़ार शेर हैं। कविता सरल और स्वाभाविक है। मसनवियाँ वहुत सुन्दर हैं। तसलीम के अनेक शिष्य हैं, जिनमें हसरत मुहानी वहुत प्रसिद्ध हैं। ये जीवन-भर संकट भोगते रहे, परन्तु सन्तुष्ट और प्रसन्नचित्त रहे। ये कविता की पुरानी पद्धति के समर्थक थे।

'शाद'—सैयद अली मुहम्मद 'शाद' का जन्म १८४६ ई० में अज़ीमावाद में हुआ। ये सैय्यद मिर्ज़ा अव्वास के वेटे थे। इनकी शिक्षा विधिपूर्वक हुई और थोड़े ही दिनों में ये फ़ारसी-उर्दू साहित्य के अच्छे विद्वान् हो गये। इनके कविता-गुरु शाह उल्फ़त हुसेन 'फ़रयाद' थे। इन्होंने अपनी सारी आयु उर्दू-साहित्य की सेवा में व्यतीत की। इनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर सरकार ने इन्हें 'ख़ान वहादुर' की उपाधि और एक हज़ार रुपया वार्षिक की वृत्ति प्रदान की थी। १९२६ ई० में इनका देहान्त हुआ। 'शाद' की कविताओं में नीति, दर्शन और अद्वैतवाद के भाव अधिक मात्रा में मौजूद हैं। इनकी शैली 'मीर' से वहुत मिलती-जुलती है। इन्होंने अपने युग के वड़े-वड़े कवियों की संगत की थी, इससे कविता में अच्छी प्रौढ़ता आ गई। इनकी कुछ किताबों के नाम 'फ़िक्रे वलीग़'—शाद की कविताओं का संग्रह। 'हयाते फ़रयाद'—फ़रयाद की जीवनी। 'मैख़ानए इलहाम'—शादकी चुनी हुई कविताएँ। 'मसनवी मादरे हिन्द', 'मसनवी मादरे वतन', 'ज़हूरे रहमत' (कोष) इत्यादि।

'नादिर'—इनका नाम नादिर अलीख़ाँ और उपनाम 'नादिर'

था। ये काकोरी के रहने वाले थे। इनकी कविताएँ देश-भक्ति के भावों से भरी हैं। ये उर्दू में अँगरेज़ी कविता का रंग लाने के पक्ष में थे। इनकी नीचे लिखी कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। 'शमओ परवाना', 'शुआए उम्मेद', 'पैकर बेज़बान' और 'फ़िलस्फ़ा शायरी'। राष्ट्रीय कविताओं में 'मुक़द्दस सर ज़मीन' और 'मादरे हिन्द' बहुत प्रभावपूर्ण और आकर्षक हैं। इन्होंने अँगरेज़ी ढंग पर उर्दू में 'लाल रुख़' नाम की एक मसनवी लिखी है। इनका देहान्त १९१२ ई० में ४५ वर्ष की आयु में हुआ।

अली नक़ी 'सफ़ी'—मौलाना अली नक़ी 'सफ़ी' का जन्म २ जनवरी १८६२ ई० को लखनऊ में हुआ। अरबी, फ़ारसी की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। फिर अँगरेज़ी भी पढ़ी। १८८३ ई० में सरकारी नौकर हो गए और १९२३ ई० में पेंशन ले ली। ये लखनऊ-शैली के अनुयायी हैं। इनकी कविता उसी पुरानी प्रणाली का नमूना है। इन्होंने देश की अधोगति, राष्ट्र के दुर्भाग्य और जाति की दुर्दशा पर भी बहुत कुछ लिखा है। इनकी कविता में माधुर्य, प्रभाव और आकर्षण है। इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हो गया है।

बर्क़ देहलवी—मुंशी महाराज बहादुर 'बर्क़' देहली में पैदा हुए। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर हुई, फिर इन्होंने मुंशी फ़ाज़िल की परीक्षा पास की। अँगरेज़ी में बी० ए० की उपाधि प्राप्त की। ये डाक-घर के एकाउण्ट विभाग (हिसाबी सीग़े) में मुलाज़िम थे। कविता की ओर प्रारम्भ से ही रुचि थी। इनके कविता-गुरु आग़ा शायर थे। प्रारम्भ में इनकी कविताएँ उर्दू मासिक पत्रों में प्रकाशित हुईं, तो उन्हें पढ़कर लोगों का ध्यान एकदम इनकी ओर आकृष्ट हो गया और ये उच्च-कोटि के कवि समझे जाने लगे। इन्होंने अपनी कविता का प्रारम्भ ग़ज़लों से किया, जो बहुत लोकप्रिय हुए। फिर तो इन्होंने विविध विषयों पर अनेक छन्दों में कविताएँ लिखीं। इनकी कल्पनाशक्ति बहुत उच्च और तीव्र थी। भाषा देहली की टक-

साली उर्दू थी। इनकी आयु बहुत नहीं हुई, युवावस्था में ही (१६३४ ई० में) परलोकवासी हो गए। इनकी कविताओं के दो संग्रह इनके जीवन-काल में ही प्रकाशित हो गए थे। (१) 'मतलए अनुवार' और (२) कृष्ण-दर्पण। इसके पश्चात् 'हर्फ़ नातमाम' नाम से इनकी कविताओं का एक और संग्रह इनके परलोक-गमन के अनन्तर प्रकाशित हुआ है।

अज़ीज़—मिर्ज़ा मुहम्मद हादी 'अज़ीज़' का जन्म १८८२ ई० में लखनऊ में हुआ। शिक्षा घर पर ही हुई। इन्होंने प्रसिद्ध उर्दू कवियों की, कविताओं का बड़ी संलग्नता से अध्ययन किया। ये स्वयं ऊँचे दरजे के कवि गज़लें बड़ी सरलता और सुन्दरता से लिखते थे। इनकी भाषा बड़ी विशुद्ध है। आधुनिक युग की प्रवृत्ति को लक्ष्य में रखते हुए ही इन्होंने कविताएँ लिखी हैं। इनके क़सीदे अपनी विशेषता रखते हैं। ये अपने समय के प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध कवियों में गिने जाते हैं। १६३५ ई० में मिर्ज़ा अज़ीज़ का देहान्त हुआ। इनकी किताबों के नाम—'क़सायद अज़ीज़'—इसमें क़सीदों का संग्रह है। 'गुलकदा अज़ीज़' इसमें अज़ीज़ की कविताएँ संगृहीत हैं। अज़ीज़ुल लुग़ात'—यह शब्द-कोष है।

'साक़िब' लखनवी—मिर्ज़ा ज़ाकर हुसेन क़ज़लवाश 'साक़िब' का जन्म १८६६ ई० आगरा में हुआ। अँगरेज़ी आगरे में पढ़ी शेष शिक्षा लखनऊ में हुई। ये नवीन प्रणाली की ग़ज़लें लिखने वाले शायरों में बहुत ऊँचा स्थान रखते हैं। इन्होंने ग़ज़लों को बहुत सुन्दर और समीचीन रूप दिया है। साहित्य की दृष्टि से इनकी रचनाओं ने बड़ी ख्याति प्राप्त की है। प्रेम और सौन्दर्य के प्रसंगों का इन्होंने बड़ी ख़ूबी से वर्णन किया है। ये मानव-स्वभाव और सूक्ष्म भावों के बड़े कुशल चित्रकार हैं। अपने विषय को विस्तृत न बनाकर सदा संक्षेप में ही कहने की चेष्टा करते हैं। इनका दीवान राजा साहब महमूदाबाद ने प्रकाशित कराया है।

आग़ा शायर—हज़रत आग़ा 'शायर क़ज़लवाश का जन्म

१८७१ ई० में देहली में हुआ। ये आग़ा अब्दुल अली क़ज़लवाश के बेटे हैं। फ़ारसी और अरबी के अच्छे विद्वान् हैं। बहुत छोटी आयु में कविता करने लगे थे। नवाब अहमद सईद ख़ाँ 'तालिब' से इसलाह लेते थे। पच्चीस-तीस वर्ष की आयु में हैदराबाद पहुँचे और वहाँ मिर्ज़ा 'दाग़' के शिष्य हुए। इन्होंने .क़ुरान का उर्दू पद्य में अनुवाद किया है। आग़ाशायर की कविता प्राचीन कविता-युग की याद दिलाती। इनकी भाषा में बड़ा प्रवाह, माधुर्य्य और सौन्दर्य है। ये प्राचीनता के पोषक हैं। इनकी पुस्तकों के नाम – 'तीरोनश्तर'—ग़ज़लों का संग्रह है। 'ख़मकदा ख़य्याम' उमर ख़य्याम की रुबाइयों का उर्दू तरजुमा। 'ख़ुमारिस्तान'—उर्दू निबन्धों का संग्रह। 'आवेज़ागोश'—अँग्रेज़ी की चुनी हुई कुछ कहानियों का उर्दू अनुवाद—इत्यादि।

'रवाँ'—चौधरी जगमोहनलाल 'रवाँ' १८८९ ई० में उन्नाव में पैदा हुए। ये चौधरी गंगाप्रसाद के बेटे थे। इन्होंने एम० ए०, एल-एल० बी० पास करके उन्नाव में वकालत शुरू की। कविता की ओर रुचि बचपन से ही थी और अन्त तक रहा। ये अपनी कविता का संशोधन 'अज़ीज़' लखनवी से कराते थे। इनकी ग़ज़लों में 'अज़ीज़' की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। ग़ज़लों में भाषा की विशुद्धता का पूरा ध्यान रखते थे। कविताओं में गम्भीरता और प्रौढ़ता का खूब प्रभाव है। वे पाठक के हृदय पर बड़ा असर डालती हैं। 'नाल-ए-नामरवाँ' और 'रूहेरवाँ' इनकी कविताओं के संग्रह हैं। ये महात्मा बुद्ध पर 'मसनवी' लिख रहे थे जो पूरी न हो सकी। १९३४ ई० में इनका देहान्त हो गया।

'नूह' नारवी—ये १८७९ ई० में भवानीपुर (रायबरेली) में पैदा हुए। इनके पिता की जन्मभूमि इलाहाबाद ज़िले का नारा नामक क़सबा है। ये उर्दू, फ़ारसी और अरबी के अच्छे विद्वान् हैं। अँगरेज़ी भी जानते हैं। प्रारम्भ में ये अपनी कविता अमीर मीनाई और 'जलाल' को दिखाते रहे, फिर 'दाग़' के शिष्य हो गए। 'दाग़' ने इन्हें अपने

पास हैदराबाद भी बुलाया था। ये 'दाग़' के मुख्य स्थानापन्नों में समझे जाते हैं। इनके दो दीवान प्रकाशित हो चुके हैं—'सफ़ीना नूह' और 'तूफ़ान नूह'। 'अपजाज़ नूह' नामक तीसरा दीवान भी प्रकाशित होने वाला है। नूह साहब के लगभग ४०० शिष्य हैं। सुप्रसिद्ध कवि सुखदेव प्रसाद सिनहा 'बिस्मिल' इनके प्रधान शिष्यों में से हैं।

'आसी'—इनका नाम अब्दुल बारी और उपनाम 'आसी' है। ये १८९३ ई० में हापुड़ (मेरठ) के निकटवर्ती एक गाँव में पैदा हुए। उर्दू, फ़ारसी और अरबी के विद्वान् हैं। इन्होंने चिकित्साशास्त्र भी पढ़ा है। इनके कविता-गुरु मिर्ज़ा 'ग़ालिब' हैं। 'आसी' ने कुछ दिनों देहली के 'हमदर्द' नामक अख़बार में भी काम किया है। इनके पिता मौ० हिसामुद्दीन अहमद 'हिसाम' भी सुप्रसिद्ध कवि थे। इन्होंने ग़ज़ल, क़सीदे, मसनवी, रुबाई आदि सब ही लिखे हैं। दार्शनिक कविताएँ भी की हैं। 'ग़ालिब' और 'हाफ़िज़' की कविताओं पर विस्तृत व्याख्याएँ लिखी हैं। कई तज़किरे लिखे हैं और भी बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें कुछ उपन्यास भी हैं। इनकी कविताओं के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कुछ संग्रह अप्रकाशित भी हैं। इनके लगभग १५० शिष्य हैं, जिनमें प्रसिद्ध हास्य-लेखक शौकत थानवी भी हैं।

'आसी' ग़ाज़ीपुरी—इनका नाम मौ० शाह अब्दुल अलीम और उपनाम 'आसी' था। १८९० वि० में सिकन्दरपुर (बलिया) में पैदा हुए। ग़ाज़ीपुर में अधिक रहने के कारण ग़ाज़ीपुरी कहलाए। ये अरबी और फ़ारसी के प्रसिद्ध विद्वान् थे। कविता की ओर इनको बचपन से ही रुचि थी। पहले ये अपनी कविता में कठिन शब्दों का प्रयोग करते थे, फिर उसे बोलचाल की भाषा में लिखने लगे। 'आसी' सूफ़ी थे। हिन्दुओं और मुसलमानों में किसी प्रकार का भेद-भाव न रखते थे। इनकी कविता में प्रेम, भक्ति, वैराग्य, विरह आदि का अधिक वर्णन है। इन्होंने हिन्दी दोहे भी अच्छे लिखे हैं। ये बड़े

सात्विक थे, जनता में इनके सौजन्य की बड़ी धाक थी। इनके शिष्यों की संख्या सैकड़ों है। 'आसी' के कई दीवान प्रकाशित हो चुके हैं। १९१७ ई० में इनका देहान्त हुआ।

'बिस्मिल'—श्री सुखदेवप्रसाद सिनहा 'बिस्मिल' का जन्म ११ नवम्बर १८९९ ई० को प्रयाग के एक प्रतिष्ठित कायस्थ परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम मुन्शी विश्वेश्वर दयालु था। 'बिस्मिल' को प्रारम्भ में उर्दू-फ़ारसी की शिक्षा दी गई। शायरी की ओर इनकी बचपन से ही रुचि थी। ये प्रसिद्ध शायरों की कविताएँ बड़े शौक़ से पढ़ते थे। 'बिस्मिल' ने कुछ दिनों अँगरेज़ी भी पढ़ी थी। इनकी प्रारम्भिक कविताओं से ही इनके उज्ज्वल भविष्य का आभास होने लगा था। इनके कविता-गुरु ना.खुदाए स.खुन हज़रत 'नूह' नारवी हैं। नवाब साइल देहलवी से भी इन्हें कविता करने में बहुत प्रोत्साहन मिला था। इनकी कविताएँ बड़ी लोकप्रिय हुई हैं। इन्होंने महाकवि 'अकबर' के रंग में भी अनेक कविताएँ लिखी हैं। हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में भी इनकी कविताएँ बड़े आदर के साथ प्रकाशित होती रहती हैं। इनका कविता पढ़ने का ढंग तो बड़ा ही आकर्षक और प्रभावशाली है। सामयिक विषयों पर भी ये ख़ूब लिखते हैं। सर्वसाधारण में जितना प्रचार 'बिस्मिल' की कविताओं का है, उतना और उर्दू-कविताओं का नहीं है। महामना मालवीयजी, साहित्याचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा और श्रीयुत प्रेमचन्दजी ने भी इनकी कविताओं की बहुत बड़ाई की है। मुशायरों और कवि-सम्मेलनों में बिस्मिल की .खूब धाक रहती है। लोग बार-बार इनकी कविता सुनते नहीं अघाते। 'ज़ज्बाते बिस्मिल' और 'बिस्मिल की शायरी' आदि नामों से इनकी कविताओं के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

'साग़र' निज़ामी—इनका नाम समदयार ख़ाँ और उपनाम 'साग़र' है। ये १९०५ ई० में सोमना (अलीगढ़) में पैदा हुए। अरबी और फ़ारसी घर पर ही पढ़ी, अँगरेज़ी भी जानते हैं। ये 'सीमाब

अकबराबादी के शिष्य हैं। 'साग़र' नौ साल की उम्र से ही शायरी करते हैं। अठारह वर्ष की आयु में ख़्वाजा हसन निज़ामी के अनुयायी और भक्त बने और उसी समय से 'साग़र' निज़ामी' नाम से प्रसिद्ध हुए। ये कविता बड़े सुरीले ढंग से पढ़ते हैं। सुनने वाले मुग्ध हो जाते हैं। इनकी कविता में स्वदेश-प्रेम, ईश्वर-भक्ति तथा दार्शनिक भावों की प्रचुरता रहती है। दैनिक जीवन पर भी ये ख़ूब लिखते हैं। 'साग़र' ने अपनी कविताओं द्वारा उर्दू संसार में एक नया युग उपस्थित कर दिया है। ये हिन्दुस्तान को अपनी जन्म-भूमि समझते और उसी की भलाई के लिए सब कुछ लिखते-पढ़ते और सोचते-विचारते हैं। इनकी कविता साम्प्रदायिकता से मुक्त होती है। उसमें प्रकृति-वर्णन बड़ी ख़ूबी से किया जाता है। हिन्दू और मुसलमानों के महापुरुषों को संकेत करके भी साग़र ने भावपूर्ण कविताएँ लिखी हैं। इनकी अधिकतर कविताएँ गानात्मक हैं, उनमें संगीत का समावेश बड़ी सुन्दरता से किया गया है। वे स्वतन्त्रता, सदाशा और कर्त्तव्यपरायणता का सन्देश देती हैं। साग़र की कविता हिन्दुस्तानी भावनाओं से भरी हुई हैं। उनकी भाषा या शब्द-योजना अत्यन्त प्रशंसनीय है। 'साग़र' अपनी कविता में प्रायः बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग करते हैं। प्रेम, सौन्दर्य और निर्भीकता इनकी विशेषताएँ हैं। इन्होंने १९२३ ई० में आगरा से 'पैमाना' नामक मासिकपत्र निकाला था, और वे इस सिलसिले में यहाँ दो साल रहे थे। इन्होंने 'मुस्तक़बिल' आदि और भी कई पत्र निकाले, जो पसन्द तो बहुत किये गए, परन्तु व्यापारिक दृष्टि से चले नहीं। अलीगढ़ से मुज़फ़्फ़रनगर जाकर रहे और अब मेरठ रहते हैं। मेरठ में इन्होंने 'अदबी मरकज़' नाम की संस्था क़ायम की है। इस संस्था की ओर से 'एशिया' नामक त्रैमासिक पत्र भी निकाला है। यह पत्र बहुत लोक-प्रिय हुआ है। इनके 'बादए मशरिक़', 'सुबह क़हक़शाँ', 'सरोद शबाब', 'तहज़ीब का सरगुज़श' आदि कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'साग़र-बन्सरी' नाम से हिन्दी में भी एक

कविता-संग्रह प्रकाशित हुआ है। इनकी 'भिखारिन' और 'पुजारिन' कविताएँ बहुत लोक-प्रिय हुई हैं। राम, कृष्ण और बुद्ध पर भी इन्होंने बड़ी भक्तिपूर्ण सुन्दर कविताएँ लिखी हैं।

मिर्ज़ा 'असर'—इनका पूरा नाम ख़ानबहादुर मिर्ज़ा ज़ाफ़र अलीख़ाँ और उपनाम 'असर' है। इनका जन्म १८८५ ई० में लखनऊ में हुआ। ये १९०६ ई० में बी० ए० पास कर १९०८ ई० में डिप्टी कलक्टर हुए। अब डिप्टी कमिश्नर के पद पर प्रतिष्ठित हैं। 'असर' एक प्रसिद्ध कलाकार हैं। इनकी कविता बड़ी सुन्दर, स्वाभाविक और गम्भीर होती है। सरलता भी उसमें ख़ूब पाई जाती है। ये उच्च से उच्च भावों को बड़ी सादगी से प्रकट करते हैं। मानव-स्वभाव-चित्रण में ये बड़े दक्ष हैं। उपमाएँ बड़ी सुन्दर देते हैं। इनकी उपदेशात्मक कविताएँ भी हैं। इन्होंने आध्यात्मिक प्रेम का वर्णन बड़ी सुन्दरता से किया है। जीवन-तत्व की व्याख्या करने में तो कमाल ही कर दिया है। 'असर' बड़े मार्मिक आलोचक हैं। इनकी आलोचनाएँ निष्पक्ष, गम्भोर और विद्वत्तापूर्ण होती हैं। 'मीर' और 'सौदा' पर इन्होंने बड़े विचारपूर्ण निबन्ध लिखे हैं।

सैयद माजिद अली—इनका पूरा नाम सैयद माजिद अली और उपनाम 'माजिद' था। १८८८ ई० में इलाहाबाद में इनका जन्म हुआ। इनके पिता सैयद साहब अली इलाहाबाद के प्रतिष्ठित नागरिक तथा विद्वान् थे। माजिद साहब की शिक्षा इलाहाबाद में ही हुई। १९२९ ई० में ये सरकारी वकील हुए और अन्त समय तक रहे। इन्होंने विलायत-यात्रा भी की थी। १९३६ ई० में इनका देहान्त हुआ। ये ग़ज़लें बड़े निराले ढंग से और बहुत जल्द लिखते थे। इनकी सबग़ज़लें बड़े ऊँचे भावों से भरी हुई हैं। 'माजिद' उपमाओं और अलङ्कारों की खोज में न भटकते थे। स्वाभाविक रीति से जो सुन्दर भाव आ जाते उन्हें ही लिख डालते। ग़ज़लों के अतिरिक्त इन्होंने अन्य विषयों पर भी कविताएँ लिखी हैं। ये फ़ारसी में भी कविता

करते थे। इनकी कविताओं का संग्रह 'यादगारे माजिद' के नाम से प्रकाशित हुआ है।

नवाब मुहम्मद अब्दुल ग़ाज़ी—इनका उपनाम 'ग़ाज़ी' है। मध्य प्रान्त की गवर्धा रियासत के शासक हैं। इनका जन्म १६०७ ई० में गवर्धा में हुआ। ये उर्दू, हिन्दी, अँगरेज़ी, फ़ारसी, अरबी आदि भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हैं। इन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। 'गुलिस्ताने मारफ़त' नामक इनकी प्रसिद्ध काव्य-पुस्तक है। दर्शन-शास्त्र में इनकी अच्छी गति है। ये हिन्दी कविताएँ भी बड़ी सरस लिखते हैं। इनकी 'देहाती दुनिया' नाम की कविता-पुस्तक भी बहुत लोकप्रिय हुई है।

मुन्शी जगन किशोर 'हुस्न'—ये फ़ीरोज़ाबाद (आगरा) के रहने वाले थे, १८६६ ई० में जन्म हुआ और १८६३ ई० में इनका [illegible]न्त हुआ। ये भटनागर कायस्थ थे। पिता का नाम मुन्शी रूपकिशोर था। इन्होंने मौ० उमराव बेग से उर्दू-फ़ारसी की शिक्षा प्राप्त की। मुख़्तारी पास करके फ़ीरोज़ाबाद में ही वकालत शुरू की थी। 'हुस्न' की कविता पर महाकवि ग़ालिब का प्रभाव था। इन्होंने नीचे लिखी कविता-पुस्तकें लिखी हैं—'बहार अज़ुध्या,' 'मुबाहिसा फ़ीरोज़ाबाद', 'मुसद्दसे हुस्न', 'नाटकावली', 'विद्या-अविद्या'। हुस्न की कविता बड़ी प्रभावशालिनी और आकर्षक है। उसमें भारतीय भावों को प्रधानता है।

कुछ और कवि

अब वर्त्तमान काल के कुछ ऐसे कवियों के संक्षिप्त परिचय दिये जाते हैं, जिन्हें प्रगतिशील (Progressive) कवि कहा जा सकता है। इन कवियों ने अपनी कविताओं को पुरानी दन्त-कथाओं और परम्पराओं से मुक्त रखकर उन्हें स्वानुभूति के आधार पर ही निराले ढंग से लिखा है।

'असर सहबाई'—नाम अब्दुल समीपाल, उपनाम 'असर सहबाई'। १९०१ ई० में स्यालकोट में पैदा हुए। एम० ए०, एल-एल० बी० पास कर वकालत करते हैं। इन पर डाक्टर इक़बाल और उनकी कविताओं का प्रभाव है। इस्लामी महापुरुषों के अतिरिक्त ईसा, शङ्कराचार्य, भगवान् बुद्ध, राम, कृष्ण आदि में भी श्रद्धा रखते हैं। इनकी किताबें—'जामे सहबाई', 'ख़मस्तान', 'जाने ज़हूर' इत्यादि।

अहतशाम हुसेन—ये १९१२ ई० में जिला आज़मगढ़ में पैदा हुए। एम० ए० पास किया। लखनऊ यूनिवर्सिटी में फ़ारसी के अध्यापक हैं। बहुत छोटी उम्र से ही कविता करते हैं। प्रारम्भ में कहानियाँ लिखी थीं।

अहमद नदीम कासमी—ये १९१५ ई० में ज़िला सरगोधा (पञ्जाब) में पैदा हुए। बी० ए० पास कर आवकारी के सब इन्स-पेक्टर हैं। इनकी पुस्तकों के नाम—'चौपाल', 'बगूले', (दोनों कहानी-संग्रह हैं)। 'धड़कनें'—इनकी कविताओं का संग्रह है।

अख़्तर अन्सारी—१९०९ ई० में देहली में पैदा हुए। बी० ए० पास कर १९३१ ई० में विलायत गए। वहाँ से वापस आकर बी० टी० किया। अलीगढ़ के यूनिवर्सिटी-स्कूल में अध्यापक हैं। इनकी किताबें—

'नग़मए रूह' और 'आवगीने' (कविताएँ)। 'अन्धी दुनिया' और 'नाज़'—दोनों कहानी-संग्रह हैं।

आल अहमद सरूर—ये १९११ ई० में बदायूँ में पैदा हुए। एम० ए०, बी० एस-सी० पास किया। अलीगढ़ यूनिवर्सिटी में अध्यापक हैं। 'सलबील' के नाम से इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है। ये आलोचनात्मक लेख भी ख़ूब लिखते हैं।

एन हज़ी—नाम मुहम्मद मसीह पाल। १८८४ ई० में स्याल-कोट में पैदा हुए। पढ़-लिख कर सरकारी नौकरी की। अब पेन्शन पाते हैं। कविता में कला के साथ-साथ उपयोगिता का पूरा ध्यान रखते हैं। 'गुलबाग़े हयात' इनकी कविताओं का संग्रह है।

इन्द्रजीत शर्मा—१८९३ ई० में खरखौदा (मेरठ) में पैदा हुए। नैतिक, साहित्यिक और प्राकृतिक कविताएँ लिखते हैं। ज़मीं-... हैं, अध्यापकी भी करते हैं। इनकी कविताओं का संग्रह 'नैरंगे फ़ितरत' नाम से प्रकाशित हो चुका है।

आनन्दनरायन मुल्ला—ये काश्मीरी पं० जगतनरायनजी के सुपुत्र हैं। १९०१ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। १९२३ ई० में एम० ए०, एल-एल० बी० पास किया। आई० सी० एस० की परीक्षा में भी बैठे थे, पर उत्तीर्ण न हो सके। अब वकालत करते हैं। पहले अँग्रेज़ी में भी कविताएँ लिखी हैं, परन्तु अब उर्दू में ही लिखते हैं। ये थोड़ा लिखते हैं, परन्तु बहुत अच्छा लिखते हैं। इनकी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई।

बिलक़ैस जमाल—ये १९०९ ई० में बरेली में पैदा हुईं। शिक्षा घर पर ही पाई। ये पत्र-पत्रिकाओं में लेख बहुत दिनों से लिखती रहती हैं। १९२३ ई० से कविता करती हैं। ये श्री अब्दुल जलील साहब बी० एस-सी०, एल-एल० बी० की पत्नी हैं। आजकल मुज़फ़्फ़रनगर में रहती हैं।

ताजवर—१८६४ ई० में नजीबाबाद में पैदा हुए। ये अरबी साहित्य के अच्छे विद्वान् हैं। 'आफ़ताब उर्दू' और 'मख़्ज़न' के सम्पादक रहे। 'हुमायूँ' के सम्पादन में भी सहायता दी। 'अदबी दुनिया' और 'शाहकार' नामक पत्र निकाले। इन्होंने उर्दू कविता में कितने ही नवीन और उपयोगी परिवर्त्तन करने की चेष्टा की है।

तख़्तसिंह—१६१७ ई० में लायलपुर में पैदा हुए। बी० ए० पास किया, अब स्कूल मास्टर हैं। इन्हें कविता में पं० ब्रजमोहन दत्तात्रेय 'कैफ़ी' से बहुत प्रोत्साहन मिला है।

तसद्दुक़ हुसेन ख़ालिद—१६०० ई० में पेशावर में पैदा हुए। एम० ए० पास कर, पञ्जाब सिविल सर्विस की परीक्षा में बड़ी शान से उत्तीर्ण हुए। फिर एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर के पद पर नियुक्त हुए। १६३२ ई० में विलायत गए। वहाँ लण्डन यूनिवर्सिटी से बी० ए० और पी०-एच० डी० की डिग्रियाँ प्राप्त कीं। १६३५ ई० में बैरिस्टर होकर हिन्दुस्तान वापस आए। इन्होंने पी०-एच० डी० का निबन्ध महाकवि 'हाली' के सम्बन्ध में लिखा था। इसके अतिरिक्त 'अकबर' और 'इक़बाल' पर भी किताबें लिखी हैं। उर्दू-साहित्य का इतिहास भी लिखा है। अनेक अँग्रेज़ी पुस्तकों के अनुवाद किये हैं। इनकी कविताओं का संग्रह भी तैयार हो गया है।

जाँनिसार अख़्तर—१६१४ ई० में पैदा हुए। १६२६ ई० में अलीगढ़ से एम० ए० पास किया। अब विक्टोरिया कालिज ग्वालियर में उर्दू के प्रोफ़ेसर हैं। इनके पिता 'मुज़तर ख़ैराबादी' भी प्रसिद्ध कवि थे। प्रारम्भ में इन्होंने रुबाइयाँ लिखी थीं।

हामिद अलीख़ाँ—१६०१ ई० में पैदा हुए। नेशनल यूनिवर्सिटी अलीगढ़ से बी० ए० किया और वहीं प्रोफ़ेसर हो गए। फिर पञ्जाब-यूनिवर्सिटी से बी० ए० और मुंशी फ़ाज़िल की परीक्षाएँ पास कीं। अब 'हुमायूँ' के सम्पादक हैं।

हफ़ीज़ होशियारपुरी—१६१२ ई० में पैदा हुए, १६३६ ई० में एम० ए० पास किया। अँग्रेज़ी कविताएँ भी लिखीं। आजकल आल-इण्डिया रेडियो लाहौर में काम करते हैं।

राजा महदी अलीख़ाँ—१६२३ ई० में करमाबाद में पैदा हुए। बचपन से ही कविता का शौक़ है। इसलामियाँ कालिज लाहौर में शिक्षा पाई। 'ज़मींदार', 'अहसान', 'इनक़लाब', 'ख़य्याम' आदि का सम्पादन किया। आजकल 'तहज़ीब निसवाँ' और 'फूल' के सम्पादक हैं। 'चाँद का गुनाह', 'सितारह सुबह', 'फूलों की डाली', 'कमला' इत्यादि इनकी किताबें हैं।

सैयद अहमद ऐजाज़—१६१२ ई० में स्यालकोट में पैदा हुए। आजकल पञ्जाब पी० डब्ल्यू० डी० में इञ्जीनियर हैं। रुबाइयाँ लिखने में सिद्धहस्त हैं। स्वतन्त्र विषयों पर भी अच्छी कविताएँ लिखते हैं। कविता की चीनी और जापानी संक्षिप्त शैली इन्हें बहुत पसन्द है।

सलाम मछली शहरी—१६१६ ई० में मछलीशहर में पैदा हुए। साधारण शिक्षा-दीक्षा के अनन्तर 'नग़मा' (फ़ैज़ाबाद) के सम्पादक हुए। 'मेरे नग़मे' इनकी कविताओं का संग्रह है।

शाद आरफ़ी—इनकी आयु ३३-३४ वर्ष की है। शिक्षा मौलवियों द्वारा घर पर ही पाई है। इनके ख़ानदान में सौ-सवा सौ वर्ष से लगातार कविता का प्रचार है। ये भी निरन्तर कविता लिखते रहते हैं।

फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़'—१६१० ई० में स्यालकोट में पैदा हुए। अरबी और अँगरेज़ी में एम० ए० किया। आलोचना और कविता में बड़ी रुचि है। पर लिखते कम हैं। इनकी कविताओं का संग्रह 'नक़शेफ़ुरियादी' के नाम से प्रकाशित हो चुका है।

क़यूम नज़र—पूरा नाम अब्दुल क़यूम है। १६१३ ई० में

लाहौर में पैदा हुए। एम० ए० पास कर सरकारी मुलाज़िम हैं। बड़े अच्छे कवि हैं, पर लिखते कम हैं।

मजाज़—नाम इसरारुलहक़ है। १६१३ ई० में पैदा हुए। 'लखनऊ', आगरा और अलीगढ़ में शिक्षा पाई। बी० ए० पास कर कुछ दिनों 'आलइण्डिया रेडियो' में 'आवाज़' के सम्पादक रहे। अब 'नया अदब' के सम्पादकीय विभाग में हैं। 'आहंग' नाम से इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है।

मुहम्मद दीन 'तासीर'—१६०६ ई० में लाहौर में पैदा हुए। १६३६ ई० में केम्ब्रिज से पी-एच० डी० की डिगरी प्राप्त की। अब इसलामियाँ कालिज अमृतसर के प्रिंसिपल हैं।

मुख्तार सिदीक़ी—नाम मुख़्तारुलहक़ सिदीक़ी। १६१६ ई० में पैदा हुए। गुजरानवाला में रहते हैं। बी० ए० पास किया है। 'सीमाब' अकबराबादी के शिष्य हैं। गानात्मक कविताएँ अधिक लिखते हैं।

मीराजी—ये पंजाबी हैं। 'अदबी दुनिया' (मासिक) के सम्पादक हैं। इनके पिता रेलवे के इञ्जीनियर थे। इन्होंने मानव-स्वभाव और प्राकृतिक सौन्दर्य का अध्ययन बड़ी गम्भीरता से किया है। इनकी कविताओं में भी यह बात स्पष्ट प्रकट होती है।

शरीफ़ कुंजाही—१६१५ में पैदा हुए। एफ० ए० तक शिक्षा पाई। इनकी एक पुस्तक 'आज़ाद समाज' के नाम से प्रकाशित हुई है। 'रोड टू फ्रीडम' नामक किताब का अनुवाद किया है। पंजाबी में भी कविता करते हैं।

तालिब बाघपती—नाम कुँवर लताफ़त अलीख़ाँ। १६०३ ई० में बाघपत (मेरठ) में पैदा हुए। कुँवर एज़ाज़ अलीख़ाँ के बेटे हैं। उर्दू और फ़ारसी घर पर ही पढ़ी। कालिज में एफ० ए० तक शिक्षा पाई। 'शाख़े नबात' इनकी कविताओं का संग्रह है। इन्होंने

कहानियाँ भी लिखी हैं और अनुवाद भी किये हैं। पत्र-पत्रिकाओं में लेख तथा कविताएँ लिखते रहते हैं।

आबिद लाहौरी—नाम सैयद आबिद अली, उपनाम 'आबिद' १८०६ ई० में लाहौर में पैदा हुए। एम० ए०, एल-एल० बी० पास किया। लाहौर के दयालसिंह कालिज में प्रोफ़ेसर हैं। इनकी कहानियों के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इन्होंने एक बँगाली उपन्यास का भी तर्जुमा किया है। 'हिजाब ज़िन्दगी', 'क़िस्मत', 'तिलस्मात', आदि इनकी पुस्तकें हैं।

'अर्श'—इनका नाम बालमुकुन्द है। १९०८ ई० में मालियान जालन्धर में पैदा हुए। पं० लेखराम 'जोश' के पुत्र हैं। बी० ए० पास किया है। ग़ज़ल बहुत अच्छी लिखते हैं। अन्य प्रकार की कविताएँ भी करते हैं। आजकल अध्यापक हैं। अभी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई।

अलीसरदार 'ज़ाफ़री'—१९१२ ई० में लखनऊ में पैदा हुए। एम० ए० तक शिक्षा पाई। इनकी कहानियों का संग्रह 'मंज़िल' नाम से प्रकाशित हो चुका है। 'नया अदब' नामक पत्र निकालते हैं।

नज़र मुहम्मद 'राशिद'—१९४० ई० में पंजाब के गुजरान वाला ज़िले में पैदा हुए। इनके पिता गवर्नमेएट हाईस्कूल के हेड मास्टर थे। इन्होंने १९३२ ई० में एम० ए० पास किया। प्रारम्भ में अँगरेज़ी कविताओं के उर्दू पद्यों में अनुवाद किये। कितने ही आलोचनात्मक लेख लिखे। कई पत्रों के सम्पादन में भी सहायता दी। अब रेडियो विभाग में काम करते हैं। 'मावरा' नाम से इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हो गया है।

यूसुफ़ 'ज़फ़र'—नाम-मुहम्मद यूसुफ़। गुजरानवाला में पैदा हुए। १९३६ ई० में बी० ए० पास किया। पहले ग़ज़ल लिखते थे. फिर नवीन शैली की कविताएँ लिखनी शुरू कीं। ये नहर-विभाग में नौकर हैं।

'वली'

जिस वक़्त ऐ सरीजन तू बेहिजाब होगा
हर ज़र्रा तुझ झलक सूँ जूँ आफ़ताब होगा
मत जा चमन में लाला बुलबुल पै मत सितम कर
गरमी सूँ तुझ निगह का गलगल गुलाब होगा
मत आइना को दिखला अपना जमाल रोशन
तुझ मुख की ताब देखें आईना आब होगा

× × ×

.खुमारे हिज्र ने जिसको दिया है दर्द दिल मुझ कूँ
रखूँ नक़्शा नमन अँखियों में गर वो मस्त नाज़ आवे

× × ×

देखना हर सुबह तुझ रुख़सार का
है मुताला मतलए अनवार का
याद करना हर घड़ी तुझ यार का
है वज़ीफ़ा मुझ दिले बीमार का

× × ×

ऐ वली, रहने को दुनिया में मुकामे आशिक़
कूचए यार है, या गोशए तनहाई है

× × ×

बेवफ़ाई न कर .खुदा सूँ डर
जग हँसाई न कर .खुदा सूँ डर
आरसी देख कर न हो मग़रूर
.खुदनुमाई न कर .खुदा सूँ डर

× × ×

जो आया मस्त साक़ी जाम लेकर
गया इक बारगी आराम लेकर

× × ×

तुझ लब को सिफ़त लाले बदख़्शाँ से कहूँगा
जादू हैं तेरे नैन ग़ज़ाला से कहूँगा
फिर मेरी ख़बर लेने को सैयाद न आया
शायद कि उसे हाल मेरा याद न आया

× × ×

शग़ल बेहतर है इश्क़बाज़ी का
क्या हक़ीक़ी व क्या मजाज़ी का

× × ×

दिल छोड़ कर यार क्योंकर जावे
ज़ख़्मी हो शिकार क्योंकर जावे
जब तक न मिले शराबे दीदार
आँखों का ख़ुमार क्योंकर जावे

× × ×

ये तिल तुझ मुख के काबा में मुझे असवद हजर दिखता
ज़नख़दाँ में तेरे मुझ चाहे ज़म-ज़म का असर दिखता

'सौदा'

दिल मत टपक नज़र से कि पाया न जायगा
ज्यूँ अश्क फिर ज़मी से उठाया न जायगा
रुख़सत है बाग़बाँ कि टुक इक देख लें चमन
जाते वहाँ जहाँ से फिर आया न जायगा
आवेगा वह चमन में न ऐ अब्र, जब तलक
पानी गुलों के मुँह में चुवाया न जायगा
तेग़े जफ़ाए यार से दिल सर न फेरिये
फिर मुँह वफ़ा को हमसे दिखाया न जायगा

ज़ालिम मैं कह रहा कि तू इस .ख़ूँ से दर गुज़र
सौदा का क़त्ल है ये छिपाया न जायगा

× × ×

ज्यों .ग़ुंचा तू चमन में बन्दे क़बा को खोले
फिर गुल से ऐ पियारे, बुलबुल कभू न बोले
आवेगा वह चमन में तड़के ही मय कशी को
शबनम से कह दे बुलबुल प्याले गुलों के धोले
बाग़े जहाँ में आकर कुछ हमने फल न पाया
इक दिल मिला कि जिसमें हैं सैकड़ों ममोले
ऐसो ही जाऊँ-जाऊँ करते हो तो सिधारो
इस दिल पै कल जो होनी हो आज ही सो होले

× × ×

फिरता हूँ तेरे वास्ते मैं दर-बदर ऐ यार
तुझसे न हुआ यह कि कभू मेरे घर आवे
गोया दिले आशिक़ भी है इक फ़ील सिपह मस्त
रुकता नहीं रोके से किसूके जिधर आवे

× × ×

भर नज़र तुझको न देखा कभू डरते-डरते
हसरतें जी की रहीं जो ही में मरते-मरते

× × ×

ऐ .ग़ुंचा दहन प्यार से टुक हँस कर बोल
क्या दिल है मेरा तू कि नहीं खुलता है

× × ×

मेरी आँखों में तू रहता है, मुझको तू रुलाता है
समझकर देख लो अपना भी कोई घर डुबाता है

× × ×

इस दिल को दे के लूँ दोजहाँ यह कभू न हो
सौदा तो होके तब न कि जब उसमें तू न हो

× × ×

जिगर उनका है जो तुझको सनम कह याद करते हैं
मियाँ हम तो मुसलमाँ हैं, ख़ुदा भी कहते डरते हैं

× × ×

हिन्दू हैं बुतपरस्त मुसलमाँ ख़ुदापरस्त
पूजूँ मैं उस किसी को जो हो आशना परस्त

× × ×

क़तरए अश्क़ हूँ प्यारे मेरे नज़ारे से
क्यों ख़फ़ा होते हो पल मारते ढल जाऊँगा

× × ×

टूटे अगर निगह से तेरी दिल हुबाब का
पानी भी पीजिए तो मज़ा हो शराब का
बेकस कोई मरे तो जले इस पे दिल मेरा
गोया यही चिराग़ ग़रीबों के गोर का

× × ×

चमन में सुबह जो उस जंगजू का नाम लिया
सबा ने तेग़ का मौजे रवाँ से काम लिया
कमाल बन्दगीए इश्क़ है ख़ुदाबन्दी
कि एक ज़न ने महे मिस्र-सा ग़ुलाम किया

× × ×

गिला लिखूँ मैं अगर तेरी बेवफ़ाई का
लहू में ग़र्क़ सफ़ीना हो आशनाई का
दिखाऊँगा तुझे ज़ाहिद उस आफ़ते दीं को
ख़लल दिमाग़ में तेरे है पारसाई का

× × ×

बराबरी का तेरी गुल ने जब ख़याल किया
सबा ने मार थपेड़ा मुँह उसका लाल किया

× × ×

सौदा जहाँ में आके कोई कुछ न ले गया
जाता हूँ एक मैं ही दिल पै आरज़ू लिए

× × ×

काबा अगरचे टूटा तो क्या जाए ग़म है शेख़
यह कसरे दिल नहीं कि बनाया न जायगा

× × ×

ग़ैर के पास यह अपना हो गुमाँ है कि नहीं
जलवागर यार मेरा वरना कहाँ है कि नहीं
दिल के पुरज़ों को बग़ल बीच लिए फिरता हूँ
कुछ इलाज इनका भी ऐ शीशगराँ है कि नहीं

× × ×

किसी का दीन किया हक़ ने किसी की दुनिया
सब का सब कुछ किया, पर तुजको हमारा न किया

× × ×

मौजे आतिश है सैल आँखों में
शायद इस दिल का आवला फूटा
न जिया तेरी चश्म का मारा
न तेरी ज़ुल्फ़ का बाँधा छूटा

× × ×

तेरा जी मुझसे नहीं मिलता मेरा जी रह नहीं सकता
ग़रज़ ऐसी मुसीबत है कि मैं कुछ कह नहीं सकता

× × ×

ऐ दिन ये किससे बिगड़ी कि आती है फ़ौजे अश्क
लख़्ते जिगर की लाश को आगे धरे हुए

× × ×

मुहब्बत के करूँ भुजबल की मैं तारीफ़ क्या यारो
सितम परबत हो तो उसको उठा लेता है जूँ राई

× × ×

अति चंचल उज्जल सभी हाड़-मांस औ चाम
नर-नारी सब एकसी, करें चाम के दाम

—मछली

मारे से वह जी उठे, बिन मारे मर जाय
बिन पाँवों जग-जग फिरे, हाथों हाथ बिकाय

—तबला

अंग-अंग मोती से छाया
चार महीने जग को भाया

—भुट्टा

'मीर'

क्या लिखूँ मीर अपने घर का हाल
इस ख़राबी में हूँ पामाल
कूचा मौज से है आँगन तंग
कोठड़ी के हुबाब के-से ढंग
चार दीवारी सौ जगह से ख़म
तर तनक हो तो सूखते हैं हम
लोनी लग-लग के झड़ती है माटी !
आह क्या उम्र बेवज़ा काटी !
झाड़ बाँधा है मेह ने दिन-रात
घर की दीवारें हैं गी जैसे पात

बाउ में काँपते हैं जो थर-थर
उन पै रहा रखे कोई क्योंकर
कहीं घूँसों ने खोद डाला है
कहीं चूहे ने सर निकाला है
कहीं घर है किसू छछूँदर का
शोर हर कोने में है मच्छर का
कभू कोई सँपोलिया है फिरे
कभू छत से हज़ारपाय गिरे
दब के मरना हमेशा मद्दे नज़र
घर कहाँ साफ़ मौत ही का घर
ईंट-मट्टी का दर के आगे ढेर
गिरती जाती हैं, हौले-हौले मुँडेर
बान झींगुर तमाम चाट गये
भीग कर बाँस फाट-फाट गये.
पूछ मत ज़िन्दगानी कैसी है
ऐसे छप्पर की ऐसी-तैसी है
जिन्स आला कोई खटोला खाट
पाए-पट्टी रहे हैं जिनके फाट
खटमलों से सियाह है सो भी
चैन पड़ता नहीं है शब को भी
कीड़ा इक-एक फिर मकोड़ा है
साँझ से खाने ही को दौड़ा है
गर्ज़ बहुतों को मैं मसल मारा
पर मुझे खटमलों ने मिल मारा
मलते रातों को घिस गईं पोरें
ना.खुनों की हैं लाल सब कोरें
सोत तनहा न बान में खटमल
आँख मुँह नाक कान में खटमल

दो तरफ़ से था कुत्तों का रस्ता
काश जंगल में जाके मैं बस्ता
हो घड़ी दो घड़ी तो दुतकारूँ
एक दो कुत्ते हों तो मैं मारूँ
चार जाते हैं, चार आते हैं
चार उफ़-उफ़ से मग्ज़ खाते हैं
दिन में धूप रात को है ओस
ख़्वाबे राहत है याँसे सौ-सौ कोस
मेह में घर के पाँच-छह छप्पर
हम ग़रीबों के होते हैं सर पर
टट्टियाँ थीं जो आगे छप्पर के
बहती फिरती हैं सहन में घर के
ताग़ले सब खड़े हैं पानी में
ख़ाक है ऐसी ज़िन्दगानी में
अब तो अपना भी हाल बदतर है
सर पै गठरी है तिसपै छप्पर है
चाक इस डौल से है हर दीवार
जैसी छाती हो आशिक़ों की फ़िगार
घर का सूरत तो और होती है
छत भी बेइख़्तियार रोती है
मेह एक बारगी जो टूट पड़ा
कड़ी तख़्ता हरेक छूट पड़ा
ले गया पेचोताब पानी का
कोठड़ी थी हुबाब पानी का
गठड़ी कपड़ा की मैं उठाई थी
सर पै भाई के चारपाई थी
अपना असबाब घर से हम लेकर
अलगनी सबके हाथ में देकर

सफ़की सफ़ निकली इस ख़रावी से
ताकि पहुँचे कहीं शिताबी से
मीरजी इस तरह से आते हैं
जैसे कंजर कहीं को जाते हैं

× × ×

टुक देख आँख खोल के उस दम की हसरतें
जिस दम ये सूझेगी कि ये आलम भी ख़्वाब था

× × ×

हम ख़स्ता दिल हैं तुझसे भी नाज़ुक मिज़ाज तर
त्योरी चढ़ाई तूने कि याँ जो निकल गया

× × ×

मीर साहब ज़माना नाज़ुक है
दोनों हाथों से थामिये दस्तार
चार दिन का है यह झमेला सब
सबसे रखिये सलूक ही नाचार

× × ×

क्या दिलकश है बज़्म जहाँ का जाते याँ से जिसे देखो
वह ग़मदीदा रंज कशीदा आह सरापा हसरत है

× × ×

क्या आग की चिनगारियाँ सीने में भरी हैं
जो आँसू मेरी आँख से गिरता है शरर है
शायर नहीं जो देखा तो तू है कोई साहिर
दो-चार शेर पढ़ कर सब को रिझा गया
था मुल्क जिनके ज़ेरे नगीं साफ़ मिट गये
तुम इस ख़याल में हो कि नामोनिशाँ रहे
× × ×

मिज़ाजों में यास आगयी है हमारे
न मरने का ग़म है न जीने की शादी

× × ×

होगा किसू दीवार के साये में पड़ा मीर
क्या काम मुहब्बत से उस आराम तलब को

× × ×

जाये है जो नजात के ग़म में
ऐसी जिन्नत गयी जहन्नम में

× × ×

क्या करें मीरजो हम तुमसे मआश अपनी अरज़
ग़म को खाया करे हैं, लोहू पिया करते हैं

× × ×

चाहें तो तुमको चाहें, देखें तो तुमको देखें
ख़्वाहिश दिलों की तुम हो आँखों को आरज़ू तुम

× × ×

यही जाना कि कुछ न जाना हाय
सो भी इक उम्र में हुआ मालूम

× × ×

रहे मर्ग से क्यों डराते हैं लोग
बहुत इस तरफ़ को तो जाते हैं लोग

× × ×

बन जो कुछ बन सके जवानी में
रात तो थोड़ी है, बहुत है साँग
'मीर' बन्दों से काम कब निकला
माँगना है जो कुछ ख़ुदा से माँग

× × ×

हालाँ कि उम्र सारी मायूस गुज़री तिस पर
क्या-क्या रखे हैं, उसके उम्मीदवार ख़्वाहिश

× × ×

गिला मैं किससे करूँ तेरी बेवफ़ाई का
जहाँ में नाम न ले फिर वो आशनाई का

× × ×

ग़फलत में गयी आह मेरी सारी जवानी
ऐ उम्र गुज़िश्ता मैं तेरी क़द्र न जानी

× × ×

ऐ हुब्बे जाह वालो जो आज ताजवर है
कल उसको देखियो तुम न ताज है न सर है

× × ×

शादी वो ग़म में जहाँ की एक से दस का है फ़र्क़
ईद के दिन हँसिये तो दस दिन मुहर्रम रोइये

× × ×

प्यार करने का जो ख़ूबाँ हम पे रखते हैं गुनाह
उनसे भी तो पूछिये तुम इतने क्यों प्यारे हुए

× × ×

यारों की आहोज़ारी होवे क़ूबुल क्योंकर
उनको ज़बाँ पै कुछ है, दिल में है कुछ, दुआ कुछ

× × ×

सरापा आरज़ू होने ने बन्दा कर दिया हमको
वगरना हम ख़ुदा थे, गर दिले बेमुद्दआ होते

× × ×

लुत्फ़ क्या हर किसू की चाह के साथ
चाह वह है जो हो निबाह के साथ

× × ×

ऐ ग़ाफ़िलाने दहर यह कुछ राह की है बात
चलने को काफ़िले हैं यहाँ तुम रहे हो सो

× × ×

इब्तदा ही में मरगये सब यार
इश्क़ की पाई इन्तहा न कभू

× × ×

अहदे जवानी रो-रो काटा पीरी में लीं आँखें मूँद
यानी रात बहुत थे जागे सुबह हुई आराम किया

× × ×

फ़क़ीराना आए सदा कर चले
मियाँ ख़ुश रहो हम दुआ कर चले
वो क्या चीज़ है आह जिसके लिए
हर एक चीज़ से दिल उठाकर चले
कोई ना उमेदाना करके निगाह
सो तुम हमसे मुँह भी छिपा कर चले
दिखायी दिये यूँ कि बे ख़ुद किया
हमें आप से भी जुदा कर चले

× × ×

बारे दुनिया में रहो, ग़मज़दा या शाद रहो
ऐसा कुछ करके चलो, याँ कि बहुत याद रहो

× × ×

इश्क़ हमारे ख़्याल पड़ा है, ख़्वाब गया आराम गया,
दिल का जाना ठहर गया है, सुबह गया या शाम गया

× × ×

आने के वक़्त तुम तो कहीं के कहीं रहे
अब आये तुम तो फ़ायदा ? हम ही नहीं रहे

तुमने जो अपने दिल से भुलाया हमें तो क्या
अपने तईं तो दिल से हमारे भुलाइये

× × ×

मर्ग इक माँदगी का वक्फ़ा है
यानी आगे चलेंगे दम लेकर

× × ×

आलम के लोगों का है तस्वीर का-सा आलम
ज़ाहिर खुली हैं आँखें लेकिन हैं बेख़बर सब

× × ×

मक्के गया मदीने गया करबला गया
जैसा गया था वैसा ही चल-फिर के आ गया

× × ×

देखा हो कुछ उस आमदो शद में तो मैं कहूँ
ख़ुद गुम हुआ हूँ बात की तह आप पा गया

× × ×

इब्तदाए इश्क़ है रोता है क्या
आगे-आगे देखिये होता है क्या
काफ़िले में सुबह से इक शोर है
यानी ग़ाफ़िल हम चले सोता है क्या

× × ×

मेहर की तुझसे तवक़्क़ा थी सितमगर निकला
मोम समझे थे तेरे दिल को सो पत्थर निकला

× × ×

मुँह तका ही करे है जिस-तिसका
हैरती है ये आइना किसका
शाम से कुछ बुझा-सा रहता है
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस का

'दर्द'

क्या फ़र्क़ बाग़ो गुल में अगर गुल में बू न हो
किस काम का वह दिल है कि जिस दिल में तू न हो

× × ×

तहम्मुल आतिशे ग़म में दिले बेताब क्या जाने
ठहरना एक दम भी आग पर सीमाब क्या जाने

× × ×

गरचे बेज़ार तो है पर उसे कुछ प्यार भी है
साथ इन्कार के परदे में कुछ इक़रार भी है

× × ×

ग़ाफ़िल ख़ुदा की याद पै मत भूल ज़ीनहार
अपने तईं भुला दे अगर तू भुला सके

× × ×

दर्द अपने हाल से आगाह क्या करे
जो साँस भी न ले सके वह आह क्या करे

× × ×

ाय नादानी के बाद अज़ मर्ग यह साबित हुआ
ख़्वाब था जो कुछ कि देखा जो सुना अफ़साना था

× × ×

या रब यह दिल है या कोई मेहमाँ सराय है
ग़म रह गया कभू, कभू आराम रह गया

× × ×

मौत क्या आके फ़क़ीरों से तुझे लेना है
मरने से आगे ही यह लोग तो मर जाते हैं

× × ×

किसी से क्या वयाँ कीजे बस अपने हाले अबतर का
दिल उसके हाथ दे बैठे जिसे जाना न पहचाना

× × ×

पीरी चली और गयी जवानी अपनी
ऐ दर्द, कहाँ है ज़िन्दगानी अपनी

× × ×

बुतख़ाना बिरहमन का मुकर्रर देखा
काबा को भी शेख़ के मैं अक्सर देखा
दिल लगने की सूरत न कहीं देखी हाय
जो कुछ देखा सो ख़ाक-पत्थर देखा

× × ×

हरदम बुतों की सूरत रखता है दिल नज़र में
होती है बुतपरस्ती अब तो ख़ुदा के घर में

× × ×

ऐ दर्द, बहुत किया परेखा हमने
देखा तो अजब यहाँ का लेखा हमने
बीनाई न थी तो देखते थे सब कुछ
जब आँख खुली तो कुछ न देखा हमने

× × ×

दुश्वार होती ज़ालिम तुझको भी नींद आनी
लेकिन सुनी न तूने टुक भी मेरी कहानी

× × ×

मुद्दत तलक जहान में हँसते फिरा किये
जी में है ख़ूब रोइये अब बैठ कर कहीं

× × ×

हम तुझसे किस हवस की फ़लक जुस्तजू करें
दिल ही नहीं रहा है, जो कुछ आरज़ू करें

तरदामनी पै शेख़ हमारी न जाइयो
दामन निचोड़ दें तो फ़रिश्ते वज़ू करें

× × ×

तुझी को जो याँ जलवा फ़रमान देखा
बराबर है दुनिया को देखा न देखा

× × ×

जग में आकर इधर-उधर देखा
तू ही आया नज़र जिधर देखा

× × ×

बसते हैं तेरे कूचे में सब शेख़ो बिरहमन
आबाद है तुमसे ही तो घर दैरो हरम का
है ख़ौफ़ अगर जी में तो है तेरे ग़ज़ब का
और दिल में भरोसा है तो है तेरे करम का

× × ×

ऐ आँसुओ, न आवे कुछ दिल की बात लब पर
लड़के हो तुम कहीं मत अफ़शाये राज़ करना

× × ×

ज़िन्दगी है या कोई तूफ़ान है
हम तो इस जीने के हाथों मर चले
दोस्तो देखा तमाशा याँ का बस
तुम रहो अब हम तो अपने घर चले

× × ×

दिल भी ऐ दर्द, क़तरए ख़ूँ था
आँसुओं में कहीं गिरा होगा

× × ×

शेख़ काबा होके पहुँचा हमकुनिश्ते दिल में हो
दर्द मंज़िल एक थी टुक राह का ही फेर था

× × ×

मैं तो कुछ ज़ाहिर न की थी दिल की बात
पर मेरी नज़रों के ढब से पा गया

'मीर हसन'

कैसी वफ़ा कहाँ की मुहब्बत किधर की मेहर
वाक़िफ़ ही तू नहीं है कि होता है प्यार क्या

× × ×

हम न हँसते हैं और न रोते हैं
उम्र हैरत में अपनी खोते हैं

× × ×

मैंने तो भर नज़र तुझे देखा नहीं कभी
रखियो हिसाब में न मुलाक़ात आज की

× × ×

मज़े न देखे कभी हमने ज़िन्दगानी के
यों ही गुज़र गये अफ़सोस दिन जवानी के

× × ×

ज़िन्दगी है तो ख़िज़ाँ के भी गुज़र जायँगे दिन
फ़स्ले गुल जीतों को फिर अगले बरस आती हैं

× × ×

क्या हँसे अब कोई औ क्या रो सके
दिल ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके

× × ×

इश्क़ कब तक आग सीने में मेरे भड़कायगा
राख तो मैं हो चुका हूँ ख़ाक अब सुलगायगा

नौ गिरफ़्तारो के बायस मुज़तरिब सय्याद हूँ
लगते-लगते जो क़फ़स में भी मेरा लग जायगा

× × ×

सैरे गुलशन करें हम उस बिन क्या
अब न वह दिल न वह दिमाग़ रहा

× × ×

मज़ा बेहोशिये उल्फ़त का हुशियारों से मत पूछो
अज़ीज़ाँ ख़्वाब की लज़्ज़त को बेदारों से मत पूछो
गुलों को कब ख़बर है हाल ज़ारे अन्दलीबों का
हक़ीक़त मुफ़लिसों की आह ज़रदारों से मत पूछो

× × ×

नाम आज़ादी का तब लेवे कोई दुनिया में
क़ैदे हस्ती से जब अपने तईं आज़ाद करे

× × ×

न ठहरा ज़रा क़ाफ़िला इस सरा में
लिये हसरतें याँ की बस्ती से गुज़रे
रहे जिसमें ख़तरा सदा नेस्ती का
बस ए ज़िन्दगी, ऐसी हस्ती से गुज़रे

× × ×

हवाए बहारी से गुल लहलहे
चमन सारे शादाब और डहडहे
ज़मुर्रद के मानिन्द सब्ज़े का रंग
रविश पर जवाहिर लगा जैसे संग
रविश की सफ़ाई पै बे इख़्तियार
गुले अशरफ़ी ने किया ज़र निसार

चमन से भरा बाग़ गुल से चमन
कहीं नरगिसो गुल कहीं यासमन
चँबेली कहीं और कहीं मोतिया
कहीं रायबेल और कहीं मोगरा
खड़े शाख़ शब्बो के हरजा निशान
मदनबान की और ही आनबान
कहीं अर्ग़वाँ और कहीं लाल ज़ार
जुदी अपने मौसम में सबकी बहार
कहीं जाफ़री और गेंदा कहीं
समा शब को दाऊदियों का कहीं
अजब चाँदनी में गुलों की बहार
हर एक गुल सफ़ेदी से महताब वार
गुलों का लबे नहर पर झूमना
उसी अपने आलम में मुँह चूमना
लिये हाथ में घेलचे मालनें,
चमन को लगीं देखने-भालने
कहीं तुख़मपाशी करें गोद कर
पतेरी जमावें कहीं खोद कर
खड़े शाख़ दर शाख़ बाहम निहाल
रहे हाथ ज्यों मस्त गरदन में डाल
ख़रामा सबा सहन में चार सू
दिमाग़ों को देती हर एक गुल की बू
चमन आतिशे गुलसे दहका हुआ
हवा के सबब बाग़ महका हुआ
सबा जो गयी ढेरियाँ करके भूल,
पड़े हर तरफ़ मौलसिरियों के फूल
इधर और उधर आतियाँ जातियाँ
फिरें अपने जोबन को दिखलातियाँ

कहीं अपने पट्टे सँवारे कोई
''अरे ओ सहेलो'—पुकारे कोई
कहीं चुटकियाँ और कहीं तालियाँ
कहीं क़हक़हे और कहीं गालियाँ
बजाती फिरे कोई अपने कड़े
कहें धाहवा और कहें धा छड़े
अदा से कोई बैठी हुक़्क़ा पिये
दमे दोस्ती कोई भरभर जिये
कोई हौज़ में जाके ग़ोते लगाय
कोई नहर पर पाँव बैठी हिलाय
बराबर-बराबर खड़े थे सवार
हज़ारों ही थीं हाथियों की क़तार
सुनहरी-रुपहली वो अम्मारियाँ
शबो रोज़ की-सी तरह दारियाँ
चमकते हुए बादलों के निशान
सवारों के ग़ुट और प्यादों की शान
हज़ारों ही अतराफ़ में पालकी
लकधोरनी जगमगी नाल की
कहारों की ज़रबफ़्त की कुरतियाँ
और उनके दबे पाँवों की फुरतिय
वो हाथों में सोने के मोटे कड़े
झलक जिसकी हर-हर क़दम पर पड़े
वो शहनाइयों की सदा ख़ुशनुमा
सुहानी वो नौबत की आवे सदा
वह आहिस्ता घोड़ों पै नक़्क़ारची
क़दम बाक़दम बालिबासे ज़री
बजाते हुए शादयाने तमाम
चले आगे-आगे मिले शादकाम

'इन्शा'

लगा के बर्फ़ में साक़ी सुराहिए मै ला
जिगर की आग बुझे जल्द जिससे वह शै ला

× × ×

कमर बाँधे हुए चलने को याँ सब यार बैठे हैं
बहुत आगे गये बाक़ी जो हैं तैयार बैठे हैं

× × ×

क्या हँसी आती है मुझको हज़रते इन्सान पर
फ़ेल बद तो ख़ुद करे लानत करे शैतान पर

× × ×

गर यार मै पिलाये तो फिर क्यों न पीजिए
ज़ाहिद नहीं, मैं शेख़ नहीं, मैं वली नहीं

× × ×

शेख़ो बिरहमन दैरो हरम में ढूँढ़ते हो क्या ला हासिल
मूँद के आँखें देखो तो है सारी ख़ुदाई सीने में

× × ×

जी में क्या आगया इन्शा के ये बैठे-बैठे
कि पसन्द उसने किया आलमे तनहाई को

× × ×

सुबह रुख़सार उसके नीले थे,
शब जो गुज़रा ख़याल बोसे का

× × ×

क्या ख़ुदा से इश्क़ की मैं रूनुमाई माँगता
माँगता भी उससे तो सारी ख़ुदाई माँगता

× × ×

यह जो महन्त बैठे हैं राधा के कुंड पर
अवतार बन के गिरते हैं, परियों के झुंड पर

× × ×

झिड़की सही अदा सही चीने जबीं सही
यह सब सही पर एक नहीं की नहीं सही
गर नाज़नी कहने से माना बुरा हो कुछ
मेरी तरफ़ तो देखिये नाज़नी सही

× × ×

यक तिफ़्ल दबिस्ताँ हैं फ़लातू मेरे आगे
क्या मूँ है अरस्तू जो करे चूँ मेरे आगे
क्या माल भला क़सरे फ़रीदूँ मेरे आगे
काँपे है पड़ा गुम्बदे गरदूँ मेरे आगे

× × ×

भला गर्दिश फ़लक की चैन देती है किसे इन्शा
ग़नीमत है कि हम सूरत यहाँ दो-चार बैठे हैं

× × ×

नज़ाकत उस गुले राना की देखियो इन्शा
नसीमे सुबह जो छू जाय रंग हो मैला

× × ×

मिला फिर आज हमको वह अजब अठखेलियाँ वाला
भबूका बर्क़ शोला नूर का आतिश का परकाला

× × ×

रखते हैं कहीं पाँव तो पड़ता है कहीं और
साक़ी तू ज़रा हाथ तो ले थाम हमारा

ऐ बादे सहर महफ़िले अहबाब में कहियो
देखा है जो कुछ हाल तहे दाम हमारा।

× × ×

ख़याल कीजिए क्या आज काम मैंने किया
जब उसने दी मुझे गाली सलाम मैंने किया

× × ×

हैफ़, अय्याम जवानी के चले जाते हैं
हर घड़ी दिन की तरह हमतो ढले जाते हैं

× × ×

इश्क वो फल है कि जिसके तुख़्म है ये अश्क़ सुर्ख़
बेखुदी है मग्ज़ उसका और छिलका इज़्तराब

'नज़ीर'

टुक हिर्स हवा को छोड़ मियाँ मत देस-बिदेस फिरे मारा
क़ज़्ज़ाक़ अजल का लूटे है दिन-रात बजाकर नक़्क़ारा
क्या बधिया भैंसे बैल शुतर क्या गोनी पल्ला सरभारा
क्या गेहूँ चावल मोठ-मटर क्या आग-धुआँ औ अंगारा
सब ठाट पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा
जब चलते-चलते रस्ते में ये गौन तेरी ढल जाएगी
एक बधिया तेरी मिट्टी पर फिर घास न चरने पाएगी
यह खेप जो तूने लादी है, सब हिस्सों में बट जाएगी
धी-पूत जमाई बेटा क्या बंजारिन पास न आएगी
सब ठाट पड़ा रह जाएगा जब लाद चलेगा बंजारा
क्या जी पर बोझ उठाता है, इन गोनों भारी-भारी के

जब मौत का डेरा आन पड़ा फिर दूने हैं व्यापारी के
क्या साज़ जड़ाऊ ज़र-ज़ेवर क्या गोटे थान किनारी के
क्या घोड़े ज़ीन सुनहरी के क्या हाथी लाल अमारी के
सब ठाठ पड़ा रह जाएगा जब लाद चलेगा बंजारा

× × ×

झगड़ा न करे मिल्लतो मज़हब का कोई याँ
जिस राह में जो आन पड़े खुश रहे हर आँ
जुन्नार गले या कि बग़ल बीच हो .क़ुरआँ
आशिक़ तो क़लन्दर हैं न हिन्दू न मुसलमाँ

× × ×

बाम पर नंगे न तुम आओ शबे महताब में
चाँदनी पड़ जायगी मैला बदन हो जायगा

× × ×

कल शबे वस्ल में क्या .खूब कटी थीं घड़ियाँ
आज क्या मर गये घड़ियाल बजाने वाले

× × ×

न गुल अपना, न .खार अपना, न ज़ालिम बाग़बाँ अपना
बनाया आह किस गुलशन में हमने आशियाँ अपना

× × ×

हमने चाहा था कि हाकिम से करेंगे फ़रयाद
वह तो कम्बख़्त तेरा चाहने वाला निकला

× × ×

जंगल में मेरे हाल पै कोई भी न रोया
गर फ़ूट के रोया तो मेरे पाँव का छाला

× × ×

बादल हवा के ऊपर हो मस्त छारहे हैं
झड़ियों की मस्तियों से धूमें मचा रहे हैं
पड़ते हैं पानी हरजा जल-थल बना रहे हैं

गुलज़ार भीगते हैं सब्ज़े नहा रहे हैं
क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें

× × ×

सब्ज़ों की लहलहाहट कुछ अब्र की सियाही
और छारही घटाएँ सुर्ख़ और सफ़ेद काही
सब भीगते हैं घर-घर ले माहताब माही
यह रंग कौन रंगै तेरे सिवा इलाही
क्या-क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें

× × ×

यारो सुनो ये दधि के लुटैया का बालपन
औ' मधुपुरी-नगर के बसैया का बालपन
मोहन स्वरूप नृत्यकरैया का बालपन
बन-बन के ग्वाल गौएंचरैया का बालपन
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्णकन्हैया का बालपन

× × ×

सब मिलके यारो कृष्णमुरारी की बोलो जै
गोविन्द छैल कुंजविहारी की बोलो जै
दधि चोर गोपीनाथ विहारी की बोलो जै
तुम भी नज़ीर कृष्णमुरारी की बोलो जै,
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्णकन्हैया का बालपन

× × ×

जब फागुन रंग झमकते हों तब देख बहारें होली की
और डफ़ के शोर खड़कते हों तब देख बहारें होली की
परियों के रंग दमकते हों तब देख बहारें होली की
ख़ुम शीशे जाम झलकते हों तब देख बहारें होली की

× × ×

गुलज़ार खिले हों परियों के औ' मजलिस की तैयारी हो,
कपड़ों पर रँग के छींटे हों, ख़ुश रंग अजब गुलकारी हो

मुँह लाल गुलाबी आँखें हों, और हाथों में पिचकारी हो
सीनों से रंग झलकते हों तब देख बहारें होली की

× × ×

दुनिया अजब बाज़ार है, कुछ जिन्स याँ की साथ ले,
नेकी का बदला नेक है, बद से बदी की बात ले
मेवा खिला मेवा मिले फल-फूल दे फल-पात ले
आराम दे आराम ले दुख-दर्द दे आफ़ात ले

× × ×

कलजुग नहीं करजुग है ये याँ दिन को दे और रात ले
यह ख़ूब सौदा नक़द है, इस हाथ दे उस हाथ ले
काँटा किसी को मत लगा गो मिस्ले गुल फूला है तू
वह तेरे हक़ में तीर है, किस बात पर भूला है तू

× × ×

हम फ़क़ीरों को भला काम है क्या अस्थल से
वहीं अस्थल हैं जहाँ मार के बैठें आसन
जा पड़ें याद में उस शोख़ की जिस बस्ती में—
वही गोकुल है हमें और वही वृन्दावन

× × ×

तारीफ़ करूँ मैं अब क्या-क्या उस मुरली-धुन के बजैया की
नित सेवा-कुंज फिरैया की औ' बन-बन गऊ चरैया की
गोपाल बिहारी- बनवारी दुख हरना मेहर करैया की
गिरिधारी सुन्दर श्याम बरन औ' पंदड़ जोगी भैया की
यह लीला हैं, उस नन्दललन मनमोहन जसुमत छैया की
रख ध्यान सुनो दण्डवत करो जै बोलो कृष्ण कन्हैया की

× × ×

विरह आग तन में लगी जरन लगे सब गात
नारी छूवत वैद के पड़े फफोले हाथ

आह दई कैसी भई अनचाहत को संग
दीपक के भावे नहीं, जल-जल मरत पतंग
ना मेरे पंख न पाँव बल, मैं अपंख पिय दूर
उड़ न सकूँ गिर-गिर पड़ूँ, रहूँ बिसूर-बिसूर
कूक करूँ तो जग हँसे, औ' चुपके लागे घाव
ऐसे कठिन सनेह को, का विधि करूँ उपाय
दिल चाहे दिलदार को तन चाहे आराम
दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम

× × ×

कल जो टुक रोया किसी की याद में वह गुलबदन
अश्क थे आँखों में या मोती कुचल कर भर दिये

× × ×

तनहा न उसे अपने दिले तंग में पहचान
हर बाग़ में हर दश्त में, हर रंग में पहचान
बेरंग में बारंग में नैरंग में पहचान
मंज़िल में मुक़ामात में, फ़रसंग में पहचान
निन रूप में औ' हिन्द में औ' जंग में पहचान
हर राह में हर साथ में, हर संग में पहचान
हर अज़्म इरादे में हर आहंग में पहचान
हर धूम में हर सुलह में हर जंग में पहचान
हर आन में, हर बात में, हर ढंग में पहचान
आशिक़ है तो दिलबर को हर रंग में पहचान

× × ×

दुनिया में बादशाह है सो वह भी आदमी
और मुफ़लिसो गदा है सो है वह भी आदमी
ज़रदार बेनवा है सो है वह भी आदमी
टुकड़े जो माँगता है, सो है वह भी आदमी

× × ×

अशराफ़ और कमीने से ले शाह ता वज़ीर
हैं आदमी ही साहबे इज़्ज़त भी और हक़ीर
याँ आदमी मुरीद है, औ' आदमी ही पीर
अच्छा भी आदमी ही कहाता है ऐ 'नज़ीर'
और सब से जो बुरा है सो है वह भी आदमी

× × ×

जब आदमी के पेट में आती हैं रोटियाँ
फूली नहीं बदन में समाती हैं रोटियाँ
आँखें परी रुख़ों से लड़ाती हैं रोटियाँ
जितने मज़े हैं सब ये दिखाती हैं रोटियाँ

× × ×

रोटी न पेट में हो तो फिर कुछ जतन न हो
मेले की सैर ख़्वाहिशे बाग़ो चमन न हो
भूखे ग़रीब दिल की ख़ुदा से लगन न हो
सच है कहा किसी ने कि भूखे भजन न हो

× × ×

आदम एक दमड़ी की हुक़िया को रहे आजिज़ सदा
हमको क्या-क्या पेचवाँ औ' गुड़गुड़ी पर नाज़ है
ग़ौर से देखा तो अब यह वह मसल है ऐ नज़ीर
बाप ने पिड़की न मारी बेटा तीरन्दाज़ है

तनदुरुस्ती

गर दौलतों से तेरा भरा है तमाम घर
बीमार है तो ख़ाक से बदतर है सब वो ज़र
हो तनदुरुस्त गरचे-तो मुफ़लिस हो सर बसर
फिर ख़ौफ़ हो किसी का न हरगिज़ किसी का डर

जितने स.खुन हैं सब में यही है स.खुन दुरुस्त
अल्लाह आबरू से रखे और तनदुरुस्त
बीमार गरचे लाख तरह से हो बादशाह
तो उसको जानिये कि गदा से भी है तबाह
हम तुम उसी को शाह कहें और जहाँपनाह
चंगा हो तनदुरुस्त हो इज़्ज़त से हो निबाह
जितने स.खुन हैं सब में यही है स.खुन दुरुस्त
अल्लाह आबरू से रखे और तनदुरुस्त
आला हो या कि अदना तवंगर हो या फ़क़ीर
या बादशाह शहर का या मुल्क का अमीर
है सब को तनदुरुस्ती ओ हुरमत ही दिल पज़ीर
जो तूने अब कहा सो नहीं सच है ऐ नज़ीर
जितने स.खुन हैं सब में यही है स.खुन दुरुस्त
अल्लाह आबरू से रखे और तनदुरुस्त

'नासिख़'

तिरछी नज़रों से न देखो आशिक़े दिलगीर को
कैसे तीरन्दाज़ हो सीधा तो कर लो तीर को

× × ×

यों न बातें चबा-चबा के कहो
मेहरबाँ बात है नबात नहीं

× × ×

है सितारा मूज़नब या रुख़ है ज़ुल्फ़े यार में
ख़ाल है खुरशीद में या तिल है ये रुख़सार में

× × ×

मर्तबा कम हिर्से रिफ़अत से हमारा हो गया,
आफ़ताब इतना हुआ ऊँचा कि तारा हो गया

× × ×

सियहबख़्ती में कोई कब किसी का साथ देता है
कि तारीकी में साया भी जुदा होता है इन्साँ से

× × ×

हो वतन में ख़ाक मेरे गौहरे मज़मूँ की क़द्र
लाल क़ीमत को पहुँचता है बदख़्शाँ छोड़ कर

× × ×

आतिशे इश्क़ वह है जिससे समुन्दर जल जाय
इक शरर जाय जो पत्थर में तो पत्थर जल जाय
तन-बदन फूँक दिया है, शबे फ़ुरक़त ने मेरा
क्या अजब है जो मेरे जिस्म से बिस्तर जल जाय
दोस्त कहते हैं उसे साथ जो दे आफ़त में
शमा के जलने से परवाना न क्योंकर जल जाय

× × ×

चोट दिल को जो लगे आहे रसा पैदा हो
सदमा शीशे को जो पहुँचे तो सदा पैदा हो

× × ×

मिल गया ख़ाक में पिस-पिस के हसीनों पर मैं
क़ब्र पर बोएँ कोई चीज़ हिना पैदा हो
अश्क थम जायँ जो .फ़ुरक़त में तो आहें निकलें
.ख़ुश्क होजाय जो पानी तो हवा पैदा हो

× × ×

फिर आई चमन में ज़ख़्म दिल आले हुए
फिर मेरे दाग़े जिगर आतिश के परकाले हुए

किस तरह छोड़ूँ यकायक उसकी ज़ुल्फ़ों का ख़याल
एक मुद्दत से ये काले नाग हैं पाले हुए

× × ×

फ़ाश होते हैं कमाले इश्क़ में इसरारे हक़
जोशे मस्ती में नहीं मुमकिन कि हो मैख़्वार चुप

× × ×

मुतज़र्रिर न हो दिमाग़ कभी
गुल न हो अक़्ल का चिराग़ कभी

× × ×

यों नज़ाकत से गराँ सुरमा है चश्मे यार को
जिस तरह हो रात भारी मर्दुमे बीमार को

'आतिश'

बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का
जो चीरा तो यक क़तरए ख़ूँ न निकला

× × ×

आख़ीर हो गये ग़फ़लत में दिन जवानी के
बहारे उम्र हुई कब ख़िज़ाँ नहीं मालूम

× × ×

अज़ीज़ों को दवा से जब मरज़ बढ़ता नज़र आया
मुझे तक़दीर पर छोड़ा मेरी तद्बीर कम कर दी

× × ×

तड़पते हैं न रोते हैं न हम फ़रयाद करते हैं
सनम की याद में, हरदम ख़ुदा की याद करते हैं

× × ×

किसी की जब कोई तक्लीद करता है मैं रोता हूँ
हँसा गुल की तरह ग़ुंचा जहाँ उसका दहन बिगड़ा

× × ×

आतिश यही दुआ है, ख़ुदाए करीम से
मुहताज ऐ करीम न कीजो बख़ील का

× × ×

आये भी लोग बैठे भी उठ भी खड़े हुए
मैं जा ही ढूँढ़ता तेरी महफ़िल में रह गया

× × ×

मुश्ताक़ दर्दे इश्क़ जिगर भी है दिल भी है
खाऊँ किधर की चोट बचाऊँ किधर की चोट

× × ×

तेग़ में जौहर कहाँ वह अब्रुए ख़मदार के
ज़ख़्म दिखलाई नहीं देते हैं इस तलवार के

× × ×

हज़ारों हसरतें जावेंगी मेरे साथ दुनिया से
शरारो बर्क़ से भी अर्सए हस्ती को कम पाया

× × ×

दहन पर हैं उनके गुमाँ कैसे कैसे
कलाम आते हैं दरमियाँ कैसे कैसे
ज़मीने चमन गुल खिलाती है क्या-क्या
बदलता है रंग आस्माँ कैसे कैसे
तुम्हारे शहीदों में दाख़िल हुए हैं,
गुलो लाल ओ अर्ग़वाँ कैसे कैसे
बहार आई है नशे में झूमते हैं
मुरीदाने पीरेमुग़ाँ कैसे कैसे

अजब क्या छुटा रूह से जामए तन
लुटे राह में कारवाँ कैसे कैसे
तपो हिज्र की काहिशों ने किये हैं
जुदा पोस्त से उस्तख़्वाँ कैसे कैसे
न मुड़ कर भी बेदर्द क़ातिल ने देखा
तड़पते रहे नीमजाँ कैसे कैसे
न गोरे सिकन्दर न है क़ब्रे दारा
मिटे नामियों के निशाँ कैसे कैसे
बहारे गुलिस्ताँ की है आमद-आमद
ख़ुशी फिरते हैं बाग़बाँ कैसे कैसे
तवज्जह ने तेरी हमारे मसीहा
तवानाँ किये नातवाँ कैसे कैसे
दिलो दीदहे अहले आलम में घर है
तुम्हारे लिए हैं मकाँ कैसे कैसे
ग़मो ग़ुस्सओ रंजो अन्दोह हरमा
हमारे भी हैं महरबाँ कैसे कैसे
तेरी कलक क़ुद्रत के क़ुरबान आँखें
दिखाये हैं ख़ुशरू जवाँ कैसे कैसे
करे जिस क़द्र शुक्र नियामत वो कम है
मज़े लूटती है ज़बाँ कैसे कैसे

'ज़ौक़'

राहतो रंज ज़माने में है दोनों लेकिन
याँ अगर एक को राहत है तो है चार को रंज

× × ×

कहा पतंग ने यह दारे शमा पर चढ़ कर
अजब मज़ा है, जो मरते किसी के सर चढ़कर

× × ×

वक़्ते पीरी शबाब की बातें
ऐसी हैं जैसी ख़्वाब की बातें

× × ×

याँ लब पै लाख-लाख सख़ुन इज़्तराब में
वाँ एक ख़ामोशी तेरी सबके जवाब में

× × ×

कब हक़परस्त ज़ाहिदे जन्नत परस्त है
हूरों पै मर रहा है, ये शहवत परस्त है

× × ×

अब तो घबरा के ये कहते हैं कि मर जाएँगे
मर के भी चैन न पाया तो किधर जाएँगे

× × ×

क्या वो दुनिया जिसमें कोशिश हो न दीं के वास्ते
वास्ते वाँ के भी कुछ, या सब यहीं के वास्ते

× × ×

लाई हयात आये, कज़ा ले चली चले,
अपनी ख़ुशी न आये न अपनी ख़ुशी चले

× × ×

बाक़ी है दिल में शेख़ के हसरत गुनाह की
काला करेगा मुँह भी जो दाढ़ी सियाह की

× × ×

दर्द दिल से लोटता हूँ मेरा किसको दर्द है
मैं हूँ लफ़्ज़े दर्द (") जिस पहलू से देखो दर्द है

× × ×

'कितने मुफ़लिस हो गये कितने तवंगर हो गये
ख़ाक में जब मिल गये दोनों बराबर हो गये

× × ×

गुल भला कुछ तो बहारें ऐ सबा दिखला गये
हसरत उन ग़ुंचों पै है जो बिन खिले मुर्झा गये

× × ×

कहीं तुझको न पाया गर्चे हमने यक जहाँ ढूँढ़ा
फिर आख़िर दिल ही में देखा बग़ल ही में से तू निकला

× × ×

ज़ाहिद शराब पीने से काफ़िर बना मैं क्यों
क्या डेढ़ चुल्लू पानी में ईमान बह गया

× × ×

तू भला है तो बुरा हो नहीं सकता ऐ ज़ौक़
है बुरा वोही जो तुझको बुरा जानता है
और अगर तूही बुरा है तो वो सच कहता है
क्यों बुरा कहने से तू उसके बुरा मानता है

× × ×

इस जहल का ज़ौक़ ठिकाना कुछ भी
दानिश ने किया दिल को न दाना कुछ भी
हम जानते थे, इल्म से कुछ जानेंगे
जाना तो ये जाना कि न जाना कुछ भी

× × ×

जब आये थे रोते हुये आप आये थे
अब जायँगे औरों को रुला जायँगे,

× × ×

तू जान है हमारी और जान है तो सब कुछ
ईमान की कहेंगे ईमान है तो सब कुछ

× × ×

कहे एक जब सुन ले इन्सान दो
कि हक़ ने .ज़ुबाँ एक दी कान दो

× × ×

बजा कहे जिसे आलम उसे बजा समझो
.ज़ुबाने ख़ल्क़ को नक़्क़ारए .ख़ुदा समझो

× × ×

किताबे मुहब्बत में ऐ हज़रते दिल
बताओ कि तुम लेते कितना सबक़ हो
कि जब आनकर तुमको देखा तो बोही
लिए दस्ते अफ़सोस के दो वरक़ हो

× × ×

रिन्दे ख़राब हाल को ज़ाहिद न छेड़ तू
तुझको पराई क्या पड़ी अपनी निबेड़ तू

× × ×

ना.ख़ुन .ख़ुदा न दे तुझे ऐ पंजए जनूं
देगा तमाम अक़्ल के बख़िये उधेड़ तू

× × ×

करे वहशत बयाँ चश्मे स.ख़ुनगो इसको कहते हैं
ये सच कहते हैं, सर चढ़ बोले जादू इसको कहते हैं

× × ×

दिल वो क्या जिसको नहीं तेरी तमन्नाए विसाल
चश्म वो क्या जिसको तेरे दीद की हसरत नहीं

× × ×

बद न बोले ज़ेरे गर्दूं गर कोई मेरी सुने
है ये गुम्बद की सदा जैसी कहे वैसी सुने

× × ×

ये दर्दे सर ऐसा है कि सर जाये तो जाये
उल्फ़त का नशा जब कोई मर जाये तो जाये

× × ×

ख़ूँ के दरिया बह गये आलम तहोबाला हुए
ऐ सिकन्दर किस लिए, दो गज़ ज़मीं के वास्ते

× × ×

कीड़ा ज़रा-सा और वो पत्थर में घर करे
इन्साँ वो क्या न जो दिले दिलबर में घर करे

× × ×

जो बुत क़िमारख़ाने में बुत से लगा चुके
वो कावतेन छोड़कर काबे को जा चुके

× × ×

कभी अफ़सोस आता है कभी रोना आता है
दिले बीमार के हैं दो ही अयादत वाले

× × ×

अगर ये जानते चुन-चुन के हमको तोड़ेंगे
तो गुल कभी न तमन्नाए रंगो बू करते

× × ×

न देना कभी हाथ से तुम रास्ती कि आलम में
असा है पीर को औ' सैफ़ जवाँ के लिए,
बयाने दर्दे मुहब्बत जो हो तो क्योंकर हो
ज़ुबाँ न दिल के लिए है न दिल ज़ुबाँ के लिए,

× × ×

कहते हैं आज ज़ौक़ जहाँ से गुज़र गया
क्या ख़ूब आदमी था, ख़ुदा मग़फ़रत करे

× × ×

हो राज़े दिल न यार से पोशीदा यार का
परदा जो दरमियाँ न हो दिल के ग़ुबार का

× × ×

देख छोटों को है अल्लाह बड़ाई देता
आस्माँ आँख के तिल में है दिखाई देता

× × ×

नशा दौलत का बद अतवार को जिस आन चढ़ा
सर पे शैतान के एक और भी शैतान चढ़ा

× × ×

मौत ने कर दिया नाचार वगर्ना इन्साँ
है वो खुदबीं कि ख़ुदा का भी न क़ायल होता

× × ×

क़िस्मत से हो लाचार हूँ पे ज़ौक वगर्ना
सब फ़न में हूँ मैं ताक़ मुझे क्या नहीं आता

× × ×

ज़ाहिद शराब पीने में काफ़िर बना मैं क्यों
क्या डेढ़ चुल्लू पानी में ईमान बह गया

× × ×

कुछ राज़ निहाँ दिल का अयाँ हो नहीं सकता
गूँगे का-सा है ख़्वाब बयाँ हो नहीं सकता

× × ×

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता

× × ×

कब हक़परस्त ज़ाहिदे जिन्नत परस्त है
हूरों पे मर रहा है, यह शहवत परस्त है

× × ×

'ग़ालिब'

इस सादगी पे कौन न मर जाय ऐ ख़ुदा
लड़ते हैं, और हाथ में तलवार भी नहीं

× × ×

मिलना तेरा अगर नहीं आसाँ तो सहल है
दुश्वार तो यही है कि दुश्वार भी नहीं है

× × ×

वादा आने का वफ़ा कीजे ये क्या अन्दाज़ है
तुमने क्यों सौंपी है मेरे घर की दरबानी मुझे

× × ×

हविस को है निशाते कार क्या-क्या
न हो मरना तो जीने का मज़ा क्या

× × ×

न था कुछ तो ख़ुदा था कुछ न होता तो ख़ुदा होता
डुबोया मुझको होने ने न होता मैं तो क्या होता
हुआ जब ग़म से यों बेहिस तो ग़म क्या सर के कटने का
न होता गर जुदा तन से तो ज़ानू पर धरा होता
हुई मुद्दत कि ग़ालिब मर गया, पर याद आता है
वो हरएक बात पर कहना कि यों होता तो क्या होता

× × ×

आए हो कल औ' आज ही कहते हो कि जाऊँ
माना कि हमेशा नहीं, अच्छा कोई दिन और
जाते हुए कहते हो क़यामत को मिलेंगे
क्या ख़ूब क़यामत का है गोया कोई दिन और

× × ×

रहिए अब ऐसी जगह चलकर जहाँ कोई न हो
हमसख़ुन कोई न हो औ' हमज़बाँ कोई न हो
बे दरोदीवार-सा इक घर बनाना चाहिए
कोई हमसाया न हो औ' पासबाँ कोई न हो
पड़िये गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार
औ' अगर मर जाइये तो नौहाख़्वाँ कोई न हो

× × ×

रंज से ख़ूगर हुआ इन्साँ तो मिट जाता है रंज
मुशकिलें मुझ पर पड़ीं इतनी कि आसाँ हो गईं

× × ×

इशरते क़तरा है दरिया में फ़ना हो जाना
दर्द का हद से गुज़रना है दवा हो जाना

× × ×

ये फ़ितना आदमी की ख़ाना वीरानी को क्या कम है
हुए तुम दोस्त जिसके दुश्मन उसका आसमाँ क्यों हो

× × ×

मेहरबाँ हो के बुला लो मुझे चाहो जिस वक़्
मैं गया वक़् नहीं हूँ कि फिर आ भी न सकूँ

× × ×

न लुटता दिन को तो कब रात को यों बेख़बर सोता
रहा खटका न चोरी का दुआ देता हूँ रहज़न को

× × ×

देखना तक़दीर की लज़्ज़त कि जो उसने कहा
मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल में है

× × ×

कोई उम्मीद बर नहीं आती
कोई सूरत नज़र नहीं आती

मौत का एक दिन मुअय्यन है
नींद क्यों रात-भर नहीं आती

आगे आती थी हाले दिल पै हँसी
अब किसी बात पर नहीं आती
हैं कुछ ऐसी ही बात जो चुप हूँ
वरना क्या बात कर नहीं आती

हम वहाँ हैं जहाँ से हमको भी
कुछ हमारी ख़बर नहीं आती
मरते हैं, आरज़ू में मरने की
मौत आती है, पर नहीं आती

× × ×

मेरी क़िस्मत में ग़म गर इतना था,
दिल भी या रब ! कई दिये होते

× × ×

उनको देखे से जो आजाती है, मुँह पर रौनक़
वो समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है

× × ×

क़तरए दरिया में जो मिल जाय तो दरिया हो जाय
काम अच्छा है वो जिसका कि मआल अच्छा है
हमको मालूम है, जन्नत की हक़ीक़त लेकिन
दिल के ख़ुश रखने को ग़ालिब ये ख़याल अच्छा है

× × ×

इश्क़ ने ग़ालिब निकम्मा कर दिया
वरना हम भी आदमी थे काम के

× × ×

न सुनो गर बुरा कहे कोई
न कहो गर बुरा करे कोई

रोक लो गर ग़लत चले कोई
बख़्श दो गर ख़ता करे कोई,

× × ×

ग़ालिब बुरा न मान जो वायज़ बुरा कहे
ऐसा भी कोई है कि सब अच्छा कहें जिसे

× × ×

गुर्रए औजे बिनाए आलमे इमकाँ न हो
इस बलन्दी के नसीबों में है पस्ती एक दिन
क़र्ज़ की पीते थे मै लेकिन समझते थे कि हाँ
रंग लाएगी हमारी फ़ाकामस्ती एक दिन

× × ×

हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी कि हर ख़्वाहिश पै दम निकले
बहुत निकले मेरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले
निकलना ख़ुल्द से आदम का सुनते आए हैं लेकिन
बहुत बेआबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले
मुहब्बत में नहीं है फ़र्क़ जीने और मरने का
उसी को देख कर जीते हैं जिस काफ़िर पै दम निकले

× × ×

पुर हूँ मैं शिकवे से यों राग से जैसे बाजा
इक ज़रा छेड़िये फिर देखिये क्या होता है

× × ×

हैराँ हूँ दिल को रोऊँ कि पीटूँ जिगर को मैं
मक़दूर हो तो साथ रखूँ नोहागर को मैं,
छोड़ा न रश्क़ ने कि तेरे घर का नाम लूँ
हर इक से पूछता हूँ कि जाऊँ किधर को मैं
चलता हूँ थोड़ी दूर हर एक तेज़-रौ के साथ
पहचानता नहीं हूँ अभी राहबर को मैं

× × ×

गुंजाइशे अदावत अग़यार इक तरफ़
याँ दिल में ज़ोफ़ से हविसे यार भी नहीं
देखा असद को ख़िलवतो जिलवत में बार-बार
दीवाना गर नहीं है तो हुशियार भी नहीं

× × ×

किया ग़मख़्वार ने रुसवा लगे आग उस मुहब्बत को
न लादे ताब जो ग़म की वो मेरा राज़दाँ क्यों हो
कफ़स में मुझसे रूदादे चमन कहते न डर हमदम
गिरी है जिसपै कल बिजली वो मेरा आशियाँ क्यों हो
यह कह सकते हो हम दिल में नहीं हैं पर ये बतलाओ
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो तो आँखों से निहा क्यों हो

× × ×

जला है जिस्म जहाँ दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख जुस्तजू क्या है
रगों में दौड़ने-फिरने के हम नहीं क़ायल
जब आँख ही से न टपका तो फिर लहू क्या है

'अनीस'

हाज़िर हैं सुबह से दरे दौलत पै जाँनिसार
एकसू टहल रहे हैं रफ़ीक़ाने ज़ीविक़ार
पैदल खड़े हैं सामने बाँधे हुए क़तार
बैठे हैं ज़मीपोश बिछाए हुए सवार
शौक़े ज़ियारते अलमे फ़ौज शाह है
इक-इक की जानिबे दरे दौलत निगाह है

रुख़ है किसी का जोश शुजाअत से लाल रंग
कोई सँवारता है, वदन पर सिलाहे जंग
झुक-झुक के चुस्त करता है कोई फ़रस का तंग
चिल्ले से जोड़ता है कोई फ़ाकेकश ख़दंग
भाला सँभालता है कोई झूम-झूम के
तनता है कोई तेग़ के कब्ज़े को चूम के

मिलता है हँस के एक जवाँ एक के गले
सारी ख़ुशी ये है कि बस अब .ख़ुल्द में चले
चेहरे वो सुर्ख़-सुर्ख़ वो जुरअत के वलवले
हक़ से ये इल्तजा कि न रन से क़दम टले
मर कर भी दिल में उल्फ़ते हैदर की बू रहे
पानी हमें मिले न मिले आवरू रहे।

ड्योढ़ी पै ख़ादिमाने महल की है ये पुकार
आते हैं अब हुज़ूर ख़बरदार-होशियार
ख़िलअत पहन रहे हैं अलमदार नामदार
नज़रें ख़ुशी की देने को हाज़िर हैं जाँनिसार
भाई बड़ा है सर पै तो साया है बाप का
ओहदा जवान बेटे ने पाया है बाप का

शहना के शोर सुन के लरज़ता था बन्द-बन्द
बरछे हिले रिसालों में नेज़े हुए बलन्द
सहराए हौलनाक की वहशत हुई दुचन्द
डरकर कनौतियों को बदलने लगे समन्द
सुनकर दहल का शोर कलेजे दहल गये
सहरा से दब के शेर, नेसताँ निकल गये

प्यासों पै जब उधर से चले तीर बेशुमार
मौला ने ग़ाज़ियों को दिया हुक्मे कारज़ार

निकले वग़ा को क़िबलए आलम के जाँनिसार
जिनकी शुजाअतें हैं ज़माने में यादगार
होंगे न हैं न ऐसे कभी बावफ़ा हुए
सब जाँनिसार हक़े नमक से अदा हुए

निकले वग़ा को एलचीए शाह के पिसर
मातम में थे कि था अभी ताज़ा ग़मे पिसर
फ़ौजों पै हमलावर हुए जिस दम वो शेरे नर
दम में तनों से कट के गिरे कूफ़ियों के सर
रन पर चढ़े जो सोग के कपड़े उतार के
मारे गये वो शेर हज़ारों को मार के

× × ×

क्या हाथ था, क्या तेग़ थी क्या हिम्मते आली
दम-भर में नमूदार सफ़ें होती थीं ख़ाली,
जब झूम के ढालों की घटा आती थी काली
बिजली-सी चमक जाती थी शमशेर हिलाली
मिलता था निशाँ रन में सफ़ों का न परों का
था शोर कि मेह आज बरसता है शरों का
कट-कट के हरेक जर्ब में सर गिरते थे सर पर
बरछी पै न फल था न कोई फूल सिपर पर
फिर जाती थी गरदन पै कभी गाहे जिगर पर
मरकज़ की तरह थी कभी दुश्मन की कमर पर
निकली जो कमर से तो चली ख़ानए ज़ीं पर
ज़ीं से गई मरकब पे तो मरकब से ज़मीं पर

× × ×

क्या-क्या दुनिया से साहबे माल गये
दौलत न गयी साथ न अतफ़ाल गये

पहुँचा के लहद तलक फिर आए सब लोग
हमराह अगर गये तो आमाल गये

× × ×

दिल से ताक़त बदन से कस जाता है
आता नहीं फिर कर जो नफ़स जाता है
अब साल गिरह हुई तो उक़दा ये खुला
याँ और गिरह से एक बरस जाता है

× × ×

नमूदो बूद आक़िल हुबाब समझे हैं
वो जागते हैं जो दुनिया को ख़्वाब समझे हैं

× × ×

गुनह का बोझ जो गरदन पै हम उठा के चले,
.खुदा के आगे ख़िज़ालत से सर झुका के चले

× × ×

गर लाख बरस जिए तो फिर मरना है,
पैमानए उम्र एक दिन भरना
हाँ तोशएआख़िरत मुहैया करलें
ग़ाफ़िल तुझे दुनिया से सफ़र करना है

'दबीर'

मरसिया

मिस्ले नसीम सुबह सवारी रवाँ हुई
फूलों के लेके फ़स्ल बहारे रवाँ हुई
या फ़ौज फ़ौजे क़ुदरते बारी रवाँ हुई
ज़ीनब पुकारी जान हमारी रवाँ हुई

बाग़ों में गुल ज़मीन के पर्दों से आते हैं
ईमाँ के फूल ख़ाक में मिलने को जाते हैं

× × ×

यह सुन के दो ज़बान निकाले हुए चली,
साँचे में अपनी फ़तेह को ढाले हुए चली
जौहर का जाल दोश पै डाले हुए चली
क़ब्ज़े में क़हरे हक़ को सँभाले हुए चली
साया को मुड़के हुक्म दिया रह न जाइयो
उँगली अजल की पकड़े हुए लेता आइयो

× × ×

यों शोर वहाँ गुल इधर आई उधर आई
वह चमकी, वह तड़पी वो छिपी वह नज़र आई
चमकी जो .ख़ुद सर पै तो सर से निकल गई
शाने पै जो पड़ी तो जिगर से निकल गई
सीने में दम लिया तो कमर से निकल गई
हैराँ था .ख़ुद बदन कि किधर से निकल गई

× × ×

थी सुबह या फ़लक का जेबेदरीदा था
या चेहरए मसीह का रंगे परीदा था,
.ख़ुरशेद था कि अर्श का अश्के चकीदा था
या फ़ातिमा का नालए गरदूँ रसीदा था
कहिए न महर सुबह के सीने पै दाग़ था
उम्मीद अहलियत का घरे बेचिराग़ था

× × ×

अदना से सर झुकाए आला वह है
जो ख़ल्क से बहरावर है दरिया वह है

क्या ख़ूब दलील ये ख़ूबी की दबीर
समझे जो बुरा आपको अच्छा वह है

× × ×

घर कौन-सा बसा कि जो वीराँ न हो गया
गुल कौन-सा हँसा कि परेशाँ न हो गया,

× × ×

गुलशन को सबा की जुस्तजू तेरी है
बुलबुल की ज़बाँ पै गुफ़्तगू तेरी है
हर रंग में जलवा है तेरी कुदरत का
जिस फूल को सूँघता हूँ वू तेरी है

× × ×

जुज़ हैफ़ क्या जहाँ से सुलेमान ले गये
यूसुफ़ भी ज़ेरे ख़ाक सब अरमान ले गये
शाहाने दहर कौन-सा सामान ले गये,
सब कुछ वो ले गये कि जो ईमान ले गये,

× × ×

किसी का कन्दा नगीने पै नाम होता है,
किसी की उम्र का लबरेज़ जाम होता है
अजब सरा है ये दुनिया जिसमें शामो सहर
किसी का कूच किसी का मुक़ाम होता है

× × ×

'नसीम'

जब न जीतेजी मेरे काम आयगी
क्या ये दुनिया आक़बत बख़्शायगी
जब मिले दो दिल मुख़िल फिर कौन है,
बैठ जाओ ख़ुद हया उठ जायगी

× × ×

ख़ुम न बनकर ख़ुद ग़रज़ हो जाइये
मिस्ल साग़र और के काम आइये

× × ×

कूचये जानाँ को मिलती थी न राह
बन्द कीं आँखें तो रस्ता खुल गया

× × ×

नसीम अपने ही ऐमालों से गर्दिश है ज़माने की
रवाँ किश्ती पै आता है, नज़र हर नख़ल साहिल का

× × ×

कल तक जो शमा महफ़िले ऐशो निशात थे
जलता नहीं चिराग़ भी आज उनकी गोर पर

× × ×

बजुज़ गोरे ग़रीबाँ नक़्शेपा थे फिर नहीं आगे
यहीं तक हर मुसाफ़िर ने पता पाया है मंज़िल का

× × ×

आन में फ़र्क़ न आने दीजे
जान गर जाय तो जाने दीजे

× × ×

कहानी कहके सुलाते थे यार को सो अब
फ़िसाना उम्र हुई ख़्वाब वह ख़याल हुआ

× × ×

"शेख़ ने मस्जिद बना मिसमार बुतख़ाना किया"—नासिख़
"तब तो एक सूरत भी थी अब साफ़ वीराना किया"—नसीम

× × ×

मुँह धोने जो आँख मलती आई
पुर आब वह चश्मे हौज़ पाई
देखा तो वो गुल हवा हुआ है
कुछ और ही गुल खिला हुआ है
घबराई कि हैं किधर गया गुल
झुँझलाई कि कौन दे गया जुल
है है मेरा फूल ले गया कौन
है है मुझे ख़ार दे गया कौन
हाथ उस पै अगर पड़ा नहीं है,
बू होके तो फूल उड़ा नहीं है
नरगिस तू दिखा किधर गया गुल
सौसन तू बता किधर गया गुल
सम्बल मेरा ताज़ियाना लाना
शमशाद इन्हें सूली पर चढाना

× × ×

नरगिस ने निगाह बाज़ियाँ कीं
सौसन ने ज़बाँदराज़ियाँ कीं
पत्ता भी पते को जब न पाया
कहने लगी क्या हुआ ख़ुदाया
अपनों में से फूल ले गया कौन
बेगाना था सब्ज़े के सिवा कौन

शबनम के सिवा चुराने वाला
ऊपर का था कौन आने वाला
जिस कफ़ में वो गुल हो दाग़ हो जाय
जिस घर में हो गुल चिराग़ हो जाय

× × ×

बोली वो बकावली कि अफ़सोस
ग़फ़लत से ये फूल पर पड़ी ओस
आँखों से अज़ाज़ गुल मेरा था
पुतली वही चश्मे हौज़ का था,
नाम उसका सबा न लेती थी मैं
उस गुल को हवा न देती थी मैं
गुलचीं का जो हाय हाथ टूटा
ग़ुंचे के भी मुँह से कुछ न फूटा
ओ ख़ार पड़ा न तेरा चंगुल
मुश्कें कस लीं न तूने सँबल
ओ बादे सबा हवा न बतला
ख़ुशबू ही सूँघा पता न बतला
बुलबुल तू चहक अगर ख़बर है
गुल तू ही महक बता किधर है

× × ×

क्या लुत्फ़ जो ग़ैर पर्दा खोले
जादू वो जो सर पै चढ़के बोले

× × ×

ग़म राह नहीं कि साथ दीजे
दुख बोझ नहीं कि बाँट लीजे

× × ×

आता हो तो हाथ से न दीजे
जाता हो तो उसका ग़म न कीजे

× × ×

दरवेश रवाँ रहे तो बेहतर
आबे दरिया बहे तो बेहतर

× × ×

रातों को जो गिनती थी सितारे
दिन गिनने लगी .खुशी के मारे

× × ×

घर-बार से क्या फ़क़ीर को काम
क्या लीजिए छोड़े गाँव का नाम
पूछा कि सबब, कहा कि क़िस्मत
पूछा कि तलब, कहा क़नाअत

× × ×

कान में सब के अपनी बात न डाल
आबरू मिस्ले आबे गौहर है

× × ×

बुतों को जो देखा गुनह क्या हमारा
.खुदाई .खुदा की तमाशा हमारा
बुतों की गली छोड़कर कौन जाए
यहीं से है काबे को सिजदा हमारा

× × ×

'असीर'

मैं मिट गया तो वह भी मेरे साथ मिट गया
साये से ख़ूब हक़्के रिफ़ाक़त अदा हुआ

× × ×

हर जगह जोशे मुहब्बत का नया आलम हुआ
आँख में आँसू, जिगर में दाग़, दिल में ग़म हुआ

× × ×

मस्जिद में बुलाता है हमें ज़ाहिदे नाफ़हम
होता अगर कुछ होश तो मैख़ाने न जाते

× × ×

दीदारे यार का न उठेगा मज़ा असीर
जब तक दुई का पर्दा उठाया न जायगा

× × ×

क़रीब है यार रोज़े महशर छुपेगा कुश्तों का ख़ून कब त
जो चुप रहेगी ज़बाने ख़ंजर लहू पुकारेगा आस्तीं क

× × ×

आँखों में नूर तेरा दिल में सुरूर तेरा
दरवाज़े से है घर तक सारा ज़हूर तेरा
मैं आईना हूँ तेरा तू आईना है मेरा
तुझमें ज़हूर मेरा मुझमें ज़हूर तेरा
है बेख़ुदी ही जिससे होता है क़ुर्ब हासिल
ग़ायब जो आप से हो पाये हुज़ूर तेरा

× × ×

इश्क़ में जाँ से गुज़रते हैं, गुज़रने वाले
मौत की राह नहीं देखते मरने वाले

× × ×

जफ़ाएँ झेलकर तासीरे उल्फ़त हम दिखाते हैं
हिना की तरह से पिस लेते हैं तब रंग लाते हैं

× × ×

ख़ुद गला काटूँ मुझे ख़ंजर इनायत कीजिए
देखिये दुखजायगी नाज़ुक कलाई आपकी

× × ×

मैं ग़रीब और ग़रीबों का ख़ुदा वाली है
होने दो सारे ज़माने को उधर होने दो,

× × ×

दूसरा कौन है जहाँ तू है, कौन जाने तुझे कहाँ तू है
लाख पर्दों में तू है बेपर्दा, सौ निशानों में बेनिशाँ तू है

× × ×

उन्हीं से ग़ममूज़ करती है जो तुझ पर जान देते हैं,
अजल तुझको भी कितना नाज़े माशूक़ाना आता है

× × ×

उठाऊँ सख़्तियाँ लाखों कड़ी बात उठ नहीं सकती
मैं दिल रखता हूँ शीशे का जिगर रखता हूँ आहन का

× × ×

मस्ती उन आँखों में आती है तो कहता है हिजाब-
देख तू आई तो मैं घर से निकल जाऊँगा

× × ×

खोगया दिल खोगया रहता तो क्या होता अमीर
जाने दो यक बेवफ़ा जाता रहा—जाता रहा

× × ×

इस सरा में मैं मुसाफ़िर नहीं रहने आया
रह गया थक के अगर आज तो कल जाऊँगा

× × ×

यह तो मैं क्योंकर कहूँ तेरे ख़रीदारों में हूँ
तू सरापा नाज़ है, मैं नाज़ बरदारों में हूँ
किस तरह फ़रियाद करते हैं बता दो क़ायदा
ऐ असीराने कफ़स मैं नौ गिरफ़्तारों में हूँ

× × ×

ख़ुदी से बे.ख़ुदी में आ जो शौक़े हक़-परस्ती है
जिसे तू नेस्ती समझा है, ऐ ग़ाफ़िल वो हस्ती है

× × ×

पाक दामन हो तो अरमाने विसाल अच्छा है,
अच्छी नीयत हो तो अच्छों का ख़याल अच्छा है

× × ×

बहार आई चमन होता है, मालामाल दौलत से
निकाला चाहते हैं ज़र, गिरह .ग़ुंचों ने खोली है

× × ×

रोज़े ख़िल्वत से वहीं हैं बाहर आसकती नहीं,
कहते हैं जिन्नत जिसे है .क़ैदख़ाना हूर का
आदमी का मुँह है जो दावा .ख़ुदाई का करे
बोलते हैं, आप हज़रत नाम है, मंसूर का।

× × ×

फ़ना कैसी बक़ा कैसी जब उसके आशना ठहरे
कभी इस घर में आ निकले कभी उस घर में जा ठहरे
जो चश्मे ग़ौर से आईनए तौहीद को देखा
तो सब कुछ तूही ठहरा हम न कुछ ऐ .ख़ुदनुमा ठहरे

हक़ीक़त खोल दी आईनए वहदत ने दोनों की
न तुम हमसे जुदा ठहरे न हम तुमसे जुदा ठहरे
अमीर आया जो वक़्ते बद तो सबने राह ली अपनी
हज़ारों, सैकड़ों में दर्दो ग़म दो आशना ठहरे

× × ×

कैसी घड़ी थी घर से जो निकला था मैं ग़रीब
फिर देखना नसीब न मुझको वतन हुआ
अब का सफ़र वो है कि न देखूँगा फिर वतन
यों तो मैं लाख बार ग़रीबुल वतन हुआ

× × ×

दिल मुझसे लिया है तो ज़रा बोलिए-हँसिए
चुटकी में मसलने के लिए दिल नहीं होता

× × ×

जगाती है ये कहकर सुबहे पीरी चश्मे ग़ाफ़िल को
बस उठ ओ नींद की माती कि शब-भर ख़ूब सो ली है।

× × ×

आई सहर इधर कि उधर शाम हो गयी
दो-दो घड़ी के होने लगे दिन विसाल के

× × ×

नज़रबाज़ी से जो मिलती है लज़्ज़त दिल में रखते हैं
तेरे दीदार के भूखे फ़क़ीरों की ये झोली है

× × ×

सोचता है मेरी तप देख के फ़ुरक़त में तबीब
नब्ज़ को हाथ लगाऊँगा तो जल जाऊँगा

× × ×

है ये ज़ुल्म चन्द रोज़ा है एक दिन इन्तक़ाम का भी
अमीर हम्माम गर्म कर लें ग़रीब का झोंपड़ा जलाकर

× × ×

हम फ़क़ीर अपनी फ़क़ीरी में शबो रोज़ हैं मस्त
तुझको अय शाह मुबारक रहे शाही तेरी

× × ×

फूल मैं फूलों में हूँ, काँटा हूँ काँटों में अमीर
यार मैं यारों में हूँ, ऐयार ऐयारों में हूँ

× × ×

दीन की फ़िक्र करूँ हाय मैं किस वक़्त अमीर
कभी दुनिया के बखेड़ों से फ़राग़त ही नहीं

× × ×

उसकी हसरत है जिसे दिल से मिटा भी न सकूँ
ढूँढ़ने उसको चला हूँ जिसे पा भी न सकूँ

'दाग़'

यह क्या कहा कि दाग़ को पहचानते नहीं,
वह एक ही तो शख़्स है तुम जानते नहीं

× × ×

लब से दुश्नाम तो वो दिल से दुआ देते हैं
घोल कर ज़हर मुझे आबे वफ़ा देते हैं

× × ×

कोई नामोनिशाँ पूछे तो ऐ क़ासिद बता देना
तख़ल्लुस दाग़ है, वह आशिक़ों के दिल में रहते हैं

× × ×

बशर ने ख़ाक पाया लाल पाया या गुहर पाया
मिज़ाज अच्छा अगर पाया तो सब कुछ उसने भर पाया

× × ×

हज़रते दाग़ जहाँ बैठ गये बैठ गये
और होंगे तेरी महफ़िल से उभरने वाले

× × ×

.ख़ूब तक़दीर की .ख़ूबी ने किया है बरबाद
जाबजा मुझको लिये फिरती है, शोहरत मेरी
कहीं दुनिया में नहीं इसका ठिकाना ऐ दाग़
छोड़कर मुझको कहाँ जाय मुसीबत मेरी

× × ×

ऐ फ़लक़ दे हमको पूरा ग़म तो खाने के लिए
वह भी हिस्सा कर दिया सारे ज़माने के लिए
मर गये तो मर गये हम इश्क़ में नासेह को क्या
मौत आने के लिए है, जान जाने के लिए

× × ×

कभी फ़लक़ को पड़ा दिल जलों से काम नहीं,
अगर न आग लगा दूँ तो दाग़ नाम नहीं,

× × ×

जिसने दिल खोया उसी को कुछ मिला
फ़ायदा देखा इसी नुक़सान में

× × ×

न पूछो कुछ मुसीबत दर्दमन्दाने मुहब्बत की
.ख़ुदा पर .ख़ूब रोशन है, गुज़र जिस तरह करते हैं

× × ×

कभी यह दिल तमाशागाह था, ऐशो मुसर्रत का
अब इसमें हसरतो शौक़ो तमन्ना सैर करते हैं

× × ×

कभी गिरता हूँ शीशे पर, कभी गिरता हूँ साक़ी पर
मेरी बेहोशियों से होश साक़ी के बिखरते हैं

× × ×

दिल लेके मुफ़्त कहते हैं, कुछ काम का नहीं,
उल्टी शिकायतें हुईं एहसान तो गया
होशोहवासो तावो तवाँ दाग़ जा चुके
अब हम भी जाने वाले हैं सामान तो गया

× × ×

ग़श खा के दाग़ यार के क़दमों पै गिर पड़ा
बेहोश ने भी काम किया होशियार का

× × ×

बाक़ी जहाँ में क़ैस न फ़रहाद रह गया,
अफ़साना आशिक़ों का फ़क़त याद रह गया

× × ×

मज़ा हर एक को ताज़ा मिला है, इश्क़े जानाँ का
निगह को दीद का, लब को फ़ुग़ाँ का, दिल को अरमाँ का

× × ×

अहले उल्फ़त के लिए चाहिए शोहरत पे दिल
नाम बिकता है, मुहब्बत के ख़रीदारों का

× × ×

कहने देती नहीं कुछ मुँह से मुहब्बत तेरी
लब पै रह जाती है, आ-आ के शिकायत तेरी

× × ×

लुत्फ़ मय तुझसे क्या कहूँ ज़ाहिद
हाय कम्बख़्त तूने पी ही नहीं
उड़ गयी यों वफ़ा ज़माने से—
कभी गोया किसी में थी ही नहीं

× × ×

जिसमें लाखों बरस की हूरें हों
ऐसी जिन्नत को क्या करे कोई
× × ×

आख़िर को इश्क़ कुफ़्र से ईमान हो गया
मैं बुतपरस्तियों से मुसलमान हो गया

× × ×

रुख़े रोशन के आगे वह शमा रखकर ये कहते हैं,
उधर जाता है, देखो या इधर परवाना आता है,
जो तुम हँसने में हो मश्शाक़ मैं रोने में कामिल हूँ
तुम्हें बिजली गिराना मुझको मेह बरसाना आता है

× × ×

खा गया मग्ज़ नासेह नादाँ
मुझको इस ख़ैरख़्वाह ने मारा

× × ×

रहती थी उसकी याद वो रातें कहाँ गयीं
अब मुझको इन्तज़ार है, उस इन्तज़ार का

× × ×

हर वक़्त है चितवन तेरी अय शोबदागर और
इकदम मिज़ाज और है, इक पल में नज़र और
हम जानते हैं, ख़ूब तेरी तर्ज़े निगाह को—
है क़हर की आँख और मुहब्बत की नज़र और

× × ×

राहत के वास्ते है, तुझे आरज़ूए मर्ग
अय दाग़, और जो चैन न आया कज़ा के बाद।

× × ×

वो निहायत हमें मग़रूर नज़र आते हैं
पास बैठे हैं, मगर दूर नज़र आते हैं।

× × ×

ऐ दाग़ जो कहा है, उसे कर दिखाएँगे
इन्सान क्या वह जिसको न हो बात का ख़याल

× × ×

बुतकदे की जो सैर की हमने
कारख़ाना है एक .खुदाई का

× × ×

रहता है इबादत में हमें मौत का खटका
हम यादे .खुदा करते हैं, करले न .खुदा याद

× × ×

दुनिया ही में मिलते हैं हमें दोज़ख़ो जिन्नत
इन्सान ज़रा सैर करे घर से निकल कर

× × ×

होश जब आया तो यह जानो क़यामत आ गयी
ज़िन्दगी मेरी जभी तक है कि मैं ग़फ़लत में हूँ

'आसी'

(ग़ाज़ीपुरी)

उम्र अपनी रवाँ है तो अक़ामत से सरोकार
समझे अगर इन्सान तो दिन-रात सफ़र है

× × ×

काबा बुतख़ाना कलीसा सोमआ
फिरते हैं, दर-दर कि तेरा दर मिले

× × ×

कुछ न पूछो कैसी नफ़रत हमसे है
हम हैं जब तक घर हमें क्योंकर मिले

× × ×

दिल जो था ख़ास घर उसका न बनाया अफ़सोस
मस्जिदो दैर बनाया करो क्या होता है

× × ×

अयाँ ऐसे कि हर शै में निहाँ थे
निहाँ ऐसे कि हर शै में अयाँ थे

× × ×

उठे हम उठ गया पर्दा दुई का
हमारे उसके बस हम दर्मियाँ थे

× × ×

कहाँ वो आये किधर से आए,
कहाँ वो ठहरे किधर सिधारे

× × ×

उन्हीं में हम कुछ महव थे ऐसे
कि उनकी भी कुछ ख़बर नहीं है

× × ×

हाय क्या बोझ बुढ़ापे में भरा था अल्लाह
सर तो सीने में घुसा पीठ कमर तक ख़म है

× × ×

वस्ल की शब दरो दीवार से आई आवाज़
ख़्वाहिशों को जो पछाड़े वो बड़ा रुस्तम है

× × ×

दर्दे दिल कितना पसन्द आया उसे
मैंने जब की आह उसने वाह की

× × ×

जो बालों में सियाही रह गयी है
बुढ़ापे में है, ये दाग़े जवानी

× × ×

है इश्क़ वो शोला कि फुका जाता है तन, मन
इस आग को भड़का के .खुदी मेरी जला दी

× × ×

तुम नहीं कोई तो सब में नज़र आते क्यों हो
सब तुम्हीं तुम हो तो फिर मुँह को छिपाते क्यों हो

× × ×

मेरी नज़रों में तो हो डर तेरा तेरी मुहब्बत हो
न दुनिया हो, न उक़्बा हो, न दोज़ख़ हो न जिन्नत हो
सिवा तेरे न मायल हो किसी पर वह तबीअत दे
तेरी उलफ़त हो, तेरा इश्क़ हो, तेरी मुहब्बत हो

× × ×

तावे दीदार जो लाये मुझे वह दिल देना
मुँह क़यामत में दिखा सकने के क़ाबिल देना

× × ×

रहे मुल्के अदम का नाम सुनकर दम निकलता है
ये वो रस्ता है, जिसमें हर मुसाफ़िर मर के चलता है

× × ×

इश्क़ कहता है कि आलम से जुदा हो जाओ
हुस्न कहता है जिधर जाओ नया आलम है

× × ×

जीने ने यहाँ के मार डाला आखो
सुनते हैं कि फिर हश्र में जीना होगा

× × ×

इतना तो जानते हैं कि आशिक़ फ़ना हुआ
और इससे आगे बढ़के .खुदा जाने क्या हुआ

× × ×

वह दौर चला जामे मये बेख़बरी का
हम वह हैं कि वह हम नहीं इतनी भी ख़बर है

× × ×

ज़र्रे से जो देखने में कमतर होंगे
तेरे लिए वह भी मेहरो अनवर होंगे
ऐ दिल न बराबरी किसी की करना
हाँ ख़ाक के एक रोज़ बराबर होंगे

× × ×

आख़िर एक दिन ऐ गुलेतर देख मुरझाना पड़ा
इस क़दर भी अपने जामे से कोई बाहर न हो

× × ×

जान दो दिन की है, मेहमान सताते क्यों हो
आप रोते हुए आए हैं, रुलाते क्यों हो

× × ×

कटे यह रात क्योंकर हाय क्या सदमे गुज़रते हैं
न वह आते, न सब्र आता, न नींद आती न मरते हैं

× × ×

बुरा क्यों मानें हम जो भेस चाहो शौक़ से बदलो
हमारी ही नुमायश है तुम्हारी ख़ुदनुमाई में

× × ×

घट गयी वस्ल में फ़ुरक़त में बढ़ी थी जितनी
रात आशिक़ की कभी दिन के बराबर न हुई

× × ×

भुज फरकत तोरे मिलन को स्रवन सुनन को बैन
मन माला तोहि नाम की जपत रहत दिन-रैन
मन माँ राखूँ मन जरे, कहूँ तो मुख जरि जाय
गूँगे को सपनो भयो, समझ-समझ पछताय

हम तुम साथी एक हैं, कहन-सुनन को दोय
मन को मन से तोलिए दो मन कभू न होय
ओस-ओस सब कोई कहे आँसू कहे न कोय
मोहि बिरहन के सोग में रैन रही है रोय
कर कम्पे लिखनी डिगे, अंग-अंग थहराय
सुधि आवत छाती फटे, पाती लिखी न जाय

'हाली'

है जान के साथ काम इन्साँ के लिए,
बनती नहीं ज़िन्दगी में बेकाम किए
जीते हो तो कुछ कीजिए ज़िन्दों की तरह
मुर्दों की तरह जिए तो क्या ख़ाक जिए

× × ×

दुनियाए दुनी को नक़्शे फ़ानी समझो
रूदादे जहाँ को इक कहानी समझो
पर जब करो आग़ाज़ कोई काम बड़ा
हर साँस को उम्रे जाविदानी समझो

× × ×

मुमकिन नहीं कि हो बशर ऐब से दूर
पर ऐब से बचिए तायक़ मक़दूर ज़रूर
ऐब अपने घटाओ पै ख़बरदार रहो
घटने से कहीं उनके न बढ़ जाए ग़रूर

× × ×

फ़रिश्ते से बेहतर है इन्सान बनना
मगर इसमें पड़ती है मेहनत ज़ियादा

विके मुफ़्त याँ हम ज़माने के हाथों
पै देखा तो थी यह भी क़ीमत ज़ियादा

× × ×

तोवा हज़रत की यौंही दूध का-सा है उवाल
हम दिखा देंगे ज़रा दम-भर तवक्कुफ़ कीजिए

× × ×

जब यह कहता हूँ कि बस दुनिया पै अब तुफ़ कीजिए
नफ़्स कहता है अभी चन्दे तवक्कुफ़ कीजिए

× × ×

देखो जिस सल्तनत की हालत दरहम
समझो कि वहाँ है कोई बरकत का क़दम
या तो कोई बेगम है मशीरे दौलत
या है कोई मौलवी वज़ीरे आज़म

× × ×

मूसा ने यह की अर्ज़ कि ऐ वारे ख़ुदा
मक़बूल तेरा कौन है, बन्दों में सिवा
इरशाद हुआ, वन्दा हमारा वह है
जो ले सके और न ले बदी का बदला

× × ×

जो चाहो फ़क़ीरी में इज़्ज़त से रहना
न रक्खो अमीरों से मिल्लत ज़ियादा
कहीं दोस्त तुमसे न हो जायँ बदज़न
जताओ न अपनी मुहब्बत ज़ियादा

× × ×

मुसीबत का इक-इक से अहवाल कहना
मुसीबत से है ये मुसीबत ज़ियादा

फ़राग़त से दुनिया में दम-भर न बैठो
अगर चाहते हो फ़राग़त ज़ियादा

× × ×

करो दोस्तो, पहले आप अपनी इज़्ज़त
जो चाहो करें लोग इज़्ज़त ज़ियादा—
निकालो न रख़ने नसब में किसी के
नहीं इससे कोई रज़ालत ज़ियादा

× × ×

बढ़ाओ न आपस में मिल्लत ज़ियादा
मुबादा कि हो जाय नफ़रत ज़ियादा
तकल्लुफ़ अलामत है बेगानगी की
न डालो तकल्लुफ़ की आदत ज़ियादा

× × ×

कम से कम वाज़ में इतना तो असर हो वाइज़
बोल क़व्वाल के जो दिल पै असर करते हैं
ऐब यह है कि करो ऐब हुनर दिखलाओ
वर्ना यों ऐब तो सब फ़र्दे बशर करते हैं

× × ×

खेतों को देलो पानी अब बह रही है गंगा
कुछ कर लो नौजवानो उठती जवानियाँ हैं
फ़ज़लो हुनर बड़ों के गर तुममें हों तो जानें
गर यह नहीं तो बाबा वह सब कहानियाँ हैं,

× × ×

शायरी मर चुकी अब ज़िन्दा न होगी यारो
याद कर-करके उसे जी न कुढ़ाना हरगिज़

× × ×

हमको गर तूने रुलाया तो रुलाया पे चः
हम पै ग़ैरों को तो ज़ालिम न हँसाना हरगिः

× × ×

होगी न क़द्र जान की .कुरबाँ किये बग़ैर
दाम उट्ठेंगे न जिन्स के अर्ज़ा किये बग़ैर

× × ×

जहाँ में हाली किसी पै अपने सिवा भरोसा न कीजिएगा
ये भेद है, अपनी ज़िन्दगी का बस इसकी चर्चा न कीजिएगा
हो लाख ग़ैरों का ग़ैर कोई न जानना उसको ग़ैर हरगिज़
जो अपना साया भी हो तो उसको अपना तसव्वुर न कीजिएगा
लगाव तुममें न लाग ज़ाहिद न दर्द उल्फ़त की आग ज़ाहिद
फिर और क्या कीजिएगा आख़िर जो तर्क दुनिया न कीजिएगा

× × ×

वो शेर और क़सायद का नापाक दफ़्तर
अफ़ूनत में संडास से जो है बदतर
जमा जिससे है ज़लज़ले के बराबर
मलक जिससे शर्माते हैं आसमाँ पर
हुआ इल्मो दीं जिससे ताराज सारा
वो इल्मों में इल्मे अदब है हमारा
बुरा शेर कहने की गर कुछ सज़ा है
अबस झूठ बकना अगर ना रवा है
तो वो महकमा जिसका क़ाज़ी .खुदा है
मुक़र्रिर जहाँ नेकोबद की सज़ा है
गुनहगार वाँ छूट जाएँगे सारे
जहन्नुम को भर देंगे शायर हमारे
ज़माने में जितने क़ुली और नफ़र हैं
कमाई से अपनी वो सब बहरे वर हैं

गवैये अमीरों के नूरे नज़र हैं
डफाली भी ले आते कुछ माँग कर हैं
मगर इस तपेदिक़ में जो मुब्तला है
.खुदा जाने वो किस मरज़ की दवा है
जो सक्क़े न हों जी से जायें गुज़र सब
हो मैला जहाँ गुम हों धोबी अगर सब
चने दम पे गर शहर छोड़े नफ़र सब
जो छुट जायें मेहतर तो गन्दे हों घर सब
पे कर जायें हिजरत जो शायर हमारे
कहें मिलके 'ख़स कम जहाँ पाक' सारे

× × ×

बस ऐ नाउमीदी न यों दिल बुझा तू
झलक ऐ उमेद अपनी आख़िर दिखा तू
.खुदा ना उमेदों को ढाढ़स बँधा तू
फ़िसुर्दा दिलों के दिल आख़िर बढ़ा तू
तेरे दम से मुर्दों में जानें पड़ी हैं
जली खेतियाँ तूने सरसब्ज़ की हैं

× × ×

पिघलते हैं साँचे में ढलने की ख़ातिर
लगाते हैं ग़ोता उछलने की ख़ातिर
ठहरते हैं दम लेके चलने की ख़ातिर
वो खाते हैं ठोकर सम्हलने की ख़ातिर
सबब को मरज़ से समझते हैं पहले
उलझते हैं पीछे सुलझते हैं पहले

× × ×

न राहत तलब हैं न मोहलत तलब वह
लगे रहते हैं काम में रोज़ो शब वह

नहीं लेते दम यकदम बे सबब वह
बहुत जाग लेते हैं, सोते हैं तब वह
वह थकते हैं और चैन पाती है दुनिया
कमाते हैं वह और खाती है दुनिया

× × ×

खपाते हैं कोशिश में, तावो तवाँ को
घुलाते हैं मेहनत में जिस्मे रवाँ को
समझते नहीं इसमें जाँ अपनी जाँ को
वह मर-मर के रखते हैं ज़िन्दा जहाँ को
बस इस तरह जीना इबादत है उनकी
और इस धुन में मरना शहादत है उनकी

बशर को है लाज़िम कि हिम्मत न हारे
जहाँ तक हो काम आप अपने सँवारे
.खुदा के सिवा छोड़ दे सब सहारे
कि हैं आरज़ी ज़ोर कमज़ोर सारे
अड़े वक़्त तुम दाएँ-बाएँ न झाँको
सदा अपनी गाड़ी को गर आप हाँको

× × ×

जागने वालो ग़ाफ़िलों को जगाओ,
तैरने वालो डूबतों को तिराओ,
तुम अगर हाथ-पाँव रखते हो
लँगड़े-लूलों को कुछ सहारा दो
तनदुरुस्ती का शुक्र क्या है बताओ,
रंज बीमार भाइयों का बटाओ
तुम अगर चाहते हो मुल्क की .खैर
न किसी हमवतन को समझो ग़ैर

हो मुसलमाँ इसमें या हिन्दू
बौध मज़हब हो या कि ब्रह्म
सब को मीठी निगाह से देखा
समझो आँखों की पुतलियाँ सब को

उम्मीद

काटने वाली ग़मे अय्याम की
थामने वाला दिले नाकाम की
तुझसे है मोहताज का दिल बेहिरास
तुझसे है बीमार को जीने की आस
राम के हमराह रही रन में तू
पाँडवों के साथ फिरी बन में तू
ज़र्रे को ख़ुरशेद में दे तू खपा
बन्दे को अल्लाह से दे तू मिला
तुझसे हैं दिल सबके बाग़-बाग़
गुल कोई होने नहीं पाता चिराग़
तुझमें छिपा राहते जाँ का है भेद
छोड़ियो हाली का न साथ ऐ उम्मेद

विधवा-विलाप

पेड़ हों छोटे या कि बड़े याँ,
फ़ैज़ हवा का सब पै है यक साँ
जब अपनी ही ज़मीं हो कल्लर
फिर इल्ज़ाम नहीं कुछ मेंह पर
सब तो तेरे इनआम के शामिल
मैं ही न थी इनआम के क़ाबिल
गर कुछ आता बाँट में मेरे
सब कुछ था सरकार में तेरे

थी न कमी कुछ तेरे घर में,
नौन को तरसी मैं साँभर में
राजा के घर पली हूँ भूखी
सदाबरत से चली हूँ भूखी
पहरों सोचती हूँ यह जी में
आई थी क्यों इस नगरी में
होने से मेरे फ़ायदा क्या था,
किस लिए पैदा मुझको किया था
आन के आख़िर मैंने लिया क्या
मुझको मेरी क़िस्मत ने दिया क्या
नैन दिये और कुछ न दिखाया
दाँत दिये और कुछ न चखाया
रही अकेली भरी सभा में
प्यासी रही भरी गंगा में
चैन से जागी और न सोई
मैं न हँसी जी-भर के न रोई
खाया तो कुछ मज़ा न आया
सोई तो कुछ चैन न पाया
फूल हमेशा आँख में खटके
और फल सदा गले में अटके
बाप और भाई चचा भतीजे
सब रखती हूँ तेरे करम से
पर नहीं पाती एक भी ऐसा
जिसको हो मेरी जान की परवा
घर है एक हैरत का नमूना
सौ घर वाले और घर सूना
दुख में नहीं याँ कोई किसी का
बाप न मा भाई न भतीजा

सच यह किसी साईं की सदा थी,
सुख-सम्पत का सब कोई साथी

मुहम्मद हुसेन आज़ाद

मैं पूछता नहीं हरगिज़ तुम्हारा नाम है क्या
न यह कि नाम बुज़ुर्गों का और मुक़ाम है क्या
तुम्हारे काम गर अच्छे तो नाम अच्छे हैं
वगर्न अच्छे घर अच्छे तमाम अच्छे हैं
मुझे ग़रज़ नहीं कि कालिज में तुम पढ़े कि नहीं
जमाअतों के मदारिज में तुम चढ़े कि नहीं
किताबें पढ़ के जो कीं हिफ़्ज़ बर ज़बान तो क्या
और उनमें पास हुए दे के इम्तहान तो क्या
तुम्हारे खुल्क़ पै भी कुछ असर हुआ कि नहीं
ज़बाँ से कहने की दिल तक गयी सदा कि नहीं
जो कुछ मुँह से कहो उसका हो असर दिलपर भी
कि हैं किताबों में जो कुछ करे वह वर दिल में
वगरना पढ़ने को सब ख़ासो आम पढ़ते हैं
हज़ारों तोते हैं, कलमा-कलाम पढ़ते हैं
वो इल्म जिससे कि औरों को फ़ायदा न हुआ
हमारे आगे बराबर है वो हुआ न हुआ!

× × ×

दूकाँ बन्द करके रहा बैठ जो
तो दी उसने बिल्कुल ही लुटिया डुबो
न भागो कभी छोड़ कर काम को
नतीजे तो हैं ग़ैब जो हो सो हो
लिये जाओ कोशिश मेरे दोस्तो

अगर ताक में रख दी तुमने किताब
तो क्या दोगे कल इम्तहाँ में जवाब
न पढ़ने से बेहतर है, पढ़ना जनाब
कि हो जाओगे एक दिन कामयाब
किये जाओ कोशिश मेरे दोस्तो

जो बाज़ी में सबक़त न ले जाओ तुम
ख़बरदार हरगिज़ न घबराओ तुम
न ठिठको, न झिझको न पछताओ तुम
ज़रा सब्र को काम फ़रमाओ तुम
किये जाओ कोशिश मेरे दोस्तो

मुक़ाबिल में ख़म ठोक कर आओ हाँ
पिछड़ने से डरते नहीं पहलवाँ
करो पास तुम सब्र का इम्तहाँ
न जायेगी महनत कभी रायगाँ
किये जाओ कोशिश मेरे दोस्तो

तरद्दुद को आने न दो अपने पास
है बेहूदा ख़ौफ़ और बेजा हिरास
रखो दिल को मज़बूत क़ायम हवास
कभी कामयाबी की छोड़ो न आस
किये जाओ कोशिश मेरे दोस्तो

मुहम्मद इस्माईल

गर्मी का मौसम

मई का आन पहुँचा है महीना,
वहा चोटी से एड़ी तक पसीना
घजे वारह तो सूरज सर पे आया
हुआ पैरों तले पोशीदा साया
चली लू और कड़ाके की पड़ी धूप,
लपट है आग की गोया कड़ी धूप
ज़मीं है या कोई जलता तवा है
कोई शोला है या पछुवा हवा है
दरो दीवार हैं गरमी से तपते
घनी आदम हैं मछली से तड़पते
परन्दे उड़के हैं पानी पै गिरते
चरन्दे भी हैं घवराये-से फिरते
दरन्दे छिप गये हैं झाड़ियों में,
मगर डूबे पड़े हैं खाड़ियों में
न पूछो कुछ ग़रीबों के मकाँ की
ज़मीं का फ़र्श है छत आसमाँ की
न पंखा है, न टट्टी है न कमरा
ज़रा-सी झोंपड़ी, मच्छर का कमरा
अमीरों को मुबारक हो हवेली
ग़रीबों का भी है अल्लाह बेली

एक पहेली

हैवाँ है वो न इन्साँ जिन है न वो परी है
सोने में उसके हरदम इक आग-सी भरी है
खा-पी के आग-पानी चिंघाड़ मारती है
सर से धुआँ उड़ा कर ग़ुस्सा उतारती है
वह चीख़ती-गरजती भरती है इक सपाटा
हफ़्तों की मंज़िलों को घंटों में उसने काटा
आती है शोर करती जाती है ग़ुल मचाती
वो अपने ख़ादिमों को है दूर से जगाती
बेख़ौफ़ो बेमहरवाँ हरदम रवाँ दवाँ है
हाली भी उसके आगे इक मोर नातवाँ है
हर आन है सफ़र में कम है क़याम करती
रहती नहीं मुअत्तल फिरती है काम करती
परदेसियों को झटपट पहुँचाएगी वतन में
डाली है जान उसने सौदागरी के तन में
हर चीज़ है निराली है चाल ढाल उसकी
पाओगे सनअतों में कमतर मिसाल उसकी
बरकत से उसके बेपर परदार बन गये हैं
मुल्क उसके दम-क़दम से गुल्ज़ार बन गये हैं
हम कह चुके मुफ़स्सिल जो कुछ है काम उसका
जब जानें तुम बता दो बिन सोचे नाम उसका

शफ़क़

शफ़क़ फूलने की भी देखो बहार, हवा में खिला है अजब लालज़ार
हुई शाम बादल बदलते हैं रंग, जिन्हें देखकर अक़्ल होती है दंग

नया रंग है और नया रूप है
हर एक रूप में यह वही धूप है

तबीअत है बादल की रंगत पे लोट, सुनहरी लगाई है कुदरत ने गोट
ज़रा देर में रंग बदले कई, बनफ़शी ओ नारंगीओ चम्पई

ये क्या भेद है क्या करामात है
हर एक रंग में एक नयी बात है

ये मग़रिब में जो बादलों की है बाड़ बने सोने-चाँदी के गोया पहाड़
फ़लक नीलगूँ इसमें सुर्ख़ी की लाग हरे बन में गोया लगा दी है आग

अब आसार ज़ाहिर हुए रात के
कि परदे छुटे लाल बानात के

ऐ नींद नमूनए क़यामत तूने हमें आँख से दिखाया
तू आई हुए हवास बेकार क्या जानिये तूने क्या सुँघाया
है तेरी अजीब हुक्मरानी दुनिया की पलट गयी है काया
रन में फ़ौजों को जा पछाड़ा, बन में शेरों को जा दबाया
दहक़ानियों को खेत में किया चित; गो खेत को गीदड़ों ने खाया
रेवड़ की ख़बर नहीं कहाँ है चरवाहे को घास पर लिटाया
लेने को दरख़्त पर बसेरा चिड़ियों ने परों में सर छिपाया
ढोरों ने भी छोड़ दी जुगाली चुप हैं नहीं कान तक हिलाया
माओं को दिया है तूने आराम बच्चों को थपक-थपक सुलाया
ग़म दूर हुआ टुकड़गदा का झोली है न झोंपड़ी का साया
शाहों की भी कर्रोफ़र मिटा दी, ने ताज न तख़्त न रिआया
जब सो गये हो गये बराबर कब शाहोगदा में फ़र्क़ पाया

सुबह की आमद

ख़बर दिन के आने की मैं ला रही हूँ
उजाला ज़माने में फैला रही हूँ
बहार अपनी मशरिक़ से दिखला रही हूँ
पुकारे गले साफ़ चिल्ला रही हूँ
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

मैं सब कार-बौहार के साथ आई
मैं रफ़्तार - गुफ़्तार के साथ आई
मैं बाजों को झंकार के साथ आई
मैं चिड़ियों की चहकार के साथ आई
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

हर एक बाग़ को मैंने लहका दिया है
नसीमे सबा को भी महका दिया है
चमन सुर्ख़ फूलों से दहका दिया है
मगर नींद ने तुमको बहका दिया है
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

हुई मुझसे रौनक़ पहाड़ और वन में
हर एक मुल्क में देस में और वतन में
खिलाती हुई फूल आई चमन में
बुझाती चली शमा को अंजुमन में
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

पुजारी को मन्दिर में मैंने जगाया
मुअज्ज़िन को मस्जिद में मैंने उठाया
भटकते मुसाफ़िर को रस्ता बताया
अँधेरा घटाया उजाला बढ़ाया
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

लदे क़ाफ़िलों के भी मंज़िल से डेरे
किसानों के हल चल पड़े मुँह अँधेरे
चले जाल कन्धों पे लेकर मछेरे
दिलद्दर हुए दूर आने से मेरे
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

लो हुशियार हो जाओ आँखों को खोलो
न लो करवटें और न बिस्तर टटोलो
ख़ुदा को करो याद और मुँह से बोलो
बस अब ख़ैर से उठके मुँह हाथ धोलो
उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ

अकबर

कमसिन हो अभी तजरुबा दुनिया का नहीं है,
तुम ख़ुद ही समझ लोगे ख़ुदा भी है कोई चीज़
तदबीर सदा रास्त जो आती नहीं अकबर
इन्सान की ताक़त के सिवा भी है कोई चीज़

× × ×

जो मिल गया वो खाना दाता का नाम जपना
इसके सिवा बताऊँ क्या तुमको काम अपना
रोना है तो इसी का कोई नहीं किसी का
दुनिया है और मतलब, मतलब है और अपना

× × ×

ऐ बिरहमन हमारा तेरा है एक आलम
हम ख़्वाब देखते हैं, तू देखता है सपना
बेदर्द के जवानी कटती नहीं मुनासिब
क्योंकर कहूँ कि अच्छा है जेठ का न तपना

× × ×

फ़लसफ़ी को बहस के अन्दर ख़ुदा मिलता नहीं
डोर को सुलझा रहा है और सिरा मिलता नहीं

× × ×

अजल से वो डरें जीने को जो अच्छा समझते हैं
यहाँ हम चार दिन की ज़िन्दगी को क्या समझते हैं

× × ×

हर ख़ाक के पुतले को उभारा है फ़लक ने
यकताई के इज़हार में मस्त अहले ज़मीं है
हर एक को ये दावा है कि हम भी हैं कोई चीज़
और हम को है ये नाज़ कि हम कुछ भी नहीं हैं

× × ×

किसी को भी किसी से कुछ नहीं इस बात में झगड़ा
करो तुम ध्यान परमेश्वर का दिल को उसका दर्शन हो
मगर मुशकिल तो है नाम सब लेते हैं मज़हब का
ग़रज़ लेकिन ये होती है, जथा हो और भोजन हो

× × ×

दिल मेरा जिससे बहलता कोई ऐसा न मिला
बुत के बन्दे मिले, अल्लाह का बन्दा न मिला
सैयद उठे जो गज़ट लेकर तो लाखों लाये
शेख़ क़ुरआन दिखाते फिरे पैसा न मिला

× × ×

कहा बुक़रात से दुनिया में क्यों आया तू अय दाना
कहा उसने कि मैं लाया गया मुझको पड़ा आना
कहा क्योंकर बसर की उम्र, बोला साथ हैरत के
कहा क्या जाना, बोला कुछ नहीं जाना यही जाना

× × ×

अकबर से मैंने पूछा अय वाइज़े तरीक़त
दुनियाये दूँ से रखूँ मैं किस क़द्र तअल्लुक़
उसने दिया बलाग़त से ये जवाब मुझको
अँगरेज़ को है नेटिव से जिस क़द्र तअल्लुक़

× × ×

ग़फ़लत की हँसी से आह भरना अच्छा
अफ़आले मुज़िर से कुछ न करना अच्छा
अकबर ने सुना है, अहले ग़ैरत से यही
जीना ज़िल्लत से हो तो मरना अच्छा

× × ×

क्या तुमसे कहें जहाँ को कैसा पाया
ग़फ़लत ही में आदमी को डूबा पाया
आँखें तो बेशुमार देखीं लेकिन
कम थीं ब.ख़ुदा कि जिनको बीना पाया

× × ×

नफ़्स के तावअ हुए, ईमान रुख़सत हो गया
ये जनाने में घुसे मेहमान रुख़सत हो गया
मय उन्होंने पी अब उनके पास क्योंकर दिल लगे
जानवर इक रह गया इन्सान रुख़सत हो गया

× × ×

ग़फ़लत को छोड़ दीजिए कुछ काम कीजिए,
इल्मो हुनर से नाम का अन्जाम कीजिए,
गर कुछ नहीं तो हज़रते अकबर का क़ौल है
मुर्दों के साथ क़ब्र में आराम कीजिए.

× × ×

मर्द को चाहिए क़ायम रहे ईमान के साथ
ता दमे मर्ग रहे, यादे ख़ुदा जान के साथ
मैंने माना कि तुम्हारी नहीं सुनता कोई
मुँह मिलाना तुम्हें क्या फ़र्ज़ है, शैतान के साथ

× × ×

दिन गुज़रते ही चले जाते हैं,
लोग मरते ही चले जाते हैं

जानते हैं कि ये ग़फ़लत के हैं काम
फिर भी करते ही चले जाते हैं

× × ×

छोड़ देहली लखनऊ से भी न कुछ उम्मीद कर
नज़्म में भी वाज़े आज़ादी की अब ताईद कर
साफ़ है रोशन है, और है साहवे सोज़ो गुदाज़
शायरी में बस ज़बाने शमा की तक़लीद कर

× × ×

हँस के दुनिया में मरा कोई, कोई रो के मरा
ज़िन्दगी पाई मगर उसने जो कुछ हो के मरा
जो उठा मरने से वो जिसको ख़ुदा पर थी नज़र
जिसने दुनिया ही को पाया था, वो सब खोके मरा

× × ×

ही बहसें रहीं सब में वो कैसे हैं, वो कैसे थे,
ही सुनते हुए गुज़री वो ऐसे हैं, वो ऐसे थे,
मल औरों ही के देखा किये ये नेक ये बद हैं,
रको ख़ुद न की कुछ रह गये वैसे कि जैसे थे

× × ×

रखो जो मुक़ाबिल उसके सारा आलम
दुनिया व ख़ुदा है, एक ज़र्रे से भी कम
उस एक ज़र्रे में है हमारी क्या असल,
नाफ़हम हैं, कर रहे हैं नाहक़ हम-हम,

× × ×

वर तसबीह की गरदिश में पाया शेख़ साहब को
ाहमन को उधर उलझा हुआ जुन्नार में देखा,
गर इश्क़े हक़ीक़ी का कोई रिश्ता न था दिल में—
क़त नफ़सानियत का पेचोख़म हरतार में देखा

× × ×

लताफ़त को न छोड़े रंग तेरे शादो ओ ग़म का
हँसी आए तो फूलों की जो रोना हो तो शबनम का

× × ×

निगाहें क़ाबिलों पर पड़ ही जाती हैं ज़माने में
कहीं छिपता है अकबर फूल पत्तों में निहाँ होकर

× × ×

जुदाई ने 'मैं' बनाया मुझको जुदा न होता तो मैं न होता
ख़ुदा की हस्ती है मुझसे साबित ख़ुदा न होता तो मैं न होता

× × ×

नज़र उनकी रही कालिज में बस इल्मी फ़वायद पर
गिरा कीं चुपके-चुपके बिजलियाँ दीनी अक़ायद पर

× × ×

तमाशा देखिये बिजली का मग़रिब और मशरिक़ में
कलों में है वहाँ दाख़िल यहाँ मज़हब पै गिरती है

× × ×

गो हमनफ़स अपने उठ गये सब दमसाज़ हमारी आह तो है,
कोई जो हमारा रह न गया ईमान तो है, अल्लाह तो है

× × ×

यही क़ानूने फ़ितरत है जिसे तक़दीर कहते हैं
जिसे क़िस्मत समझते हैं वो तदबीरों का हासिल है।

× × ×

किया है जिसने आलम को पैदा उसको क्या कहिए
ख़िरद हैरान है, और दिल ये कहता है ख़ुदा कहिए

× × ×

जुदा गोशा है, मस्जिद में याद यार के लिए
यहाँ तो बन्द कर आँखों को भी ख़ुदा के लिए

× × ×

आता है वज्द मुझको हर दीन की अदा पर
मसजिद में नाचता हूँ नाक़ूस की सदा पर

× × ×

बरसों का छोड़ती है, दमभर में साथ ज़ालिम
कहते हैं, उम्र जिसको माशूक़े बेवफ़ा हैं

× × ×

मैं ये नहीं कहता कि दवा कुछ नहीं करती
कहता हूँ कि बेहुक्मे ख़ुदा कुछ नहीं करती

× × ×

अतिब्बा को तो अपनी फ़ीस लेना और दवा देना
ख़ुदा का काम है लुत्फ़ो करम करना शफ़ा देना

× × ×

सेठजी को फ़िक्र थी एक-एक के दस-दस कीजिए
मौत आ पहुँची कि हज़रत जान वापस कीजिए

× × ×

मेरी नाकामयाबी की कोई हद हो नहीं सकती
सदाक़त चल नहीं सकती ख़ुशामद हो नहीं सकती

× × ×

फ़ना का दौर जारी है, मगर मरते हैं जीने पर
तिलस्मे ज़िन्दगानी भी अजब एक राज़े फ़ितरत है

× × ×

खुदा का घर बनाना है तो नक़शा ले किसी दिल का
ये दीवारों की क्या तजवीज़ है, ज़ाहिद ये छत कैसी

× × ×

जो देखी हिस्टरी इस बात पर कामिल यक़ीं आया
उसे जीना नहीं आया जिसे मरना नहीं आया

× × ×

हुजूमे बुलबुल हुआ चमन में किया जो गुल ने जमाल पैदा
कभी नहीं क़द्रदाँ की अकबर करे तो कोई कमाल पैदा

× × ×

ज़हन में जो घिर गया लाइन्तहा क्योंकर हुआ
जो समझ में आगया फिर वो .खुदा क्योंकर हुआ

× × ×

.खुदा का नाम जो अक्सर ज़बानों पर है आजाता
मगर काम इससे जब चलता है कि ये दिल में समा जाता

× × ×

रक़बा तुम्हारे गाँव का मीलों हुआ तो क्या
रक़बा तुम्हारे दिल का तो दो इंच भी नहीं

× × ×

आरज़ू मर्ग की तुम करते हो अकबर लेकिन
सोच लो क़ब्र में आराम मिलेगा कि नहीं

× × ×

दुनिया योंही नाशादियों में शाद रहेगी
बरबाद किये जायगी आबाद रहेगी

× × ×

नहीं कुछ इसकी पुरसिश उल्फ़ते अल्लाह कितनी है
यही सब पूछते हैं, आपकी तनख़ाह कितनी है

× × ×

ग़रीब अकबर के गिर्द क्यों है जनाबे वाइज़ से कोई कह दे
उसे डराते हो मौत से क्या, वो ज़िन्दगी ही से डर चुका है

× × ×

क्यों हश्र हुआ बरपा थोड़ी-सी ही पी ली है
डाका तो नहीं डाला चोरी तो नहीं की है

× × ×

कहाँ से लाऊँगा .खूने जिगर उनके खिलाने को
हज़ारों तरह के ग़म दिल के महमाँ होते जाते हैं

× × ×

कहो जो चाहो सुन लेंगे मगर मुतलक़ न समझेंगे
तबीयत तो .खुदा जाने कहाँ है, कान हाज़िर हैं

× × ×

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम
वो क़त्ल भी करते हैं तो चरचा नहीं होता

× × ×

जब कहा मैंने भुला दो ग़ैर को हँस कर कहा
याद फिर मुझको दिलाना भूल जाने के लिए
.खूब उम्मीदें उठीं लेकिन हुई हिरमा नसीब
बदलियाँ उट्ठीं मगर बिजली गिराने के लिए

× × ×

हया से सर झुका लेना अदा से मुस्करा देना
हसीनों को भी कितना सहल है बिजली गिरा देना
ये तर्ज़ अहसान करने का तुम्हीं को ज़ेब देता है
मरज़ में मुबतला करके मरीज़ों को दवा देना

× × ×

लहज़ा लहज़ा है तरक़्क़ी पै तेरा हुस्नो जमाल
जिसको शक हो तुझे देखे तेरी तस्वीर के साथ
नातवानी मेरी देखी तो मुसव्विर ने कहा
डर है तुम भी कहीं खिंच आओ न तसवीर के साथ

× × ×

ज़माना हो गया बिसमिल तेरी सीधी निगाहों से
.खुदा न ख़्वास्ता तिरछी नज़र होती तो क्या होता

नाज़ करता है कि ज़ेवर से हो तज़ईने जमाल
नाज़ुकी कहती है सुरमा भी कहीं बार न हूँ

× × ×

तुम्हारे हुस्न में साइन्स का भी दिल उलझता है
कमर को देखकर ख़ते उक़लैदस समझता है

× × ×

दिला क्योंकर मैं उस रुख़सारे रोशन के मुक़ाबिल हूँ
जिसे ख़ुरशीदे महशर देखकर कहता है मैं तिल हूँ

× × ×

फ़िटन नफ़ीस सड़क ख़ुशनुमा डिनर हर शब
ये लुत्फ़ छोड़ के हज का सफ़र ये ख़ूब कही

× × ×

उन्हें शौक़े इबादत भी है और गाने की आदत भी
निकलती हैं दुआएँ उनके मुँह से ठुमरियाँ होकर
न थी मुतलक़ तवक़्क़े बिल बनाकर पेश कर दोगी
मेरी जाँ लुट गया मैं तो तुम्हारा मेहमाँ होकर

× × ×

जब मैं कहता हूँ कि या अल्लाह मेरा हाल देख
हुक्म होता है कि अपना नामए आमाल देख

× × ×

कचहरियों में पुरसिश है ग्रेजुएटों की
सड़क पै माँग है कुलियों की और मेटों की
नहीं है क़द्र तो बस इल्मे दीनो तक़वे की
ख़राबी है तो फ़क़त शेख जी के बेटों की

× × ×

उश्शाक़ को भी माले तिजारत समझ लिया
इस क़द्र को मुलाहिज़ा लिल्लाह कीजिए

भरते हैं मेरी आह को फ़ोनोगिराफ़ में
कहते हैं फ़ीस लीजिए और आह कीजिए

× × ×

परचा रखा जो उसने मैं ये समझा
पाकेट में ये बीस रुपये का नोट गया
घर पर खोला तो बस यही लिखा था
क्या शेर थे वाह-वाह मैं लोट गया

× × ×

रुमाल नहीं ग्रेट होना अच्छा
दिल होना बुरा है, पेट होना अच्छा
पण्डित हो कि मौलवी हो दोनों बेकार
इन्सान को ग्रेजुएट होना अच्छा

× × ×

कर दिया कर्ज़न ने ज़न मरदों की सूरत देखिए
आबरू चेहरे की सब फ़ैशन बनाकर पूँछ ली
सच ये है इन्सान को यूरुप ने हलका कर दिया
इब्तदा दाढ़ी से की और इन्तहा में मूँछ ली

× × ×

ख़्वाह साहब को तुम सलाम करो
ख़्वाह मन्दिर में राम-राम करो
भाईजी का फ़क़त ये मतलब है
जिसमें रुपया मिले वो काम करो

× × ×

लैला ने साया पहना मजनूँ ने कोट पहना
टोका जो मैंने बोले बस-बस ख़ामोश रहना
हुस्नो जनूँ बदस्तूर अपनी जगह हैं लेकिन
है लुत्फ़े बहरे हस्ती फ़ैशन के साथ बहना

× × ×

छोड़ लिटरेचर को अपनी हिस्टरी को भूल जा
शेख़ो मसजिद से तअ़ल्लुक़ तर्क कर स्कूल जा
चार दिन की ज़िन्दगी है, कोफ़्त से क्या फ़ायदा
खा डबल रोटी किलरकी कर .खुशी से फूल जा

× × ×

दरबारे सल्तनत में है, फ़िक्रो खुदपसन्दी
मज़हब में देखता हूँ जंग और गिरोहबन्दी
रिन्दी वो आशिक़ी का है शग़ल सबसे बेहतर
लेमनेड है और ह्विसकी बन्दा है और बन्दी

× × ×

मग़रिबी ज़ौक है और वज़अ़ की पाबन्दी भी
ऊँट पर चढ़के थियटर को चले हैं हज़रत

× × ×

शेख़ आनर के लिए आते हैं मैदान के बीच
वोट हाथों में है इस्पीच क़लमदान के बीच

× × ×

मग़रिब ने .खुर्दबीं से कमर उनकी देख ली
मशरिक़ की शायरी का मज़ा किरकिरा हुआ

× × ×

आदत जो पड़ी हो हमेशा से वो दूर भला कब होती है—
रखी है बिनौटी पाकिट में पतलून के नीचे धोती है

× × ×

क्यों सिविल सरजन का आना रोकता है हमनशीं
इसमें है एक बात आनर की शफ़ा हो या न हो

× × ×

डाढ़ी .खुदा का नूर है बेशक़ मगर जनाब
फ़ैशन के इन्तज़ामे सफ़ाई को क्या करूँ

× × ×

खींचो न कमानों को न तलवार निकालो
जब तोप मुक़ाबिल है तो अख़बार निकालो

× × ×

विरगढ के मौलवी को क्या पूछते हो क्या है
मग़रिब की पालिसी का अरबी में तरजुमा है

× × ×

फ़रमा गये हैं ये .खूब भाई घूरन—
दुनिया रोटी है और मज़हब चूरन

× × ×

बोला चपरासी जो मैं पहुँचा बउम्मीदे सलाम
फाँकिए ख़ाक आप भी साहब हवा खाने गये

× × ×

पका लें पीस कर दो रोटियाँ थोड़े-से जौ लाना
हमारी क्या है, अय भाई, न मिस्टर हैं न मौलाना

× × ×

जो सुन चुके मेरी ग़ज़लें बोले ला चन्दा
जो हिनहिनाया है आज इतना तो लीद भी कर

× × ×

रक़ीबों ने रपट लिखवाई है जा-जा के थाने में
कि अकबर नाम लेता है .खुदा का इस ज़माने में

× × ×

मज़हब ने पुकारा अय अकबर अल्लाह नहीं तो कुछ भी नहीं
यारों ने कहा ये क़ौल ग़लत तनख़्वाह नहीं तो कुछ भी नहीं

× × ×

बेपास के तो सास की भी अब नहीं है आस—
मौ.क़ूफ़ शादियाँ भी हैं, अब इम्तहान पर

× × ×

हम क्या कहें अहबाब क्या कारे नुमायाँ कर गये
बी० ए० किया, नौकर हुए, पेन्शन मिली, फिर मर गये

× × ×

शेख़जी के दोनों बेटे बाहुनर पैदा हुए
एक हैं ख़ुफ़िया पुलिस में एक फाँसी पा गये

× × ×

सिधारे शेख़ काबे को हम इँगलिस्तान देखेंगे
वो देखें घर ख़ुदा का हम ख़ुदा की शान देखेंगे

× × ×

जब ग़म हुआ चढ़ा लीं दो बोतलें इकट्ठी
मुल्ला की दौड़ मसजिद, अकबर की दौड़ भट्टी

× × ×

फ़र्क़ क्या वाइज़ो आशिक़ में है बताएँ तुमको
उसकी हुज्जत में कटी इसकी मुहब्बत में कटी

× × ×

थी शबे तारीक चोर आए जो कुछ था लेगये
कर ही क्या सकता था बन्दा खाँस लेने के सिवा

× × ×

तुम बीबियों को मेम बनाते हो आजकल
क्या ग़म जो हमने मेम को बीबी बना लिया

× × ×

हुए इस क़दर मोहज्ज़िब कि कभी घर का मुँह न देखा—
कटी उम्र होटलों में मरे अस्पताल में जाकर

× × ×

गुज़र उनका हुआ कब आलमे अल्लाहो अकबर में
पले कालिज के चक्कर में मरे साहब के दफ़्तर में

× × ×

बताऊँ आपको मरने के बाद क्या होगा-
पुलाव खायँगे अहबाब फ़ातहा होगा

× × ×

उसकी बेटी ने उठा रखी है दुनिया सर पर
ख़ैरियत गुज़री कि अंगूर के बेटा न हुआ

× × ×

हकीम और वैद हैं यकसाँ अगर तशख़ीस अच्छी हो
हमें सेहत से मतलब है बनफ़शा हो कि तुलसी हो

× × ×

ले-ले के क़लम के लोग भाले निकले
हर सिम्त से बीलियों रिसाले निकले
अफ़सोस कि मुफ़लिसी ने छापा मारा
आख़िर अहबाब के दिवाले निकले

× × ×

उन्हीं के मतलब की कह रहा हूँ, ज़बान मेरी है बात उनकी
उन्हीं की महफ़िल सँवारता हूँ चिराग़ मेरा है रात उनकी
फ़क़त मेरा हाथ चल रहा है, उन्हीं का मतलब निकल रहा है
उन्हीं का मज़मूँ उन्हीं का काग़ज़ क़लम उन्हीं की दवात उनकी

× × ×

सच तो ये है गरदूँ को राहे मेहरबानी क्यों मिले
आग जब यूरुप में बरसे हमको पानी क्यों मिले

× × ×

फ़रज़नो किचनर की हालत पर जो कल
वो सनम तशरीह का तालिब हुआ
कह दिया मैंने कि ये है साफ़ बात
देख लो तुम ज़न पे नर ग़ालिब हुआ

× × ×

लीडरों की धूम है और फ़ालोअर कोई नहीं
सब तो जनरल हैं यहाँ आख़िर सिपाही कौन है

× × ×

क़ौम के ग़म में डिनर खाते हैं हुक्काम के साथ
रंज लीडर को बहुत है मगर आराम के साथ

× × ×

सरविस में मैं दाख़िल नहीं हूँ, क़ौम का ख़ादिम
चन्दा की फ़क़त आस है, तनुख़ाह कहाँ है

× × ×

जिस रोशनी में लूट ही की आपको सूझे
तहज़ीब की मैं उसको तजल्ली न कहूँगा
लाखों को मिटाकर जो हज़ारों को उभारे
उसको तो मैं दुनिया की तरक़्क़ी न कहूँगा

× × ×

ये बात ग़लत कि दारे इसलाम है हिन्द
ये झूँठ कि मुल्के लछमनो राम है हिन्द
हम सब हैं मुती वो .ख़ैरख़्वाहे इंगलिश
यूरुप के लिए बस एक गोदाम है हिन्द

× × ×

नयी तहज़ीब में दिक़्क़त ज़ियादा तो नहीं होती
मज़ाहब रहते हैं क़ायम फ़क़त ईमान जाता है

× × ×

तरक़्क़ी की नयी राहें जो ज़ेरे आस्माँ निकलीं
मियाँ मसजिद से निकले और हरम से बीबियाँ निकलीं

× × ×

मुसीबत में भी अब यादे .ख़ुदा आती नहीं उनको
दुआ निकली न मुँह से पाकिटों से अर्ज़ियाँ निकलीं

× × ×

मेरे मनसूबे तरक्क़ी के हुए सब पायमाल
बीज मग़रिब ने जो बोया वो उगा और फल गया
बूट डासन ने बनाया मैंने एक मज़मूँ लिखा
मुल्क में मज़मूँ न फैला और जूता चल गया

× × ×

ख़ुशी है सबको कि आपरेशन में ख़ूब नश्तर चल रहा है
मगर किसी को ख़बर नहीं है, मरीज़ का दम निकल रहा है

× × ×

पुरानी रोशनी में और नयी में फ़र्क़ इतना है
उसे किश्ती नहीं मिलती इसे साहिल नहीं मिलता

× × ×

मिटाते हैं जो वो हमको तो अपना काम करते हैं
मुझे हैरत तो उन पर है जो इस मिटने पै मरते हैं

× × ×

बेपर्दा नज़र आईं जो कल चन्द बीबियाँ
अकबर ज़मीं में ग़ैरते क़ौमी से गड़ गया
पूछा जब उनसे आपका परदा कहाँ गया
कहने लगीं कि अक़्ल पै मरदों की पड़ गया

× × ×

तालीम हमें जो दी जाती है, वो क्या है फ़क़त बाज़ारी है
जो अक्ल सिखाई जाती है, वो क्या है फ़क़त सरकारी है

× × ×

तिफ़्ल में बू आए क्यों मा-बाप के अतवार की
दूध डब्बे का पिया, तालीम है सरकार की

× × ×

नयी तालीम को क्या वास्ता है आदमीयत से
जनाबे डारविन को हज़रते आदम से क्या मतलब

× × ×

नयी तहज़ीब में भी मज़हबी तालीम शामिल है
मगर यों ही कि गोया आबे ज़मज़म मय में दाख़िल है

× × ×

तालीम लड़कियों की ज़रूरी तो है मगर
ख़ातूने ख़ाना हों सभा की परी न हों
ज़ीइल्मो मुत्तक़ी हों वले उनके मुन्तज़िम
उस्ताद अच्छे हों मगर उस्तादजी न हों

× × ×

ऐज़ाज़ बढ़ गया है, आराम घट गया है
ख़िदमत में है वो लेज़ी और नाचने को रेडी
तालीम की ख़राबी से हो गई बिलआख़िर
शौहरपरस्त बीबी पब्लिक पसन्द लेडी

× × ×

तालीम दुख़्तरां से ये उम्मीद है ज़रूर
नाचे दुल्हन ख़ुशी से ख़ुद अपनी बरात में

× × ×

उनसे बीबी ने फ़क़त स्कूल ही की बात की
ये न बतलाया कहाँ रखी है रोटी रात की

× × ×

ख़ुदा के फ़ज़्ल से बीबी मियाँ दोनों मुहज़्ज़ब हैं
हिजाब उनको नहीं आता इन्हें ग़ुस्सा नहीं आता

× × ×

रिज़ोल्यूशन की शोरिश है, मगर उसका असर ग़ायब
पलेटों की सदा सुनता हूँ और खाना नहीं आता

× × ×

फ़िरंगी से कहा पेन्शन भी लेकर बस यहीं रहिए
कहा जीने को आये हैं, यहाँ मरने नहीं आये

× × ×

जिधर साहब उधर दौलत जिधर दौलत उधर चन्दा
जिधर चन्दा उधर आनर जिधर आनर उधर वन्दा

× × ×

अपनी मिनक़ारों से हलक़ा कस रहे हैं जाल का
तायरों पर सहर है सय्याद के इक़बाल का

× × ×

हिन्दू मुसलिम एक हैं दोनों
यानी ये दोनों एशियाई हैं
हमवतन हम ज़ुवानो हम क़िस्मत
क्यों न कह दूँ कि भाई-भाई हैं

× × ×

झगड़ा कभी गाय का ज़वाँ की कभी वहस
है सख़्त मुज़िर ये नुसख़ए गाव ज़वाँ

× × ×

ज़वाने संस्कृत इस वक्त पंडितजी से कहती है
कि अच्छा है, मेरी उल्फ़त तुम्हारे दिल में रहती है
मैं खुश हूँगी विला शक तुम अगर मुझको जिलाओगे
मगर व्हिसकी पिलाओगे कि गंगाजल पिलाओगे

× × ×

सोचो कि आगे चलकर क़िस्मत में क्या लिखा है,
देखो घरों में क्या था, और आज क्या रहा है
हुशियार रहके पढ़ना इस जाल में न पड़ना
यूरुप ने ये किया है यूरुप ने वो किया है

× × ×

ज़िन्दगी को ज़रूर है एक शग़्ल
ख़ैर विलफ़ेल लीडरी हो सही

अब तो अकबर बसा है गंगा तीर
न हो असनान दिल्लगी ही सही

× × ×

यूरुप वाले जो चाहें दिल में भर दें
जिसके सिर पर जो चाहें तोहमत धर दें
बचते रहो इनकी तेज़ियों से अकबर
तुम क्या हो ख़ुदा के तीन टुकड़े कर दें

× × ×

सनद कैसी जमाल उनमें अगर है, होगा खुद ज़ाहिर
कोई सार्टीफ़िकट से ख़ूबसूरत हो नहीं सकता

× × ×

खुला दीवाँ मेरा तो शोरे तहसीं बज़्म में उट्ठा
मगर सब हो गये ख़ामोश जब मतबे का बिल आया

× × ×

हम ऐसी कुल किताबें क़ाबिले ज़ब्ती समझते हैं
कि जिनको पढ़के लड़के बाप को ख़ब्ती समझते हैं

× × ×

तुमसे उस्तादों में मेरी शायरी बेकार है
साथ सारंगी का बुलबुल के लिए दुश्वार है

× × ×

ये परचा जिसमें चन्द अशआर हैं, इरसाले ख़िदमत है
हमारे लख़्ते दिल हैं, आपका माले तिजारत है

× × ×

रंगे शराब से मेरी नीयत बदल गयी,
वाइज़ की बात रह गयी साक़ी की चल गयी

× × ×

न हो मज़हब में जब ज़ोरे हुकूमत
तो वो क्या है फ़क़त एक फ़िलसफ़ा है

× × ×

न किताबों से न कालिज के है दर से पैदा
दीन होता है, बुज़ुर्गों की नज़र से पैदा

× × ×

हम रीश दिखाते हैं कि इसलाम को देखो
मिस ज़ुल्फ़ दिखाती हैं कि इस लाम को देखो

× × ×

बाप मा से शेख़ से अल्लाह से क्या उनको काम
डाक्टर जनवा गये तालीम दी सरकार ने

× × ×

वो मिस बोली मैं करती आपका ज़िक्र अपने फ़ादर से
मगर आप अल्ला-अल्ला करता है पागल का माफ़िक़ है
न माना शेख़जी ने चल गये दस-पाँच ये कह कर
अगर काबिज़ हैं ये बिसकुट तो हों अल्लाह मालिक है

× × ×

पाकर ख़िताब नाच का भी ज़ौक़ हो गया
सर हो गये तो बाल का भी शौक़ हो गया

× × ×

मज़हब ने पुकारा अय अकबर अल्लाह नहीं तो कुछ भी नहीं
यारों ने कहा ये क़ौल ग़लत तनख़्वाह नहीं तो कुछ भी नहीं

× × ×

क्या ग़नीमत नहीं ये आज़ादी
साँस लेते हैं बात करते हैं

× × ×

पेट मसरूफ़ है क्लिर्की में
दिल है ईरान और टर्की में

× × ×

कुछ देखता नहीं मैं दिले ज़ार के लिए
जो कुछ ये हो रहा है, सब अख़बार के लिए

× × ×

गुल फेंके हैं यूरुप की तरफ़ बल्कि समर भी
अय नेचरी साइन्स भला कुछ तो इधर भी
अग़यार तो दुनिया हैं उठाए हुए सर पर
हम बैठे हैं इस तरह कि उठता नहीं सर भी
अग़यार तो रगरग से हमारी हुए वाक़िफ़
हम वो हैं कि पाते नहीं उस बुत की कमर भी

× × ×

काफ़ी अगरचे लेटने को एक पलङ्ग है
अँगड़ाइयों को अरज़े दुनिया भी तङ्ग है

× × ×

क्यों कर न शेरे अकबर आये पसन्द सबको
ये रंग ही नया है, कूचा ही दूसरा है

× × ×

कहाँ हैं हममें अब ऐसे सालिक कि राह ढूँढ़ी क़दम उठाया
जो हैं तो ऐसे ही रह गये हैं किताब देखी क़लम उठाया

× × ×

डारविन साहब हक़ीक़त से निहायत दूर थे
मैं न मानूँगा कि मूरिस आपके लंगूर थे

× × ×

जैसा मौसिम हो मुताबिक़ उसके मैं दीवाना हूँ
मार्च में बुलबुल हूँ और जौलाई में परवाना हूँ

× × ×

क़द्रदानों की तबीयत का अजब रंग है आज
बुलबुलों को है ये हसरत कि वो उल्लू न हुए

× × ×

मेरा टट्टू ज़ियादा मशरक़ी है शेख़ साहब से
कि वो मोटर में चढ़ते हैं ये मोटर से भड़कता है

× × ×

भूलता जाता है यूरुप आसमानी बाप को
बस .ख़ुदा समझा है उसने वर्क़ को और भाप को
वर्क़ गिर जायेगी यक दिन और उड़ जायेगी भाप
देखना अकबर बचाये रखना अपने आपको

× × ×

हमको नयी रविश के हलक़े जकड़ रहे हैं
बातें तो बन रही हैं और घर बिगड़ रहे हैं

× × ×

मश्किल छुटे उनके पंजे से जब
तो बस क़ौमे मरहूम के सर हुए
पपीहा पुकारा किये पी कहाँ
मगर वो तो प्लीडर से लीडर हुए

× × ×

एक दिल्लगी है वक़्त गुज़रने के वास्ते
देखो तो मेम्बरी के ज़रा हेर-फेर को
ऐसी कमेटियों से है फल का उमेदवार
अकबर दरख़्त समझा है पत्तों के ढेर को

× × ×

कहता हूँ हिन्दू वो मुसलमाँ से यही
अपनी-अपनी रविश पे तुम नेक रहो

लाठी है हवाए दहर पानी बन जाओ
मौजों की तरह लड़ो मगर एक रहो

× × ×

क़सीदे से न चलता है न ये दोहे से चलता है
समझ लो .खूब कारे सल्तनत लोहे से चलता है

× × ×

दुनिया में हूँ दुनिया का तलबगार नहीं हूँ
बाज़ार से गुज़रा हूँ, ख़रीदार नहीं हूँ
ज़िन्दा हूँ मगर ज़ीस्त की लज़्ज़त नहीं बाक़ी
हरचन्द कि हूँ होश में हुशियार नहीं हूँ
वह गुल हूँ ख़िज़ाँ ने जिसे बरबाद किया है
उलझूँ किसी दामन से मैं वो ख़ार नहीं हूँ

× × ×

मौत को देखा तो दुनिया से तबीयत फिर गयी,
उठ गया दिल दहर से दौलत नज़र से गिर गयी

× × ×

है हाथ में क़लम भी मुँह में ज़बान भी है
लेकिन ये देखिये तो हज़रत में जान भी है

× × ×

चलती नहीं कुछ अपनी कोई हज़ार चाहे
होता है बस वही जो परवरदिगार चाहे

× × ×

न दावे की ज़रूरत है न कोई रोक सकता है
किसी में फ़ितरती जौहर जो हो वह .खुद चमकता है

× × ×

'चकबस्त'

१

ज़िन्दगी क्या है, अनासिर में ज़हूरे तरतीब,

मौत क्या है, इन्हीं अजज़ा का परेशाँ होना।

फ़ना का होश आना ज़िन्दगी का दर्द सर जाना,

अजल क्या है, ख़ुमारे बादए हस्ती उतर जाना

आबरू क्या है, तमन्नाए वफ़ा में मरना,

दीन क्या है, किसी कामिल की परस्तिश करना

× × ×

२

कमाले बुज़दिली है, पस्त होना अपनी आँखों में,

अगर थोड़ी-सी हिम्मत हो तो फिर क्या हो नहीं सकता

उभरने ही नहीं देती हमें बेमायगी दिल की

नहीं तो कौन क़तरा है, जो दरिया हो नहीं सकता

अगर दर्दे मुहब्बत से न इन्साँ आशना होता

न मरने का अलम होता न जीने का मज़ा होता

दिले अहबाब में घर है, शिगुफ़्ता रहती है ख़ातिर

यही जिन्नत है मेरी, और यही बाग़े हरम मेरा

यह सौदा ज़िन्दगी का है कि ग़म इन्सान सहता है

नहीं तो है बहुत आसान इस जीने से मर जाना

जहाँ में रह के यों क़ायम हूँ अपनी बेसबाती पर

कि जैसे अक्से गुल रहता है आबे जूए गुलशन में

दिल में इस तरह से अरमान हैं, आज़ादी के

जैसे गंगा में झलकती है, चमक तारों की

× × ×

३

जो दिल से क़ौम के निकले है वो दुआ है यही
था जिस पै नाज़ मसीहा को वो सदा है यही
दिलों को मस्त जो करती है, वो अदा है यही
ग़रीब हिन्द के आज़ार को दवा है यही
न चैन आएगा ये होमरूल पाए हुए
फ़कीर क़ौम के बैठे हैं, लौ लगाए हुए

× × ×

ये जोश पाक ज़माना दवा नहीं सकता
रगों में ख़ूँ की हरारत मिटा नहीं सकता
ये आग वो है जो पानी बुझा नहीं सकता
दिलों में आके ये अरमान जा नहीं सकता
तलब फ़ुज़ूल है काँटे की फूल के बदले
न लें बहिश्त भी हम होमरूल के बदले

४

तूने पौदा जो लगाया था वो फल लाया है,
आबरू क़ौम ने पाई है, वो दिन आया है
हमने भूले हुए विरसा का निशाँ पाया है
मरने वालों की वफ़ा का यही सरमाया है
दिल तड़पता है कि सोराज़ का पैग़ाम मिले
कल मिले, आज मिले, सुबह मिले, शाम मिले
हुक्म हाकिम का है फ़रियाद ज़बानी रुक जाय
दिल की बहती हुई गंगा की रवानी रुक जाय
क़ौम कहती है, हवा बन्द हो पानी रुक जाय
ये मुमकिन नहीं अब जोशे जवानी रुक जाय
हों ख़बरदार जिन्होंने ये अज़य्यत दी है
कुछ तमाशा नहीं ये क़ौम ने करवट ली है

४

हाँ दिलेराने वतन धाक बिठाकर आना,
तनतना जरमने .खुदबीं का मिटाकर आना
क़ैसरी तख़्त की बुनियाद हिलाकर आना
नदियाँ .खून की बरलिन में बहाकर आना
यही गंगा है सिपाही के नहाने के लिए,
धार तलवार की है पार लगाने के लिए

५

रविशे ख़ाम पै मरदों की न जाना हरगिज़
दाग़ तालीम में अपनी न लगाना हरगिज़
नाम रखा है नुमायश का तरक़्क़ी वो रिफ़ार्म
तुम इस अन्दाज़ के धोके में न आना हरगिज़.
रंग है जिसमें मगर बूए वफ़ा कुछ भी नहीं
ऐसे फूलों से न घर अपना सजाना हरगिज़
नक़्ल यूरुप की मुनासिब है मगर याद रहे,
ख़ाक में ग़ैरते क़ौमी न मिलाना हरगिज़
रुख़ से परदा को उठाया तो बहुत .खूब किया
परदए शर्म को दिल से न उठाना हरगिज़
पूजने के लिए मन्दिर जो है आज़ादी का
उसको तफ़रीह का मरक़ज़ न बनाना हरगिज़

६

देख के जंगल में कोई शाम को तेरी रफ़्तार
बे पिये जैसे किसी को हो जवानी का .खुमार,
मस्त कर देती है, शायद तुझे .क़ुदरत की बहार
वो उतरती हुई धूप और वो सबज़े का निखार
एक-एक गाम पै शोख़ी से मचलना तेरा
पीके जंगल की हवा झूम के चलना तेरा

साहबे दिल तुझे तस्वीरे वफ़ा कहते हैं,
चश्मए फ़ैज़े .खुदा मर्दे .खुदा कहते हैं
दर्दमन्दों को मसीहा है शोअरा कहते हैं
मा तुझे कहते हैं हिंदू तो बजा कहते हैं
कौन है जिसने तेरे दूध से मुँह फेरा है
आज इस क़ौम की रग-रग में लहू तेरा है

७

रुख़सत हुआ वो बाप से लेकर .खुदा का नाम
राहे वफ़ा की मंज़िले अव्वल हुईं तमाम
मंज़ूर था जो मा की ज़ियारत का इन्तज़ाम
दामन से अश्क़ पोंछ के दिल से किया कलाम
इज़हार बेकसी से सितम होगा और भी
देखा हमें उदास तो ग़म होगा और भी
दिल को सँभालता हुआ आख़िर वो नौनिहाल
ख़ामोश मा के पास गया सूरते ख़याल
देखा तो एक दर में है, बैठी वो ख़स्ता हाल
सकता-सा हो गया है यह है शिद्दते मलाल
तन में लहू का नाम नहीं ज़र्द रंग है
गोया बशर नहीं कोई तसवीरे संग है

८

अजल के दाम में आना है यों तो आलम को
मगर ये दिल नहीं तैयार तेरे मातम को
पहाड़ कहते हैं दुनिया में ऐसे ही ग़म को
मिटा के तुझको अजल ने मिटा दिया हमको
जनाज़ा हिन्द का दर से तेरे निकलता है
सुहाग क़ौम का तेरी चिता में जलता है

९

उठ गया दौलते नामूस वतन का वारिस
क़ौम मरहूम के ऐज़ाज़े कुहन का वारिस
जाँनिसार अज़लीए शेरे दकिन का वारिस
पेशवाओं के गरजते हुए रन का वारिस
थी समाई हुई पूना की बहार आँखों में
आख़िरी दौर का बाक़ी था ख़ुमार आँखों में

१०

रहती हैं उमंगें कहीं ज़ंजीर की पाबन्द
हम क़ैद हैं ज़िन्दां में बयाँबा है नज़र में
मयख़ाना है चलता है यहाँ सिक्कए जमहूर
सब शाहो गदा एक हैं, रिन्दों की नज़र में

× × ×

११

देहरादून

यहीं बहार का पहले पहल हुआ था शगून
अजीब ख़ित्तए दिलकश है शहर देहरादून
निगाहे शौक़ ने क्या कहिए क्या समाँ देखा
नयी ज़मीन नया रंग आस्माँ देखा

सुना जो करते थे वह बाग़ पुरफ़िज़ा है यही
अगर पहाड़ हैं जिन्नत तो रास्ता है यही
अज़ल में थी जो फ़िज़ा उसकी यादगार है, यह
नशेब कोह में गहवारए बहार है यह

किया नहीं ग़ारत इसे बशर की सनअत ने
ये सबज़ा ज़ार सजाया है दस्ते क़ुदरत ने

सपुर्द अब्र के है इन्तज़ाम पानी का
हवा ए सर्द को है हुक्म बाग़बानी का

× × ×

घने दरख़्त हरी झाड़ियाँ ज़मीं शादाब
लतीफ़ सर्द हवा पाको साफ़ चश्मा आब
कमी कभी नहीं शादाबियों की सामाँ में
ठहर गयी है बहार आके इस गुलिस्ताँ में
तिलस्म हुस्न का है बीच में ये गुलदस्ता
खड़े हैं, कोहो शजर पहलुओं में सफ़बस्ता
यहाँ जो आके मुसाफ़िर मुक़ाम करते हैं
ये सन्तरी उन्हें पहले सलाम करते हैं
निगह को दूर से पानी है जो नज़र आता
सपेद नाग चला जा रहा है बल खाता
फ़िज़ाए कोह में ऐसी हवा समाती है
बशर की रूह को राहत की नींद आती है
बस एक आलमे हू चार सिम्त तारी है
न शोरो शर है न दुनिया की आहोज़ारी है
असर दिखाता है .कुदरत का नालए दिलगीर
शजर-हजर से टपकती है, राग की तासीर
ये राग वो है जो मिज़राब का असार नहीं
ये सिर्फ़ कान के पर्दों में, गोशागीर नहीं
वही सुनेगा इसे दिल गुदाज़ है जिसका
हो दिल में सोज़ तो रग-रग में साज़ है इसका

१२

हमारा वतन

ये हिन्दोस्ताँ है हमारा वतन,
मुहब्बत की आँखों का तारा वतन

वो इसके दरख़्तों की तैयारियाँ,
वो फल-फूल पौदे वो फुलवारियाँ
हवा में दरख़्तों का वो झूमना,
वो पत्तों का फूलों का मुँह चूमना
वो सावन में काली घटा की वहार
वो वरसात की हलकी-हलकी फुवार
वो वाग़ों में कोयल वो जंगल के मोर,
वो गंगा की लहरें वो जमना का ज़ोर
इसीसे है इस ज़िंदगी की वहार,
वतन की मुहब्बत हो या मा का प्यार
हमारा वतन दिल से प्यारा वतन

१३

चिश्ती ने जिस ज़मीं में पैग़ामे हक़ सुनाया
नानक ने जिस चमन में वहदत का गीत गाया
तातारियों ने जिसको अपना वतन वनाया
जिसने हजाज़ियों से दश्ते अरव छुड़ाया
मेरा वतन वही है, मेरा वतन वही है

यूनानियों को जिसने हैरान कर दिया था
सारे जहाँ को जिसने इल्मो हुनर दिया था
मिट्टी को जिसकी हक़ ने ज़र का असर दिया था
तुर्कों का जिसने दामन हीरों से भर दिया था
मेरा वतन वही है, मेरा वतन वही है

टूटे थे जो सितारे फ़ारिस के आसमाँ से
फिर ताव दे के जिसने चमकाए कहकशाँ से
वहदत की लै सुनी थी दुनिया ने जिस मकाँ से
मीरे अरव को आई ठंडी हवा जहाँ से
मेरा वतन वही है, मेरा वतन वही है

वन्दे कलीम जिसके परवत जहाँ के सीना
नूहे नबी का आकर ठहरा जहाँ सफ़ीना
रफ़अत है जिस जमीं की बामे फ़लक का ज़ीना
जन्नत की ज़िन्दगी है जिनकी फ़िज़ा में जीना
मेरा वतन वही है मेरा वतन वही है

१४

यहाँ की ख़ाक हमको कीमिया है,
ये सोने से भी क़ीमत में सिवा है
जो चिड़ियाँ सुबह को गाती हैं अक्सर
इसी का राग है उनकी ज़बाँ पर
वो सावन के महीने की घटाएँ
वो कोयल और पपीहे की सदाएँ
वो एक मस्ती का आलम बादलों में
वो फूलों का महकना जंगलों में
वो चश्मे और वो इमरत-सा पानी
वो गंगा और जमना की रवानी
दरख़्तों पर वो चिड़ियों का चहकना
वो बेले और चँवेली का महकना
इसी की ख़ाक़ से लेते हैं महसूल
यही देता है ग़ल्ला और फल-फूल
वतन का जिन बुज़ुर्गों से हुआ नाम
इसी मिट्टी में करते हैं, वो आराम

१५

ख़ाके वतन

ऐ ख़ाके हिन्द तेरी अज़मत में क्या गुमाँ है
दरियाए फ़ैज़े क़ुदरत तेरे लिए रवाँ है

तेरी जबीं से नूरे हुस्ने अज़ल अयाँ है
अल्ला रे ज़ेबे ज़ीनत क्या औजे उज़्ज़ो शाँ है
हर सुबह है ये ख़िदमत ख़ुरशीद पुरज़िया की
किरनों से गूँधता है चोटी हिमालिया की
इस ख़ाके दिलनशीं से चश्मे हुए वो जारी
चीनो अरब में जिनसे होती थी आब यारी
सारे जहाँ पै जब था वहशत का अब्र तारी
चश्मो चिराग़े आलम थी सर ज़मीं हमारी
शमआ अदब न थी जब यूनाँ की अंजुमन में
तावाँ थी महरे वेनिश इस वादिये कुहन में
गौतम ने आबरू दी इस माबदे कुहन को
सरमद ने इस ज़मीं पर सिदक़ा किया वतन को
अकबर ने जामे उल्फ़त बख़्शा इस अंजुमन को
सींचा लहू से अपने राना ने इस चमन को
सब सूरवीर अपने इस ख़ाक में निहाँ हैं
टूटे हुए खँडर हैं या उनको हड्डियाँ हैं
दीवार दर से अब तक उनका असर अयाँ है
अपनी रगों में अब तक उनका लहू रवाँ है
अब तक असर में डूबी ना.क़ूस की .फ़ुगाँ है
फ़रदौस गोश अब तक कैफ़ीयते अज़ाँ है
कश्मीर से अयाँ है, जन्नत का रंग अब तक
शौकत से बह रहा है दरियाए गंग अब तक
अगली-सी ताज़गी है फूलों में और फलों में
करते हैं रक्स अब तक ताऊस जंगलों में
अब तक वही कड़क है बिजली की बादलों में
पस्ती-सी आ गयी है, पर दिल के वलवलों में
गुले शमअ अंजुमन है गो अंजुमन वही है
हुब्बे वतन नहीं है ख़ाके वतन वही है

ऐ सूर हुब्बे क़ौमी इस ख़्वाब से जगा दे
भूला हुआ फ़साना कानों को फिर सुना दे
मुर्दा तबीअतों की अफ़सुर्दगी मिटा दे
उठते हुए शरारे इस राख से दिखा दे

हुब्बे वतन समाए आँखों में नूर होकर
सर में ख़ुमार होकर दिल में सुरूर होकर

शैदाए बोस्ताँ को सर्वो समन मुबारक
रंगी तबीअतों को रंगे सुख़न मुबारक
बुलबुल को गुल मुबारक गुल को चमन मुबारक
हम बेकसों को अपना प्यारा वतन मुबारक

गुंचे हमारे दिल के इस बाग़ में खिलेंगे
इस ख़ाक से उठे हैं, इस ख़ाक में मिलेंगे

१६

बू गुल के लिए है गुल है शबनम के लिए
इक वक्त है इन्तज़ामे आलम के लिए
लेकिन है मेरा शबाब मातम के लिए
ग़म मेरे लिए है और मैं ग़म के लिए

१७

फ़ना का होश आना ज़िन्दगी का दर्दे सर जाना
अजल क्या है, ख़ुमारे बादए हस्ती उतर जाना
मुक़ामे कूच क्या है, मंज़िले मक़सूद तक भूले
क़यामत या सराए दहर में दो दिन ठहर जाना
सिधारी मंज़िले हस्ती से किस वे पतनाई से
तने ख़ाकी को शायद रूह ने गर्दे सफ़र जाना

× × ×

दर्दे दिल पासे वफ़ा जज़्बए ईमाँ होना
आदमीयत है यही और यही इन्साँ होना

सर में सौदा न रहा पाँव में बेड़ी न रही
मेरी तक़दीर में था बे सरो सामाँ होना
गुल को पामाल न कर लालो गुहर के मालिक
है इसे तुर्रए दस्तारे ग़रीबाँ होना

इक़बाल

तराना

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा
हम बुलबुलें हैं उसकी ये गुलसिताँ हमारा
ग़ुरबत में हों अगर हम रहता है दिल वतन में
समझो वहीं हमें भी दिल हो जहाँ हमारा
परवत वो सबसे ऊँचा हमसाया आस्माँ का
वो सन्तरी हमारा वो पासबाँ हमारा
गोदी में खेलती हैं इसकी हज़ारों नदियाँ
गुलशन हैं जिनके दम से रश्के जनाँ हमारा
ऐ आबरूदे गंगा वह दिन है याद तुझको
उतरा तेरे किनारे जब कारवाँ हमारा
मज़हब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना
हिन्दी हैं, हम वतन हैं, हिन्दोस्ताँ हमारा
यूनानो मिस्र रूमाँ सब मिट गये जहाँ से
अब तक मगर है बाक़ी नामो निशाँ हमारा
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दौरे ज़माँ हमारा

इक़बाल कोई महरम अपना नहीं जहाँ में
मालूम क्या किसी को दर्दे निहाँ हमारा

हमदर्दी

टहनी पै किसी शजर की तनहा बुलबुल था कोई उदास बैठा
कहता था कि रात सर पै आई उड़ने-चुगने में दिन गुज़ारा
पहुँचूँ किस तरह आशियाँ तक हर चीज़ पै छा गया अँधेरा
सुनकर बुलबुल की आहोज़ारी जुगनूँ कोई पास ही से बोला
हाज़िर हूँ मदद को जानो दिल से कीड़ा हूँ अगरचे मैं ज़रा-सा
क्या ग़म है जो रात है अँधेरी, मैं राह में रोशनी करूँगा
अल्लाह ने दी है मुझको मशअल, चमका के मुझे दिया बनाया
हैं लोग वही जहाँ में अच्छे, आते हैं जो काम दूसरों के

बच्चे की दुआ

लब पै आई है दुआ बन के तमन्ना मेरी
ज़िन्दगी शमअ की सूरत हो .ख़ुदा या मेरी
दूर दुनिया का मेरे दम से अँधेरा हो जाय
हर जगह मेरे चमकने से उजाला हो जाय
हो मेरे दम से योंही मेरे वतन की ज़ीनत
जिस तरह फूल से होती है चमन की ज़ीनत
ज़िन्दगी हो मेरा परवाने की सूरत यारब
इल्म की शमअ से हो मुझको मुहब्बत यारब
हो मेरा काम ग़रीबों की हिमायत करना
दर्दमन्दों से ज़ईफ़ों से मुहब्बत करना
मेरे अल्लाह बुराई से बचाना मुझको
नेक जो राह हो उस रह पै चलाना मुझको

४

सच कह दूँ ऐ विरहमन गर तू बुरा न माने,
तेरे सनमकदों के बुत हो गये पुराने
अपनों से वैर रखना तूने बुतों से सीखा
जंगो जदल सिखाया वायज़ को भी .खुदा ने
तंग आके मैंने आख़िर दैरो हरम को छोड़ा
वायज़ का वाज़ छोड़ा छोड़े तेरे फ़साने
पत्थर की मूरतों में समझा है, तू .खुदा है
ख़ाके वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है
आ ग़ैरियत के पर्दे इक बार फिर उठा दें
बिछुड़ों को फिर मिला दें नक़्शे दुई मिटा दें
सूनी पड़ी हुई है, मुद्दत से दिल की बस्ती
आ इक नया शिवाला इस देस में बना दें
दुनिया के तीरथों से ऊँचा हो अपना तीरथ
दामाने आसमाँ से इसका कलस मिला दें
फिर इक अनूप ऐसी सोने की मूरती हो
इस हर दुआरे दिल में लाकर जिसे बिठा दें
सुन्दर हो उसकी सूरत छवि उसको मोहनी हो
उस देवता से माँगें जो दिल की हों मुरादें
ज़ुन्नार हो गले में, तसबीह हाथ में हो
यानी सनमकदे में शाने हरम दिखा दें
पहलू को चीर डालें, दर्शन हो आम उसका
हर आतमा में गोया एक आग ही लगा दें
आँखों की है जो गङ्गा, ले-लेके उससे पानी
इस देवता के आगे इक नहर-सी बहा दें
हिन्दोस्तान लिख दें माथे पै उस सनम के
भूले हुए तराने दुनिया को फिर सुना दें

मन्दिर में हो बुलाना जिस दम पुजारियों को
आवाज़ए अज़ाँ को नाक़ूस में छिपा दें
अगनी है वह जो निरगुन कहते हैं प्रीत जिसको
धर्मों के ये बखेड़े उस आग में जला दें
है रीत आशिक़ों की तन, मन निसार करना
रोना सितम उठाना और उनको प्यार करना

× × ×

हर सुबह उठके गाएँ मन्तर वो मीठे-मीठे
सारे पुजारियों को मय प्रीत की पिला दें
शक्ती भी शानती भी भक्तों के गीत में है
धरती के वासियों की मुक्ती पिरीत में है

× × ×

दयारे मग़रिब के रहने वालो .ख़ुदा की बस्ती दुकाँ नहीं है
खरा जिसे तुम समझ रहे हो वो आबेज़र कम अयार होगा
तुम्हारी तहज़ीब अपने ख़ंजर से आप ही .ख़ुदकुशी करेगी
जो शाख़ नाज़ुक पै आशियाना बनेगा नापाएदार होगा

× × ×

हिकमते मग़रिब से मिल्लत की ये कैफ़ीयत हुई
टुकड़े-टुकड़े जिस तरह सोने का कर देता है गाज़

× × ×

तू राज़े कुनफ़िकाँ है अपनी आँखों पर अयाँ होजा
.ख़ुदी का राज़दाँ होजा .ख़ुदा का तर्जुमा होजा
हविस ने कर दिया है, टुकड़े-टुकड़े नूए इन्सा को
उख़ुव्वत का बयाँ होजा मुहब्बत की ज़बाँ होजा
ये हिन्दी वो .ख़ुरासानी ये अफ़ग़ानी वो तूरानी
तू ऐ शरमिन्दए साहिल उछल कर बेकिराँ होजा

× × ×

जुगनूँ की रोशनी है काशानए चमन में
या शमअ जल रही है फूलों की अंजुमन में
आया है आसमाँ से उड़कर कोई सितारा
या जान पड़ गयी है महताब की किरन में
या शब की सल्तनत में दिन का सफ़ीर आया
ग़ुरबत में आके चमका गुमनाम था वतन में
तुकमा कोई गिरा है महताब की क़बा का
ज़र्रा है या नुमायाँ सूरज के पैरहन में

× × ×

ज़िन्दगी इन्साँ की है, मानिन्द मुर्ग़े ख़ुशनवा
शाख़ पर बैठा कोई दम चहचहाया उड़ गया,
आह क्या आए रियाज़े दहर में हम क्या गये,
ज़िन्दगी की शाख़ से फूटे, खिले, मुरझा गये
मौत हर शाहो गदा के ख़्वाब की ताबीर है,
इस सितमगर का सितम इन्साफ़ की तस्वीर है

× × ×

है रगे गुल सुबह के अश्कों से मोती की लड़ी,
कोई सूरज की किरन शबनम में है उलझी हुई
सीनए दरिया शुआओं के लिये गहवारा है,
किस क़दर प्यारा लबे जू महर का नज़्ज़ारा है।

× × ×

पत्तियाँ फूलों की गिरती हैं, ख़िज़ाँ में इस तरह
दस्ते तिफ़ले ख़फ़ता से रंगीं खिलौने जिस तरह

× × ×

दुनिया की महफ़िलों से उकता गया हूँ या रब
क्या लुत्फ़ अंजुमन में जब दिल ही बुझ गया हो

शोरिश से भागता हूँ दिल ढूँढ़ता है मेरा
ऐसा सिकूँन जिस पर तक़दीर भी फ़िदा हो
मरता हूँ ख़ामुशी पर यह आरज़ू है मेरी
दामन में कोह के इक छोटा-सा झोपड़ा हो
आज़ाद फ़िक्र से हूँ उजलत में दिन गुज़ारूँ
दुनिया के ग़म का दिल से काँटा निकल गया हो
लज़्ज़त सरोद की हो चिड़ियों के चहचहों में
चश्मे की शोरिशों में बाजा-सा बज रहा हो
पत्तों का हो नज़ारा मेरी किताबख़ानी
दफ़्तर हो मारिफ़त का जो गुल खिला हुआ हो
गुल की कली चटक कर पैग़ाम दे किसी का
साग़र ज़रा-सा गोया मुझको जहाँ नुमा हो
हो हाथ का सिरहाना सब्ज़े का हो बिछौना
शर्माए जिससे जिलवत ख़िलवत में वह अदा हो
मानूस इस क़दर हो सूरत से मेरी बुलबुल
नन्हे-से दिल में उसके खटका न कुछ मेरा हो
सफ़ बाँधे दोनों जानिब बूटे हरे-हरे हों
नद्दी का साफ़ पानी तस्वीर ले रहा हो
हो दिलफ़रेब ऐसा कुहसार का नज़ारा
पानी भी मौज बनकर उठ-उठके देखता हो
आग़ोश में ज़मीं के सोया हुआ हो सब्ज़ा
पड़-पड़ के झाड़ियों में पानी चमक रहा हो
पानी को छू रही हो झुक-झुक के गुल की टहनी
जैसे हसीन कोई आईना देखता हो
मेंहदी लगाये सूरज जब शाम की दुलहन हो
सुर्ख़ी लिए सुनहरी हर फूल की क़बा हो
यों वादियों में ठहरे आकर शफ़क़ की सुर्ख़ी
जैसे किसी गली में कोई शकिस्तापा हो

पच्छिम को जा रहा हो कुछ इस अदा से सूरज
जैसे कोई किसी के दामन को खींचता हो
रातों को चलने वाले रह जायँ थक के जिस दम
उम्मेद उनकी मेरा टूटा हुआ दिया हो
बिजली चमक के दिन को कुटिया मेरी दिखा दे
जब आस्माँ पै हरसू बादल घिरा हुआ हो
पिछले पहर की कोयल वो सुबह की मोअज्ज़न
मैं उसका हमनवा हूँ वह मेरी हमनवा हो
कानों पै हो न मेरे दहरो हरम का अहसाँ
रोज़न ही झोंपड़ी का मुझको सहरनुमा हो
ज़ुल्मत झलक रही हो इस तरह चाँदनी में
ज्यूँ आँख में सहर की सुर्मा लगा हुआ हो
फूलों को आए जिस दम शबनम वज़ू कराने
रोना मेरा वज़ू हो नाला मेरी दुआ हो
दिल खोल कर बहाऊँ अपने वतन पै आँसू
सरसब्ज़ जिसके नम से बूटा उम्मेद का हो
इस ख़ामुशी में जाएँ इतने बलन्द नाले
तारों के क़ाफ़ले को मेरी सदा दरा हो
हर दर्दमन्द दिल को रोना मेरा रुला दे
बेहोश जो पड़े हैं, शायद उन्हें जगा दे

× × ×

मेरे हक़ में तो नहीं तारों की बस्ती अच्छी,
इस बलन्दी से ज़मींवालों की पस्ती अच्छी
आस्माँ क्या अदम आबाद वतन है मेरा
सुबह के दामने सद चाक वतन है मेरा,
मेरी क़िस्मत में है, हर रोज़ का मरना-जीना
साक़ीए मौत के हाथों से सबूही पीना

न यह ख़िदमत न यह इज़्ज़त न यह रफ़अत अच्छी
इस घड़ी-भर के चमन से तो है .ज़ुल्मत अच्छी

× × ×

परवाना इक पतंगा जुगनू भी इक पतंगा,
वो रोशनी का तालिब ये रोशनी सरापा
नज़्ज़ारए शफ़क़ की .ख़ूबी ज़वाल पर थी
चमका के इस परी को थोड़ी-सी रोशनी दी
यह चाँद आस्माँ का शायर का दिल है गोया
याँ चाँदनी है जो कुछ याँ दर्द की कसक है
कसरत में छो गया है, वहदत का राज़ मख़्फ़ी
जुगनूँ में जो चमक है, वह फूल में महक है
यह इख़्तलाफ़ फिर क्यों हंगामों का महल है
हर शय में जब कि पिनहाँ ख़ामोशीए अज़ल है

× × ×

नेक ने तो नेक जानां बद ने बद जाना मुझे,
हर किसी ने अपने ही रुतबे में पहचाना मुझे

× × ×

वतन की फ़िक्र कर नादाँ मुसीबत आने वाली है,
तेरी बरबादियों के मशवरे हैं, आस्मानों में
ज़रा देख उसको जो कुछ हो रहा है होने वाला है
धरा क्या है, भला अहदे कुहन की दास्तानों में

× × ×

सुनी इश्क़ ने गुफ़्तगू जब क़ज़ा को
हँसी इसके लब पर हुई आशकारा
गिरी इस तबस्सुम की बिजली अजल पर
अँधेरे का हो नूर में क्या गुज़ारा

बक़ा को जो देखा फ़ना हो गई वो;
कज़ा थी शिकारे क़ज़ा हो गई वह

× × ×

उड़ाई कुमरियों ने, तूतियों ने अन्दलीबों ने
चमन वालों ने मिलकर लूट ली तर्ज़ें फ़ुग़ाँ मेरी
उड़ाए कुछ वरक़ लाले ने, कुछ नरगिस ने कुछ गुल ने
चमन में हर तरफ़ बिखरी हुई है, दास्ताँ मेरी

× × ×

पहाड़ और गिलहरी

कोई पहाड़ यह कहता था इक गिलहरी से
तुझे हो शर्म तो पानी में जा के डूब मरे
ज़रा-सी चीज़ है, उस पर ग़रूर क्या कहना
यह अक़्ल और यह समझ यह शऊर क्या कहना
ख़ुदा की शान है नाचीज़ चीज़ बन बैठें
जो बेशऊर हों यों बातमीज़ बन बैठें
तेरी बिसात है क्या मेरी शान के आगे
ज़मीं है पस्त मेरी आन-बान के आगे
जो बात मुझमें है, तुझको वो है नसीब कहाँ
भला पहाड़ कहाँ जानवर ग़रीब कहाँ
कहा ये सुन के गिलहरी ने मुँह सँभाल ज़रा
ये कच्ची बातें हैं दिल से इन्हें निकाल ज़रा
जो मैं बड़ी नहीं तेरी तरह तो क्या परवा
नहीं है तूभी तो आख़िर मेरी तरह छोटा
हर एक चीज़ से पैदा ख़ुदा की क़ुदरत है
कोई बड़ा कोई छोटा ये उसकी रहमत है

बड़ा जहान में तुझको बना दिया उसने
मुझे दरख़्त पर चढ़ना सिखा दिया उसने,
क़दम उठाने की ताक़त नहीं ज़रा तुझमें
निरी बड़ाई है ख़ूबी है और क्या तुझमें
जो तू बड़ा है तो मुझ-सा हुनर दिखा मुझको
ये छालियाँ ही ज़रा तोड़ कर दिखा मुझको
नहीं है चीज़ निकम्मी कोई ज़माने में
कोई बुरा नहीं क़ुदरत के कारख़ाने में

× × ×

साक़ीनामा

हुआ ख़ीमाज़न कारवाने बहार
इरम बन गया दामने कोहसार
गुलो नरगिसो सौसनो नस्तरन
शहीदे अज़ल लाला ख़ूनी कफ़न
जहाँ छिप गया पर्दए-रंग में
लहू की है गर्दिश रगे-संग में
फ़िज़ा नीली-नीली हवा में सरूर
ठहरते नहीं आशियाँ में तयूर
वह जूए कुहिस्ताँ उचकती हुई
अटकती, लचकती, सरकती हुई
उछलती, फिसलती, सम्हलती हुई
बड़े पेच खाकर निकलती हुई
रुके जब तो सिल चीर देती है यह
पहाड़ों के दिल चीर देती है यह
ज़रा देख ऐ साक़िए लालाफ़ाम
सुनाती है यह ज़िन्दगी का पयाम

पिला दे मुझे वह मये पर्दासोज़
कि आती नहीं फ़स्ले गुल रोज़-रोज़
वह मय जिससे रौशन ज़मीरे हयात
वह मय जिससे है मस्तिए कायनात
वह मय जिससे है सोज़ोसाज़े अज़ल
वह मय जिससे खुलता है राज़ेअज़ल
उठा, साक़िया, पर्दा इस राज़ से
लड़ा दे ममोले को शहबाज़ से
ज़माने के अन्दाज़ बदले गये
नया राग है साज़ बदले गये
हुआ इस तरह फ़ाश राज़े फ़िरंग
कि हैरत में है शीशाबाज़े फ़िरंग
पुरानी सियासतगरी ख़ार है
ज़मीं मीरो सुल्ताँ से बेज़ार है
गया दौरे सरमायादारी गया
तमाशा दिखाकर मदारी गया
गिराँख़ाब चीनी सम्हलने लगे
हिमालय के चश्मे उबलने लगे

× × ×

शराबे कुहन फिर पिला साक़िया
वही जाम गर्दिश में ला साक़िया
मुझे इश्क़ के पर लगाकर उड़ा
मेरी ख़ाक़ जुगनू बनाकर उड़ा
ख़िरद को ग़ुलामी से आज़ाद कर
जवानों को पीरों का उस्ताद कर
तड़पने-फड़कने की तौफ़ीक़ दे
दिले 'मुरतज़ा' सोज़े 'सिद्दीक़' दे

जिगर से वही तीर फिर पार कर
तमन्ना को सीनों में बेदार कर
तेरे आस्मानों के तारों की ख़ैर!
ज़मीनों के शब ज़िन्दादारों की ख़ैर!
जवानों को सोज़े जिगर बख़्श दे
मेरा इश्क़ मेरी नज़र बख़्श दे
मेरी नाव गिर्दाब से पार कर
ये' साबित है तू इसको सैयार कर
बता मुझको असरारे मर्गो हयात
कि तेरी निगाहों में है कायनात
मेरे दीद-ए-तर की बेख़ाबियाँ
मेरे दिल की पोशीदा बेताबियाँ
मेरे नालए नीम-शब का नयाज़
मेरी खिलवतो-अंजुमन का गुदाज़
उमंगें मेरी आरज़ूएँ मेरी
उमीदें मेरी जुस्तजूएँ मेरी
मेरा दिल मेरी रज़्मगाहे-हयात
गुमानों के लश्कर यक़ीं का सबात
यही कुछ है साक़ी मताए-फ़क़ीर
इसीसे फ़क़ीरी में हूँ मैं अमीर
मेरे क़ाफ़िले में लुटा दे इसे
लुटा दे ठिकाने लगा दे इसे
दमादम रवाँ है यमे ज़िन्दगी
हर एक शै से पैदा रमे ज़िन्दगी
इसीसे हुई है बदन की नमूद
कि शोले में पोशीदा है मौजे दूद
गिरा गर्चे है सुहबते आबोगिल
खुश आई इसे मेहनते आबोगिल

यह साबित भी है और सैयार भी
अनासिर के फंदों से बेज़ार भी
यह वहदत है कसरत में हरदम असीर
मगर हर कहीं बेचगूं बेनज़ीर
पसंद इसको तकरार की ख़ू नहीं
कि तू मैं नहीं और मैं तू नहीं
मनो तू से है अंजुमन आफ़री
मगर ऐन महफ़िल में ख़िलवत नशीं
चमक इसकी बिजली में तारे में है
यह चाँदी में, सोने में, पारे में है
इसीके बयाबाँ इसीके बबूल
इसीके हैं काँटे इसीके हैं फूल
कहीं इसकी ताक़त से कोहसार चूर
कहीं इसके फंदे में जबरीलो-हूर
कहीं ज़र्रा शाहीन सीमाब-रंग
लहू से चकोरों के आलूदा चंग
कबूतर कहीं आशियाने से दूर
फड़कता हुआ जाल में नासबूर
फ़रेबे-नज़र है सकूनो-सबात
तड़पता है हर ज़र्रए-कायनात
ठहरता नहीं कारवाने-वजूद
कि हर लहज़ा है ताज़ा शाने वजूद
समझता है तू राज़ है ज़िन्दगी
फ़क़त ज़ौके-परवाज़ है ज़िन्दगी
बहुत इसने देखे हैं पस्तो-बलंद
सफ़र इसको मंज़िल से बढ़कर पसंद
सफ़र ज़िन्दगी के लिए बर्गोसाज़
सफ़र है हक़ीक़त, हज़र है मजाज़

उलझ कर सम्हलने में लज़्ज़त इसे
तड़पने फड़कने में राहत इसे
हुआ जब इसे सामना मौत का
कठिन था बड़ा थामना मौत का
उतरकर जहाने मकाफ़ात में
रही ज़िन्दगी मौत की घात में
मज़ाक़े दुई से बनी ज़ौज ज़ौज
उठी दश्तो-कुहसार से फ़ौजा फ़ौज
गुल इस शाख़ से टूटते भी रहे
इसी शाख़ से फूटते भी रहे
समझते हैं नादाँ इसे बे-सबात
उभड़ता है मिट-मिट के नक़्शे-हयात
बड़ी तेज़ जौलाँ बड़ी ज़ू-दरस
अज़ल से अबद तक रमे एक नफ़स
ज़माना की ज़ंजीरें-ऐयाम है
दमों के उलटफेर का नाम है
य' मौजे-नफ़स क्या है तलवार है
ख़ुदी क्या है तलवार की धार है
ख़ुदी क्या है राज़े दरूने हयात
ख़ुदी क्या है बेदारिए-कायनात
ख़ुदी जल्वा बदमस्तो ख़िलवत पसंद
समुन्दर है एक बूँद पानी में बंद
अंधेरे उजाले में है ताबनाक
मनो तू में पैदा मनो तू से पाक
अज़ल इसके पीछे अबद सामने
न हद इसके पीछे न हद सामने
ज़माने के दरिया में बहती हुई
सितम इसकी मौजों के सहती हुई

तजस्सुस की राहें बदलती हुई
दमादम निगाहें बदलती हुई
सुबुक इसके हाथों में संगेगिराँ
पहाड़ इसकी ज़रबों से रेगे रवाँ
सफ़र इसका अंजामो आग़ाज़ है
यही इसकी तक़वीन का राज़ है
किरन चाँद में है, शरर संग में
य' बेरंग है डूब कर रंग में
इसे वास्ता क्या कमोबेश से
नशेबो-फ़राज़ो पशोपेश से
अज़ल से है यह कशमकश में असीर
हुई ख़ाके-आदम में सूरत-पज़ीर
ख़ुदी का नशेमन तेरे दिल में है
फ़लक जिस तरह आँख के तिल में है
ख़ुदी के निगाहों में है ज़हनाब
वो नाँ जिससे जाती रहे इसकी आब
वही नाँ है इसके लिए अर्ज़मंद
रहे जिससे दुनिया में गर्दन बलंद
वही सिज्दा है लायक़े एहतमाम
कि हो जिससे हर सिज्दा तुझ पर हराम
य' आलम य' हंगामए रंगो सौत
य' आलम के है ज़ेरे फ़रमाने मौत
य' आलम य' बुतख़ानए चश्मोगोश
जहाँ ज़िन्दगी है फ़क़त ख़ुर्दोनोश
ख़ुदी की है यह मंज़िले अव्वलीं
मुसाफ़िर, य' तेरा नशेमन नहीं
तेरी आग इस ख़ाकेदाँ से नहीं
जहाँ तुझसे है तू जहाँ से नहीं

बढ़े जा य' कोहेगिराँ तोड़कर
तिलस्मे ज़माँ औ' मकाँ तोड़कर
.ख़ुदी शेरे-मौला जहाँ इसका सैद
ज़मीं इसका सैद आसमाँ इसका सैद
जहाँ और भी हैं अभी बेनमूद
कि ख़ाली नहीं है ज़मीरे-वजूद
हरएक मुन्तज़िर तेरी यल्ग़ार का
तेरी शोख़िए फ़िक्रो किरदार का
ये हैं मक़सदे गर्दिशे रोज़गार
कि तेरी .ख़ुदी तुझपे हो आश्कार
तू है फ़ातहे आलमे .ख़ूबेज़िश्त
तुझे क्या बताऊँ तेरी सरनविश्त
हक़ीक़त ये है जामए हर्फ़ तंग
हक़ीक़त है आईना गुफ़्तार जंग
फ़िरोज़ाँ है सीने में शमए-नफ़स
मगर ताबे गुफ़्तार कहती है बस
"अगर यक्सरे मुए बरतर परम
फ़रोगे तजल्ला बसोज़द परम"

फ़ानी

क्या कहिये कि मुद्दआए तहक़ीक़ यह है,
.ख़ुद खोगये माजराए तहक़ीक़ यह है,
तू क्या है ये इब्तदाए तहक़ीक़ सही
हम कुछ नहीं इन्तहाए तहक़ीक़ यह है

× × ×

हस्ती के न आग़ाज़ न अंजाम में दख़ल
तकलीफ़ पै क़ाबू है न आराम में दख़ल
एक साँस पर उम्र-भर कभी बस न चला
.मुख़्तार हूँ और नहीं किसी काम में दख़ल

× × ×

कब कोई किसी के लिए ग़म खाता है,
वो नेक है जो बदी से डर जाता है
इमकान है अपनी बेकसी का भी कभी
इस ख़ौफ़ से बेकसी पै तरस आता है

× × ×

कितनों को जिगर का ज़ख़्म सीते देखा
देखा जिसे ख़ूने दिल ही पीते देखा
अब तक रोते थे मरने वालों को और अब
हम रोदिये जब किसी को जीते देखा

× × ×

वो भेद हूँ .फ़ानी जो कोई पा न सके
वो बात हूँ जो ख़याल में आ न सके

क़ादिर हो वो उम्र-भर जिये जाने पर
जो ताब अज़ाब इक नफ़स ला न सके

× × ×

दिल है वही इज़तराब की .खू न सही
ग़म है वही इज़हार का पहलू न सही
आँसू थे तो आँसुओं से रो लेते थे
रोते अब भी हैं, .खैर आँसू न सही

× × ×

कुछ .खैर से यादे यार में गुज़री उम्र
कुछ मौत के इन्तज़ार में गुज़री उम्र
आया भी अगर होश तो बेचैन रहे
कुछ नशे में, कुछ .खुमार में गुज़री उम्र

× × ×

दम लेने की तो मोहलत मिलना ही चाहिए थी
दिन-रात बहरे ग़म में क्या ग़र्क़ चाहिए था
फ़ानी की ज़िन्दगी भी क्या ज़िन्दगी थी या रब
मौत और ज़िन्दगी में कुछ फ़र्क़ चाहिए था

× × ×

ग़म के टहोके कुछ हों बला से आके जगा तो जाते हैं
हम हैं, मगर वो नींद के माते जागते ही सो जाते हैं

× × ×

ज़िन्दगी की दूसरी करवट थी मौत,
ज़िन्दगी करवट बदल कर रह गयी

× × ×

मौत है एक वक़्फ़ए मौहूम
ज़िन्दगानी से ज़िन्दगानी तक

ऐसा भी कोई दिन मेरी क़िस्मत में है फ़ानी
जिस दिन मुझे मरने की तमन्ना न रहेगी

× × ×

दिल खोये हुए बरसों गुज़रे हैं मगर अब भी
आँसू निकल आते हैं, जब दिल नज़र आता है
आग़ाज़े मुहब्बत में जीने ही के लाले थे,
अब ख़ैर से मरना भी मुशकिल नज़र आता है

× × ×

इज़हारे मुहब्बत की हसरत को ख़ुदा समझे
हमने ये कहानी भी सौ बार सुना डाली
जीने भी नहीं देते, मरने भी नहीं देते
क्या तुमने मुहब्बत की हर रस्म उठा डाली

× × ×

दुनिया की बलाओं को जब जमा किया मैंने
धुँधली-सी मुझे दिल की तस्वीर नज़र आई
दिल उनके न आने तक लबरेज़े शिकायत था
वो आए तो अपनी ही तक़सीर नज़र आई

× × ×

नामुरादी हद से गुज़री हाल फ़ानी कुछ न पूछ
हर नफ़स है एक जनाज़ा आह बेतासीर का

× × ×

नहीं ज़रूर कि मर जायँ जाँनिसार तेरे
यही है मौत, कि जीना हराम हो जाए
तेरी ख़ुदाई में होती है, हर सहर की शाम
इलाही अपनी सहर की भी शाम हो जाए

× × ×

तेरा असीर हूँ चाहे तो ज़िबह कर सय्याद
न तोड़ दिल कि अमानत है आशयाने की

× × ×

रुख़ मेरी जानिब निगाहे लुत्फ़ दुश्मन की तरफ़
यों उधर देखा किये गोया इधर देखा किये
तू कहाँ थी ऐ अजल, ऐ नामुरादों की मुराद
मरने वाले राह तेरी उम्र-भर देखा किये

× × ×

दर्दमन्दाने वफ़ा की हाय रे मजबूरियाँ
दर्द दिल देखा न जाता था मगर देखा किये
यास जब छाई उमीदें हाथ मल कर रह गयीं,
दिल की नब्ज़ें छुट गयीं और चारागर देखा किये

× × ×

ये साया भी उठा मेरी उम्मीद के सर से
मुँह मोड़ लिया आइने दुनियाए असर से
दिल जिनसे मिले अब वो निगाहें नहीं मिलतीं
यों मिलने को मिलती है नज़र उनकी नज़र से

× × ×

बहारे ज़िन्दगी का लुत्फ़ देखा और देखोगे,
किसी का ऐश मर्गे नागहानी देखते जाओ,
सुने जाते न थे तुमसे मेरे दिन-रात के शिकवे
कफ़न सरकाओ मेरी बेज़बानी देखते जाओ

× × ×

ज़िन्दगी जब्र है और जब्र के आसार नहीं
हाय ! इस क़ैद को ज़ंजीर भी दरकार नहीं

× × ×

निगाहें ढूँढ़ती हैं दोस्तों को और नहीं पातीं
नज़र उठती है, अब जिस दोस्त पर पड़ती है दुश्मन पर

× × ×

बदला हुआ है आज मेरे आँसुओं का रंग
क्या दिल के ज़ख़्म का कोई टाँका उधड़ गया

× × ×

मंज़िले इश्क़ पै तनहा पहुँचे कोई तमन्ना साथ न थी,
थक-थक कर इस राह में आख़िर इक-इक साथी छूट गया

× × ×

कुछ काम नहीं तो काम कर जाने दे,
या रब, दुनिया से अब गुज़र जाने दे
मर-मर के जिए जाय कहाँ तक फ़ानी
जीना नहीं मंज़ूर तो मर जाने दे

× × ×

ज़िन्दगी ख़ुद क्या है फ़ानी ये तो क्या कहिए मगर
मौत कहते हैं जिसे वो ज़िन्दगी का होश है

× × ×

हर नफ़स आहे गुज़िश्ता की है मैयत फ़ानी,
ज़िन्दगी नाम है, मर-मर के जिए जाने का,

× × ×

हर नफ़स आह और अनफ़ास पै जीने का मदार
ज़िन्दगी आहे मुसलसिल के सिवा कुछ भी नहीं,

× × ×

तामीरे आशियाँ की हविस का है नाम वर्क़
मैंने जो चुनी शाख़ वही शाख़ जल गयी,

× × ×

जो ढूँढ़ता है घर कोई दोनों जहाँ से दूर
इस आपकी ज़मीं से अलग आस्माँ से दूर
शायद मैं दरे खोर निगहे गर्म भी नहीं
बिजली तड़प रही है, मेरे आशियाँ से दूर
वो पूछते हैं, और कोई देता नहीं जवाब
किसकी वफ़ा है, दस्तरसे इम्तहाँ से दूर
आँखें चुराके आपने अफ़साना कर दिया
जो हाल था ज़बाँ से क़रीब और बयाँ से दूर
है मनअ राहे इश्क़ में दैरो हरम का होश
यानी कहाँ से पास है मंज़िल कहाँ से दूर
ता अर्ज़ शौक़ में न रहे बन्दगी को लाग
इक सिजदा चाहता हूँ तेरे आस्ताँ से दूर
'फ़ानी' दकिन में आके ये उक़दा खुला कि हम–
हिन्दोस्ताँ में रहते हैं, हिन्दोस्ताँ से दूर

× × ×

ये किस क़यामत की बेकसी है, न मैं ही अपना न यार मेरा
न ख़ातिरे बेक़रार मेरी न दीदए अश्क़ बार मेरा
निशाने तुरबत अयाँ नहीं है नहीं कि बाक़ी निशाँ नहीं है
मज़ार मेरा कहाँ नहीं है, कहीं नहीं है, मज़ार मेरा

× × ×

यास ने दर्द ही नहीं, हक़ तो ये है दवा भी दी
फ़ानीए नाउम्मेद को मौत का आसरा दिया

× × ×

क्या-क्या गिले न थे कि इधर देखते नहीं
देखा तो कोई देखने वाला नहीं रहा.

× × ×

दुनिया मेरी बला जाने मँहगी या सस्ती है
मौत मिले तो मुफ़्त न लूँ हस्ती की क्या हस्ती है
आबादी भी देखी है, वीराने भी देखे हैं
जो उजड़े और फिर न बसे दिल वो निराली बस्ती है
ख़ुद जो न होने का हो अदम क्या उसे होना कहते हैं
नेस्त न हो तो हस्त नहीं ये हस्ती क्या हस्ती है
अज़िज़ गुनाह के दम तक हैं अस्मते कामिल के जलवे
पस्ती है तो बलन्दी है, राज़ बलन्दी पस्ती है
जान-सी शै बिक जाती है एक नज़र के बदले में
आगे मर्ज़ी गाहक की इन दामों तो सस्ती है
वहशते दिल से फिरना है, अपने ख़ुदा से फिर जाना
दीवाने ये होश नहीं, ये तो होश परस्ती है
जग सूना है तेरे बग़ैर आँखों का क्या हाल हुआ
जब भी दुनिया बसती थी, अब भी दुनिया बसती है
आँसू थे सो ख़ुश्क हुए, जी है कि उमड़ा आता है,
दिल पे घटा-सी छायी है, खुलती है न बरसती है
दिल का उजड़ना सहल सही बसना सहल नहीं ज़ालिम
बस्ती बसना खेल नहीं, बसते बसते बसती है

× × ×

यह धुन है तेरी या ध्यान है तेरा जाने इसे क्या कहते हैं,
अब होशो हवास भी आठ पहर कुछ खोए हुए-से रहते हैं
अच्छा है अगर दो आग के दरिया आँसू बनकर बहते हैं
आँखों में तो रह कर ये कितने तूफ़ान उठाये रहते हैं
तू और कहीं हम और कहीं मुमकिन जो न था वह मुमकिन है
जब सुनते थे तो डरते थे, अब पड़ती है तो सहते हैं

× × ×

नाकाम है तो क्या है कुछ काम फिर भी कर जा
मरदानावार जी और मरदाना वार मर जा
दुनिया के रंजो राहत कुछ हों तेरी बला से
दुनिया की हर अदा से, मुँह फेरकर गुज़र जा
इस बहरे बेकिराँ में साहिल की जुस्तजू क्या
किश्ती की आरज़ू क्या डूब और पार कर जा

× × ×

हाँ बाद ख़िज़ाँ बहार आ जाती है,
एक लमहे ऐश बाद ग़म लाती है,
एक अपनी ही ईद फिर न पलटी वरना
अब तक रमज़ान के बाद ईद आती है

× × ×

हर शै में निगाहे शौक़ पाती है तुझे,
दूरी गोया क़रीब लाती है तुझे
फूलों की महक याद दिलाने वाले
फूलों की महक याद दिलाती है तुझे

× × ×

चाहे से बदलती है मुसीबत भी कहीं,
छिपती है छिपाये से हक़ीक़त भी कहीं
ग़म मय से ग़लत न कर कि ग़म क़िस्मत है
पलटी है ग़लत किये से क़िस्मत भी कहीं

× × ×

दुनिया कहीं दोज़ख़ है, कहीं खुल्दे बरीं
दिल है वही एक शाद है एक हज़ीं
यह ज़र्रा चमक उट्ठा वह तारीक हुआ,
जम कर न रही शुआए ख़ुरशेद कहीं

× × ×

ना आक़बत अन्देश क़यामत को समझ
' मज़लूम से डर ख़ुदा की आदत को समझ
ये अर्श को सौ वार हिला आई है,
आवाज़ शकिस्त दिल की ताक़त को समझ

× × ×

पा लिया ज़ौक़े तलब ने मावराए दिल मुझे
अब मुझे मंज़िल ने खोया मिल गयी मंज़िल मुझे
याद अहदे बेख़ुदी जब तू ही तू था मैं न था
वो भी दिन थे, जब कोई मुशकिल न थी मुशकिल मुझे

× × ×

आह बुतों पर दिल क्या आया हाथ ही से नादान गया
ख़ैर बला से दिल ही जाता जान गयी-ईमान गया

× × ×

दिल हो वो ख़ानमाँ ख़राब नहीं,
जिसको तौफ़ीक़े इज़तराब नहीं
मैं ही अपना हिजाब हूँ वरना,
तेरे मुँह पर कोई नक़ाब नहीं

× × ×

आके तमाशागाह जहाँ में दादे तमाशा क्या चाहूँ
याँ हर ज़र्रा कहता है मैं ज़र्रा नहीं एक दुनिया हूँ

× × ×

अजल से है दिले मायूस को उम्मेदे आसायश,
मेरी डूबो हुई किश्ती को साहिल की तमन्ना है

× × ×

तकमील बशर नहीं है सुल्ताँ होना,
या सफ़ में फ़रिश्तों की नुमायाँ होना

तक्मील है अजज़ वन्दगी का अहसास,
इन्सान की मैराज है इन्साँ होना

× × ×

दिल हो हमा जोश ज़िन्दगानी यह है,
मायूस न रहिए कामरानी यह है,
हर फ़तह की बुनियाद है, इन्कारे शकिस्त
मानूस हो ग़म से शादमानी यह है

जोश

कोहिस्तानी औरत

यह उवलती औरतें इस चिलचिलाती धूप में
संग असवद की चटानें आदमी के रूप में
चाल जैसे तुंद चश्मे त्योरियाँ जैसे ग़िज़ाल
आरिज़ों में जामुनों का रंग आँखें वेमिसाल
औरतें हैं या कि हैं वरसात की रातों का ख़्वाब
फट पड़ा जिन पै कि तूफ़ाँख़ेज़ पथरीला शबाब
जिस्म है कुछ इस क़दर ठोस अलहफ़ीज़ो अलअमाँ
लीजिए चुटकी तो छिल जाएँ ख़ुद अपनी उँगलियाँ
मछलियाँ शानों की उभरी-सी घटी-सी काकुलें
आहनी फ़ौलाद के पट्ठे सलाख़ों की रगें
दीद के क़ाविल हैं इन काफ़िर वुतों का रंगो रूप
तप चुकी है जिसमें वारिश डस चुकी है जिसको धूप

इन नथाते कोह की कड़ियल जवानी अलअमाँ
पत्थरों का दूध पी-पीकर हुई है जो जवाँ
कंकड़ों के फ़र्श पर दुनिया सुलाती है जिन्हें
आँधियों के पालने में नींद आती है जिन्हें
क्या ख़बर कितने दिलों की जोश पामाली हुई
इन अदाओं से कि तूफ़ानों की हैं पाली हुई

× × ×

मालिन

आ रही है बाग़ में मालिन वो इठलाती हुई
मुस्कराने में लबों से फूल बरसाती हुई
बार-बार आँखें उठाती साँस लेती तेज़-तेज़
रस जवानी की भरी पलकों से टपकाती हुई
फूल हैं आँचल में आँचल लोटता है दोश पर
और आँचल पर घनी ज़ुल्फ़ें हैं लहराती हुई
जोश कोई पूछे इस गुल पैरहन मालिन का नाम
आ रही है ग़ुंचए दिल को जो चटकाती हुई

× × ×

अहले चमन में धूम थी योमे सईद की
मुफ़लिस के दिल में थी न किरन भी उमीद की
इतने में और चर्ख़ ने मिट्टी पलीद की
बच्चे ने मुस्करा के सदा की जो ईद की
फ़र्ते मेहन से नब्ज़ की रफ़्तार रुक गयी
माँ-बाप की निगाह उठी और झुक गयी
दोनों हुजूम के ग़म से हम आग़ोश हो गये
एक दूसरे को देख के ख़ामोश हो गये
—मुफ़लिस की ईद

× × ×

.ख़ुरशेद तुलूअ हो रहा है, अफ़साना शुरूअ हो रहा है
गर्दूं की जबीं दमक रही है, पौदों की कमर लचक रही है
फूटी है किरन जो तिलमिलाती, शबनम की फड़क रही है छाती
जागे हैं तयूर चहचहाते, चौंके हैं हसीन कसमसाते,
लाई है नसीम बूए गेसू, गलियों में मचल रही है .ख़ुशबू

—सूर्योदय

× × ×

कौसरो गंगा को इक मरकज़ पै लाने के लिए
एक संगम मैं बना दूँगा ज़माने के लिए
एक दीने नौ की लिक्खूंगा किताबे ज़रफ़िशाँ
सब्त होगा जिसकी ज़रीं जिल्द पर 'हिन्दोस्ताँ'
फिर उठूँगा अब्र के मानिन्द बल खाता हुआ
घूमता फिरता गरजता गूँजता गाता हुआ
वलवलों से बर्क़ के मानिन्द लहराया हुआ
मौत के साये में रहकर मौत पर छाया हुआ

× × ×

शेर की वहदों में मुमकिन ही नहीं हुस्ने क़बूल
शायरे हिन्दोस्ताँ है अस्ल में जंगल के फूल
जिसके गिर्दा पेश रहता है बहायम का हुजूम
रौंदते हैं जिसको चौपाए झुलसती है समूम
जुहल का दरिया है और नाक़दरियों की लहर है
शायरे हिन्दोस्ताँ होना .ख़ुदा का क़हर है

× × ×

बेकस बीमार

मौत के बिस्तर पर एक दोशीज़ा है लेटी हुई,
जिसने देखी हैं अभी चौदह बहारें उम्र की

चहरए गुलरंग है, इस तरह बीमारी से फ़क़
झुटपुटे के आख़िरी लमहे की हो जैसे शफ़क़
चल रही है नब्ज़ यूँ उठती है जब रह-रह के कूक
फिलसफ़ी के क़ल्ब में जैसे मचलते हों शकूक
कमसिनी के वलवले इस तरह हैं मजरूहे यास
शहद ख़ालिस में कोई जिस तरह हल कर दे खटास
यों घिसाते रंग-रोग़न है उलटने के क़रीब
जैसे अंगारों पे बासी दूध फटने के क़रीब
रुख़ की जो यों मुज़महिल है रौ में महसूसात की
हल्की-फीकी चाँदनी जिस तरह पिछली रात की

× × ×

किसान

दौड़ती है रात को जिसकी नज़र अफ़लाक पर
दिन को जिसकी उँगलियाँ रहती हैं नबज़े ख़ाक पर
टोकरा सर पर बग़ल में फावड़ा त्योरी पे बल
सामने बैलों की जोड़ी दोश पर मज़बूत हल

× × ×

डूबता है ख़ाक में जो रूह दौड़ाता हुआ
मुज़महल ज़र्रों की मूसीक़ी को चौंकाता हुआ
जिसकी ताबिश में दरख़शाने हिलाले ईद की
ख़ाक़ के मायूस मतले पर किरन उम्मीद की
जिसका मस ख़ाशाक में बुनता है एक चादर महीन
जिसका लोहा मानकर सोना उगलती है ज़मीन
अपनी दौलत को जिगर पर तीर ग़म खाते हुए
देखता है मलिक दुश्मन की तरफ़ जाते हुए

सीमोज़र नानोनमक, आबो गिज़ा कुछ भी नहीं
घर में एक ख़ामोश मातम के सिवा कुछ भी नहीं

× × ×

एक दोशोज़ा सड़क पर धूप में है बेक़रार
चूड़ियाँ बजती हैं, कंकड़ कूटने से बार-बार
चीथड़ों में दीदनी है, रूए रंगीने शबाब
अब्र के आवारा टुकड़ों में हो जैसे माहताब
हुस्न से मजबूर कंकड़ कूटने के वास्ते
दस्त नाज़ुक और पत्थर तोड़ने के वास्ते

× × ×

फ़िक्र से झुक जाय वह गरदन तुफ़ ऐ लैलो निहार
जिसमें होना चाहिए फूलों का एक हलका-सा हार
भीक में वह हाथ उट्ठे इल्तजा के वास्ते
जिनको क़ुदरत ने बनाया हो हिना के वास्ते
नाज़ुकी से जो उठा सकती न हों काजल का बार
उन सुबुक पलकों पे बैठे राह का बोझल ग़ुबार
नाज़नीनों का ये आलम मादरे हिन्द आह-आह
किसके जोरे नारवाँ ने कर दिया तुझको तबाह
हुन बरसता था कभी दिन रात तेरी ख़ाक पर
सच बता ऐ हिन्द तुझको खा गयी किसकी नज़र
बाग़ तेरा क्यों जहन्नुम का नमूना हो गया
आह क्यों तेरा भरा दरबार सूना हो गया

× × ×

ख़ाके वतन

आह ऐ ख़ाके वतन ऐ सुरमये नूरे नज़र
आह ऐ सरमाअए आसाइशे जानो जिगर

तेरे दामन में शिगुफ़्ता थे कभी .कुदरत के फूल
गुँध रहे थे तेरी चोटी में कभी वहदत के फूल
लोटता शब-भर क़मर था सब्ज़ाज़ारों में तेरे
खेलने आता था सूरज आबशारों में तेरे
जलवए नूरे अज़ल को आह तू तन्वीर थी
.खुल्द का देवी थी तू इफ्फ़त की इक तस्वीर थी
तू उठी थी जिससे वह खुल्देबरों की ख़ाक थी
सुरमए चश्मे अज़ल तेरी ज़मीं को ख़ाक थी

× × ×

फूलों का कुंज दिलकश भारत में इक बनायें
हुब्बे वतन के उसमें पौदे नये लगायें
.खूने जिगर से सींचें हर नख़्ले आरज़ू क
अश्कों से बेल-बूटों की आबरू बढ़ायें
एक-एक गुल में फूँकें रूहे शमीम वहदत
एक-एक कली को दिल के दामन से दें हवायें
फिरदौस का नमूना हो अपना कुंज दिलकश
सारे जहाँ की जिसमें हों जलवागर फ़िज़ायें
मुर्ग़ाने बाग़ बनकर उड़ते फिरें चमन में
नग़मे हों रूह अफ़ज़ा और दिलरुबा सदायें
हुब्बे वतन के लब पर हों जाँफ़िज़ा तराने
शाख़ों पै गीत गायें फूलों पै चहचहाएँ
इस कुंज दिलनशीं में क़ब्ज़ा न हो ख़िज़ाँ का
जा हो गुलों का तख़्ता तख़्ता हो इक जिना का
बुलबुल को हो चमन में सैयाद का न खटका
.खुश-.खुश हों शाख़े गुल पर ग़म हो न आशियाँ का
हुब्बे वतन का मिलकर सब एक राग गायें
लहजा जुदा हो गर्चे मुर्ग़ाने नग़माख़्वाँ का

मुर्गाने बाग़ का हो इस शाख़ पर नशेमन
पहुँचे न हाथ जिस तक सैयादो आस्माँ का
मिल-मिल के हम तराने हुब्बे वतन के गायें
बुलबुल हैं जिस चमन के गीत उस चमन के गायें

× × ×

ऐ काश तुझसे हँस कर मैं हम कलाम होता
रोज़े में साथ तेरे महवे ख़राम होता
होता किनारा जमना और वक़्ते शाम होता
औ' चाँद आस्माँ पर बालाए बाम होता
तू मुझको प्यार करती मैं तुझको प्यार करता
क़दमों पे जान शीरीं तेरे निसार करता

× × ×

सती

यह तने नाज़ुक तेरा यह शोलहाए आतशीं
यह चिता की आतिशे सोज़ाँ यह जिस्मे नाज़नी
ख़ाक होकर भी तेरे दाग़े जिगर बुझते नहीं
आह तेरी राख के बरसों शरर बुझते नहीं
कब गवारा आह है सोज़े ग़मे शौहर तुझे
है हर इक तारे नफ़स इक शोलए मुज़तर तुझे
आग के वह हाय शोले और वो मुखड़ा चाँद-सा
लब पे कम-कम शोख़िए बर्क़े तबस्सुम का अदा
एक मेला-सा लगा रहता तेरे मन्दिर में है
महव ख़्वाबे जाँफ़िज़ाँ तू पहलुए शौहर में है
यादगारे सोज़ उल्फ़त हैं ग़मे शौहर के दाग़
जल रहे तेरे शिवाले में हैं या घी के चिराग़

× × ×

किसी मस्ते ख़्वाब का है अबस इन्तज़ार सोजा
कि गुज़र गयी शब आधी दिले बेक़रार सोजा
अभी तू नहीं है लायक़ इस आशिक़ी के क़ाबिल
यह तपिश का आह शेवा न कर अख़्तयार सोजा
न तड़प ज़मीं पै ज़ालिम तुझे गोद में उठा लूँ
तुझे सीने से लगा लूँ तुझे कर लूँ प्यार सोजा
तुझे पहला साबिक़ा है शबे ग़म बुरी बला है
कहीं मर मिटे न ज़ालिम दिले बेक़रार सोजा

जिगर

जो ज़ीस्त को न समझे जो मौत को न जाने
जीना उन्हीं का जीना, मरना उन्हीं का मरना
साहिल के लब से पूछो दरिया के दिल से पूछो
इक मौजे तहनशीं का मुद्दत के बाद उभरना
अश्क़ों को भी यह जुरअत अल्लाह रे तेरी क़ुदरत
आँखों तक आते-आते फिर दिल में जा ठहरना
पे जाने नाज़ आजा आँखों की राह दिल में
इन ख़ुश्क नद्दियों से मुशकिल है क्या गुज़रना
हम बेख़ुदाने ग़म से यह राज़ कोई सीखे
जीना मगर न जीना, मरना मगर न मरना

× × ×

सितम का अदद मुस्तहक़ हो गया
मेरा दिल सरापा क़लक़ हो गया

सुनाने चले थे, उन्हें हाले दिल
नज़र मिलते हो रंग फ़क़ हो गया
जो कुछ बच रहा था मेरा ख़ूने दिल
वही आस्माँ पर शफ़क़ हो गया
छिपाये हुये थे तेरा राज़े इश्क़
मगर अब तो सोना भी शक़ हो गया
घड़ी-भर में ना आशना हो गया
न जाने मेरे दिल को क्या हो गया
धड़कने लगा दिल नज़र झुक गयी
कभी उनसे जब सामना हो गया
मेरे सर पै अहसान है इश्क़ का
मेरा रंग ही दूसरा हो गया
नुमायाँ हैं चेहरे से आसारे ख़ुश्क
जिगर आज से बाख़ुदा हो गया

× × ×

कभी शाख़ो सब्ज़ो बर्ग पर कभी ग़ुंचओ गुलो ख़ार पर
मैं चमन में चाहे जहाँ रहूँ मेरा हक़ है फ़स्ले बहार पर
मुझे दें न गैज़ में धमकियाँ गिरें लाख बार ये बिजलियाँ
मेरी सल्तनत यही आशियाँ मेरी मिल्कियत यही चार पर

× × ×

ये कमाले इश्क़ की साज़िशें ये जमाले हुस्न की नाज़िशें
ये इनायतें ये नवाज़िशें मेरी एक मुश्ते ग़ुबार पर
मेरी सिम्त से उसे ऐ सबा, ये पयामे आख़िरे ग़म सुना
अभी देखना हो तो देख जा कि ख़िज़ाँ है अपनी बहार पर

× × ×

जब अपना-अपना ग़म अहबाब से अहबाब कहते हैं
बहुत बेताब सुनते हैं, बहुत बेताब कहते हैं

ज़बाने आप में जिसको दिले बेताब कहते हैं
उसे हमसाज़ उसी को साज़ की मिज़राब कहते हैं
मुहब्बत बहती गङ्गा है, नहा ले जिसका जी चाहे
न वे पाया बताते हैं न हम पायाब कहते हैं
ज़माने-भर की दौलत को ग़मे जानाँ से क्या निस्बत
यही न्यामत है वो न्यामत जिसे नायाब कहते हैं

× × ×

इब्तदा यह थी कि था जीना मुहब्बत में मुहाल
इन्तहा यह है कि अब मरना भी मुश्किल हो गया

× × ×

मैं हुआ हुशियार जितना मुझसे वो ग़ाफ़िल हुआ
दिल सरापा ग़म बना जब मैं सरापा दिल हुआ

× × ×

दमे अख़ीर भी उनका ये अहतराम हुआ
उठे न हाथ तो आँखों ही से सलाम हुआ

× × ×

यह सोज़े निहाँ नहीं है दिल में, जलता है चराग़ बेकसी का
हसरत का लहू भरा है जिसमें, वह जाम हूँ दौरे आख़िरी का

× × ×

लेके ख़त उनका किया ज़ब्त बहुत कुछ लेकिन
थरथराते हुए हाथों ने भरम खोल दिया

× × ×

पीरी भी तमाम होने आई, दिन ढल चुका शाम होने आई

× × ×

कहने-सुनने की ग़मे इश्क़ हाजत ही नहीं
आँख से टपकेगी जो दिल में मुहब्बत होगी

× × ×

आलम तो है दीवाना जिगर हुस्न की ख़ातिर
तू अपने लिए हुस्न को दीवाना बना दे

× × ×

अज़ल ही से चमन बन्दे मुहब्बत. यही नैरंगियाँ दिखला रहा है
कली कोई जहाँ पर खिल रही है, वहीं एक फूल भी मुर्झा रहा है

× × ×

मुहब्बत में एक ऐसा वक़्त भी दिल पर गुज़रता है
कि आँसू .ख़ुश्क हो जाते हैं, तुग़यानी नहीं जाती

× × ×

वो कब के आए भी औ' गये भी नज़र में अब तक समा रहे हैं
ये चल रहे हैं, वो फिर रहे हैं, ये आ रहे हैं, वो जा रहे हैं
वही क़यामत है क़द्दे बाला, वही है सूरत वही सरापा
लबों को .जुम्बिश निगह को लर्ज़िश खड़े हैं और मुस्करा रहे हैं
वही लताफ़त वही नज़ाकत वही तबस्सुम वही तरन्नुम
मैं नक़्शे हिरमाँ बना हुआ था, वो नक़्शे हैरत बना रहे हैं

× × ×

इलाही तर्के मुहब्बत भी क्या मुहब्बत है
भुलाते हैं उन्हें वह याद आये जाते हैं

× × ×

यह इश्क नहीं आसाँ इतना ही समझ लीजे
एक आग का दरिया है और डूब के जाना है

× × ×

तूने जिस अश्क पर नज़र डाली
जोश खाकर वही शराब हुआ

× × ×

जो पड़ी दिल पे सह गये लेकिन
एक नाज़ुक-सी बात ने मारा

× × ×

ख़बर नहीं मुझे मैं क्या हूँ आरज़ू क्या है
किसी ने जब से यह समझा दिया कि तू क्या है

× × ×

अपना ज़माना आप बताते हैं अहले दिल
हम वह नहीं कि जिनको ज़माना बतायेगा
मुझ नातवाने इश्क़ को समझा है तुमने क्या
दामन पकड़ लिया तो छुड़ाया न जायगा

× × ×

उससे भी शोख़तर हैं उस शोख़ की अदाएँ
कर जायँ काम अपना लेकिन नज़र न आएँ

× × ×

जनूने मुहब्बत यहाँ तक तो पहुँचा
कि तर्के मुहब्बत किया चाहता है

× × ×

मजबूरी ए कमाले मुहब्बत तो देखना
जीना नहीं क़बूल जिए जा रहा हूँ मैं

सीमाब

दिल की बिसात क्या थी निगाहे जमाल में.
एक आइना था टूट गया देख-भाल में

× × ×

दुनिया है ख़्वाब हासिले दुनिया ख़याल है
इन्सान ख़्वाब देख रहा है ख़याल में

× × ×

उम्रे दो रोज़ा वाक़ई ख़्वाबो ख़याल थी
कुछ ख़्वाब में गुज़र गई बाक़ी ख़याल में

× × ×

उम्रे दराज़ माँग के लाए थे चार दिन
दो आरज़ू में कट गये, दो इन्तज़ार में

× × ×

अगर है ज़ौके तमाशा तो बन्द कर आँखें
जहाँ निगाह नहीं है वहाँ हिजाब नहीं

×. × ×

हमारी ख़ाने वीरानी ज़माने पर अयाँ क्यों हो
जले जितना नशेमन सुर्ख़ उतना आसमाँ क्यो हो

× × ×

मिटा दो, खाक़ करदो, फूँक दो कर दो फ़ना लेकिन
हमारा जज़बए फ़ितरी कहीं बरबाद होता है

× × ×

न कली है वज़हे नज़र कशी न कमल के फूल से ताज़गी
फ़क़त एक दिल की शिगुफ़्तगी सबबे निशाते बहार है

× × ×

पहले ख़याले ख़्वाब से था तालिबे सकूँ
अब ख़्वाब ढूँढ़ता है, पनाहें ख़याल की

× × ×

ज़िन्दगी दरियाए बे साहिल है, और किश्ती ख़राब
मैं तो घबरा के दुआ करता हूँ, तूफ़ाँ के लिए

× × ×

एक जहाँ मेरा शरीके आरज़ू महफ़िल में है
काश वो तेरी तमन्ना हो जो मेरे दिल में है

× × ×

ख़ाकस्तरे परवाना में जो सोज़ निहाँ है
जब चाहे फिर उसे ख़ाक से परवाना बना दे
ऐ शमा यह परवाने को हँस-हँस के जलाना
क्या हो जो तुझे भी कोई परवाना बना दे

× × ×

हर चीज़ पर बहार हर एक शै पै हुस्न था
दुनिया जवान थी मेरे अहदे शबाब में

× × ×

तअज्जुब क्या लगी गर आग ऐ सीमाब सीने में
हज़ारों दिल में अंगारे भरे थे लग गयी होगी

× × ×

क्यों हँसी तू ऐ अजल फ़ानी अगर समझा मुझे
एक दिन सबको फ़ना है क्या तुझे और क्या मुझे
है हसूले आरज़ू का राज़ तर्के आरज़ू
मैंने दुनिया छोड़ दी तो मिल गयी दुनिया मुझे
देखते ही देखते दुनिया से मैं उठ जाऊँगा
देखती की देखती रह जायगी दुनिया मुझे

यों ही हम तुम घड़ी-भर को मिला करते तो बेहतर था
ये दोनों वक़्त जैसे रोज़ मिलते हैं, जुदा होकर

× × ×

एक वह शमा न होगा जो बुझो जल-जलकर
शाम भी होगी ज़माने में सहर भी होगी

× × ×

आह से हिन्दोस्ताँ यह तेरी पस्ती वह शबाब
कुछ तेरी तक़दीर में ही फ़ितरतन है इनक़िलाब
गो बज़ाहिर तू निशाते नुदरते अय्याम है
फ़िल हक़ीक़त बेसकूँ बेचैन बेआराम है
वह बहारें वह चमन वह गुलशन ईजादी कहाँ
ऐ गुलामाबाद अब वह तेरी आज़ादी कहाँ
बहरोबर तेरे वही हैं और तू बेइक़तदार
एक ज़र्रे एक क़तरे पै नहीं है इख़्तयार
अब भी मैदानों में बिछती हैं बिसाते माहेताब
तेरी मौजे ख़ाक से अब भी बरसते हैं गुलाब
रूह से ख़ाली है लेकिन पैकरे मुर्दा तेरा
जलवा पिज़मुर्दा है तेरा बातिन अफ़सुर्दा तेरा
जैसे शमए सुबहे महफ़िल, जैसे छुपना आफ़ताब
जैसे शायर का बुढ़ापा जैसे बेवा का शबाब
पस्तियों को इर्तक़ा फिर जल्वए आग़ाज़ दे
काश मुस्तक़बिल तेरा माज़ी को फिर आवाज़ दे

सरूर

सीता

हमराह वन को नाथ मुझे साथ ले चलो
देखो तुम्हारे चरनों की हूँ ख़ाक ले चलो
नाज़ुक है मेरा शीशए दिल टूट जायगा
छूटा तुम्हारा साथ तो जी छूट जायगा
घर में जो छोड़ जाओगे सीता ग़रीब को
पाओगे वन से आके न जीता ग़रीब को
वीराना होगा ख़ान ए दिल जो मेरे लिए
परवाना होंगे वन के पखेरू मेरे लिए
सूरत तुम्हारी देख के ग़म भूल जाऊँगी
सहरा के सारे रंजोअलम भूल जाऊँगी

× × ×

फूल

बच्चे ये फूल भी तो उसी सर ज़मीं के हैं
ये नन्हे-नन्हे लाल उसी नाज़नी के हैं
बाज़ारे हुस्न में ये गुलेतर अभी-अभी
आए हैं माँ की गोद से उठकर अभी-अभी
सोते हुये चमन से उठा लाई हूँ अभी
फूलों की अंजुमन से उठा लाई हूँ अभी
लोरी थी ख़्वाबे नाज़ की मौजे हवा न थी
माँ की दुआ थी जुमबिशे बादे सबा न थी
आग़ोशे नाज़ से मेरे सोकर उठे हैं ये
शबनम से हाथ-मुँह अभी धोकर उठे हैं ये

× × ×

गंगा

ओ पाक नाज़नी ओ फूलों के गहने वाली
सर सब्ज़ वादियों के दामन में रहने वाली
आई नज़र तजल्ली जब शाहिदे अज़ल की
ज़र्रों में जाके चमकी फूलों में जाके महकी
जब होंट ख़ुश्क हों और दुश्वार हो तनफ़्फ़ुस
अहबाव अपने मुँह में टपकाएँ तेरा पानी
हँसते हुये जहाँ से हम शाद काम जाएँ
दुनिया से पीके तेरी उल्फ़त का जाम जाएँ

× × ×

विधवा

ख़िज़ाँ छाई कुछ ऐसी वन के हसरत मेरे फूलों पर
कि कलियाँ रह गयीं जोवन की मेरी आह मुरझाकर
वो नाज़ुक हूँ कि है बारे गराँ फूलों का भी ज़ेवर
बनाया आह ऐसा काहिशेग़म ने मुझे लाग़र
कि मुझको ढूँढ़ती फिरती है बिस्तर पर कज़ा मेरी

× × ×

फ़लक ने छीन लीं मुझसे शहावी चुँदरियाँ मेरी
पहनती सुर्ख़ जोड़ा मैं यह क़िस्मत थी कहाँ मेरी
कहाँ का शौक़े ज़ीनत जल रही हैं, हड्डियाँ मेरी
गिरातीं मुझ पे अब वर्क़े सितम हैं बिजलियाँ मेरी
लगाई आग आरायश को आख़िर सोज़े नाला ने
उड़ी होटों की मिस्सी वन के आहों का धुआँ मेरी

× × ×

भारत-माता

तेरा देव-स्थान देवी दिल के काशाने में है
तेरी तस्वीरे मुक़द्दस हर सनमख़ाने में है

लक्ष्मी तू है ज़माने में उजाला है तेरा
हर कमल का फूल और पानी शिवाला है तेरा
सरसुती का रूप है, दुर्गा का है औतार तू
नुक्तो दानिश की है देवी मादरे ग़मख़्वार तू
उफ़ यह सुन्दर छवि तेरी यह साँवली सूरत तेरी
दिल के मन्दिर की है ज़ीनत मोहनी मूरत तेरी

हसरत मुहानी

चमन है गुल के लिए और गुल चमन के लिए,
वतन है मेरे लिए और मैं वतन के लिए
कहाँ वो अहदे गुज़िश्ता कहाँ वो लुत्फ़े चमन
तड़प रहा हूँ इसी लज़्ज़ते कुहन के लिए
हम आओ रिश्तए उल्फ़त को उस्तवार करें
ये तफ़रके हैं फ़क़त शेख़ो बिरहमन के लिए
यही है एक मेरे दिल की आरज़ू हसरत
जिऊँ वतन के लिए और मरूँ वतन के लिए

× × ×

लुत्फ़ की उनसे इल्तजा न करें
हमने ऐसा कभी किया न करें
मिल रहेगा जो उनसे मिलना है
लब को शरमिन्दए दुआ न करें
सब्र मुश्किल है, आरज़ू बेकार
क्या करें आशिक़ी में क्या न करें

× × ×

क़ौमों की तरक्क़ी के हैं कुछ और ही असबाब
जो डाक पै मौक़ूफ़ हैं न तार पै मौक़ूफ़

× × ×

न पा सकते जिसे पाबन्द रहकर क़ैदे हस्ती में
सो हमने बेनिशाँ होकर तुझे ओ बेनिशाँ पाया

× × ×

शब वही शब है दिन वही दिन है
जो तेरी याद में गुज़र जाये
शेर दर असल वही है हसरत
सुनते ही दिल में जो उतर जाये

× × ×

निगाहे यार जिसे आशनाए राज़ करे,
वो अपनी ख़ूबिए क़िस्मत पै क्यों न नाज़ करे
दिलों को फ़िक्र दो आलम से कर दिया आज़ाद
तेरे जुनूँ का ख़ुदा सिलसिला दराज़ करे
ख़िरद का नाम जुनूँ पड़ गया जुनूँ का ख़िरद
जो चाहे आपका हुस्ने करश्मा साज़ करे
उम्मेदवार हैं हर सिम्त आशिक़ों के गरोह
तेरी निगाह को अल्ला दिलेनवाज़ करे
तेरे करम का सज़ावार तो नहीं 'हसरत'
अब आगे तेरी ख़ुशी है जो सरफ़राज़ करे

× × ×

सर गर्मे नाज़ आपकी शाने जफ़ा है क्या
बाक़ी सितम का और अभी हौसला है क्या
गर जोशे आरज़ू की हैं, कैफ़ीयतें यही
मैं भूल जाऊँगा कि मेरा मुद्दआ है क्या

आते हैं क्यों ख़याल में मेरे वो बार-बार
इश्क़े .ख़ुशनुमा की यही इब्तदा है क्या
चल भी दिये वो छीन के सब्रो क़रारे दिल
हम सोचते रह गये ये माजरा है क्या
नज़दीक बामे यार से है नरदबाने इश्क़
ऐ दिल ये जाए हौसला देखता है क्या
मेरी ख़ता पै आपको लाज़िम नहीं नज़र
यह देखिए मुनासिबे शाने अता है क्या
देखो जिसे है राहे फ़ना की तरफ़ रवाँ
तेरे महलसरा का यही रास्ता है क्या
हसरत जफ़ाए यार को समझा जो तू वफ़ा
आईने इश्तियाक़ में यह भी रवा है क्या

× × ×

कुछ ख़ौफ़ .ख़ुदा का है न डर ख़ल्के .ख़ुदा का
क्या आये ख़याल उनको शहीदाने वफ़ा का

× × ×

हर दर्द हर मरज़ की दवा है तुम्हारे पास
आते हैं सब यहीं कि शफ़ा है तुम्हारे पास
बीमारे ग़म हैं दूर से आए हैं सुन के नाम
कहते हैं दर्दे दिल की दवा है तुम्हारे पास

× × ×

क़वी दिल शादमाँ दिल पारसा दिल
तेरे आशिक़ ने भी पाया है क्या दिल
बड़ी दरगाह का सायल हूँ हसरत
बड़ी उम्मेद है मेरी बड़ा दिल

× × ×

है इन्तहाए यास भी एक इब्तदाए इश्क़
फिर आगये वहीं पै चले थे जहाँ से हम

× × ×

सब हमारी ज़िन्दगी ही तक हैं उनके हौसले
वरना यह नाज़ो ग़रूरे दिल रुबाई फिर कहाँ
लूट ले जी-भर के हसरत लज़्ज़ते आज़ारे इश्क़
उस सितमगर का ये रंगे आस्मानी फिर कहाँ

× × ×

देखें हम भी जो तेरे हुस्ने दिलारा की बहार
इसमें नुक़सान तेरा ऐ गुले रैना क्या है
बर्क़ को अब्र के दामन में छिपा देखा है
हमने उस शोख़ को मजबूरे हया देखा है

× × ×

तासीरे बर्क़ हुस्न जो उनके सख़ुन में थी
इक लरज़िशे ख़फ़ी मेरे सारे बदन में थी
कुछ दिल ही बुझ गया है मेरा वरना आजकल
कैफ़ीयते बहार की शिद्दत चमन में थी
पर्दे से इक झलक जो वो दिखला के रह गये
मुश्ताक़ दीद और भी ललचा के रह गये
आईने में वो देख रहे थे बहारे हुस्न
आया मेरा ख़याल तो शरमा के रह गये
टोका जो बज़्म ग़ैर से आते हुए उन्हें
कहते न कुछ बना वो क़सम खा के रह गये
दावाए आशिक़ी है तो हसरत करो निबाह
ये क्या कि इब्तदा ही में घबरा के रह गये

× × ×

तेरे दर्द को जिससे निस्बत नहीं है
वो राहत मुसीबत है, राहत नहीं है
तेरे ग़म की दुनिया में ऐ जाने आलम
कोई रूह महरूमे राहत नहीं है

नूह नारवी

निखर आई, निखार आई सँवर आई सँवार आई
गुलों की ज़िन्दगी लेकर गुलिस्ताँ में बहार आई

× × ×

नाकाम मक़ासिद न रहें अहले तमन्ना
तक़दीर भी तदबीर को इमदाद अगर दे

× × ×

और तो हमने कुछ भी न जाना लेकिन इतना जान गये
दुनिया में नादान आये, नादान रहे, नादान गये
अल्ला अल्ला उसी का जलवा हम जलवे को मान गये
देखें तो क्या हाल हो अपना बेदेखे क़ुरबान गये

× × ×

हम उनसे क्यों कहें आज़ारे दुनिया मुल्तवी कर दो
तबीयत रफ़्ते-रफ़्ते ख़ूगरे ग़म होती जाती है

× × ×

कमबख़्त कभी जी से गुज़रने नहीं देती
जीने की तमन्ना मुझे मरने नहीं देती

× × ×

हुस्न के जलवों को अपने दिल में देख
लनतरानी दूर की आवाज़ है

× × ×

क़बरों के मुनाज़िर ने करवट न कभी बदली
अन्दर वही आबादी बाहर वही वीराना

× × ×

वो नादिम हुए क़त्ल करने के बाद
मिली ज़िन्दगी मुझको मरने के बाद
रहा ज़िन्दा दर गोर मरने से क़ब्ल
.खुदा जाने क्या होगा मरने के बाद

× × ×

मैं भी निगाहे लुत्फ़ का उम्मेदवार हूँ
मेरी तरफ़ भी चश्मे इनायत करे कोई

× × ×

क्या मुसर्रत का ठिकाना क्या .खुशी का एतबार
एक के घर से निकलकर एक के घर में रहा

× × ×

यह सब क़सूर हमारी निगाहे शौक़ का है
वह दिल में रहता है लेकिन नज़र नहीं आता

× × ×

महफ़िले आलम की रौनक़ में कभी मुमकिन नहीं
चल बसे मैख़्वार लेकिन दौर चलते ही रहे

× × ×

जहाँ में एक न एक मज़े की नयी कहानी है और हम हैं
अभी तमन्ना है और दिल है, अभी जवानी है और हम हैं
ग़रीक़ बहरे सितम न क्यों हों ये जाँफ़िशानी है और हम हैं
कि आप हैं, आपकी छुरी है, छुरी का पानी है और हम हैं

× × ×

बुलबुल का चुराया दिल नाहक़ यह ख़ामे ख़याली फूलों की
लेती है तलाशे बादे सबा सब डाली-डाली फूलों की
आलम है अनोखा कलियों का दुनिया है निराली फूलों की
अल्लाह रे इस .खुशहाली पर यह .खुश इक़बाली फूलों की
मिसले बुलबुल नकहत से छुटे दम-भर को चमन मुमकिन ही नहीं
होती है तसद्दुक़ फूलों पर .खुद रहनेवाली फूलों की

माना कि लुटाया रातों को गुलज़ार में मोती शबनम ने
जब हुई सुबह सूरज निकला तो जेब थी ख़ाली फूलों की
गुलचीं की भी नज़रें पड़ती हैं सरसर के भी झोंके आते हैं
हो ऐसे में किससे क्योंकर कब तक रखवाली फूलों की
आती है ख़िज़ाँ अब रुख़सत कर ज़िन्दा जो रहे फिर आएँगे
हम से तो न देखी जायेगी मालो पामाली फूलों की
हर ज़र्रे पर हर पत्ते पर .कुरबानो तसद्दुक़ करने को
नकहत का ख़ज़ाना खोल दिया हिम्मत है ये आली फूलों की
फिर रुत बदली फिर अब्र उठा फिर सर्द हवाएँ चलने लगीं
हो जायँ परी बन जायँ दुल्हन अब डाली-डाली फूलों की
हारों में गुँधे जकड़े भी गये गुलशन भी छुटा सीना भी छिदा
पहुँचे मगर उनकी गरदन तक यह .खुश इक़बाली फूलों की
बुलबुल को ये समझा दे कोई क्यों .खून के आँसू रोती है
उड़ जायगी सुर्ख़ी फूलों से मिट जायगी लाली फूलों की

× × ×

सैकड़ों मिलते हैं यूँ तो हमें मिलने वाले
जिससे मिल जाय दिल ऐसा नहीं मिलता कोई

फ़िराक़

दुनिया को इन्क़लाब की याद आ रही है आज
तारीख़ अपने आपको दुहरा रही है आज
वह सर उठाये मौजे फ़ना आ रही है आज
मौजे हयात मौज से टकरा रही है आज
कानों में ज़लज़लों की धमक आ रही है आज
हर चीज़ कायनात की थर्रा रही है आज
झपका रही है देर से आँखें हवाए दहर
कौनो मकाँ को नींद-सी कुछ आ रही है आज
हर लफ़्ज़ के मआना ओ मतलब बदल चले
हर बात और बात हुई आ रही है आज
यकसर जहाने हुस्न भी बदला हुआ-सा है
दुनियाये इश्क़ और नज़र आ रही है आज
हर-हर शकिस्त साज़ में सद लहन सरमदी
या ज़िन्दगी के गीत अजल गा रही है आज
या ज़िन्दगीए दहर थी सौगन्द मौत को
या मौत ज़िन्दगी की क़सम खा रही है आज
यह दामने अजल है कि तहरीके ग़ैब है
क्या शै हवाए दहर को सनका रही है आज
अनफ़ाए दहर लेते हैं यों साँस गरमो तेज़
जोने में जैसे देर हुई जा रही है आज
अफ़लाक की ज़र्बी भी शिकन दर शिकन-सी है
त्योरी ज़मीन की भी चढ़ी जा रही है आज
फिर छेड़ती है मौत हयाते फ़िसुर्दा को
फिर आतिशे ख़मोश को उकसा रही है आज

बरहम-सा कुछ मिज़ाजे अनासिर है इन दिनों
और कुछ तबीअत अपनी भी घबरा रही है आज
एक मौजे दर्द सीने में लरज़ाँ है इस तरह
नागिन-सी जैसे शीशे में लहरा रही है आज
बीते जुगों की छाँव है इमरोज़ पुर फ़िराक़
हर चीज़ इक फ़िसाना हुई जा रही है आज

× × ×

इसी दिल की क़िस्मत में तनहाइयाँ थीं
कभी जिसने अपना पराया न जाना

× × ×

पहले भी रो लेते थे कुछ दिन को कुछ रातों को
दिल ही डूबा जाता है आग लगे बरसातों को

× × ×

ख़याल को बेअसर न जानो अमल की चिनगारियाँ हैं इसमें
कि आज ज़ुल्मत सराय दिल में जो नूर है कल वो नार होगा

× × ×

न समझने की ये बातें हैं न समझाने की
ज़िन्दगी उचटी हुई नींद है दीवाने की

× × ×

शोरिशे कायनात है ख़ामोशी
मौत है ज़िन्दगी के दोश-बदोश

× × ×

न अज़ल है कुछ न अबद है कुछ वही मौत है वही ज़िन्दगी
जिसे वक़्त कहते हैं अहले दिल वो फ़ना भी है वो बक़ा भी है

× × ×

यह समझ कर रह गुज़ारे जुस्तजू में रख क़दम
इसका पाना सहल इसका ढूँढ़ना दुश्वार है

× × ×

अब दौरे आस्माँ है न दौरे हयात है
ऐ दर्दे हिज्र तू ही बता कितनी रात है

तिलोकचन्द 'महरूम'

नूरजहाँ का मज़ार

दिन को भी यहाँ शब की सियाही का समाँ है
कहते हैं, ये आराम गहे नूरे जहाँ है
मुद्दत हुई वो शमा तहे ख़ाके निहाँ है
उठता मगर अब तक सरे मरक़द से धुआँ है
जलवों से अयाँ जिनको हुआ तूर का आलम
तुरबत पे है उनके शबे दंजूर का आलम
ऐ हुस्ने जहाँसोज़ कहाँ हैं वो शरारे
किस बाग़ के गुल हो गये किस अर्श के तारे
क्या बन गये अब किरमके शब ताब वे सारे
हर शाम चमकते हैं जो रावी के किनारे
या हो गये वे दाग़ जहाँगीर के दिल के
क़ाबिल ही तो थे आशिक़े दिलगीर के दिल के
तुझ-सो ये मलिका के लिए बारह दरी है
ग़ालीचा सरे फ़र्श है, कोई न दरी है
क्या आलमे बेचारगी पे ताजवरी है
दिन को यहीं बिसराम यहीं शबे बसरी है

ऐसी किसी जोगन की भी कुटिया नहीं होती
होती हो मगर यों सरे सहरा नहीं होती
तावीज़े लहद है ज़बरो ज़ेर ये अन्धेर
ये दौरे ज़माने के उलट-फेर ये अन्धेर
आँगन में पड़े गर्द के हैं ढेर ये अन्धेर
ऐ गरदिशे अय्याम ये अन्धेर ! ये अन्धेर !!
माहए फ़लके हुस्न को ये बुर्ज मिला है
ऐ चर्ख़ तेरे हुस्ने नवाज़िश का गिला है

× × ×

हसरत है टपकती दरो दीवार से क्या-क्या
होता है असर दिल पै इन आसार से क्या-क्या
नाले हैं निकलते दिले अफ़गार से क्या-क्या
उठते हैं शरर आह शरे बार से क्या-क्या
ये आलमे तनहाई ये दरिया का किनारा
है तुझ-सी हसीना के लिए हू का नज़ारा
चौपाये जो घबराते हैं गर्मी से तो अक्सर
आराम लिया करते हैं, इस रौज़े में आकर
और शाम को बालाई सियाखानों से शप्पर
उड़-उड़ के लगाते हैं दरो बाम के चक्कर
मामूर है यों महफ़िले जानाना किसी की
आबाद रहे गोरे ग़रीबाना किसी की
आरास्ता जिनके लिए गुलज़ारो चमन थे
जो नाज़ुकी में दाग़ दहे बर्गे समन थे
जो गुल रुख़ो गुल पैरहनो गुंचा दहन थे
शादाब गुले तर से कहीं जिनके बदन थे
पिज़मुर्दा वो गुल दब के हुए ख़ाक के नीचे
ख़्वाबीदा हैं ख़ारो ख़सो ख़ाशाक के नीचे

रहने के लिए दीदओ दिल जिनके मकाँ थे
जो पैकरे हस्ती के लिए रूहे रवाँ थे
महबूब दिले ख़ल्क़ थे जाँबख़्श जहाँ थे
थे यूसुफ़े सानी कि मसीहा ए ज़मा थे
जो कुछ वे कहीं थे मगर अब कुछ भी नहीं हैं
टूटे हुए पिंजरे ये पड़े ज़ेरे ज़मीं हैं।
दुनिया का ये अंजाम है देख ऐ दिले नादाँ
हाँ भूल न जाए तुझे ये मदफ़ने वीराँ
बाक़ी हैं न वो बाग़ न वो क़स्र न ईवाँ
आराम के असबाब न वो ऐश के सामाँ
टूटा हुआ एक साहिले रावी पै मकाँ है
दिन को भी जहाँ शब की सियाही का समाँ है

× × ×

अगर है मंज़ूर सरबलन्दी तो दूर नज़रों से कर बलन्दी
कि औज शम्सो क़मर ने पाया है सर को अपने झुका-झुकाकर

× × ×

समझ में आया न राज़ सनअत ज़रा भी सूरतगरे अज़ल का
बना रहा है मिटा-मिटा कर मिटा रहा है बना-बना कर

× × ×

कोई सोता हो जैसे डूबती किश्ती के तख़्ते पर
अगर कुछ है तो बस इतनी है इस दुनिया की राहत भी

× × ×

दिल मुझसे पूछता है कि जाएँगे अब कहाँ
मैं दिल से पूछता हूँ कि आए कहाँ से हम

× × ×

ज़िन्दगी नाकामियों की एक-एक मुसलसिल दास्ताँ
मौत क्या है ज़िन्दगी की दास्ताँ का ख़ातिमा

× × ×

हो दौरे ग़म कि अहदे ख़ुशी दोनों एक हैं
दोनों गुज़श्तनी है ख़िज़ाँ क्या बहार क्या

× × ×

बेदार से लिये नहीं ममकिन अगर्चे ख़्वाब
जो कुछ है ख़्वाब है दिले बेदार के लिए

सागर निज़ामी

पुजारिन

ऐ मन्दिर का राज़ पुजारिन ऐ फ़ितरत का साज़ पुजारिन
प्रेमनगर की रहने वाली हरि की बतियाँ कहने वाली
सीधी-सादी भोली-भाली बात निराली गात निराली
गर्दन में तुलसी की माला दिल में इक ख़ामोश शिवाला
होटों पर पैमाने रक़्साँ आँखों में मैख़ाने रक़्साँ

ऐ देवी का रूप पुजारिन
तेरा रूप अनूप पुजारिन

फूलों की इक हाथ में थाली मोहन मदमाती मतवाली
नीची नज़र में तिरछी चितवन मस्त पुजारिन हरि की जोगन
चाल है मस्ताना मतवाली और कमर फूलों की डाली
दिल तेरा नेकी की मंज़िल लाखों बुतख़ानों का हासिल
हस्ती तुझमें झूम रही है मस्ती आँखें चूम रही है

ऐ देवी का रूप पुजारिन
तेरा रूप अनूप पुजारिन

नूर के तड़के घाट पर आकर गंगा का सम्मान बढ़ाकर
फिर लेकर ख़ुशबूएँ सारी चन्दन जल और दूब सुपारी

मैं भी तेरा दिल भी तेरा सामाने महफ़िल भी तेरा
साग़र तेरा साक़ी तेरा तू मेरी और बाक़ी तेरा

आह भिकारिन वाह भिकारिन
माँग मुझे लिल्लाह भिकारिन

आ मैं तेरे बाल सँवारूँ नज़्ज़ारों से गाल सँवारूँ
रूह बनाकर तन में रक्खूँ आँखों की चिलमन में रक्खूँ
बन जा बज़्मे दिल की रानी इस दुनिया में कर सुल्तानी
मैं तेरा जोगी बन जाऊँ दर पर सायल बन कर आऊँ
तुझसे माँगूँ भीक सकूँ की हो जाये तकमील जनूँ की

आह भिकारिन वाह भिकारिन
माँग मुझे लिल्लाह भिकारिन

मन्दिर के पट

मन्दिर के पट खोल पुजारी पट मन्दिर के खोल
प्रेमनगर से आई मैं दासी पट मन्दिर के खोल
हीरे-मोती लाई मैं दासी पट मन्दिर के खोल
वह मोती हैं तेज से जिनके चन्द्रमा छिप जाय
वह हीरे हैं जोत से जिनकी सूरज भी शरमाय
नैनन का काँटा है इनको इस काँटे में तोल
पट मन्दिर के खोल

दो नैनन में सौ आँसू हैं दीवानी की भेंट
नैन मेरे मोटी हैं केवल भेंट यह है अन भेंट
उस मन्दिर के खोल ज़रा पट जिसमें हैं गिरधारी
वह गिरधारी जिन पर सारी दुनिया है बलिहारी

मालिन

जलवे तेरे अनोखे ग़मज़े तेरे निराले
चितवन है सीधी-सादी तेवर हैं भोले-भाले
कुहनी तक आस्तीनें आँचल कमर पै डाले
रुख़सार गोरे-गोरे यह बाल काले-काले
ओ फूल चुनने वाली

एक हाथ टोकरी पर एक हाथ है कमर पर
ढलका हुआ दुपट्टा ताजे ग़रूर सर पर
है एक नज़र क़दम पर और एक क़दम नज़र पर
क्यों यह ख़राम तेरा पामाल कर न डाले
ओ फूल चुनने वाली

नरगिस भी तक रही है चश्मे हया से तुझको
कलियाँ भी देखती हैं हुस्ने अदा से तुझको
लबरेज़ पाके काफ़िर जोशे वफ़ा से तुझको
भर कर मये नमूँ से लाते हैं फूल प्याले
ओ फूल चुनने वाली

तू फूल चुन रही है और फूल झड़ रहे हैं
बल तेरी त्योरियों में रह-रह के पड़ रहे हैं
क्या तेरी टोकरी में तारे-से जड़ रहे हैं
हसरत से बाग़ वाले फिरते हैं दिल सँभाले
ओ फूल चुनने वाली

फूलों में मैंने अपना दिल भी मिला दिया है
फूलों में मिल-मिला कर वह फूल बन गया है
आएगा काम तेरे यह तेरे काम का है
ओ फूल चुनने वाली यह फूल भी उठा ले
ओ फूल चुनने वाली

दिल के मुआवज़े में यह शै मुझे अता कर
जो तूने टोकरी में रखी है मुस्कराकर
रक्खूँगा उसको अपने पहलू में दिल बनाकर
मैं उसको दिल बनालूँ तू फूल इसे बना ले
ओ फूल चुनने वाली

श्रीकृष्ण

नन्द की कुटी में तुम मिस्ले माहताब थे
मिस्ले माहताब क्या अस्ल माहताब थे
हुस्न का शराब थे इश्क़ का शबाब थे
अपनी ख़ुद नज़ीर थे अपना ख़ुद जवाब थे
सिर्र हर जमाल थे राज़े हर जलाल थे,
हुस्न का कमाल थे इश्क़ का माल थे
आन रुख़ से परदए ज़ाहिरी उठाओ फिर
इक जहां को हुस्न का हैरती बनाओ फिर
हां उठाओ बाँसुरी बाँसुरी उठाओ फिर
ऐ गुपाल झूम कर बाँसुरी बजाओ फिर
बाँसुरी की फूंक से दिल को गुदगुदाओ फिर
प्रेम और प्रान की रीत को जगाओ फिर
ज़मज़मों की गोद से नक़्हतें बरस पड़ें
बाँसुरी की लै से फिर जिन्नतें बरस पड़ें
नज्मों कौकबो क़मर इहे राह में तो क्या
आसमाँ खिला मकाँ सद्दे राह में तो क्या
ख़ुद ही तुम कँवल बनो ख़ुद ही मुस्कराओ फिर
बूए गुल के रूप में सबके पास आओ फिर
बाँसुरी बजाओ फिर दो जहाँ पै छाओ फिर
ऐ गुपाल झूम कर बाँसुरी बजाओ फिर

हफ़ीज़ जालन्धरी

अपने मन में प्रीत बसा ले अपने मन में प्रीत

मन-मन्दिर में प्रीत बसाले ओ मूरख, ओ भोले-भाले
दिल की दुनिया कर ले रोशन अपने घर में जोत जगा ले
प्रीत है तेरी रीत पुरानी भूल गया ओ भारत वाले
भूल गया ओ भारत वाले प्रीत है तेरी रीत—बसाले

क्रोध कपट का उतरा डेरा छाया चारों खुँट अँधेरा
शेख़ बिरहमन दोनों रहज़न एक से बढ़ कर एक लुटेरा
ज़ाहिरदारों की संगत में कोई नहीं है संगी तेरा
कोई नहीं है संगी तेरा मन है तेरा मीत—बसाले

भारत माता है दुखियारी दुखियारी हैं सब नर-नारी
तूही उठाले सुन्दर मुरली तूही बनजा श्याम मुरारी
तू जागे तो दुनिया जागे जाग उठे सब प्रेम-पुजारी
जाग उठे सब प्रेम-पुजारी गायें तेरे गीत—बसाले

फ़ितरत एक आज़ार है प्यारे दुख का दारू प्यार है प्यारे
आजा असली रूप में आजा, तूही प्रेम-औतार है प्यारे
यह हारा तू सब कुछ हारा मन के हारे हार है प्यारे
मन के हारे हार है प्यारे मन के जीते जीत—बसाले

देख बड़ों की रीत न जाये सर जाये पर मीत न जाये
मैं डरता हूँ कोई तेरी जीती बाज़ी जीत न जाये
जो करना है जल्दी करले थोड़ा वक़्त है बीत न जाये
थोड़ा वक़्त है बात न जाये वक़्त न जाये बात—बसाले
अपने मन में प्रीत

× × ×

न कर ज़िक्रे नशेमन फ़िक्रे आज़ादी में ऐ हमदम
मुबादा अपने हाथों ही क़फ़स तैयार हो जाये,

× × ×

मेरी ये ज़िन्दगी है कि मरना पड़ा मुझे
एक और ज़िन्दगी की तमन्ना लिए हुए

× × ×

बिरहमन नालए नाक़ूस मस्जिद तक तू पहुँचा दे
बुरा क्या है मुअज़्ज़िन भी अगर बेदार हो जाये

× × ×

आँख कमज़र्फ़ से उस बज़्म में आँसू न रुका
एक क़तरे ने डुबोया मुझे दरिया होकर

× × ×

उमीदें आरज़ूएँ खेलती हैं यों मेरे दिल से
पलट जाती हैं मौजें जिस तरह टकरा के साहिल से

× × ×

मुहब्बत की दुनिया में सब कुछ हँसी है
मुहब्बत नहीं है तो कुछ भी नहीं है

× × ×

सहारा क्यों लिया था नाख़ुदा का
ख़ुदा भी क्यों करे इमदाद मेरी

× × ×

अह्ले नज़र कोई ख़ुद पसन्द हूँ
आप ही देखता हूँ मैं अपने हुनर को क्या करूँ

× × ×

चाँद और सितारों का ये समा क्या दिलकश और सुहाना है
अफ़सोस मुझे नींद आती है अफ़सोस मुझे सो जाना है
मालूम उमंगें भूल रही हैं दिलदारी के झूलों में
ये कच्ची कलियाँ क्या जानें कब खिलना कब मुरझाना है

———

बिस्मिल

बदला न रंगे क़ौम जो कल था वह आज है
इसका इलाज क्या हो कि यह लाइलाज है
बेपर्दा फिरती रहती हैं सड़कों पे औरतें
अब है न इनमें शर्म न अब इनमें लाज है
बिस्मिल से किस बिना पे हैं बातें ग़ुरूर की
तुम हो जो बददिमाग़ तो वह बदमिज़ाज है

× × ×

फिरते हैं क्या सोचकर वह हर तरफ़ अकड़े हुए
मज़हबी झगड़ों में जो दिन-रात हैं जकड़े हुए

× × ×

चमन में आशियाँ है और मैं हूँ
निगाहे बाग़वाँ है और मैं हूँ

बलाए नागहाँ है और मैं हूँ
ज़मीं पर आस्माँ है और मैं हूँ

मेरी तक़दीर में मंज़िल नहीं है
ग़ुबारे कारवाँ है और मैं हूँ

हुई बरबाद क्योंकर दिल की दुनिया
यही एक दास्ताँ है और मैं हूँ

ख़ुदा जाने कहाँ ले जाय मुझको
मेरी उम्रे रवाँ है और मैं हूँ

असीरीए कफ़स का क्या नतीजा
ख़याले आशियाँ है और मैं हूँ

मुझे क्या वास्ता दुनिया से बिस्मिल
मेरा हिन्दोस्ताँ है और मैं हूँ

× × ×

जो मरहले हैं दीन के उन सब से क्या ग़रज़
कालिज के पढ़ने वालों को मज़हब से क्या ग़रज़

× × ×

बशर नहीं वह फ़रिश्ता है हज़रते बिस्मिल
जो दोस्ती करे दुनिया में दुश्मनों के साथ

× × ×

सख़्त मुशकिल में तुम्हीं काम हो आने वाले
मुन्तज़िर इसलिए रहते हैं ज़माने वाले
क्यों न हासिल हो ज़माने में तुम्हारा दर्शन
दिल से जब याद करें तुमको ज़माने वाले

× × ×

दमे आख़िर हम अपनी ज़िन्दगी का राज़ क्या समझे
यह कह कर चल दिये दुनिया से दुनिया से ख़ुदा समझे

× × ×

जो किया करते हैं ग़ैबत में शिकायत बिस्मिल
ऐसे अहबाब से हो जाती है नफ़रत पैदा

× × ×

आये जहाँ में और जहाँ से गुज़र गये
अच्छे वही रहे जो बहुत जल्द मर गये

× × ×

राहत नहीं दम-भर कभी आराम नहीं
राहत की कोई सुबह नहीं शाम नहीं
क्या लिख गया क़िस्मत में यही रोज़े अज़ल
बिस्मिल को तड़पने के सिवा काम नहीं

× × ×

मोती की तरह शान से रहता हूँ मैं
दरियाए ख़यालात में रहता हूँ मैं

माने कि न माने कोई इसको विस्मिल
कहने की जो है बात वह कहता हूँ मैं

× × ×

कोई हसरत और कोई हौसला बाक़ी नहीं
मिट गया अब दिल तो दिल का वलवला बाक़ी नहीं

× × ×

तमाशा इसको समझे खेल समझे दिल्लगी समझे
बस उसकी ज़िन्दगी है, मौत को जो ज़िन्दगी समझे

× × ×

मैं असीरी में भी आज़ादी के नग़मा गाऊँगा
ऐ मेरे सैयाद तू अच्छी तरह यह जान ले

× × ×

किसी को कर नहीं सकता कोई बरबाद आलम में
जिसे वर्बाद तुम करते हो वह बरबाद होना है

× × ×

बेख़ुदी में कह रहा हूँ होश अगर आ जायगा
देखने का जो तमाशा है वह देखा जायगा
हज़रते बिस्मिल तड़प कर जान देते हैं बहुत
यह समाँ बेदर्द क़ातिल से न देखा जायगा

× × ×

हमको दुनिया के झमेलों का कुछ एहसास नहीं
एक कोने में अलग सबसे जुदा बैठे हैं

× × ×

नाउमीदी भी देख ले आकर
दिले उम्मीदवार का आलम
गो ख़िज़ाँ हैं मगर मेरी आँखें
देखती हैं बहार का आलम

सुमन-संचय

इज़्ज़त है जौहरी को जो क़ीमती हो जौहर
है 'आबरू' हमन को जग में सख़ुन हमारा
कम मत गिनो य वक़्त सियाहीं का रंग ज़र्द
सोना वह है कि होवे कसौटी कसा हुआ
तख़ल्लुस 'आबरू' बर जा है मेरा
हमेशा अश्क़े ग़म से चश्म तर है
किसने आ बाग़ में हैरान किया नरगिस को
नहीं मालूम कि यह देख रही है किसको

—आबरू

इन बुतों को हम फ़क़ीरों से कहाँ क्या काम है
यह तो तालिब ज़र के हैं और हाँ ख़ुदा का नाम है
ग़म नहीं गर दिलबरी से दिल को ले जाना है वह
पास मेरे तब तो आता है जो दिल पाता है वह

—नाजो

तदबीर का कुछ बस नहीं तक़दीर के आगे
तक़दीर की तहरीर मिटाई नहीं जाती
मोती की गयी आब उतर चढ़ नहीं सकती
घट जाती है इज़्ज़त तो बढ़ाई नहीं जाती

× × ×

सम्पत तो हँस के कटे बिपत कटे ना रोय
यह रँग आसा राखिये हरि चाहे सो होय

—बकरंग

नहीं शमा व चिराग़ की हाजत
दिल है शुक्र बज़्म का दिया मेरा

ज़िन्दगी दर्दे सर हुई हातिम
कब मिलेगा मुझे पिया मेरा

× × ×

मुसाफ़िर उठ तुझे चलना है मंज़िल
बजे है कूच का हरदम नक़ारा

× × ×

तुम तो बैठे हुए ये आफ़त हो
उठ खड़े हो तो क्या क़यामत हो
मुफ़लिसी और मिज़ाज़ ऐ हातिम
क्या क़यामत करे जो दौलत हो

—हातिम

रखे सीपारए दिल खोल आगे अन्दलीबों के
चमन में आज गोया फूल हैं तेरे शहीदों के

× × ×

जान तुझ पै कुछ एतमाद नहीं
ज़िन्दगानी का क्या भरोसा हैं

—आरज़ू

ऐ शेख़ अगर कुफ़्र से इसलाम जुदा है
पस चाहिए तसबीह में ज़ुन्नार न होता

× × ×

उठ चुका दिल मेरा ज़माने से
उड़ गया मुर्ग़ आशियाने से

× × ×

मुझसे जो पूछते हो तो हर हाल शुक्र है
यों भी गुज़र गई मेरी वों भी गुज़र गई

× × ×

ज़ईफ़ है दिले बीमार इस क़रीने से
अटक के आह निकलती है मेरे सीने से

—फ़ुग़ाँ

हँसता है गुल चमन में तो नालाँ है अन्दलीब
दो दिल ख़ुशी न देखे कभी इस जहाँ के बीच

× × ×

सुलेमाँ क्या हुआ गर तू नज़र आता नहीं मुझको
मेरी आँखों की पुतली में तेरी तस्वीर फिरती है

× × ×

तू भली बात से भी मेरी ख़फ़ा होता है
क्या भला चाहना ऐसा ही बुरा होता है

—मज़हर

फिर भी कहता हूँ तुझे आ 'सोज़' को यों मत सता
मत सता ज़ालिम कहीं तू भी सताया जायगा

× × ×

आशिक़ हुआ असीर हुआ मुबतिला हुआ
क्या जानिये कि देखते ही दिल को क्या हुआ

× × ×

नाज़ुक है दिल न ठेस लगाना उसे कहीं
ग़म से भरा है ऐ मेरे ग़मख़्वार देखना

—सोज़

न हमदम कोई है न अब हमनशीं है
बुरे वक़्त का कोई साथी नहीं है

× × ×

हम भी इस बाग़े जहाँ में शब की शब महमान हैं
मिस्ले शबनम सुबह को गिरियाँ कुनाँ उठ जायँगे

× × ×

हस्ती है ज्यूँ हुबाब ये हम ग़ाफ़िलों को आह
जितना कुछ ऐतबार है बेऐतबार का

× × ×

वही समझेगा मेरे ज़ख़्मे दिल को
जिगर पर जिसके एक नासूर होगा

× × ×

सर दीजे राहे इश्क़ में पर मुँह न मोड़िये
पत्थर की-सी लकीर है यह कोहकन की बात
मरहम पज़ीर कौन-सा है घाव जो नहीं
पर एक ज़ख़्मे तेग़े ज़बाँ का नहीं इलाज

× × ×

नातवानी पर कुछ अपना ज़ोर चलता ही नहीं
दिल पै सौ सदमे हैं लेकिन दम निकलता ही नहीं

—जुरअत

दिन जवानी के गये मौसमे पीरी आया
आबरू ख़ाव है, अब वक़्ते हक़ीरी आया

× × ×

न गया कोई अदम को दिले शादाँ लेकर
याँ से क्या-क्या न गये हसरतो अरमाँ लेकर

—मसहफ़ी

उम्र सारी तो कटी इश्क़े बुताँ में मोमिन
आख़िरी वक़्त में क्या ख़ाक मुसलमाँ होंगे

× × ×

ख़ुशी न हो मुझे क्योंकर कज़ा के आने की
ख़बर है लाश पै उस बेवफ़ा के आने की

× × ×

है अहदे शबाब ज़िन्दगानी का मज़ा
पीरी में कहाँ वो नौजवानी का मज़ा
अब यह भी कोई दिन में फ़साना होगा
बातों में जो बाक़ी है कहानी का मज़ा

—मोमिन

रह-रह के बर्क़ गिरती है इन पर भी बार-बार
गुलशन में चार तिनके मेरे आशियाँ के हैं
अहले चमन को क़ैदे क़फ़स की है आरज़ू
सैयाद से भी बढ़के सितम बाग़बाँ के हैं

—ताजवर नजीबाबादी

दुख तो क्या हमदम घटा लेते मगर इतना हुआ
बेकसी में बात करने का सहारा हो गया

× × ×

खाई हो कभी चोट तो दुख और का समझें
वह हँस रहे हैं और यहाँ जी पे बनी है

× × ×

चाह ने अन्धा कर रखा है और नहीं तो देखने में
आँखें-आँखें सब हैं बराबर कौन निराली आँखें हैं

—आरज़ू लखनवी

एक रोज़ दिल में तेरी मुहब्बत थी जागज़ीं
अब तू ही तू है तेरी मुहब्बत नहीं रही

× × ×

लुट रहा है चमन और आह नहीं कर सकते
फिर ग़लत क्या है कि हम-सा कोई मजबूर नहीं

× × ×

यहीं सबको फिर-फिर के आना पड़ेगा
मुहब्बत का मरकज़ बनाना पड़ेगा

× × ×

ईमाँ ग़लत, उसूल ग़लत और दुआ ग़लत
इन्साँ की दिलदही अगर इन्साँ न कर सके

× × ×

वह जल्द जल्द बदलता हुआ ज़माना है
कि आज है जो हक़ीक़त वो कल फ़िसाना है
—असर लखनवी

आरज़ू एक जुर्म है जिसकी सज़ा है ज़िन्दगी
ज़िन्दगी-भर आरज़ूओं को पशेमाँ कीजिए
ज़र्रे-ज़र्रे में है 'अहसाँ' उसके जलवे आशकार
देखिये और देखकर तकमील ईमाँ कीजिए
—अहसान दानिश

इस दर्द की मारी दुनिया में ऐसे इन्सान क्यों बसते हैं
जो सारी उम्र ज़रूरत की चीज़ों के लिए भी तरसते हैं
गो ऐसे लोग भी हैं जिनको आसायश ही आसायश है
वह सब है मुहय्या उनके लिए जिस चीज़ की उनको ख़्वाहिश है

× × ×

हम जंग करेंगे फ़ितरत से फ़ितरत पर क़ाबू पाएँगे
और फ़ितरत पर क़ाबू पाकर एक रोज़ अमर बन जाएँगे
—अहतशाम हुसैन

× × ×

है इल्म का वजूद जहालत के वास्ते
कसरत का इम्तयाज़ है वहदत के वास्ते
सीरत का है ख़याल जो सूरत के वास्ते
जुज़वो लतीफ़ भी हैं कसाफ़त के वास्ते
अफ़सुर्दगी न हो तो कभी ताज़गी न हो
ख़ुश्की अगर न हो तो नुमायाँ तरी न हो
—इन्द्रजीत शर्मा

चोट खाकर ही तो इन्सान बना करता है
दिल था बेकार अगर दर्द न होता पैदा

× × ×

वह बेवफ़ा कहे मुझे जिससे वफ़ा करूँ
मैं बदनसीब अपने मुक़द्दर को क्या करूँ

× × ×

क़लक़ है, रंज है, ग़म है, अलम है दाग़े फ़ुरक़त है
मुहब्बत में ये सब सामान मेरी बेकसी के हैं

—बेख़ुद देहलवी

बड़े शौक़ से सुन रहा था ज़माना
हमीं सो गये दास्ताँ कहते-कहते

× × ×

बाग़बाँ ने आग दी जब आशियाने को मेरे
जिन पे तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे

× × ×

वह क्या समझ सकेंगे नशेबो फ़राज़े दहर
जो चल रहे हैं राह को हमवार देखकर

× × ×

वह रूह बख़्शे जाँ थे जाँ काह बन के निकले
कुछ दम थे पास अपने जो आह बन के निकले

—साक़िब लखनवी

क़तरा दरिया है अगर अपनी हक़ीक़त जाने
खोए जाते हैं जो हम आपको पा जाते हैं

× × ×

परदा पड़ा हुआ था ग़फ़लत का चश्मे दिल पर
आँखें खुलीं तो देखा आलम में तू ही तू है

× × ×

तमन्नाएँ बर आईं अपनी तरके मुद्दआ होकर
हुआ दिल बेतमन्ना अब रहा मतलब से क्या मतलब

—अमरनाथ साहिर

यों अगर देखिये क्या कुछ नहीं यह मुश्ते .गुबार
और अगर सोचिए तो ख़ाक भी इन्सां में नहीं

× × ×

जिसको ख़बर नहीं उसे जोशो ख़रोश है
जो पागया है राज़ वह गुम है—ख़ामोश है

× × ×

जो ज़िन्दा दिल हैं हमेशा जवान रहते हैं
बहारे ज़ीस्त यक़ीनन इसी शबाब में है

—कैफ़ी

इज़हारे दर्दे दिल का था इक नाम शायरी
याराने बेख़बर ने उसे फ़न बना दिया

× × ×

महर वह है ख़ाक के ज़र्रे जो कर दे ज़र निगार
ऊँची-ऊँची चोटियों पर नूर बरसाने से क्या

× × ×

जो अपनी मौत से दुनिया में कुछ कमी न हुई
तो ज़ीस्त मुस्तहक़े नामे ज़िन्दगी न हुई

× × ×

तेरी हस्ती से मुनकिर होते जाते हैं जहाँ वाले
सँभाल अपनी .ख़ुदाई को अरे ओ आस्माँ वाले

—आनन्दनरायन मुल्ला

मज़ाहिब क्या हैं, राहे मुख़्तलिफ़ हैं एक मंज़िल की
है मंज़िल क्या, जहाँ सब कुछ है पर राहें नहीं होतीं

× × ×

महवे तलाशे राहत तू यह भी जानता है
कहते हैं जिसको राहत वह ग़म की इन्तहा है

× × ×

जो ग़म हद से ज़ियादह हो ख़ुशी नज़दीक होती है
चमकते हैं सितारे रात जब तारीक होती है

—अफ़सर मेरठी

हर ज़र्रा कायनात है, इक कायनात का
मौसूफ़ कुल सिफ़ात है, हर जुज़ सिफ़ात का

× × ×

गिरता है कोई आग में क्या कीजिए मगर
शबनम को आफ़ताब की .क़ुरबत पसन्द है

× × ×

अपने ही पैरों से हुआ हो जो पायमाल
मैं राह में वह नक़्शे क़दम हूँ मिटा हुआ

—नातिक़ लखनवी

उर्दू के योरोपियन शायर

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय में जो योरोपियन इस देश में रहे, उनमें से कितनों ही ने उर्दू-फ़ारसी का भी अध्ययन किया। अध्ययन ही नहीं किया, बल्कि इन भाषाओं में गद्य-पद्यात्मक रचनाएँ भी कीं। फ़ारसी-ग्रन्थों के अँगरेज़ी तथा अन्य योरोपियन भाषाओं में अनुवाद किये और इन भाषाओं में किताबें भी लिखीं। योरोपियनों के जीवन पर तत्कालीन सभ्यता और संस्कृति का भी प्रभाव पड़ा। 'मीरा-क़-उल-.क़ुद्दूस' या 'दास्ताने मसीह' १६०२ ईसवी में सम्राट् अकबर की आज्ञा से 'जैरम ऐक्सवियर' नामक विद्वान् ने लिखी। 'आईन ए-हक़नुमा' लिखकर बादशाह जहाँगीर को भेंट किया गया। 'अदब-उस्सल्तनत' आदि पुस्तकों की रचना भी इन्हीं दिनों योरोपियनों द्वारा हुई। गद्य-लेखक ही नहीं, योरोपियनों में उर्दू-फ़ारसी के शायर भी अनेक हो गये हैं। इन शायरों में से कुछ के संक्षिप्त परिचय नीचे दिये जाते हैं—

कर्नल जान वेली—ये लखनऊ में रहते थे। इनका समय १७६७ से १८२५ ई० तक है। उर्दू-फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे।

सर जान शोर—इनका समय १७५१ से १८३४ ई० तक है। ये पीछे लार्ड टीन माउथ के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनकी 'दीन इसलाम घटे दीन मसीहा बढ़ जाय' शीर्षक कविता बताई जाती है। ये उर्दू-फ़ारसी के अतिरिक्त अरबी के भी अच्छे ज्ञाता थे। कितनी ही अरबी कविताओं का अँग्रेज़ी-कविता में अनुवाद किया है। इन्होंने अपने पुत्र को भारतीय भाषाओं की शिक्षा स्वयम् दी थी।

जनरल स्मिथ—इनका उपनाम 'स्मिथ' था। इनकी उर्दू ग़ज़लों

का पता चलता है। ये सेना में मेजर जनरल थे। ४१ वर्ष की आयु में १८०६ ई० में मथुरा में इनकी मृत्यु हुई।

एडवर्ड हेनरी पामर—ये उर्दू-फ़ारसी और अरबी के बड़े विद्वान् थे। उर्दू में कविता करते और 'अवध अख़बार' में लेख लिखते रहते थे। ये कैम्ब्रिज में १८४० ई० में पैदा हुए, वहीं इन्होंने उर्दू, फ़ारसी और अरबी का अभ्यास किया। इन भाषाओं के अध्यापक भी रहे। इन्होंने फ़ारसी और अरबी के सम्बन्ध में कई विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ अँग्रेज़ी में लिखे हैं। १८८२ ई० में युद्ध में मारे गये। ये फ़ारसी और उर्दू में अच्छी कविता करते थे।

डाक्टर हुई-हुई—ये उर्दू-फ़ारसी के बड़े विद्वान् थे। एम० ए०, डी० लिट्०, आई० सी० एस० थे। कभी-कभी उर्दू कविता भी लिखा करते थे। १८७२ ई० में हिन्दुस्तान आए। इन्होंने अँग्रेज़ी में, भारत के सम्बन्ध में, कई पुस्तकें लिखी हैं। 'ए हिस्ट्री आव् आसफ़-द्दौला' इनकी प्रसिद्ध पुस्तक है।

रौबर्ट पैगट ड्यू हर्स्ट—ये भी आई० सी० एस० थे। 'साक़िब' उपनाम था। ये कभी-कभी उर्दू में गज़लें लिखा करते थे। अरबी, फ़ारसी और उर्दू के विद्वान् थे। संस्कृत भी अच्छी जानते थे।

उपर्युक्त विद्वानों के अतिरिक्त और भी कितने ही विदेशी विद्वान् ऐसे हुए, जिन्होंने उर्दू, फ़ारसी और अरबी का अध्ययन किया और इन भाषाओं में सफलता पूर्वक कविता की है। आरमेनिया, इँग्लैण्ड, पुर्तगाल, फ्रांस, जर्मनी, इटली आदि जिन देशों के विद्वानों का सम्बन्ध इस देश से रहा, उनमें से भी कुछ ने इन भाषाओं को अपनाया और उनमें कविताएँ भी कीं।

आरमेनियन शायरों में मिर्ज़ा ज़ुलक़र नैन सरमद जोहान्स 'साहब', एरन जैक़ब (फ़रहत और एरन) आदि अच्छे शायर हुए हैं। एँग्लो इण्डियन शायरों में 'जान टामस 'टूमास', एलेग्ज़ेण्डर

हैदरली 'आज़ाद', जौज़फ वंसलो 'फ़ना', लेफ्टीनेएट कर्नल जेम्स 'इसकिनर', सुलेमान शिकोह गार्डनर 'फ़ना', डानियल सुक़रातीस नथानी एल गार्डनर 'शुक्र', पादरी वरथालमो गार्डनर 'सब्र', रोवर्ट गार्डनर 'असवक़', पैट्रिक सोलोमन गार्डनर 'शोक', विलियम गार्डनर 'इद्रोस', अली फ़ैलिक्स गार्डनर 'फ़लक़', थ्योफ़िलस गार्डनर 'जिन्ह', एलुन क्रिश्चाना गार्डनर 'रुक़िया बेगम', जॉन रावर्ट्स 'जान' (लखनऊ), कर्नल पामर 'पामर', टामस विलियम बेल 'टामस', वैञ्जामिन जॉस्टन 'फ़लातून' (हैदराबाद), वैञ्जामिन डेविड मान्टरोज़ 'मुज़तर' (इलाहाबाद), जेम्स कारकरन 'कारकरन', मुनरो 'मज़लूम' देहलवी (ग्वालियर), क्लौडियस वक्सटर 'नज़्म' (लखनऊ), ए० डब्ल्यू० सोंगस्टर 'साहब' (लखनऊ), वाकर (कलकत्ता), लेस्टर एन डेसमो 'रौनक़' (लखनऊ), ई० ए० जोजफ़ 'कामिल' (अजमेर) आदि प्रसिद्ध हैं। ऊपर जिन नामों के आगे गार्डनर शब्द आया है, वे सब कासगंज के गार्डनर-परिवार से सम्बन्धित हैं

पुर्तगाली नस्ल के उर्दू-शायरों में से कुछ शायरों के नाम नीचे दिये जाते हैं—एरिस डी सलवा 'फ़ितरत', आगस्टीन डी सलवा 'मफ़्तून', हकीम जौज़फ़ डी सलवा, 'हकीम' जवाकीन डो सलवा 'फ़ितरत' इत्यादि-इत्यादि। ये लोग भरतपुर, जयपुर, भोपाल, पटना, कलकत्ता, कासगंज आदि के रहने वाले थे। 'इशरत', 'आसी', 'लाग़िर', 'सैफ़' आदि उपनाम थे। इनके अतिरिक्त फ्रांसोसी, जर्मन, इटली आदि नस्लों के भी बहुत-से शायर इस देश में हुए हैं। उर्दू और फ़ारसी में उन्होंने बड़ी सुन्दर कविताएँ की हैं। उर्दू-साहित्य के सुप्रसिद्ध तथा मार्मिक विद्वान्—रायबहादुर डा० रामबाबू सक्सेना एम० ए० ने इन शायरों के सम्बन्ध में "योरोपियन एण्ड एंग्लो योरोपियन पोइट्स आव् उर्दू एण्ड पर्शियन" नामक ग्रन्थ लिखकर साहित्य की अपूर्व सेवा की है। इसी पुस्तक के आधार पर हम ये पंक्तियाँ लिख रहे हैं। उपर्युक्त सब शायरों का

परिचय कराने से इस पुस्तक की पृष्ठ-संख्या बहुत बढ़ जायगी। इस विषय का वर्णन तो एक पृथक् पुस्तक में ही हो सकता है। यहाँ तो हमने इस अछूते विषय का संकेत मात्र कर दिया है। डाक्टर साहब ने अपने उपर्युक्त ग्रन्थ में योरोप के प्रायः सभी शायरों का वर्णन बड़ी योग्यता से किया है और अन्त में उनकी चुनी हुई शायरियाँ भी दे दी हैं। योरोपियन और इण्डो योरोपियन कवियों की कविताएँ बड़ी सरस और भावपूर्ण हैं। पढ़कर आश्चर्य होता है कि इन लोगों ने उर्दू-फ़ारसी में ऐसी सफल रचनाएँ किस प्रकार कीं। पुरुष ही नहीं, योरोपियन स्त्रियों ने भी उर्दू-फ़ारसी में बड़ी सुन्दर कविताएँ की हैं। इनमें निम्नलिखित महिलाएँ विशेष प्रसिद्ध हैं—

मलिका जान—ये प्रसिद्ध नर्तकी गौहर जान की मा थीं। उर्दू की प्रसिद्ध कवयित्री और लेखिका थीं। इनका जन्म आरमेनिया में हुआ था। मलिका जान की कविताओं के दीवान भी प्रकाशित हो चुके हैं। 'दीवान मख़ज़ने उलफ़ते मलिका' प्रसिद्ध दीवान है।

एनीब्लोचर 'मलिका'—ये विलायत में पैदा हुई थीं, फिर भारत में आकर बसीं। इन्होंने मौलवी अब्दुल ग़फ़ूर से उर्दू-फ़ारसी की शिक्षा प्राप्त की और अन्त समय में इसलाम स्वीकार कर लिया। इनकी कितनी ही उर्दू कविताएँ हैं।

मिस सरह पेरी—ये आरमेनिया की रहने वाली थीं। कलकत्ता में आकर बस गयीं थीं। इनका असली नाम सम्भवतः मिस मेजन था। ये उर्दू, फ़ारसी और थोड़ी अरबी भी जानती थीं। इनकी कुछ उर्दू गज़लें प्रसिद्ध हैं।

मिस आर चेस्टन—ये मेजर और चेस्टन की पत्नी थीं। आगरा रहती थीं। ये उर्दू जानती थीं और उसमें कविता भी करती थीं। कुछ-कुछ फ़ारसी का भी अभ्यास था। हिन्दी में भी

कुछ लिख लेती थीं। इनके गीत, होली, दादरा, ठुमरी, टप्पे आदि प्रचलित हैं। 'जमैयत' इनका उपनाम था।

मिस ब्लेक—इनका उपनाम 'ख़फ़ी' था। ये मिस्टर ब्लेक की पुत्री थीं। हिन्दुस्तानी नाम 'बादशाह बेगम' था। ये उर्दू और फ़ारसी अच्छी जानती थीं। उर्दू में कविता भी करती थीं।

नीचे कतिपय योरोपियन शायरों की शायरी के नमूने दिये जाते हैं। पाठक देखेंगे कि ये कविताएँ कितनी स्वाभाविक, सुन्दर और भावपूर्ण हैं। महावरे कैसे चुस्त तथा छन्द और व्याकरण के नियम किस योग्यता से निभाए गये हैं। कुछ कविताएँ तो ऐसी हैं कि वे सिद्धहस्त उस्तादों की-सी रचनाएँ जान पड़ती हैं। भक्ति, नीति और शृङ्गार पर ही अधिक कविताएँ हैं। नीचे शायरी की बानगी देखिए और आनन्द उठाइये। जोज़फ़ बंसली 'फ़ना' ने हिन्दी के दोहे और पद भी लिखे हैं। उनके नमूने देखकर आपको आश्चर्य होगा। एस० गार्डनर 'फ़ना' और मिस एलिस गार्डनर की पहेलियाँ कितनी सुन्दर हैं—किस ख़ूबी से लिखी गयी हैं।

न वह हमदम न वह जलसा रहा है
तपे दूरी से दिल जल-सा रहा है
जुनूँ की फ़ौज की सुन आमद-आमद
ख़िरद का पाँव कुछ चल-सा रहा है
किसी आशिक़ का नारा चर्ख़ ज़न है
जो ख़ीमा चर्ख़ का हिल-सा रहा है
मुझे इस वास्ते है तिलमिलाहट
कि ग़म सोने में दिल मल-सा रहा है
ग़नीमत जान 'इस्मिथ' आ गया है
कि दुश्मन उससे अब टल-सा रहा है

—कर्नल जॉन वेलो

अश्क़ों से बहा जाता है अपना दिले पुरग़म
बरसात में गिरता है यह घर कोई ख़बर ले
ईमान भी हाज़िर है दिलोजान भी हाज़िर
वह बादशहे हुस्न अगर मेरी नज़र ले
होने को हैं इस शहर में माशूक़ हज़ारों
बेचारा 'हुई' एक है किस-किसकी ख़बर ले

—डाक्टर हुई-हुई

ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाना जिसके हक़ में हो तो हो
हल तो मुश्किल दूसरा कोई मुअम्मा कीजिये
अब जुदाई का ज़माना सामने आया तवील
हरगिज़ इसमें मेरी बातों को न पसपा कीजिये
मैंने जुरअत से तख़ल्लुस 'साक़िब' अपना कर लिया
इस्म साक़िब को मसावी बामुसम्मा कीजिये

—ह्यू हर्स्ट 'साक़िब'

देखना तोड़ के वहशत में निकल जाऊँगा
मुझको पहनाते हो ज़ंजीर पे ज़ंजीर अबस

—मि० जोहान्स 'साहब'

ख़बर इसको नहीं क्या हो गया दिल
मगर यह याद है पहलू में था दिल
मेरी तक़दीर का है फेर यह भी
कि मुझसे फिर गया है आपका दिल

—एरन जैक़ब 'फ़रहत'

× × ×

करे याद उनकी सैर इक रोज़ इस दिलचस्प मंज़िल को
ग़मों से ख़ूब ही आबाद है बस्ती मेरे दिल की
वह अपने अक्स से आईने में आँखें लड़ाते हैं
इलाही ख़ैर करना दोनों चोटें हैं मुक़ाबिल की

× × ×

मेरी सूरत सब कहे देती है मेरा हाले दिल
मेरा तेवर देख कर वह मुझसे बदज़न हो गया

× × ×

ग़मों से घुल के न कुछ तेरे ख़स्ता तन में रहा
रहा तो कुछ यौंही धोका-सा पैरहन में रहा

× × ×

मेरे खाने को भी थोड़ा-सा रहे .ख़ूने जिगर
सब का सब तूही न पे दीदए .ख़ूँवार बहा

× × ×

हमने आँखें जो गाड़ कर देखा
हुस्न उस इश्क़े माहे कामिल का
रुख़े रौशन पै जम गई पुतली
सबको नाहक़ गुमान है तिल का

× × ×

आप रहता है मेरा रुख़ तेरे घर की जानिब
फिर जो मैं पास रखूँ क़िबलानुमा क्या बायस

—एलेग्ज़ेण्डर हैडरली 'आज़ाद'

सौदा है ज़ुल्फ़े यूसुफ़े सानी का इस क़दर
रोते हैं हम खड़े सरे बाज़ार ज़ार-ज़ार

—जॉन टामस 'टूमास'

काम आया कोई भी न सिवा ग़म के हिज्र में
अहसाँ है मुझपे एक इसी ग़मगुसार का
हूँ शाद ज़िन्दगी से न अरमाने मर्ग है
जब से हुआ है शग़ल ग़मे रोज़गार का

× × ×

छिपा हमसे मगर छिपना न जाना
बता हमने तुझे किस जा न पाया

× × ×

हमने राहे उलफ़त में क्या कहें कि क्या पाया
आपको भुला बैठे जब तेरा पता पाया

× × ×

सुख ही से दुख होत है क्यों सुख चाहे कोय
ऐसे सुख को त्याग दे जा सुख सों दुख होय
मनमोहन मन में रहे मन मूरख कहुं और
बनो बावरो आँधरो ढूंढ़त ठोर - कुठोर
आवत है सो जात है यही जगत की रीत
फ़ना शाह या देश में करो न कासे प्रीत
मन बिछुड़े तो ना मिले तन बिछुड़े मिल जाय
मन को मत बिछुड़ाइयो फेर मिलेंगे आय

× × ×

अकड़ पेंठ सब धरी रहेगी सीधे होकर जाओगे
अपनी करनी पार उतरनी जैसा करोगे पाओगे

× × ×

ग्यान ध्यान में रहो हमेशा हरि से ध्यान लगाओ जी
आप गुमो आराम तजो टुक मन को तुम समझाओ जी
खाने को तो ग़म है काफ़ी पीने को है ख़ूने जिगर
यही मज़ा है इश्क़ में प्यारे जीओ या मर जाओ जी
आप मरे जग परलौ साधो मन को तुम समझा लो अब
कोई किसी का संग न साथी आप अकेले जाओ जी

—जौज़फ़ बंसली 'फ़ना'

ख़ाकसाराने जहाँ सब को भला जानते हैं
आप अपने को मगर सबसे बुरा जानते हैं

× × ×

सबब पूछा जो उनसे तर्के उलफ़त का वो यूँ बोले
तुझे बन्दा पराया जान कर आज़ाद करते हैं

× × ×

तू चाहे मुझको दूर समझ है मेरा यह क़ौल
मैं तो किसी भी आन में तुझसे जुदा नहीं
बन्दा समझता ख़ुद को ख़ुदा तुझको जानता
पर क्या करूँ कि हुस्न को तेरे बक़ा नहीं

× × ×

है गज़ब चुप जो रहूँ कहता है कुछ बात कहो
मुद्दआ दिल का सुनाऊँ तो वह सुनता कब है

× × ×

ज़िन्दगानी का सारा मेला है
मर गए पर फ़क़त अकेला है
गरम बाज़ारिये फ़ना अपनी
गाँठ में पैसा है न धेला है

× × ×

एक नारि मुँह काले राखे बिन बोले सब कहती है
पाँव नहीं है पर हाथों में सब के चलती रहती है

(कलम)

परी सखी जब बरषा आवे रैन-दिना वह जान गँमावे
पिउ की धुन में पिउ-पिउ गावे रोवे आँसू पी-पी जावे

(पपीहा)

ख़्वाहिश इसकी सब को लोगो महफ़िल में वह आता है
पेट फुलाए जाता है और सब का उगला खाता है

(उगालदान)

गोरा-गोरा देखो लोगो चूँ न करो और खाओ
आग लगे पानी से इसमें याकी बूझ बताओ

(चूना)

—एस० गार्डनर 'फ़ना'

.ख़ुदी ने मुझपै किया है सितम .ख़ुदा की क़सम
जो बेख़ुदी हो तो फिर किसका ग़म .ख़ुदा की क़सम

× × ×

एक नारि वह फूली-फाली
घड़ा-सा मुँह और रंग की काली
ख़ाली पेट वह पड़ी रहे
पेट भरे तो मर्द पै चढ़े (मशक)

—मिस एलिन गार्डनर

× × ×

न्यारिये ख़ाक तलक छानते हैं गलियों की
इस क़दर है तमा ज़र कि जिसे कहते हैं

—एली फ़ेलक्स गार्डनर 'फ़लक़'

× × ×

बेहाल हूँ—बीमार हूँ सरगश्त श्रो पामाल
.ख़ुद आप फ़ज़ीहत हूँ नसीहत किसे दूँ मैं

× × ×

वह लुत्फ़ वस्ल में है और न हिजरे यार में है
मज़ा जो दिल को मिला एक इन्तज़ार में है

× × ×

सहल मरना हुआ जीना मुझे दुशवार हुआ
करके इक़रार मुहब्बत का गुनहगार हुआ

× × ×

न तकना तू ऐ दिल सहारा किसी का
न करना जहाँ में भरोसा किसी का
उठाएँगे हम .ज़ुल्मो जौरो सितम सब
सहेंगे न इक लफ़्ज़ बेजा किसी का
नसीहत मिली याद रख सब गुनह कर
वले दिल न हरगिज़ सताना किसी का

× × ×

जल्वए हुस्न दिखाते हैं मुझे
अपना दीवाना बनाते हैं मुझे

× × ×

गरचे ज़ाहिर में जुदा मुझसे बुते बेपीर है
दिल के आईने में पर मौजूद वह तसवीर है
ख़ुश्किए लब चश्म गिरियाँ रंग ज़र्दो आह सर्द
इश्क़ की सरकार में ये मनसबो जागीर हैं

× × ×

जिसे कहते हैं, दुनिया 'शुक्र' यह धोके की टट्टी है
नहीं है कुछ ये इक मौजे सराब आँखों के आगे है
—दानियाल सकरातीस नथानो एल० गार्डनर 'शुक्र'

कभी शबाब कभी बचपना कभी पीरी
मुसाफ़िरत ही में अपना बसर ज़माना हुआ
मज़ा है सोएँगे आराम से क़यामत तक
ज़हे नसीब पसे मर्ग तो ठिकाना हुआ

× × ×

रह शौक़ से जहाँ में मगर यह ख़याल रख
इस घर में कोई तुझसे भी पहले ज़रूर था

× × ×

न आँख खोल के ऐ 'सब्र' उसने कुछ देखा
मुहीत बहरे जहाँ में अबस हुबाब आया

× × ×

सरून हैराँ हूँ समझ में नहीं आता कुछ भी
लोग क्यों दिल में हसद रखते हैं इन्साँ होकर

× × ×

हैफ़ जो दिल में था उसको ही न देखा हमने
दूर दरिया से रहे साहिले दरिया होकर

बचपना खोके जवानी को लुटा कर मर कर
देखा इस आलमे ईजाद को क्या-क्या होकर

× × ×

कुछ इसमें शक नहीं है कि मरना ज़रूर है
फिर क्यों जहाँ में जान चुराएँ क़ज़ा से हम

× × ×

सैकड़ों दीवान देखे वह मज़ा आता नहीं
जो मज़ा पे 'सब्र' आता है कलामे मीर में

× × ×

ख़ूने जिगर है पीने को ग़म खाने को बहुत
फ़ुरक़त में आबोदाना मयस्सर नहीं—न हो

× × ×

पीरी में लुत्फ़ देता है ज़िक्रे शबाब यों
जिस तरह सुबह बात कहे कोई ख़्वाब की

× × ×

सिकून था न अदम में न चैन हस्ती में
वहाँ के रोते हुए याँ से अश्क़ेबार चले

× × ×

सुना है मरने पै क़िस्सा तमाम होता है
तो फिर मज़ार पै क्यों अज़दहाम होता है

—बरथालमो गार्डनर 'सब्र'

वह चश्म कूर है कि नहीं जिसमें तेरा नूर
तारीक दिल है जिसमें तेरी रोशनी नहीं
दौलत से अपने फ़ज़्ल को इतना निहाल कर
कह उट्ठे 'शौक़' अब मुझे कुछ भी कमी नहीं

× × ×

छुड़ाया तूने पीछा दर्द से ग़म से मुसीवत से
क़ज़ा ममनून हूँ तेरा कि तू आई दवा होकर

× × ×

जिस .खूबरू के हुस्न से रोशन है क़ायनात
मुश्ताक़ दीदो चश्म है उसके जमाल की
जिस दिन से हमको दौलते ईमाँ हुई नसीव
कुछ फ़िक्र दिल में ज़र की रही और न माल की

× × ×

ज़िन्दगी क़ैद में गुज़री हुए अव गोर में वन्द
न पसे मर्ग न हम ज़ीस्त में आज़ाद रहे

—पैट्रिक सालोमन गार्डनर 'शौक़'

न हो .खुदसर .खुदा जव तक तुझे रखता है दुनिया में
घटाता जा .खुदी को इन्कसारी को वढ़ाता जा
बिठाता जा तू सिक्का नेकनामी का ज़माने में
जो तकलीफ़ें वदी के हामियों से हों उठाता जा
जो 'असबक़' तुझसे जलते हैं जहाँ तक हो सके तुझसे
मुहव्वत ही के पानी से तू आग उनकी वुझाता जा

× × ×

रोशनी ले लिया कर उस रुख़ से
छोड़ सूरज का तू सहारा चाँद
उनकी सूरत से मिलता-जुलता है
इसलिए है हमें भी प्यारा चाँद

× × ×

तुम्हीं ज़ाहिर हो मुझमें और तुम्हीं वातिन में पिनहाँ हो,
मसीहा तुम मेरे दिल हो, जिगर हो, जिस्म हो, जाँ हो,

× × ×

जब कहा मैंने क़सम खाओ तो बोले हँसके वो
गर क़सम है चीज़ खाने की तो खाली जायगी
ओखली में सर दिया फिर मूसलों का डर ही क्या
जो पड़ेगी हिज्र में आफ़त उठा ली जायगी

—राबर्ट गार्डनर 'असर्वक़'

बहुत ढूँढ़ा निशाने यार लेकिन वेनिशाँ निकला
ये कैसा लामकाँ इक और ज़ेरे लामकाँ निकला
तेरी महरो वफ़ा से क्यों न हमको वद्गुमानी हो
कि तू नामहरबाँ होकर हमारा, महरबाँ निकला

× × ×

बसते हैं इसमें ग़मो दर्दो अलम
दिल की बस्ती भी अज़ीमाबाद है
फ़र्क़ है 'मुज़तर' अमीरो दाग़ में
एक शायर है तो एक उस्ताद है

× × ×

पड़ा हूँ बेकसी में ऐ सितमगर सख़्त बेकस हूँ
वतन की याद आती है तो ग़ुरबत खाए जाती है

× × ×

फ़िराक़े यार में गुज़रे जो बे आहो फ़ुग़ाँ मेरी
मेरी उमरे रवाँ हो कश्तिये बे बादबाँ मेरी
उड़ाये लाख फ़स्ले गुल में वह तर्ज़े फ़ुग़ाँ मेरी
कहाँ से लायगी बुलबुल दहन मेरा ज़ुबाँ मेरी

× × ×

लब पै फ़रियाद है न नाला है
ज़ब्त से अपना बोल बाला है
तूने परदे-से मुँह निकाला है
याकि आलम पै परदा डाला है

× × ×

रहा आँखों में और आँखों से पिनहाँ
छिपा मिस्ले नज़र मेरी नज़र से
तेरी .फ़ुरक़त में चुपके हो रहेंगे
मिलेगा क्या दुआए बेअसर से

× × ×

अदम को हस्ती से हम बाविक़ार होके चले
पियादा आए थे जब अब सवार होके चले
ठिकाना ख़ाक मिले पीरी औ जवानी का
सरूर होके जो आए .ख़ुमार होके चले

बेंजामिन ड्यूड माएडरोज़ 'मुज़तर'

× × ×

दिला मुल्क दुनिया पै मत जो लगा
कि पल-भर में सब कुछ ये होगा फ़ना

× × ×

हुनर पर न भूल अपने पे पुरहुनर
कि तू ही हुनर से नहीं बहराबर
गुलिस्ताँ में हैं फूल अक़साम के
मगर एक से एक हैं काम के

× × ×

आलमे फ़ानी की यारो चाल देखी है अजब
इस जहाँ से जो गया वैसा न आया फिर कोई

— जेम्स कार्करन

× × ×

छुरी गोकि गरदन पै चलती रही
दुआ तुझको मुँह से निकलती रही
उड़ा देगी इक दिन फ़लक के धुँए
यों ही आह गर अपनी चलती रही

× × ×

अगर है यही नातवानी हमारी
तो बस हो चुकी ज़िन्दगानी हमारी
वो पीरी में 'मज़लूम' अब आके देखे
जिसे याद हो नौजवानी हमारी

× × ×

मरने के बाद भी हमें राहत कहीं नहीं
फैलाऊँ पाँव इतनी मयस्सर ज़मीं नहीं
तौबा करूँ गुनाहों से हूँ शर्मसार मैं
इतनी भी मोहलत अब तो दमे वापसी नहीं

—मुनरो 'मज़लूम'

चाहते हैं सबवे रंज कोई जान भी ले
और जो हाल है वह साफ़ बताते भी नहीं

× × ×

उसकी जानिब हाय क्यों ऐ दिल गया
हम हुए रुसवा तुझे क्या मिल गया
हमने तो नाले शबे .फुरकत किये
सुनने वालों का कलेजा हिल गया

× × ×

हुआ जो काम इक जुम्बिश में अबरूए सितमगर से
न वह तलवार से होता न पैकाँ से न ख़ञ्जर से
ज़रा मज़बूत रहना संगे .फुरकत के उठाने को
तुझे ऐ शीशए दिल सामना करना है पत्थर से

× × ×

कहिये किधर वो संगदिली आपकी गई
दिल को पकड़ के बैठ गये एक आह में

—क्लाडेस बेक्सटर 'नज़्म'

गिरीं बिजलियाँ मेरे दिल पर हज़ारों
मज़ा दे गया मुस्कराना किसी का

× × ×

यों तो दुनिया में किये काम हज़ारों लेकिन
इक बजुज़ इश्क़ के हर काम को आसाँ देखा

—ए० डबल्यू० सिंगस्टर

क्या शै है वो जिसमें कि तेरी शान नहीं है
पर हक़ तो यह है बन्दे को पहचान नहीं है
आमिल जो बशर बन्दगीये हक़ से है ग़ाफ़िल
हैवान से बदतर है वो इन्सान नहीं है

—जोज़फ़ डी० सलवा 'यूसुफ़'

'आसी' को रियाकार सम्हलने नहीं देते
बन्दों को तेरे फूलने-फलने नहीं देते
मज़हब पै किसी ग़ैर को चलने नहीं देते
कूचे से भी अपने तो निकलने नहीं देते

× × ×

दुनिया में ग़रीबों का ठिकाना नहीं कोई
याँ तेरे सिवा अपना यगाना नहीं कोई
गरवीदा मुझे अपनी मुहब्बत का बना दे
जलवा मुझे अपने रुख़े अक़्दस का दिखा दे

× × ×

ख़याल हरदम है मेरे दिल का कि यार मुझमें मैं यार में हूँ
ये नक़्श हरगिज़ न मिट सकेगा कि यार मुझमें मैं यार में हूँ
न ढूँढ़ दैरो हरम में उसको मिलेगा हरगिज़ वहाँ न तुझको,
झुकाई गरदन तो मैंने देखा कि यार मुझमें मैं यार में हूँ

× × ×

हर लमहा हर जगह पर मौजूद है तो तू है
शाहिद है दिल ये मेरा मशहूद है तो तू है
बेताब हो रहे हैं हम तेरी ही तलब में
मतलूब है तो तू है मक़सूद है तो तू है
करते हैं तेरी ताअत जो तुझको जानते हैं
हाँ क़ाबिले परस्तिश माबूद है तो तू है

× × ×

ख़ौफ़ उक़बा का दिल पै तारी है
अपने फ़ालों से शर्म सारी है
हर घड़ी लब पै आहो ज़ारी है
तेरी रहमत की इन्तज़ारी है

× × ×

प्रेम-नगर की राह कठिन है समझ-समझ कर चलो सखी री
राम-नाम की माला जप लो हरि का सुमिरन करो सखी री

—एलिस डी० सलवा 'आसी'

हर रंग गुल में तेरी .कुदरत खिली हुई है
तसवीर तेरी यह है .खुद क्यों छिपा हुआ है
अन्धे को आँख बख़्शे गूँगे को दे .ज़ुबाँ वह
उस पर यक़ीं जो लाया चाहे जो फ़ज़्ल कर दे

—मेजर जबलीन फ़ैलोज़ 'तालिब'

बन्दगाने .खुदा तुझे पूजें यह भी ऐ बुत .खुदा की .कुदरत है
फ़िक्र उक़बा की कहिये क्योंकर हो कारे दुनिया से किसको .फुरसत है

× × ×

बे बुलाए गया न जन्नत में वाह क्या आनबान है मेरी
शेर कहता हूँ सादा ऐ विलियम बेतकल्लुफ़ ज़बान है मेरी

× × ×

अदम के जाने वालो कोई दम का रंजे फ़ुरकत है
पहुँच कर तुम वहाँ दम तो ज़रा लो हम भी आते हैं

× × ×

कुछ हया कुछ शर्म कुछ डर कुछ अदब
क्या तुम्हारे सामने मैं कह सकूँ

× × ×

सबको ख़याल ज़ीस्त का विलियम है हश्र तक
मरने के जानता नहीं कोई क़रीब दिन

× × ×

विलियम क़मर के गिर्द सितारों का है हुजूम
चेचक के दाग़ यार के रुख़ पर अयाँ नहीं
आँसू निकल भी आते हैं जोशे फ़िराक़ में
रहता किसी का हाले मुहब्बत निहाँ नहीं

× × ×

इस दर्जा उन्हें नशए दौलत ने किया चूर
सुनते नहीं ज़रदार जो करते हैं गदा अर्ज़

× × ×

ज़ी अक्ल भी ज़ी ज़हन भी थे हम मगर ऐ दिल
अब मिल गए हैं ख़ाक में सब वादे फ़ना हो

—विलियम जोज़फ़ व्हाइट 'विलियम'